भिक्खु दृष्टान्त

जयाचार्य

सम्पादक

मुनि मधुकर

प्रकाशक :

जैन विश्व भारती
लाडनूं [राजस्थान]

प्रबन्ध-संपादक :

श्रीचंद रामपुरिया
कुलपति, जैन विश्व भारती

प्रथम संस्करण : १९६०
द्वितीय संस्करण : १९८७
तृतीय संस्करण : १९९४

मूल्य : ७५.००

मुद्रक : जैन विश्व भारती प्रेस, लाडनूं ३४१३०६ (राज०)

प्रकाशकीय

"तेरापन्थ का राजस्थानी वाङ्मय" ग्रन्थमाला का आठवां पुष्प "भिक्खु दृष्टांत" आचार्य भिक्षु के कतिपय जीवन प्रसंगों का सुन्दर संकलन है। इस तृतीय संस्करण में मुनिश्री मधुकरजी ने सरल एवं सर्व ग्राह्य राष्ट्र भाषा में सांगोपांग प्रस्तुति दी है जिससे प्रत्येक व्यक्ति को वास्तविक सन्दर्भ में दृष्टांतों के लक्ष्य को समझने में सुगमता रहेगी। गणाधिपति पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी, आचार्यश्री महाप्रज्ञ के निर्देशन में सम्पादित यह ग्रन्थ और भी ग्राह्य बन गया है। जैन विश्व भारती इस ग्रन्थ को प्रकाशित कर गौरव का अनुभव कर रही है।

आशा है पाठकवृन्द के लिए यह ग्रन्थ रूचिप्रद व ज्ञानवर्धक सिद्ध होगा।

झूमरमल बैंगानी
मंत्री

जैन विश्व भारती,
लाडनूं (राज०)
दिनांक-१७.६.१९९४

अंतस्तोष

लंबे समय से मेरे मन में यह कल्पना थी कि तेरापन्थ के राजस्थानी वाङ्मय का आधुनिक पद्धति से संपादन हो। यह कल्पना साकार हो रही है। कल्पना जब आकार लेती है, तब अंतस्तोष अनिर्वचनीय हो जाता है। इस अनिर्वचनीयता की अनुभूति में मैं उन सबको सहभागी बनाना चाहता हूं, जिन्होंने इस कल्पना को आकार देने में अपने अध्यवसाय का नियोजन किया है।

ग्रन्थमाला सम्पादन : आचार्य महाप्रज्ञ

सम्पादन : मुनि मधुकर
मुनि मोहन, आमेट
मुनि महेन्द्र

पुरोवाक् : श्रीचन्दजी रामपुरिया

—गणाधिपति तुलसी

२२.५.९४
अध्यात्म साधना केन्द्र
महरोली, दिल्ली

प्रस्तुति

प्रस्तुत ग्रंथ का सम्पादन तेरापन्थ द्विशताब्दी ईस्वी सन् १९६० के अवसर पर श्रीचन्दजी रामपुरिया ने किया था। तेरापन्थ द्विशताब्दी के अवसर पर आचार्य भिक्षु के साहित्य का प्रकाशन किया गया। प्रस्तुत ग्रन्थ का सम्बन्ध आचार्य भिक्षु और जयाचार्य दोनों से है। दृष्टांत आचार्य भिक्षु द्वारा प्रदत्त हैं और उनका एक ग्रन्थ के रूप में गुंफन जयाचार्य ने किया है। जयाचार्य आचार्य भिक्षु के भाष्यकार हैं इसलिए जयाचार्य की निर्वाण शताब्दी के अवसर पर इस ग्रन्थ का पुनः सम्पादन किया गया। द्वितीय संस्करण का संपादन मुनि मधुकर, मुनि मोहन 'आमेट' और मुनि महेन्द्र ने किया।

भिक्षु चेतना वर्ष में एक नई योजना बनी। उसके अनुसार 'तेरापन्थ का राजस्थानी वाङ्मय' इस शीर्षक वाली ग्रंथमाला की परिकल्पना की गई। प्रस्तुत ग्रंथ उस ग्रंथमाला का आठवां ग्रन्थ है।

इसके पूर्ववर्ती सात ग्रंथ 'जीवन दर्शन' से संबद्ध हैं—

ग्रन्थ १. भिक्खु जस रसायण

ग्रन्थ २. भारीमाल चरित्र
ऋषिराय सुयस
ऋषिराय पंचढाळियो
जय सुयश
मघवा सुयश

ग्रन्थ ३. माणक महिमा
डालिम-चरित्र

ग्रन्थ ४. कालूयशोविलास

ग्रन्थ ५. सरदार सुयश
गुलाब सुयश
छोगां को छवढाळियो
मां वदना

ग्रन्थ ६. सतजुगी चरित्र
हेम नवरसो
हेम चोढाळियो
स्वरूप नवरसो
स्वरूप विलास
भीम विलास
मोतीजी रो पंचढाळियो

शिवजी रो चोढाळियो

उदयचंदजी रो चोढाळियो

हरख चोढाळियो

हस्तु कस्तु चोढाळियो

कर्मचंदजी री ढाळ

'भिक्षु दृष्टांत' राजस्थानी भाषा का उत्कृष्ट ग्रन्थ है। डेढ़ शताब्दी पूर्व संस्मरण साहित्य की परम्परा बहुत क्षीण रही है। उस अवधि में लिखा हुआ यह संस्मरण ग्रंथ भारतीय साहित्य में ही नहीं, अपितु विश्व साहित्य में भी बेजोड़ है। श्री मज्जयाचार्य ने प्रस्तुत ग्रन्थ का संकलन कर भाषा, दर्शन और आचारवाद की दृष्टि से एक अनुपम अवदान दिया है।

राजस्थानी भाषा सबके लिए सहजगम्य नहीं है। इसलिए उसका राष्ट्र भाषा हिन्दी में अनुवाद किया गया है। विश्व साहित्य में इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है, इस दृष्टि से इसका अंग्रेजी आदि विविध भाषाओं में अनुवाद होना जरूरी है। हिन्दुस्तान की अन्य भाषाओं में भी इसके अनुवाद की उपेक्षा नहीं की जा सकती। संवाद और संस्मरण का एक जीवित ग्रन्थ जनता के हाथों में पहुंचकर अभिनव उल्लास और रसात्मकता की सृष्टि कर सकता है।

आचार्य भिक्षु का जीवन जितना प्रसन्न और निर्मल है उतनी ही प्रसन्न और निर्मल है उनकी प्रतिपादन शैली। वे अपनी बात को इतनी सहजता से कहते हैं कि वक्तव्य शब्दों के जाल में नहीं उलझता, सीधा श्रोता के हृदय तक पहुंच जाता है, बौद्धिकता से परे अन्तर्दृष्टि की अनुभूति होती है। प्रस्तुत संस्करण के सम्पादन में मुनि मधुकरजी ने अत्यधिक श्रम किया है। द्वितीय संस्करण में तीन परिशिष्ट थे। इसमें पांच परिशिष्ट हैं—

१. हेम संस्करण

२. श्रावक संस्मरण

३. फुटकर संस्मरण

४. शब्दानुक्रम

५. विशेष शब्दकोश

संस्मरण साहित्य के संकलन की दृष्टि से तथा स्वामीजी और जयाचार्य की परिपार्श्विक भूमिका के कारण उनकी प्रासंगिकता अपने आप सिद्ध है। यह संस्मरण साहित्य के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ होगा। जनता इसे पढ़कर साहित्य के रसास्वाद में आह्लाद का अनुभव करेगी। गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी ने तेरापन्थ धर्मसंघ को साहित्य के शिखर पर आरोहण की क्षमता दी है। प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन और नए ग्रन्थों का निर्माण—दोनों में अपूर्व गति हुई है। उसी गति का एक चरण विन्यास है प्रस्तुत ग्रन्थ।

—आचार्य महाप्रज्ञ

महरोली, दिल्ली
२२.५.९४

पुरोवाक्

यह पुस्तक आकार मे इतनी छोटी होने पर भी सामग्री की दृष्टि से बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। इसमें स्वामीजी के ३१२ जीवन-प्रसंगों का संकलन है। ये जीवन-प्रसंग मुनि श्री हेमराजजी के लिखाये हुए हैं जो स्वामीजी के अत्यन्त प्रिय शिष्य थे और शासन के स्तम्भ स्वरूप माने जाते थे। इन प्रसंगों को श्रीमद् जयाचार्य ने लिपिबद्ध किया। इस पुस्तक के अन्त में जयाचार्य की कृति **'भिक्षुजश रसायण'** के जो दोहे उद्धृत हैं उनसे यह बात स्पष्ट है। इन प्रसंगों में सहज स्वाभाविकता है। रंग चढ़ाकर उन्हें कृत्रिम किया गया हो ऐसा जरा भी नहीं लगता। इन हूबहू चित्रित जीवन-पटों से स्वामीजी के जीवन, उनकी वृत्तियों, उनकी साधना और उनके विचारों पर गम्भीर प्रकाश पड़ता है। स्वामीजी की सैद्धांतिक ज्ञान-गरिमा, प्रत्युत्पन्न बुद्धि, हेतु-पुरस्सरता, चर्चा-प्रवीणता, प्रभावशाली उपदेश-शैली और दृढ़ अनुशासनशीलता आदि का इन जीवन-प्रसंगों से बड़ा अच्छा परिचय होता है। जीवन-प्रसंगों का यह संकलन एक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक कृति है जो स्वामीजी के समय की जैन धर्म की स्थिति, उस समय के साधु-श्रावकों की जीवन-दशा तथा उनके आचार-विचारों की यथार्थ भूमिका को प्रामाणिक रूप से उपस्थित करती हुई स्वामीजी की जीवन-व्यापी अखण्ड साधना का एक सुन्दर चित्र उपस्थित करती है। श्रीमद् जयाचार्य ने इन दृष्टांतों का संकलन कर स्वामीजी के जीवन और शासन के इतिहास की महत्त्वपूर्ण घटनाओं को ही सुरक्षित नहीं किया वरन् उस समय की स्थिति का दुर्लभ इतिहास भी गुंफित कर दिया है, जिसके प्रकाश में स्वामीजी के व्यक्तित्व और कर्तृत्व का सही मूल्यांकन किया जा सकता है।

मुनि हेमराजजी की दीक्षा सं० १८५३ में हुई थी। उनकी दीक्षा का प्रसंग बड़ा रसपूर्ण है। उसमें स्वामीजी की वैराग्यपूर्ण उपदेश-शैली का उत्कृष्ट उदाहरण मिलता है। साथ ही उससे मुनि हेमराजजी के व्यक्तित्व की सुन्दर झांकी मिलती है। इस पुस्तक में मुनि हेमराजजी और स्वामीजी के साथ घटे हुए अन्य भी कई प्रसंगों का उल्लेख है जो दोनों की जीवन-गरिमा पर गहरा प्रकाश डालते हैं। मुनि हेमराजजी दीक्षा के बाद चार वर्ष तक स्वामीजी की सेवा में रहे। बाद में स्वामीजी ने उनका सिंघाड़ा कर दिया और उन्हें अलग विचरना पड़ा। इस पुस्तक में दिए गए प्रसंगों में से कुछ हेमराजजी स्वामी के रूबरू घटे हुए हैं। कुछ उन्होंने स्वामी जी से सुने। कुछ दृष्टांत ऐसे हैं जो दूसरों से उन्होंने सुने और प्रामाणिक समझ श्री जयाचार्य को लिखाये।

स्वामीजी से चर्चा करने के लिए भिन्न-भिन्न प्रकृति और धर्मों के लोग आते। कुछ स्वामीजी को नीचा दिखाने के लिए आते, कुछ उनकी बुद्धि की परीक्षा करने, कुछ धर्म-चर्चा के नाम पर उनसे झगड़ा करने, कुछ सैद्धांतिक चर्चा करने और कुछ

जड़भरत—दूसरों के सिखाए हुए। जो व्यक्ति जैसा होता उसके अनुरूप हेतु, तर्क, बुद्धि-कौशल, दृष्टांत अथवा सूत्र-साक्षी से स्वामीजी चर्चा करते या उत्तर देते। लिफाफा देखकर मजमून समझ लेना यह उनकी बुद्धि की सबसे बड़ी विशेषता थी और इस विशेषता के कारण वे आगन्तुक व्यक्ति के मानस का चित्र पहले से ही खींच लेते और अपनी औत्पातिक बुद्धि से युक्ति-पुरस्सर प्रत्युत्तर दे चमत्कार-सा उत्पन्न करते। इन दृष्टान्तों में उनकी इस विशेषता के अनेक अद्भुत चित्रण मिलते हैं।

उनकी वाणी सहज ज्ञानी की वाणी है। वह स्वयं स्फुरित है। उसमें अध्यात्म, संवेग तथा वैराग्य-रस भरा हुआ हैं। निर्मल ज्ञान-रश्मियों का प्रकाश है। स्पष्ट और सही सूझ तथा दृष्टि है। उसमें जैन दर्शन के मौलिक स्वरूप पर दिव्य प्रकाश है तथा क्रांत वाणी की तीव्र भेदकता और उद्बोधन है।

स्वामीजी महान् धर्मकथी थे। छोटे-छोटे दृष्टांतों के सहारे गूढ़ दार्शनिक प्रश्नों का उत्तर उन्होंने इतने सुबोध और सरल ढंग से दिया है कि उन्हें पढ़कर हृदय विस्मय-विमुग्ध हो जाता है।

स्वामीजी की सी दृढ़ता बहुत कम देखी जाती है। न्याय-मार्ग पर चलते हुए वे विघ्न-बाधाओं से कभी नहीं घबड़ाए। वे दुर्दान्त योद्धा का सा मोर्चा लेते हैं और कभी पीछे नहीं ताकते।

शिष्यों के साथ उनका व्यवहार जितना वात्सल्यपूर्ण होता उतना ही अवसर पर कठोर भी। अनुशासन के समय यदि वे वज्रादपि कठोर थे तो अन्य प्रसंगों पर कुसुमादपि मृदु भी।

चर्चा के समय वे दुर्भेद्य व्यूह से देखे जाते हैं। सिद्धांत-बल, बुद्धि-बल, तर्क-बल, हेतु-बल, परम्परा-बल—इनकी अनोखी छटा सूर्य रश्मियों की तरह एक चकाचौंध पैदा कर देती है। गंभीर ज्ञान और लक्ष्य-भेदी गिरा समुद्र की ऊर्मियों की तरह छल-छल निनाद करते हुए देखे जाते हैं। पैनी तर्क-शक्ति और अवसर-अनुकूल व्यङ्गोक्ति तीक्ष्ण तीर की तरह सीधा लक्ष्य-भेद करती सी लगती है।

स्व-समय और पर-समय का सूक्ष्म विवेक उनकी लेखनी द्वारा जैसा प्रगट हुआ है वैसा अन्यत्र नहीं देखा जाता। जैन धर्म को मलिन करने वाली मान्यताओं और आचार का धान और तुस की तरह पृथक्करण जैसा उन्होंने किया अन्यत्र दुर्लभ है। मिथ्या अभिनिवेशों और मान्यताओं पर उनके प्रहार तीव्र रहे।

उनका बल शुद्ध आचार पर रहा। केवल वेष के वे जीवन भर विरोधी रहे। इसके लिए उन्हें बड़े कष्ट सहने पड़े पर वे कभी पश्चात्पद नहीं हुए। शुद्ध श्रद्धा और आचरण के साथ संयमी का प्रमाणपुरस्सर वेष हो, यदि साधु का बाना धारण किया हो तो उसके साथ शुद्ध श्रद्धा और आचार भी हो—यही उनका प्रतिपाद्य रहा। 'कृत्रिम ब्राह्मणी' (११६), 'खोटा सिक्का' (२९५), छिद्रवाली नौका' (३०१), 'लूंकड़ी का चौधरपन' (२९८) आदि दृष्टांत उनकी इस भावना के प्रतीक हैं।

उन्होंने एक व्यंग किया है : 'पति के मरने पर स्त्री को उसकी अरथी के साथ बांधकर जला दिया गया और उसे सती घोषित कर दिया गया। यदि कोई इस तरह जबरदस्ती सती की गई स्त्री का स्मरण कर प्रार्थना करे—हे सती माता!

मेरा बुखार दूर करो तो स्वयं क्रूरता की शिकार बनी वह सती क्या बुखार दूर करेगी ? वैसे ही यदि रोटी का भूखा कोई साधु वेष पहरे और उससे कोई कहे कि तुम श्रामण्य का अच्छी तरह पालन करना तो वह क्या खाक पालन करेगा ?' (३०२)

अनेक दृष्टांतों में बड़ा सुन्दर तत्त्व-निरूपण मिलता है। उदाहरण स्वरूप थोड़े से दृष्टांतों की हम यहां चर्चा करेंगे।

पुस्तक और ज्ञान में क्या अन्तर है, इसकी भेद-रेखा एक दृष्टांत में बड़ी ही सुंदर रूप से प्रकट हुई है : 'पुस्तक के पन्नों को ज्ञान कहते हो सो पुस्तक के पन्ने फट गए तो क्या ज्ञान फट गया ? पन्ने अजीव हैं, ज्ञान जीव है। अक्षरों का आकार तो पहचान के लिए हैं। पन्नों में लिखे हुए का जानना ज्ञान है। वह आत्मगत है। स्वयं के पास है। पन्ने भिन्न हैं।' (२०८)

संगठन का प्रश्न अनेक बार सामने आता है। स्वामीजी के सामने भी वह आया था। उनका चिंतन है : 'बिचार और आचार की एकता के बिना साधु जीवन की एकता सम्भव नहीं। श्रद्धा और आचार की एकता हो जाने पर द्वैध नहीं टिकता। उसके अभाव में द्वैध नहीं मिट सकता।' (२०६)

आइंस्टीन से उनकी स्त्री ने पूछा—'तुम्हारा सापेक्षवाद क्या है सरलता से बताओ।' आइंस्टीन ने उत्तर दिया—'सुहाग रात्रि छोटी लगती है और एक क्षण का भी अग्नि का स्पर्श बड़ा दीर्घकालीन लगता है, यही सापेक्षवाद है।

स्वामीजी रात्रि में व्याख्यान दिया करते। जैन साधु को रात्रि में एक प्रहर के बाद जोर से बोलने का निषेध है। द्वेषी हल्ला मचाते—'रात्रि बहुत हो गई। सवा पहर डेढ़ पहर बीत गई फिर भी व्याख्यान चलता है। यह साधु का काम नहीं।' स्वामीजी ने एक बार उत्तर दिया : 'विवाहादि सुख की रात्रि छोटी मालूम देती है। यदि मनुष्य संध्या-समय मर जाए तो दुःख की वह रात्रि अत्यन्त दीर्घ हो जाती है। इसी तरह जिन्हें द्वेषवश व्याख्यान नहीं सुहाता उन्हें रात्रि अधिक आई दिखाई देती है। जो अनुरागी हैं उन्हें तो वह प्रमाण से अधिक आई नहीं दिखाई देगी।' (१८) स्वामीजी ने लोगों को समझाने में ऐसे सापेक्षवाद का अनेक जगह उपयोग किया है।

धन और ज्ञान के साथ गठंबन्धन होता ही है ऐसा मानना निरी भूल है। धनी जो कुछ करता है वह ज्ञान से ही करता है—यह सिद्धांत नहीं हो सकता। उत्तमोजी ईराणी बोले—'आप देवालयों का निषेध करते हैं पर पूर्व में बड़े-बड़े लखपति करोड़-पति हो गए हैं उन्होंने देवालय बनवाए हैं।' स्वामीजी ने पूछा—'तुम्हारे पास ५० हजार की सम्पत्ति हो जाए तो देवालय बनवाओगे या नहीं ?' वह बोला 'अवश्य बनवाऊंगा।' स्वामीजी ने पूछा—'तुममें जीव के कितने भेद हैं ? कौन-सा गुणस्थान है ? उपयोग, योग, लेश्या कितनी है ?' वह बोला—'यह तो मुझे मालूम नहीं।' स्वामीजी बोले—'पूर्व के लखपति करोड़पति भी ऐसे ही समझदार होंगे। सम्पत्ति मिलने से कौन-सा ज्ञान जाता है।' (३९)

इन दृष्टांतों में कई अनुभव-वाक्य भरे पड़े हैं : 'आत्म-प्रदेशों में क्लामना हुए

बिना निर्जरा नहीं होती' (१२०), 'धान मिट्टी की तरह लगने लगे तब संथारा कर लेना चाहिए', (१२१) 'आडम्बर न रखने से ही महिमा है' (१२५), 'साधु गृहस्थ के भरोसे न रहे', (२६०-२६१), 'जिस चर्चा से भ्रम उत्पन्न हो वैसी चर्चा नहीं करनी चाहिए' (२५६) आदि आदि।

उनकी दृष्टि भविष्य को भेदती। वे बहुत आगे की देखते। उनका कहना था छिद्र से दरार होती है। पहले कोंपल होती है और फिर वृक्ष। एक बार किसी ने कहा : 'आप काफी वृद्ध हो चुके हैं। अब बैठे-बैठे प्रतिक्रमण क्यों नहीं करते?' स्वामीजी बोले 'यदि मैं बैठ कर प्रतिक्रमण करूंगा तो सम्भव है बाद वाले लेटे-लेटे करें।' (२१२)

अहिंसा के क्षेत्र में उन्होंने जितना सोचा, विचारा, मनन किया, मंथन किया उसकी अपनी एक निराली देन है। 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' की भावना के वे एक सजीव प्रतीक थे। 'छहों ही प्रकार के जीवों को आत्मा के समान मानो'—भगवान की यह वाणी उनकी आत्मा को भेद चुकी थी।

अहिंसा विषयक कितने ही सुन्दर चिंतन इस पुस्तक में हैं। स्वामीजी से किसी ने पूछा—'सूत्रों में साधु को त्रायी—रक्षक कहा है। जीवों की रक्षा करना उसका धर्म है।' स्वामीजी ने कहा—'त्रायी ठीक ही कहा है। उसका अर्थ है जीव जैसे हैं उन्हें वैसे ही रहने देना, किसी को दुःख न देना।' (१५०)

उस समय एक अभिनिवेश चलता था—'हिंसा बिना धर्म नहीं होता।' इस बात की पुष्टि में उदाहरण देते—'दो श्रावक थे। एक को अग्नि के आरम्भ का त्याग था, दूसरे को नहीं। दोनों ने चने खरीदे। पहला उन्हें यों ही फांकने लगा, दूसरे ने उन्हें भूनकर भूने बना लिए। इतने में साधु आये। पहले के पास कच्चे चने होने से वह बारहवां व्रत निष्पन्न नहीं कर सका। दूसरे ने भूने बहरा कर बारहवां व्रत निष्पन्न किया। तीव्र हर्ष के कारण उसके तीर्थङ्कर गोत्र का बन्धन हुआ। यदि अग्नि का आरम्भ कर वह भूने नहीं बनाता तो इस तरह उसके तीर्थङ्कर गोत्र का बंधन कैसे होता?'

स्वामीजी ने उत्तर में दृष्टांत दिया—'दो श्रावक थे। एक ने यावज्जीवन के लिए ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया। दूसरा अब्रह्मचारी ही रहा। उसके पांच पुत्र हुए। बड़े होने पर दो को वैराग्य हुआ। पिता ने हर्षपूर्वक उसको दीक्षा दी। अधिक हर्ष के कारण उसके तीर्थङ्कर गोत्र का बन्धन हुआ। यदि हिंसा में धर्म मानते हो तो सन्तानोत्पत्ति में भी धर्म मानना होगा। हिंसा बिना धर्म नहीं होता। तब तो अब्रह्मचर्य बिना भी धर्म नहीं होना चाहिए?'

किसी ने कहा—'एकेन्द्रिय मार पंचेन्द्रिय जीव पोषण करने में धर्म है।' स्वामीजी बोले—'अगर कोई तुम्हारा यह अंगोछा छीनकर किसी ब्राह्मण को दे दे तो उसमें उसे धर्म हुआ कि नहीं?' वह बोला—'इसमें धर्म कैसे होगा?' स्वामीजी ने पुनः पूछा—'कोई किसी के धान के कोठे को लुटा दे तो उसे धर्म होगा या नहीं?' उसने कहा—'इसमें धर्म कैसे होगा?' स्वामीजी बोले—'धर्म क्यों नहीं होगा?' वह

बोला—'मालिक की इच्छा बिना ऐसा करने में धर्म कैसे होगा ?' स्वामीजी बोले—'एकेंद्रिय जीवों ने कब कहा—हमारे प्राण लेकर दूसरे को पोषो। एकेंद्रियों के प्राण लूटने से धर्म कैसे होगा ?' (२६४)

किसी ने प्रश्न किया : 'एक बालक पत्थर से चींटियों को मार रहा था। किसी ने उससे पत्थर छीन लिया तो उसे क्या हुआ ?' स्वामीजी ने पूछा : 'छीनने वाले के हाथ क्या लगा ?' उसने जवाब दिया—'पत्थर।' स्वामीजी ने कहा—तुम्हीं विचार लो छीनने वाले को क्या होता है ?' (१२४)

दूसरा अभिनिवेश था—'एकेंद्रिय को मार पंचेन्द्रिय को पोषण करने में धर्म अधिक होता है।' स्वामीजी बोले: 'एकेंद्रिय से द्वीन्द्रिय के पुण्य अनंत होते हैं। द्वीन्द्रिय से त्रीन्द्रिय के। त्रीन्द्रिय से चोइन्द्रिय के और चोइन्द्रिय से पंचेन्द्रिय जीव के। एक मनुष्य पंचेन्द्रिय को पैसे भर लट खिला कर उसकी रक्षा करे तो उसे क्या हुआ ?' इस प्रश्न का वह जवाब देने में असमर्थ हुआ। स्वामीजी बोले : 'जिस तरह द्वीन्द्रिय को मार पंचेन्द्रिय को बचाने में धर्म नहीं, वैसे ही एकेंद्रिय मार पंचेन्द्रिय बचाने में धर्म नहीं।' (२४८)

किसी ने कहा—'भगवान् ने वनस्पति खाने के लिए बनाई है।' स्वामीजी ने पूछा : 'गांव में अगर एक भूखा सिंह आ जाए तो तुम क्या करोगे ?' वह बोला : 'मैं भाग कर गांव के बाहर चला जाऊंगा।' स्वामीजी ने कहा : 'भगवान् ने मनुष्य को सिंह का भक्ष्य बनाया है। तुम सिंह के भक्ष्य होकर क्यों भाग कर गांव के बाहर चले जाओगे ?' वह बोला : 'मेरा जी कष्ट पाने को तैयार नहीं। इसलिए भाग कर चला जाऊंगा।' स्वामीजी बोले : 'सर्व जीवों के विषय में यही बात जानो। मौत सबको अप्रिय है। उससे सब जीव दुःख पाते हैं।' (२३६)

स्वामीजी के सामने जिज्ञासा थी—'किसी ने पैसा देकर सर्प छुड़ाया। वह सीधा चूहे के बिल में गया। वहां चूहा नहीं था। सर्प छुड़ाने वाले को क्या हुआ ?' स्वामीजी ने कहा : 'किसी ने काग पर गोली चलाई। काग उड़ गया, उसके गोली नहीं लगी। गोली चलाने वाले को क्या होगा ? काग उड़ गया इससे उसके गोली नहीं लगी यह उसका भाग्य पर गोली चलाने वाले को तो पाप लग चुका। इसी तरह किसी ने सर्प को छुड़ाया, वह चूहे के बिल में गया अन्दर चूहा नहीं यह उसका भाग्य। पर सर्प को छुड़ाने वाला तो हिंसा का कामी हो गया।' (२७२)

स्वामीजी ने कहा : 'एक मनुष्य किसी दूसरे मनुष्य को कटारी से मारने लगा। वह मनुष्य बोला—'मुझे मत मारो।' तब वह बोला—'मेरे तुझे मारने के भाव नहीं हैं। मैं तो कटारी की परीक्षा करता हूं। देखता हूं वह कैसी चलती है।' तब वह बोला—गनीमत तुम्हारे कीमत आंकने को। मेरे तो प्राण जाते हैं।' (१०१)

अहिंसा के क्षेत्र में कार्य और भावना दोनों पर दृष्टि रखनी पड़ती है यह उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट है। स्वामीजी ने अहिंसा के क्षेत्र में तुच्छ एकेंद्रिय जीवों के प्राणों का भी उतना ही मूल्यांकन किया है जितना कि सृष्टि के सर्वश्रेष्ठ

प्राणी मनुष्य के जीवन का। एकेन्द्रिय जीवों के भी प्राण हैं। उन्हें भी सुख-दुःख होता है। मनुष्य के लिए उनके संहार में पाप नहीं, यह धर्म और अहिंसा के क्षेत्र में नहीं टिक सकता।

स्वामीजी कइयों को प्रिय थे और कइयों को अप्रिय। कइयों के लिए स्वागतार्ह थे और कइयों के लिए एक महान् भय। इस तरह एक ही व्यक्ति के अलग-अलग रूप दिखाई देते हैं। इसके कारण की स्वयं स्वामीजी ने ही मीमांसा की है। इसमें अपेक्षावाद है। स्वामीजी कहते हैं—'एक ही पकवान दो मनुष्यों के सामने आता है। नीरोग को वह मीठा लगता है और रोगी को कड़वा। यह वस्तु का अन्तर नहीं उसके भोक्ता का अन्तर है। सम्यक् दृष्टि को साधु अच्छा लगता है और मिथ्यादृष्टि को बुरा।' (३०३)

'गांव के मनुष्य दो व्यक्तियों के सामने आते हैं। एक व्यक्ति पीलिये का रोगी है वह उन सबको पीला ही पीला देखता है। दूसरा व्यक्ति स्वस्थ है। उसे वे पीले नहीं मालूम देते। वैसे ही मेरे श्रद्धा-आचार उनको प्रपंच मालूम देते हैं जिनमें स्वयं में प्रपंच है। जिनमें शुद्ध दृष्टि है उन्हें मेरे श्रद्धा-आचार में कोई खोट नहीं दिखाई देती।' (३००)

स्वामीजी के विचारों को सही रूप से तोलने की यदि कोई शुद्ध तुला हो सकती है तो वह आगम-वाणी है। स्वामीजी जैन-मुनि थे। जैन-शास्त्रों के आधार पर वे मुण्डित हुए थे। उनमें उनकी अनन्य श्रद्धा थी। उनके आचार, विचार और व्यवहार में जिनवाणी का प्रत्यक्ष प्रभाव है। इस कसौटी पर देखा जाए तो वे सौ टंच सोने की तरह खरे उतरते हैं।

स्वामीजी के इन दृष्टांतों का श्रीमद् जयाचार्य ने अपने **'भिक्षु यश रसायण'** नामक सुन्दर चरित्र-काव्य में भरपूर उपयोग किया है। संगीतमय मधुर पद्य में उन्हें गुम्फित कर स्वामीजी के एक मार्मिक जीवन-चरित्र की धरोहर उन्होंने भावी पीढ़ी को सौंपी है।

मेरी **'आचार्यसंत भीखणजी'** नामक पुस्तक में अनेक दृष्टांतों का हिन्दी अनुवाद और भाव स्फोटन है। इसी पुस्तक के द्वितीय खण्ड (अप्रकाशित) में अवशेष अन्य दृष्टांतों का प्रकरणानुसार उपयोग किया गया है।

युवाचार्यश्री महाप्रज्ञजी की बहुचर्चित पुस्तक **'भिक्षु विचार दर्शन'** में भी अनेक दृष्टांतों के हार्द को स्पष्ट किया गया है।

स्वामीजी के दृष्टांतों को आज तक हम व्याख्यानों में सुनते रहे हैं। प्रथम बार मूल राजस्थानी भाषा में 'तेरापंथ द्विशताब्दी समारोह' (वि० सं० २०१७) के अवसर पर पुस्तकाकार रूप में पाठकों के समक्ष आए थे। इनकी महत्त्वपूर्ण समालोचनाएं प्राप्त हुई और विद्वानों ने इस विधा की इस महत्त्वपूर्ण कृति को बहुत सराहा। साम्प्रतं मूल और हिन्दी अनुवाद तथा कुछ परिशिष्टों के साथ इसको प्रस्तुत करते हुए हमें परम प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

इस कृति की संयोजना में परमाराध्य आचार्यप्रवर, महामनस्वी युवाचार्यश्री (वर्तमान आचार्यश्री) महाप्रज्ञ तथा अन्यान्य मुनिवरों का अथक श्रम लगा है, जिसका मूल्यांकन करना मेरे जैसे व्यक्ति के सामर्थ्य से परे की बात है। सबका हृदय से आभारी हूं।

वि० २०४४ श्रावण शुक्ला ६
१-८-८७

श्रीचंद रामपुरिया
कुलपति
जैन विश्व भारती,
लाडनूं

अनुक्रम

क्रमांक	राजस्थानी पृष्ठांक	हिन्दी पृष्ठांक
१. बात करामात	१	१२१
२. उपगार ईंज कीधौ	१	१२१
३. चोखौ-खोटौ	२	१२२
४. निकमो आरंभ	२	१२२
५. राजीपो के वेराजीपो	३	१२३
६. राग-धेष	३	१२३
७. सिरोही राव रौ पालखौ	३	१२३
८. जिसो संग, विसो रंग	४	१२४
९. सांकड़ा ह्वैता-ह्वैता हुस्यां	४	१२४
१०. साध-असाध	५	१२४
११. सरधा अनै परूपणा रो भेद	५	१२५
१२. देवलोक रो जावणहार या नरक जावणहार ?	६	१२६
१३. म्हारै अवगुण काढणा इज है।	७	१२६
१४. सातो	७	१२७
१५. थांरे पानें नरक ईज पड़ी	७	१२७
१६. किण बात रो प्राछित्त	७	१२७
१७. दोरौ घणौ लागौ	८	१२८
१८. रात छोटी ने मोटी	८	१२८
१९. झालर विवाह री कै मूंआ री	८	१२८
२०. जिसौ गुल विसौ मीठौ	९	१२८
२१. खेती गांव रै गोरवै	९	१२९
२२. लाडू खांडो है पिण चोगुणी रौ	९	१२९
२३. निखेदणौ जरूरी	९	१२९
२४. हिंसा में पुन कियां	१०	१२९
२५. कुण तार काढ़ै ?	१०	१३०
२६. ओ झगड़ौ म्हां सूं नहीं मिटे ?	१०	१३०
२७. सूखा ठूंठां नै कांई दाहौ लागै ?	११	१३१
२८. नुखते रा लाडू	११	१३१
२९. श्रावक ने कसाई सरीखा	११	१३१
३०. तार मात्र वस्त्र राखणो नहीं	१२	१३२

क्रमांक	राजस्थानी पृष्ठांक	हिन्दी पृष्ठांक
३१. वस्त्र राखणौ क नहीं ?	१३	१३३
३२. रोटी रै वास्ते कियां छोड़ूं ?	१३	१३३
३३. समझाणै री कला	१४	१३४
३४. जिसौ देवै विसौ पावै	१४	१३४
३५. भैंस ब्यावै जद पधारो	१४	१३४
३६. धसके स्यूं तौ ताव न चढ्यौ	१४	१३४
३७. जमाई रोवा लाग जावै जद	१५	१३५
३८. थारो धणी किण सूं भूवो ?	१५	१३५
३९. डेरो मिल्या किसौ ज्ञान आय जावै	१५	१३५
४०. का कितरां नै कं कितरा ?	१६	१३५
४१. एक भागां पांचूं भांगे	१६	१३६
४२. कठिनाई में भी अडोल	१६	१३६
४३. मेरण्यां रो मोह	१७	१३७
४४. घणौ धर्म किण नै ? (१)	१७	१३७
४५. घणौ धर्म किण नै ? (२)	१८	१३८
४६. इसा पोता चेला चाहिजै नहीं	१८	१३८
४७. किण न्याय ?	१९	१३९
४८. आसौजी ! जीवौ छौ कै ?	१९	१३९
४९. साचा तौ म्हांनें ही कीधा	२०	१४०
५०. एकलड़ो जीव	२०	१४०
५१. आत्मा सात कै आठ ?	२१	१४०
५२. समगत रहणी कठण	२१	१४१
५३. उठो ! पडिकमणौ करो	२१	१४१
५४. नगजी सामी रो तेज	२२	१४१
५५. संका है तौ चरचा करां	२२	१४२
५६. सीख किणने ?	२२	१४२
५७. कैहणो कोनी	२२	१४२
५८. लड़नौ ह्वै तौ म्हासूं लड़	२३	१४३
५९. चोका रा नैहता, जीमावै एकीका नै	२३	१४३
६०. दीवाळ्यौ कुण ?	२३	१४३
६१. समझू जाणै	२३	१४४
६२. पाप क्यां नै ह्वै ?	२४	१४४
६३. घर किणरौ ?	२४	१४४
६४. म्है कद कह्यौ ?	२४	१४५
६५. मारणा इ छोड़ौ	२४	१४५
६६. दोष री थाप सूं साधपणौ किम रहसी ?	२५	१४५

क्रमांक	राजस्थानी पृष्ठांक	हिन्दी पृष्ठांक
६७. भागल कुण ? साबत कुण ?	२५	१४६
६८. जनमपत्री तौ पछै बणै	२५	१४६
६९. फुजाळ्या साऊ न हुवै	२६	१४६
७०. आचार्य पदवी आणी कठिन	२६	१४७
७१. विवेक	२६	१४७
७२. म्हांनै पुण्य किसतरै हुसी ?	२६	१४७
७३. मूरख हुवै ते मानै	२७	१४८
७४. बुद्धि सूं विचार्‌यो	२७	१४८
७५. कहणी करणी में फेर	२७	१४८
७६. दोनूं साचा	२८	१५०
७७. चार आंगुल बटकै रै वासते	२८	१५०
७८. इण में संका री कै बात ?	२९	१५०
७९. साहूकार, देवाळ्यो	२९	१५०
८०. पंचां ने पूछसूं	२९	१५१
८१. बड़ो मूरख	३०	१५१
८२. रखै, नवो कीजयौ करोला	३०	१५१
८३. अठै कांई दुःख थो ?	३१	१५२
८४. श्रावक नै समजाय लेवां	३१	१५२
८५. आज तौ रहवां हा	३१	१५२
८६. इसी विणती कीजौ मती	३१	१५२
८७. भगवान रै घर रा कासीद	३१	१५२
८८. सो कुण देख्या ?	३२	१५३
८९. आप री करणी मोटी है	३२	१५३
९०. समदृष्टि रै पाप लागै ?	३२	१५४
९१. एक भीखण बाकी रह्यौ है	३४	१५५
९२. खाधी तौ मिश्री, जाण्यौ जहर	३७	१५८
९३. आ वांचणी कुण दीधी ?	३७	१५९
९४. थारी कांई आसंग ?	३७	१५९
९५. इसो अन्याय तौ म्हे न करां	३८	१५९
९६. सोभाचन्द सेवग निरापेखी है	३९	१६१
९७. फूलां रौ दृष्टांत न मिलै	४०	१६२
९८. साध इज बाजै	४१	१६२
९९. किमत तूं कर लै	४१	१६३
१००. साध कुंण ? असाध कुंण ?	४१	१६३
१०१. म्हारो तौ जीव जावै है ?	४१	१६३
१०२. ऊ तौ अवसर उण वेळां इज	४२	१६३

क्रमांक	राजस्थानी पृष्ठांक	हिन्दी पृष्ठांक
१०३. भीखणजी थे इ मांजो	४२	१६४
१०४. थाली भांगी नहीं	४२	१६४
१०५. लुगायां गाळ्यां गावा लागी	४३	१६४
१०६. गैहणो कठासूं आसी ?	४३	१६५
१०७. इसो दोहरो जद मुक्ति मिले	४३	१६५
१०८. दोय घड़ी तौ सांस रोक ही रहां	४४	१६५
१०९. म्हारी मा घणी रोई	४४	१६६
११०. ढंढण रै अंतराय	४४	१६६
१११. तमाखू चोखी तौ है नहीं ?	४४	१६६
११२. ते बुद्धि किण कामरी ?	४५	१६६
११३. लातर गया	४५	१६७
११४. सम्यग्दृष्टि ?	४५	१६७
११५. समदृष्टि	४६	१६७
११६. बणी बणाई बांमणी	४७	१६८
११७. इसा भीखणजी कलावान	४८	१६९
११८. त्याग क्यूं करौ हो ?	४९	१७१
११९. लागा डाम पाछा लैणी आवै ?	४९	१७१
१२०. क्लामना बिना निर्जरा	५०	१७१
१२१. धान माटी सरीखौ लागै	५०	१७१
१२२. साधां रै असाता क्यूं ?	५०	१७२
१२३. चरचा कियां करणी ?	५०	१७२
१२४. हाथ में कांई आयौ ?	५०	१७२
१२५. आपरौ नाम कांई ?	५१	१७२
१२६. मिश्र री सरधा	५१	१७३
१२७. आरंभ घणौ हुवौ	५१	१७३
१२८. मरणवालौ बूड़े कै मारणवालौ ?	५१	१७३
१२९. उपकार संसार नौ क मोक्ष नौ ?	५२	१७३
१३०. साधु किण नै सरावै ?	५२	१७४
१३१. पाग कठा सूं आई ?	५३	१७४
१३२. चरचा घर धणी री तरै	५३	१७५
१३३. न्याय रा अर्थी नहीं	५३	१७५
१३४. भगवान रौ मारग पातसाई रस्तौ	५४	१७५
१३५. वर्तमान में हुवै तिकौ इज खरौ	५४	१७५
१३६. पाप उणानै लागसी	५४	१७६
१३७. नफौ भाव परमाणै	५५	१७६

क्रमांक	राजस्थानी पृष्ठांक	हिन्दी पृष्ठांक
१३८. बैरी नै पोखै, ते पिण बैरी	५५	१७६
१३९. धर्म कठा सूं ?	५५	१७७
१४०. मोख रो उपकार	५५	१७७
१४१. भारे करी माठी गति में जाय	५६	१७८
१४२. हळकापणा रै जोग स्यूं तिरै	५६	१७८
१४३. जीव हळको किम हुवै ?	५६	१७८
१४४. कुबद कर नै आप अळगो रहै	५६	१७८
१४५. जद तौ म्हे हा ही नहीं	५७	१७८
१४६. थे बेराजी क्यूं ?	५७	१७९
१४७. संलेखणा करणी पड़सी	५७	१७९
१४८. गहूं गहूं और खाखलो खाखलो	५८	१७९
१४९. जतन दया रौ कै कीड़ी रौ ?	५९	१८१
१५०. ते ठीक ही छै	६०	१८२
१५१. इसा अजाण है	६०	१८२
१५२. भगवती किसो अधम्मो मंगल है ?	६०	१८२
१५३. गधे री बात क्यूं करौ ?	६१	१८२
१५४. पांचूं नै साथै छोड़ी	६१	१८३
१५५. समाई नहीं तौ संवर	६१	१८३
१५६. कठेइ सूत्र में चाल्यो इज हुवेला ?	६१	१८३
१५७. गोहां री दाल न हुवै	६२	१८४
१५८. इतरा कारीगर नहीं	६२	१८४
१५९. केवली सूत्र व्यतिरिक्त इज हुवै	६२	१८४
१६०. किसो केलू ल्यासी ?	६२	१८४
१६१. दुरंगा क्यूं रंगो ?	६३	१८४
१६२. खूंचणां काढ़ता	६३	१८५
१६३. इसा वनीत बैणीरामजी	६३	१८५
१६४. इसा स्वामीजी अवसर ना जाण	६४	१८५
१६५. आंख्यां गमावता दीसै है	६४	१८५
१६६. ते लेवा जोग नहीं	६४	१८६
१६७. जायगा माप आवो	६४	१८६
१६८. कच्चो तेहिज	६५	१८६
१६९. आंगुण किणरा सूझ्या ?	६५	१८६
१७०. कांण राखै ज्यूं कोई नहीं	६५	१८७
१७१. कारणीक रो जाबतो करता	६५	१८७
१७२. थारै आ संका कठा सूं पड़ी ?	६६	१८७

क्रमांक	राजस्थानी पृष्ठांक	हिन्दी पृष्ठांक
१७३. आंधा जीमण वाला आंधा इ परुसण वाला	६६	१८८
१७४. डांडां ही सूझै नहीं	६६	१८८
१७५. ढांकणी में उसार्‌यौ	६६	१८८
१७६. दंड तौ उ गाम देवै ईज है	६७	१८८
१७७. साहमी बोलै जीसी	६७	१८८
१७८. औ पद सांचो कै झूठो ?	६७	१८९
१७९. बिचै बोलवा रौ काम हीज कांई ?	६७	१८९
१८०. एक भीखणजी स्वामी इज है	७८	१९२
१८१. खूंचणो काढै तो तेलो	७१	१९२
१८२. नींद में हेठो पड़ जाऊं तो	७१	१९३
१८३. प्रकृति सुधारवा रौ उपाय	७१	१९३
१८४. छेहड़े जातां मोर्‌यो मारू	७१	१९३
१८५. इसा दृढ़धर्मी	७२	१९३
१८६. मोनै निगै न पड़ी	७२	१९४
१८७. उपकार रै वास्ते	७२	१९४
१८८. आहार उनमान स्यूं द्यो	७३	१९४
१८९. आ तौ रीत थेट री है	७३	१९५
१९०. थांरी आज्ञा री जरूरत नहीं	७४	१९५
१९१. मर्यादा बांधी	७४	१९६
१९२. दीक्षा दीधी तौ संभोग भेळौ नहीं	७४	१९६
१९३. दिख्या दीज्यौ देख-देख	७४	१९६
१९४. संका रौ समाधान	७५	१९६
१९५. अपछंदापणौ सिरे नहीं	७५	१९७
१९६. सामजी और रामजी	७७	१९८
१९७. जो ठंडी रोटी छोडै ते लाडू छोड़ दै	७७	१९९
१९८. लड़को क्यूं ?	७७	१९९
१९९. गुळ कुण ल्यायौ	७८	२००
२००. लिखज्यो मती	७८	२००
२०१. थे पूछ्यौ सो प्रश्न संभालौ	७९	२००
२०२. तीन घर बधावणा	७९	२०१
२०३. तिण सूं बरजै	८०	२०२
२०४. स्वामीजी बोल्या	८०	२०२
२०५. थाणै नहीं, खाणै वैसे है	८०	२०२
२०६. सारा एक होय जावौ	८१	२०२
२०७. आ चरचा तौ घणी झीणी है	८१	२०३

क्रमांक	राजस्थानी पृष्ठांक	हिन्दी पृष्ठांक
२०८. पोथी पानां नै ज्ञान	८१	२०३
२०९. पुन्य कै मिश्र ?	८२	२०३
२१०. हिंसा बिना धर्म नहीं हुवै तौ ?	८२	२०४
२११. है रे कोई वैरी ?	८३	२०४
२१२. सूता सूता करवा रौ ठिकाणो	८३	२०५
२१३. महात्मा धर्म	८३	२०५
२१४. नीत लारै बरकत	८३	२०५
२१५. एक आखर रौ फरक	८४	२०५
२१६. परिग्रह किणरौ ?	८४	२०५
२१७. ओळ्यां खांगी क्यूं ?	८४	२०६
२१८. व्याकरण भण्यां हो ?	८४	२०६
२१९. केवली राज किम करै !	८५	२०६
२२०. बुद्धि बिनां समदृष्टि किम हुवै ?	८५	२०७
२२१. ओ पिण धर्म कहिणौ	८६	२०८
२२२. थांरे पिण बैठी दीसै छै	८६	२०८
२२३. असुद्ध वासण में घी कुण घालै	८७	२०८
२२४. पोतै गळै जद वस्त्र रै रंग चढ़ावै	८७	२०८
२२५. सरधणा एक, पर फर्सणा जुदी	८७	२०९
२२६. बात नहीं, बतुओ प्यारो	८७	२०९
२२७. जागां तौ परिग्रह मांही है	८८	२०९
२२८. सामायक री जाबता	८८	२१०
२२९. पोसा में पडिलेहण क्यूं ?	८८	२१०
२३०. सो व्रत अनै अव्रत दोनूं ई सूक जावै	८९	२११
२३१. मून पारसी	८९	२११
२३२. खोल नै दै तौ लै नहीं	९०	२१२
२३३. इहलोक-परलोक में भूंडा दीसै	९१	२१२
२३४. मारग कांई ओळख्यौ ?	९१	२१३
२३५. वर्तमान काल में मून	९१	२१३
२३६. नीलोती खावा नै	९१	२१३
२३७. काचरियां रौ अटक्यौ किसौ विवाह रहै है ?	९२	२१३
२३८. जमारौ एहल ईज गयो	९२	२१३
२३९. इसी थांरी दया	९२	२१४
२४०. कटार कोई पूणी नहीं है	९२	२१४
२४१. जद एक हो जावै	९३	२१४
२४२. ठंडी रोटी जीव क अजीव	९३	२१५

क्रमांक	राजस्थानी पृष्ठांक	हिन्दी पृष्ठांक
२४३. जोड़ै ते आछो के तौड़ै ते आछो	९४	२१५
२४४. यूं जोड़ां छां	९४	२१६
२४५. मोनैं साता उपजावै	९४	२१६
२४६. थांने धन है	९५	२१६
२४७. कठे दर्शन देवूं ?	९५	२१६
२४८. धरम हुवै कै पाप ?	९५	२१७
२४९. म्हे इसो काम न करावां	९६	२१७
२५०. पानैं पड़्यौ सो ही खरो	९६	२१८
२५१. अन्यायी नैं पाधरौ करे	९७	२१८
२५२. हूं पिण मिनखां नें भेळा करूं	९७	२१९
२५३. भगवान रौ समरण कर	९७	२१९
२५४. पांच रुपिया तौ कठीने जावै ?	९८	२२०
२५५. बापरां रौ जमारौ बिगड़तौ दीसे है	९८	२२०
२५६. और ही घणी चरचा है	९८	२२०
२५७. संसार रे मोह की ओळखांण	९९	२२१
२५८. संतोष आय गयौ	९९	२२१
२५९. मन मैं आई तौ खरी	९९	२२१
२६०. गृहस्थ रै भरोसै रहिणौ नहीं	१००	२२२
२६१. हूं मार्ग जाणूं छूं	१००	२२२
२६२. इसा जगत में बुद्धिहीण	१०१	२२३
२६३. भाठौ न्हाखै तौ ?	१०१	२२३
२६४. एकेन्द्री कद कह्यौ ?	१०१	२२३
२६५. विलापात किया कांई हुवै ?	१०१	२२३
२६६. दान-दया उठाय दीधी	१०२	२२४
२६७. झूठौ अर्थ घालणौ कठे ?	१०२	२२४
२६८. मुर्दै बोल बैठा	१०२	२२४
२६९. कोरो सुणीयां न जाय	१०३	२२५
२७०. आ बा ही है	१०३	२२५
२७१. सेंहदी जागां छूटै नाहीं	१०३	२२५
२७२. हिंसा रा कामी	१०४	२२६
२७३. बखांण सीख	१०४	२२६
२७४. बखांण थोड़ा	१०४	२२६
२७५. नदी रै दो तीरां पर	१०४	२२६
२७६. म्हे या न जाणता	१०५	२२७
२७७. थारै लेखण काढ़वा रा त्याग है	१०५	२२७

क्रमांक	राजस्थानी पृष्ठांक	हिन्दी पृष्ठांक
२७८. टंटो मिट्यौ	१०५	२२८
२७९. वरतारौ समदृष्टि देवता रौ	१०६	२२८
२८०. इसौ साधु रौ मार्ग	१०६	२२८
२८१. तिण में दोष नहीं	१०६	२२८
२८२. संथारौ करणौ	१०६	२२९
२८३. वांदणा बगड़ै ज्यांरा गवीजै	१०६	२२९
२८४. घर तौ लूट लियौ नै माथै वळे डंड	१०७	२२९
२८५. वर्तमान काले मून	१०७	२२९
२८६. सामायक नै धको देई पाड़ै है	१०७	२३०
२८७. एहीज भाव भक्ति करसी	१०८	२३०
२८८. अबारू टीपण तेज है	१०८	२३०
२८९. देवाळौ किम ऊतरै ?	१०८	२३१
२९०. दान मुख्य काया जोग	१०९	२३१
२९१. घी सहित घाट उरही लीधी	१०९	२३२
२९२. सब घरां में गोचरी क्यूं नहीं जावौ ?	११०	२३२
२९३. जैसा गुरु वैसा देव और धर्म	१११	२३३
२९४. म्हांरै करणी सूं कांई	११२	२३४
२९५. मांहै तांबो नै ऊपर रूपो	११२	२३४
२९६. आप 'जी' क्यूं कहवो ?	११३	२३५
२९७. सपूत कपूत	११४	२३६
२९८. चोधरपणै में खींचातांण घणी	११४	२३६
२९९. धसका पड़ै	११४	२३७
३००. पीळौ ही पीळौ निजर आवै	११५	२३७
३०१. तीन नावा	११५	२३७
३०२. ते कांई साधपणौ पाळै ?	११५	२३८
३०३. पकवान तौ कड़वा कीधा	११६	२३८
३०४. म्हे कातीक रा ज्योतिसी छां	११६	२३८
३०५. मिथ्यात रोग गमावा रौ अर्थी	११६	२३८
३०६. नीसाणे चोट लागे है	११६	२३८
३०७. ओ मार्ग किता वर्ष चालसी ?	११७	२३९
३०८. नाम में फेर है	११७	२३९
३०९. उवै तौ खप करै है	११७	२३९
३१०. भीखणजी चोखा साध है	११७	२३९
३११. न करावौ तौ सरावौ क्यूं ?	११८	२४०
३१२. थाप क्यूं करौ ?	११८	२४०

क्रमांक	राजस्थानी पृष्ठांक	हिन्दी पृष्ठांक
परिशिष्ट-१ हेम संस्करण		
१. इतरी चरचा इं मौनै न आवै कांई ?	२४३	२८१
२. नरक पिण अजीव जासी	२४३	२८१
३. म्हासूं चरचा कांई करौ ?	२४४	२८२
४. कांई जाण नै बतायौ ?	२४४	२८२
५. हेमजी चरचा करसौ ?	२४४	२८२
६. दूजी चरचा करौ	२४५	२८३
७. म्हे क्यांनैं जावां	२४६	२८४
८. भीखणजी उपगार मानै है	२४६	२८४
९. थांरी श्रद्धा थां कनै, म्हांरी म्हां कनै	२४७	२८४
१०. किण रा टोळा री ?	२४७	२८५
११. थे तो जीवता बैठा हो ?	२४७	२८५
१२. हिंसा सूं धर्म उठ गयौ	२४८	२८५
१३. इतरौ फेर क्यूं ?	२४८	२८५
१४. म्हांनै असूझतौ लेणौ नहीं	२४८	२८६
१५. पूण्यां तौ कतणीयां में मोकळी दीसे है	२४९	२८६
१६. कांई सूंस करूं ?	२४९	२८६
१७. ओ मनोरथ तौ फळतौ दीसै नहीं	२४९	२८६
१८. कांई श्रद्धौ ?	२४९	२८७
१९. अव्रत डावी कानी के जीमणी कानी ?	२५०	२८७
२०. तीन मिच्छामि दुक्कडं	२५०	२८७
२१. कांई चरचा करण रौ मन है ?	२५२	२८९
२२. समकित आवणी दोरी	२५४	२९१
२३. आछौ देवै उपदेश	२५४	२९१
२४. छेहड़े संथारौ करशां	२५५	२९२
२५. पहिला पुन्य पछै निर्जरा	२५५	२९२
२६. शुभ जोग आश्रव के निर्जरा ?	२५५	२९२
२७. समदृष्टि री मति ते मतिज्ञान	२५६	२९२
२८. दोयां में एक झूठ	२५६	२९३
२९. दुमनो चाकर दुसमण सरीखौ	२५७	२९३
३०. भरत क्षेत्र में साधां रो विरह	२५७	२९३
३१. त्याग क्यूं भंगावो ?	२५८	२९४
३२. चरचा इसी करता तौ किसायक दीसता ?	२५८	२९५
३३. ऊंडी दृष्टि	२५९	२९६
३४. संका हुवै तौ चरचा पूछल्यौ	२५९	२९६

क्रमांक	राजस्थानी पृष्ठांक	हिन्दी पृष्ठांक
परिशिष्ट—२ श्रावक संस्मरण		
१. थे म्हाने भला लजाया	२६३	२९७
२. जा रे पैंजार्‌या	२६३	२९७
३. मौने लंगूरियौ कह्यौ	२६३	२९७
४. इम हीज हालता था के ?	२६३	२९७
५. भरभोलिया री माला समान	२६४	२९८
६. दीवौ किया अंधारौ मिटै	२६४	२९८
७. चोखौ मारग किण रौ ?	२६४	२९८
८. अन्न पुन्ने म्हांरै नै वस्त्र पुन्नै थांरै	२६४	२९८
९. लाडू देई भाटौ उरहो लियौ, उणनें कांई थयौ ?	२६५	२९८
१०. थां बिचै म्हे वधता ठैहर्‌या	२६५	२९९
११. कर्म कितरा ?	२६५	२९९
१२. कूटणौ कठै है ?	२६६	२९९
१३. इसौ प्रश्न तौ कबहु न सुण्यौ	२६७	३००
१४. नव तत्त्वरी ओळखणा बिनां समकत किम आवै ?	२६७	३०१
१५. इसा मानवी थोड़ा	२६७	३०१
१६. जीव रौ अजीव थयौ कांई ?	२६८	३०१
१७. सुभ जोग संवर किसै न्याय ?	२७०	३०३
१८. धर्म हुवौ के पाप ?	२७०	३०३
१९. साहमीवच्छल नै क्यूं निषेधौ ?	२७०	३०४
२०. ऊ वैद्य बुद्धिहीण	२७०	३०४
२१. अै किसी लेस्या रा लखण है ?	२७१	३०४
२२. डोरी राख्यां पिण दोष ?	२७१	३०४
२३. दोय तौ म्हैं कह्या, आगै थे कहो	२७१	३०५
२४. सैं पूरिया ई पूरिया है	२७२	३०५
२५. थुकमथुक्का, धक्कमधक्का पछै छक्कमछक्का	२७२	३०५
परिशिष्ट—३ फुटकर संस्मरण		
१. वचन तौ तीखौ पाळ्यौ	२७७	३०८
२. बचावौ तो थै ई कोई नहीं	२७७	३०८
३. एक आळ्यौ फेर चाहिजै	२७७	३०८
४. तूंतरा-तूंतरा करनै बिखेर दां	२७८	३०८
५. फकीर वालौ दुपटौ	२७८	३०९
६. बड़ो कर्म है नाम को	२७९	३१०

७. जांण्यो एक सुसलो बधतो मार्‍यो	२७९	३१०
८. भीखणजी रो साध तो एकलो नहीं फिरै	२८०	३११
परिशिष्ट—४ शब्दानुक्रम		३१३
परिशिष्ट ५—विशेष शब्द		३१९
० संशोधन पत्रक		३२३

१. बात करामात

बून्दी मै सवाईराम ओस्तवाळ चरचा करतां भीखणजी स्वामी कह्यौ—गाय भेंस रा मूंहढा आगै घणौ चारौ नाख्यां ओगाळौ करै ।

जब तेह कहै—मोनै ढांढौ कीयौ । वैराजी थयौ ।

तब स्वामीजी कह्यौ—थे ढांढा थयां म्हांरौ ज्ञान चारौ थाय । इम कह्यां राजी थयौ । पछै सवाईराम गुरु कीया ।

* किस्नारपुन

एकदा सवाईराम नै भेषधार्‌यां कह्यौ—म्है तेरापन्थ्यां नें यूं जाब दिया, यूं जाब दिया, यूं हठाया ।

जद सवाईराम बोल्यौ—दोयां रै झगड़ौ लागां एक जणै तौ पोता रौ घर किस्नारपुन कियौ । दूजौ कजियौ करतौ डरै । घर की जाबता करै, ज्यूं तेरापंथी तौ साधपणां री जाबता करै, सो बोलता डरै । थे थांरौ घर किस्नारपुन कीयौ । साधपणां री जाबता नहीं । सो मन आवै ज्यूं बोलौ । इम कही कष्ट कीधौ ।

* झूठी चुगली

एक दिन चरचा करतां सवाईराम नै भेषधारयां कह्यौ—थे म्हांनै दोषीला कहौ, पिण थांरा गुरा नै पिण किंवारियां रौ दोष लागै छै ।

जब सवाईराम कह्यौ—एक राजा रौ प्रधांन राजा रौ माल खात्रै नहीं, और दूजा प्रधान धेषी । सो राजा कनै चुगली खाधी—ए आप रौ माल उड़ावै छै । जब राजा दोयां नै भेळा कर पूछ्यौ । तब ते चुगलखोर कहै—डावड़ा नै दरबार रा पाना स्याही लेखणा दीधी ।

जद प्रधान कह्यौ—पाना स्याही लेखणा तौ भणवा नै दीधी छै । ए भणिया राजा रै इज काम आवसी । राजा सुणीने राजी थयौ । चुगल फीटो पड्यौ । चुगल झूठी चाड़ी खाधी, अणहुंतो खूंचणो काढ्यौ, ज्यूं थे किंवाड़िया रौ दोष बतावौ सो थे पिण झूठा छो ।

२. उपगार ईज कीधौ

पाली मैं भीखणजी स्वामी आज्ञा लेइने एक हाट मै ठहर्‌या । सो …… उण दुकान वाला रै घरे जाय बाई नै कह्यौ—ए काती सुद पूनम तांई जाय नहीं ।

जद तिण बाई स्वामीजी नै कह्यौ—म्हारी आज्ञा नहीं ।

जद भिक्खु[1] कह्यौ—चोमासै मै पिण तूं कहसी जद परहा जासां ।

जद बाई कह्यौ—मोनें थां सरीखा कहि गया—चौमासौ लागां पछै जाय नहीं । तिणसूं आज्ञा नहीं ।

पछै स्वामीजी आप गौचरी ऊठ्या । उदैपुरिया बाजार मै एक मैड़ी जाची । आप बैठा नै साधां नै मेल उपगरण मंगाय लिया । दिनें ऊंचा रहै । रात्रि हेठै दुकान मै वखाण देवै । परखदा घणी आवै । लोक घणा समज्या । .... सिज्यातर नै घणौं ई कह्यौ—थे जागा क्यूं दीधी ? अै अवनीत निन्हव छै ।

जब ते कहै—काती पून्यूं तांइ ना कहूं नहीं ।

पछै थोड़ा दिनां मै मेह घणौ आयां पहिली उतरीया तिण हाट रौ पाट भागौ । सैंकड़ा मण बोझ पड्यौ । ए बात स्वामीजी सुणने कह्यौ—म्हांनै हाट छुड़ाई त्यां ऊपर छद्मस्थ रा सभाव थी लैहर आवा रौ ठिकांणौ, पिण म्हांसूं तौ उपगार ईज कीधौ, ऐसा खिम्यावांन ।

३. चोखौ-खोटौ

पींपाड़ मै भीखनजी सांमी नै रुघनाथजी रौ साध जीवणजी कहै—साधु रौ आहार अव्रत प्रमाद मै है ।

जद स्वामीजी कहै—भगवान री आज्ञा छै सो काम चोखौ । पिण जीवणजी मान्यौ नहीं ।

फेर स्वामीजी पूछ्यौ—साधु आहार करै सो काम चोखौ के खोटौ ?

जीवणजी बोल्यौ—साधु आहार करै ते खोटौ काम, त्यागै ते चोखौ काम ।

दिशां आदि जातां मिलै । जद स्वामीजी पूछै—जीवणजी ! खोटौ काम कीधौ कै करणौ है ? इम बार-बार पूछतां लातरियौ । कहै—भीखनजी ! साधु आहार करै सौ काम चोखौइ है ।

४. निकमो आरंभ

कंटाळिया मै भीखणजी स्वामी रौ मित्र गुलोजी गाधिया । तिणनैं स्वामीजी पूछ्यौ—गुला ! कांइ खेती कीधी ?

हां स्वामीनाथ ! कीधी ?

स्वामीजी पूछ्यौ—उपत-खपत कीकर है ?

जद गुलजी बोल्यौ—स्वामीनाथ ! रुपिया दश लागा, कांयक हळ रै भाड़ा रा, कांयक निनाण रा,[2] कांयक बीज रा, सर्व दस रुपिया लागा ।

१. भीखणजी स्वामी का बोलचाल में प्रयुक्त नाम ।

२. निदाण (क्वचित्) ।

स्वामीजी पूछ्यौ—पाछो कितरोक आयौ ?

जद गुलजी कह्यौ—स्वामीनाथ ! रुपिया दशेक रौ माल पाछौ आयौ । इतराक रुपिया रा मूंग, इतरौक चारौ, इतरीक बाजरी—सर्व रुपया दशेक रौ माल पाछौ आयौ । लागौ जितरौ तौ आ गयौ, खेती बापरी मैं तौ चूक नहीं ।

जद स्वामीजी बोल्या—गुला ! दश रुपिया कोठा री माळी मैं पड़िया रहता तौ इतरौ पाप तौ न लागतौ । इसौ आरम्भ क्यूं कीधौ ?

५. राजीपो कै वेराजीपो ?

देसूरी नौ नाथो साधु, स्त्री बेटी मां छोड़ दिख्या लीधी । पिण प्रकृति करली, आछी तरह आज्ञा मैं चालै नही । तीन वर्ष आसरै टोळा मैं रह्यौ । पछै । टोळा वारै निकळ गयौ । कनै हुंतां त्यां साधां स्वामीजी नें आय कह्यौ—नाथो छूट गयो ।

जद स्वामीजी कह्यो—किणहि रे गूंबड़ो दूखतो घणौ नै पछै फूट गयौ तौ ऊ राजी हुवै के वैराजी ?

साधां कह्यो—राजी हुवै ।

स्वामीजी कह्यौ—ज्यूं दुखदाई छूटां वेराजीपौ नहीं ।

६. राग-धेष

राग-धेष ओळखायवा स्वामीजी दृष्टांत दियौ । किणहि डावरा रै माथा मै दीधी । जद तौ लोक उणनैं ओळंभो देवै—भला आदमी ! छोरा नां माथा मै क्यूं दै ? अनै किणही डावरा नां हाथ मै लाडू दियौ । तथा मूळौ दियौ । उणनै कोई वरजै नहीं । ओ राग ओळखणौ दोहरौ, अनै ऊ धेष ओळखणौ सोहरो । तिण सूं वीतराग कह्या, पिण वीतधेष न कह्या । राग मिट्यां धेष तौ पहिलां इज मिट जाय ।

७. सिरोही राव रौ पालखौ

जयमलजी रा टोळा मांहि थी सं. १८५२ रै आसरै गुमांनजी, दुर्गादासजी, पेमजी, रतनजी आदि सोळै जणां नीकळ्या । थानक, नितपिण्ड, कलाल रौ पाणी वहिरणौ आदि छोड, नवौ साधपणौ पचख्यौ, पिण सरधा तौ उवाहीज पुन री ।

जद लोक कहिवा लागा—भीखणजी नीकळ्या ज्यूं ए ही नीकळ्या ।

जद स्वामीजी बोल्या—सिरोई नां राव वाळौ पालखौ खड़ौ कियौ है । सिरोई नां राव नां अमराव, कामदार आदि मतौ कियौ—उदैपुर, जैपुर, जोधपुर वाळां रै पालखी । आपांरै इ पालखी बणावौ । इम विचार, वांस

बांध, ऊपर छायां करी, लाल वस्त्र ओढाय पालखौ वणायो। पालखी रो वांस तौ लांक सहित वक्र पणै हुवै, तिण मै तौ समझै नहीं, अनै यां पालखौ वणायौ ते पाधरौ वांस घाल। विपरीत पणै दीसै। एहवा पालखा मै राव नें वेसाण हवा खावा नीकळ्या। साथै मनुष आगै-पाछै घणा। गाम वारै आया। जब खेत कनै रूंख री छायां विश्राम लियौ। जद करसणी बोल्या—अठै मां बाळो रे, मा बाळो ! छोहरा छोहरी बीहेला।

जद त्यांरा चाकर साथै हुंता ते बोल्या—मा बोल रे, मा बोल। रावजी है रे, रावजी।

जद करसणी बोल्या—बूड़ गइ बात ! रावजी मर गया ! म्है तौ रावजी री मां जाणी थी।

जद चाकरां करसण्यां नै कह्यो—जयपुर, जोधपुर, उदयपुर वाळा रे पालखी तिणसूं यांरे इ पालखौ वणायौ है। सो रावजी अठै हवा खावा आया है। जद करसण्यां कह्यौ—डौळ सरीखो क्यूं बणायो ?

स्वामीजी कह्यौ—जैसो सिरोइ नां राव रौ पालखौ जिसो यां नवौ साधपणौ पचख्यौ है। पिण सरधा खोटी। जीव खवाया पुन सरधै, सावद्य दान मै पुन सरधै, तिणसूं समकत चारित्र एक ही नहीं।

८. जिसो संग, विसो रंग

गुमानजी रौ साध दुर्गादासजी तिणनै भीखणजी स्वामी कह्यौ—म्है आधाकर्मी थांनक मै दोष बतावता, जद थे मानता नहीं। अनै अबै उणांनै छोड्यां पछै थे इ थानक निषेधवा लागा।

जद दुर्गादासजी बोल्या—रावण रा उमराव रावण नै खोटो जाणता था, पिण गोळी राम कानी वाहता। ज्यूं उणां भेळा हुंता, जद म्है पिण थानक न निषेधता। अनै थे थानक निषेधता जद म्है धेष करता।

९. सांकड़ा ह्वैता-ह्वैता हुसां

गुमानजी रौ साध पेमजी, हेमजी स्वामी नै बोल्यौ—हेमजी ! तीन तूंबड़ा बधता हुंता ते आज फोड़ न्हांख्या।

जब हेमजी स्वामी कह्यौ—उणां मांहि थी नीकळ नै नवौ साधपणौ पचख्या नै तौ घणा दिन थया, अनै तीन तूंबड़ा वधता आज परठ्या कहौ ते किण कारण ?

जद पेमजी कह्यो—ढीला पड़िया था सो सांकड़ा ह्वैता-ह्वैता हुसां।

पछै हेमजी स्वामी भीखणजी स्वामी नै कह्यो—महाराज ! आज पेमजी इसी बात कही—"ढीला पड्या सो सांकड़ा ह्वैता-ह्वैता हुसां।"

जद स्वामीजी बोल्या—थैं यूं कह्यो क्यूं नहीं—किणही जावजीव शील

आदर्‌यौ । छव महीनां पछै बोल्यौ—एक स्त्री म्हे आज छोड़ी । जद किण ही कह्यो—थे शील आदर्‌यां नै तो घणा महीनां थया है नी ? जद ते बोल्यौ —ढीला पड्‌या हा सो सांकड़ा ह्वै ता-ह्वै ता हुसां ।

१०. साध-असाध

पादु रा उपाश्रय मै भीखणजी स्वामी नै हेमजी स्वामी गोचरी उठता था । इतरै सामीदासजी रा दोय साध मेला वस्त्र, खांधे पोथ्यां रा जोड़ा, विहार करता 'भीखणजी कठै ?', 'भीखणजी कठै ?" इम करता आया । स्वामीजी कह्यौ—म्हारौ नाम भीखण । तब उवे बोल्या—थांनै देखवारी मन मै थी ।

जद स्वामीजी कह्यौ—देखौ ।

जद उवे बोल्या—थे सर्व बात आछी करी पिण एक बात आछी न करी ।

स्वामीजी कह्यौ—कांइ ?

जद त्यां कह्यौ—बावीस टोळां रा म्हे साध त्यांनै थे असाध कहो छो ते ।

जद स्वामीजी कह्यौ—थे किणरा साध ?

जद त्यां कह्यौ—म्है सामीदासजी रा साध ।

जद स्वामीजी कह्यौ—थांरा टोळा मै इसो लिखत है—इकीस टोळां रो थांमें आवै तो दिख्या देइ मांहे लेणौं । इसो लिखत है सो थें जांणौ हौ ?

जद त्यां कह्यौ—हां जांणा छां ।

जद स्वामीजी कह्यौ—इक्कीस टोळा तौ थे इ उथाप्या । गृहस्थ नै इ दीख्या देइ लेवौ अनै त्यांनें इ दीख्या देइ ने मांहै लेवो । इण लेखै त्यां इक्कीस टोळा नै गृहस्थ बरोबर गिण्या । सो इक्कीस टोळा तौ थे इ उथाप्या । एक थांरौ टोळो रह्यौ सौ भगवान कह्यौ—बेलौ प्रायश्चित्त रौ आयां तेलौ देवै तौ देणवाळा नें तेलो आवै । जो उणांनें साध सरधौ हो नै फेर उणांनें नवौ साधपणौ देवौ, सो थांरे लेखे थांनें साधपणौ आवै । इण लेखै थांरौ टोळौ पिण उथप गयो ।

ते सुण नै बोल्या—भीखणजी थांरी बुध जबरी । इम कहि जावा लागा ।

स्वामीजी कह्यौ—अठै रहौ तौ आज चरचा करां ।

जद ते बोल्या—म्हांरै तौ रहिवा री थिरता नहिं । इम कहि चालता रह्या ।

११. सरधा अनै परूपणा रो भेद

एक गाम मै स्वामीजी ऊतर्‌या । अमरसिंहजी रा दो साध—ईसरदास

जी, कोजीरामजी आया। उवै ऊतर्या तिहां स्वामीजी जाय ऊभा। प्रश्न पूछ्यौ—अणुकम्पा आंणने किण ही भूखा मरता नै मूळा दिया, तिणनै कांइ हुवौ ?

जद उवे बोल्या—इसौ प्रश्न तौ मिथ्याती हुवै सौ पूछै।

जद स्वामीजी बोल्या—पूछणवाळां तौ पूछ लीयो। पिण कहिणवाळा कह्यां मिथ्याती हुवै तौ मत कहो।

जद ते बोल्या—म्हे तौ कहां छां—मूळाँ मै पाप, पाप।

जद स्वामीजी कह्यौ—मूळां मै तो पुन-पाप दोनूं है। पिण मूळा अणुकंपा आणने दुवायां केइ मिश्र कहै। जद कह्यौ—मिश्र कहै सो पापी।

फेर पूछ्यौ—केई पाप कहै। जद कह्यौ—पाप कहै सोई पापी।

फेर पूछ्यौ—केई पुन कहै। जद त्यां कह्यौ—पुन कहै सोई पापी।

जद स्वामीजी फेर विचारणा ऊंड़ी कर नै बोल्या—केई पुन सरधै है।

जद त्यां कह्यौ—सरधसी मन आइ ज्यूं।

जद स्वामीजी कह्यौ—थांरे श्रद्धा पुन री। थे पुन परूपौ नहीं, पिण पुन सरधौ हौ। इत्यादिक कहि कष्ट करी ठिकाणै पधार्या।

१२. देवलोक रो जावणहार या नरक जावणहार ?

पाली मैं एक जणौ भीखणजी स्वामी सूं चरचा करतां ऊंधौ अंवळौ बोलै। कहै--थांरा श्रावक इसा दुष्टी सो किण ही रा गळा मांहि थी पासी नहीं काढै।

घणौं विपरीत बोलतां स्वामी भीखणजी बोल्या—थांरा नै म्हांरा मत कहौ, समचै इ बात करो।

जब कांयक नजीक आय ने कहै—कांइ समचै बात कहौ ?

तब स्वामीजी बोल्या—एक जणें रूंखड़ा सूं पासी खाधी। दोय जणा मारग जाता उणनै देखी। पासी काढै ते किसोयक ? अनै नहिं काढै ते किसोयक ?

तब ते बोल्यौ—पासी काढै ते महा उत्तमपुरुष, मोख रौ जावणहार, देवलोक रौ जावणहार, दयावंत। घणा गुण कीधा। नहीं काढै जिकौ महापापी, महादुष्टी, नरक रौ जावणहार।

जद स्वामीजी कह्यौ—थे नै थांरा गुरु दोनूं जणां जाता हा। उणरी पासी कुण काढै ?

जब उ बोल्यौ—हूं काढूं।

थारा गुरु काढै क नहीं ?

जब कहै—उवे क्यांनें काढै। उवे तो साधु है।

जब स्वामीजी कह्यौ—मोख देवलोक रौ जावणहार तौ तूं ठहर्यौ।

थारै लेखै नरक जावणहार थांरा गुरु ठहर्‌या। जब घणौं कष्ट हुवौ। जाब देवा समर्थ नहीं।

१३. म्हारै आंगुण काढणा इज है

किण ही कह्यौ—अहो भीखणजी ! बाइसटोळा वाळा थांरा आंगुण काढै है।

जद स्वामीजी कह्यौ—आंगुण काढै है के घालै है ?

जब ते बोल्यौ—आंगुण काढै है।

जद स्वामीजी कह्यौ—छोनीं काढता। कांयक तौ उवे काढै, कांयक म्है काढां। म्हांरै आंगुण काढणा इज है।

१४. सातो

पीपार मै कितराइक जणां मनसोबौ करने पूछ्यौ—हो भीखणजी ! लोकां मै यूं कहै छै—'सात-सात तौ देस्यूं नै एक-एक गिणस्यूं', तेहनों अर्थ कांई ?

जद स्वामीजी कह्यौ—एतौ पाधरौ अर्थ छै। सात सुपारी देवै नै एक सातो गिणै। लोक सुणने अचरज थया।

१५. थांरे पानें नरक ईज पड़ी

भीखणजी स्वामी देसूरी जातां घांणेराव नां महाजन मिल्या। पूछ्यौ—थांरो नाम कांई ?

स्वामीजी बोल्या—म्हारौ नांम भीखण।

जब ते बोल्या—भीखण, तेरापन्थी ते तुम्हें ?

जद स्वामीजी कह्यौ—हां, उवे हीज।

जब ते क्रोध कर बोल्या—थांरो मूंहढ़ौ दीठा नरक जाय।

तिवारे स्वामीजी कह्यौ—थांरो मूंहढ़ौ दीठा ?

जब त्यां कह्यौ—म्हांरो मूंहढ़ौ दीठा देवलोक नै मोख जाय।

जद स्वामीजी कह्यौ—म्हैं तो यूं न कहां—'मुंहढ़ो दीठां नरक स्वर्ग जाय' पिण थांरी कहिणी रै लेखै थांरौ मूंहढ़ौ तौ म्हे दीठौ सो मोख नै देवलोक तौ म्हे जास्यां। अनै म्हांरौ मूंहढ़ो थे दीठौ सो थांरी कहिणी रै लेखै थांरै पानें नरक ईज पड़ी।

१६. किण बात रो प्राछित्त

संवत् अठारे पैंतालीस रै वर्षे पींपार चोमासौ कीधौ। हस्तूजो,

कस्तूजी रौ पिता जगू गांधी, तिणरै चरचा करतां श्रद्धा बैठी। पछै भेखधारी जगू गांधी नै कह्यौ—भीखणजी री श्रद्धा खोटी। किण ही श्रावक नै वासती दीधा मैं ई पाप कहै, किण ही गृहस्थ री वासती चोर ले गयौ तिण मैं ई पाप कहै। इम चोर नै श्रावक सरीखौ गिणै।

जद जगू गांधी स्वामीजी नै ए बात पूछी—ए न्याय किम ?

जद स्वामीजी कह्यौ—उणांनै पूछणौ—थारी पछेवड़ी एक तौ चोर ने ले गयौ, एक थे श्रावक नै दीधी, थांनै किण बात रौ प्राछित्त आवै ? जो उवे चोर ले गयौ तिणरौ प्राछित्त न कहै अनै श्रावक नै पछैवड़ी दीधी रो प्राछित कहै तौ उणांरै लेखै इज देणौ खोटौ ठैहर्यौ।

पछै जगू गांधी उणांनै छोडने स्वामीजी नै गुरु किया।

१७. दोरौ घणौ लागौ

संवत् अठारे पैंतालीसे पींपार चौमासै घणां लोक समज्या। जगू गांधी पिण समज्यौ, जिणरौ भेषधार्‌यां रा श्रावकां नै दोरौ घणौ लागौ। जब लोक कहै—भीखणजी जगूजी समजतां बीजा नें इ दोरौ लागौ पिण खेतसीजी लूणावत नै तो दौहरो घणों इज लागौ। सोच घणौ करै।

जद स्वामीजी कह्यौ—परदेश मैं चल्यां री संभळावणी आयां सोच तौ घणा इ करै, पिण लांबी कांचली तौ एक जणी इज पैहरै। तिम खेतसीजी पिण जाणवौ।

१८. रात छोटी ने मोटी

तिण हिज चौमासै वखाण सुणने लोक राजी घणा हुवै। कोई धेषी कहै—रात्रि घणी आई सवा पौहर, दौढ पौहर।

जब स्वामीजी कहै—दुःख री रात्रि मोटी लखावै। विहावादिक सुख री रात्रि छोटी लखावै अनै समीं सांझ मनुष मूंआं ते दुख री रात्रि घणी मोटी लखावै। ज्यूं वखाण न गमैं ज्यांनै रात्रि घणी मोटी लखावै।

१९. झालर विवाह री के मूंआ री

तिण हि चौमासै केइ वखाण तौ न सुणैं नै अळगा बैठा निंद्या करै। जद किण ही कह्यौ—भीखणजी! थे तौ वखांण देवौ नै ए निंद्या करै।

जद स्वामीजी कह्यौ—श्वान रौ स्वभाव झालर वाज्या रोवण रौ, पिण यूं न समझै या झालर विहाव री छै के मूंआ री छै। ज्यूं ऐ यूं न जाणैं औ वखांण मैं ज्ञान री बारता वचै, तिणसूं राजी होणौ जठै इ रह्यौ अपूठी निंद्या करै। यांरै निंद्या रौ स्वभाव छै, तिणसूं ऊंधी सूझै।

२०. जिसौ गुळ विसौ मीठौ

तिण पींपार मै एक गैबीरांम चारण भगत थयौ । ते लोकां मै पूजावै । भगतां नै लापसी जीमावै । तिणनै लोकां सीखायौ तूं भगतां नै लापसी जीमावै, तिणमै भीखणजी पाप कहै ।

जब ते गेबीराम घोटौ हाथ मैं, गूघरा घमकावतौ स्वामीजी कनै आयौ । कहै—हे भीखण बाबा ! हूं भगतां नै लापसी जीमाऊं सौ कांई हुवै ?

स्वामीजी बोल्या—लापसी मै जैसो गुळ घालै जैसी मीठी हुवै ।

इम सुणने घणौं राजी हुवौ । नाचवा लागौ । भीखण बाबै भलौ जाब दीधौ ।

लोक बोल्या—भीखणजी पहिलां उत्तर जाणै घड़ राख्यौ ईज हूंतौ ।

२१. खेती गांव रै गोरवै

संवत् अठारे तेपनै सोजत मै चोमासौ कीधौ । लोक घणां समज्या । जब किणहि कह्यौ—भीखणजी ! उपगार तौ आछौ कियौ । घणां नै समझाया ।

जद स्वामीजी बोल्या—खेती कीधी, पिण गाम रै गौरवै है सो गधा आय न वड़ीया तौ टिकसी, बाकी काम कठिण ।

२२. लाडू खांडौ है, पिण चोगुणो रौ

स्वामीजी नीकळ्या । साधवियां न हुई तठा पहिलां किणहि कह्यौ—थांरे तीरथ तीन हीज है । लाडू है पिण खांडौ है ।

जद स्वामीजी बोल्या—खांडौ है पिण चौगुणी रौ है ।

२३. निखेदणौ जरूरी

रीयां मै बखाण वाचतां आचार नीं गाथा सुणने मोतीरांम बोहरौ बोल्यौ—भीखणजी ! बांदरौ बूढौ हूऔ ह्वै तौ ही गुळाच खेलणी छौड़ै नहिं । ज्यूं थे बूढा थया तौ ही बीजा नै निषेधणा छोड्या नहीं ।

जद स्वामीजी बोल्या—थांरै बाप हुंड्यां लिखी, थांरै दादै हुंड्यां लिखी, पाटा-पाटी थेई संवेट्या कोई नहीं ।

दीपचंद मुणोत मन मै धरो देई आपरा हेतू मित्रां नै कह्यौ—भीखणजी रौ वचन इसौ निकल्यौ सो पाटा-पाटी समेटतौ दीसै है । जब त्यां आपरा आपरा रुपइया खांच लिया । पछै थोड़ा दिनां मैं परवार गयौ । पाटा-पाटी सांवट लिया ।

२४. हिंसा मैं पुन कियां ?

रीयां मै अमरसिंगजी रौ साधु तिलोकजी स्वामीजी कनै आय बोल्यौ—सूत्र मै 'अन्न पुण्णे', 'पाण पुण्णे' आदि नव प्रकारै पुण्य कह्या है। भगवंते प्रदेशी री दानशाळा कही पिण पापशाळा न कही छै, भगवंते 'अन्न पुन' कह्यौ पिण 'अन्न पाप' न कह्यौ। अर ! थे दान-दया उठाय दीधी।

स्वामीजी बोल्या—अनुकंपा आंणने कोई नै सेर बाजरी दीधी तिण मै छै तो पुण्य कै ? जद बोल्यौ—हम क्या जांणै ? हम तौ मंडिया वांचते। हम आगरै के पाणी पीधे। हम दिल्ली के पाणी पीधे।

जद स्वामीजी बोल्या—दिल्ली, आगरा मै तो गायां कटै। इण बात मै कांई सिधाई ? सूत्र भण्या ह्वै तो कहो।

इतलै रतनजी जती लूंकौ आयौ। ए बात सुण तिणनै निषेधने बोल्यौ—म्हे ढीला पड़ गया तौ ही माना एक दांणा मै च्यार प्रज्या, च्यार प्राण। ते खुवायां पुण्य किम हुसी ? अनै थै मुंहपती बांधने क्यूं खोटी हुवा ? एकेन्द्री खुवाया पुण्य कहौ छौ। इम कष्ट कीधौ जब चालतौ रह्यौ।

२५. कुण तार काढै ?

रीयां में हरजीमल सेठ कपड़ा री वीनती कीधी। स्वामीजी बोल्या—थे साधां रै अर्थे मोल लेई कपड़ौ वहिरावौ, ते म्हांनें कल्पै नहीं।

जब सेठ बोल्यौ—बीजा तौ लेवै। हूं मोल लेई वहिरावूं मौनें कांइ हुवौ ?

जद स्वामीजी बोल्या—उणांनै इज पूछ लेवौ।

जद सेठ बोल्यौ—कहिण मैं तौ मोल ले दियां मै उवे ही पाप ही कहै पिण लेवै तौ उरहौ। म्हारा पहिरण ओढण मांहिलौ कपड़ौ आप लेवौ।

जद स्वामीजी वोल्या—उ पिण नहिं ल्यां। 'बीजा पिण कपड़ौ ले गया, भीखणजी पिण ले गया'—कुण तार काढै ?

२६. ओ झगड़ौ म्हां सूं नहीं मिटै

हरजीमल सेठ रागी थयौ जद रुघनाथजी रौ उरजोजी साधु मोटो ओळियौ लेई वांचवा लागौ। भीखणजी उठै अमकड़ियै गांमै कांचौ पांणी लीधौ, अमकड़ियै गांम कंवाड़ जड़ने सूता, अमकड़ियै गांम नित्यपिण्ड लीधौ, इत्यादिक अनेक दोष पानां सूं वाचवा लागौ। जब सेठजी बोल्या—जोधपुर जावौ राजा कनै पुकारौ। आ तौ व्यावट है। औ झगड़ौ म्हां सूं नहीं मिटै। थे इतरा दोष बतावौ अनै उवे कहसी एकइ दोष न सेव्यौ। इणरौ तार किस तरां काढां ?

जद उरजोजी बोल्या—भीखणजी पिण म्हांनै कहै—'ऊ थांनें दोष लागै', 'ऊ थांनें दोष लागै'।

जद सेठ बोल्या—उवे तौ सूत्र री साख सूं समचै दोष कहै—साधां नै औ काम करणौ नहीं, साधां नै औ काम करणौ नहीं। इम कही कष्ट कीधौ।

२७. सूखा ठूंठां नै कांइ दाहौ लागै ?

पींपार मै बखांण मै घणां लोक सुणतां ताराचंद सिंघवी बोल्यौ—थे बखांण सुणो हो थांरे दाहौ लाग जावेला।

जद स्वामीजी बोल्या—दाहौ लागै ते नीला रूंख नै लागै पिण सूका ठूंठां नै कांई दाहौ लागै ? सुणने लोक घणा राजी थया—भलौ जाब दीयौ।

२८. नुखते रा लाडू

कृष्णगढ़ मै स्वामीजी पधार्‌या। गोचरी उठ्‌या। भेखधारी चरचा करवा पूठै आया। स्वामीजी पांडियां रा वास मोहला मै गोचरी पधार्‌या। भेषधारी मोहला रै मूंहढै ऊभा चरचा करण रै मते। जद मलजी मूंहतौ बोल्यौ—इण चरचा मै स्वाद न पावौला। मोकळौ कह्यौ पिण मान्यौ नहीं। इतलै स्वामीजी गोचरी करनै पाछा पधार्‌या।

जद भेषधारीए कह्यौ—भीखणजी ! थे वैरागी बाजौ नै इण मोहला मै नुखतौ थयौ तिणरा घर सूं पकवान लाया !

तिवारै भीखणजी स्वामी बोल्या—इणरौ दोष कांई ?

जद भेषधारीए कह्यौ—थे वैरागी वाजौ नै इसा काम करौ ! मनुष मोकळा भेळा थया। स्वामीजी बोल्या—म्है तौ न आंण्या। जद भेषधारीए कह्यौ—न ल्याया हौ तौ पात्रां खोलौ। जद स्वामीजी घणीं बेळा तांइ पात्रा खोल्या नहीं। पछै भेषधारीए पात्रा खोलावा री घणी खांच कीधी, जद घणां देखतां पात्रा उघाड़्या। लाड़ू न दीठा, जद भेषधारी घणां फीटा पड़्या।

जद मलजी कह्यौ—म्हैं थानें पहिलां वरज्या हुंता—थे भीखणजी सूं चरचा मत करौ। घणां लोकां मै भूंडा दीठा।

२९. श्रावक नै वेश्या सरीखौ

खेरवा मै स्वामीजी कनै ओटौ स्याल उंधौ अंवळौ बोल्यौ—थे श्रावक नै दियांई पाप कहौ नै वेश्या नै दियांई पाप कहौ छौ, इण लेखै श्रावक नै वेश्या सरीखा गिण्या।

जद स्वामीजी बोल्या—ओटाजी ! लोटी भरनै काचौ पाणी थांरी मां नै पायां कांइ ह्वै ?

जद ते बोल्यौ—पाप हुवै ।

जद स्वामीजी फेर बोल्या—एक लोटी पाणी वेश्या न पायां कांइ हुवै ?

जद बोल्यो—इणमैं इ पाप हुवै ।

जद स्वामीजी बोल्या - थांरै लेखै थांरी मां नै वैश्या सरीखी गिणी कांई ? जब घणौ कष्ट हुवौ ।

लोक बोल्या—ओटैजी मां नै वैश्या सरीखी गिणी ।

३०. तार मात्र वस्त्र राखणौ नहीं

ढूंढार मैं स्वामी भीखणजी पासे श्रावगी चरचा करवा आया। बोल्या—मुनी नें तार मात्र वस्त्र राखणौ नहीं । राखै ते परीसह थी भागा ।

जद स्वामीजी कह्यौ—परीसह कितरा ?

जब ते बोल्या—परीसह बावीस ।

स्वामीजी कह्यौ—पहलौ परीसह किसौ ?

जब त्यां कह्यौ—छुध्या रौ ।

स्वामीजी पूछ्यौ—थांरा मुनि आहार करै कै नहीं करै ?

जब त्यां कह्यौ—एक टक करै ।

जब स्वामीजी कह्यौ—थांरा मुनि प्रथम परीसह थी थांरे लेखै भागा ।

जब ते बोल्या—भूख लागां आहार करै ।

जद स्वामीजी कह्यौ—म्हैइ सी लागां कपड़ौ ओढां ।

बलि स्वामीजी पूछ्यौ—थांरा मुनि पाणी पीवै कै नहीं ?

जब त्यां कह्यौ—पाणी पिण पीवै ।

जद स्वामीजी कह्यौ—इण लेखै थांरा मुनि दूजा परीसह थी पिण भागा ।

जद ते बोल्या— तृषा लागां पाणी पीयै ।

जद स्वामीजी कह्यौ— सीतादिक टाळवा म्है पिण वस्त्र ओढां अनै जो भूख लागां अन्न खायां, तृषा लागां पाणी पीधां परीसह थी न भागै तो सीतादि टालवा वस्त्र राख्यां पिण परीसह थी न भागै । इत्यादिक अनेक चरचा सूं कष्ट कीधा ।

* कजिया रै मतै आया दीसौ छौ

हिवै दूजै दिन घणां भेळा होयने आया । स्वामीजी दिशां पधारता था सो साहमां मिल्या । करला होयने बोल्या—म्है तौ चरचा करवा आया नै थे दिशां जावौ छौ ! उणांरी नूराणी देखनै स्वामीजी बोल्या—आज तौ थे कजीया रै मते आया दीसौ छौ ?

जब ते बोल्या—थांनै किस तरै खबर पड़ी ?

स्वामीजी कह्यौ—म्हां मै अवधि आदि ज्ञान तौ छै नहीं। पिण थांरी नूराणी देखनै कह्यौ।

जद साच बोल्या—आया तौ कजीया रै मतै, दान दया री चरचा करणी।

जद स्वामीजी बोल्या—यांरा जाब तौ घणां इ लिख्या पड्या है चरचा तौ काल्ह कीज करड़ी थी। पाछै त्यां माहिला केयक चरचा करने समज्या।

३१. वस्त्र राखणौ क नहीं ?

एक दिन घणां श्रावगियां स्वामीजी नै कह्यौ—आप वस्त्र न राखौ तौ आपरी करणी भारी घणी।

जद स्वामीजी कह्यौ—म्है श्वेताम्बर शास्त्र थी घर छोड्या है। तिणमैं तीन पछेवड़ी, चोलपटौ आदि कह्या है जिणसूं राखा हां। दिगम्बर शास्त्र री प्रतीत आयां वस्त्र न्हाख नग्न होय जावांला। जद कपड़ौ नहीं राखां।

३२. रोटी रै वासतै कियां छोडूं

एक बाई स्वामीजी सूं आहार नीं वीनती घणी वार करै—कदे इ म्हारै घरे इ गोचरी पधारौ। एक दिन स्वामीजी पधार्या। ते देख घणी राजी होय वहिरावा लागी।

जद स्वामीजी पूछ्यौ—थारै हाथ तौ धोवणा पड़ता दीसै है ?

जद ते बोली—हाथ तौ धोवणा पड़सी।

जद स्वामीजी पूछ्यौ—हाथ काचा पाणी सूं धोवसी क उन्हा पाणी सूं?

जद ते बोली—ऊन्हा पाणी सूं धोवसूं।

जद स्वामीजी कह्यौ—कठै धोवसी ?

जद तिण मोखा[1] री जागा बताइ—अठै धोवसूं।

जद स्वामीजी कह्यौ—ओ पाणी कठै पड़सी ?

जद तिण कह्यौ—हेठै पड़सी।

स्वामीजी कह्यौ—इहां पाणी पड़तां वाउकाय आदि जीवां री अजयणा ह्वै, सो मोनैं ए आहार लेणौ न कल्पै।

जद तिण कह्यौ—आप तौ आहार देखने लीजै, लारै म्हे गृहस्थ कार्य कारां तिणमैं आपरै कांइ अटकै ? म्हांरी संसार नीं क्रिया म्है किस तरां छोड़ा ?

जद स्वामीजी कह्यौ—हे बाई ! थांरी कर्म बंधवा री सावद्य क्रिया ही तूं नहीं छोडै तौ रोटी रै वासतै म्हारी साची क्रिया हूं किम छोडूं ? इम कहीनै चालता रह्या।

---

१. मोखा या मोखी।

३३. समझाणै री कला

माधोपुर मैं भाया तौ घणां समज्या सो गोचरी गयां कहै—आघा पधारौ। बायां रौ मन नहीं। जद भायां बायां नै कह्यो—सगळां मै सिरै तौ मस्तक, देही मै उत्तरता पग। यांरे पगां मै तौ माथौ ह्यां तौ चोका री किसी गिणत ? इम कहीने समझाय स्वामीजी नै मांही लेजायने वहिरायौ।

ए कळा पिण भायां नै स्वामीजी सिखाइ दिसै।

३४. जिसौ देवै विसौ पावै

काफरला मै साध गोचरी गया। एक जाटणी रै धोवण, पिण बहिरावै नहीं। कहै—'देवै जिसौ पावै' सो धोवण म्हांसू पीवणी आवै नहीं।

साधां आय स्वामीजी नै कह्यौ—एक जाटणी रे धोवण मोकळो।[1] पिण इम कहै। जद स्वामीजी पधार्‌या। बाई नै कह्यौ—धोवण वहिराव।

जब ते बाई कहै—'जिसौ देवै, जिसौ पावै' सो धोवण म्हांसू पीवणी आवै नहीं।

जद स्वामीजी कह्यौ—गाय नै चारौ नाखै ते दूध देवै ज्यूं साधां नै धोवण दियां आगै सुख पावै।

इम सुणने कह्यौ—ल्यौ महाराज !

पछै धोवण लेइ ठिकाणै पधार्‌या।

३५. भैंस व्यावै जद पधारौ

खारचिया मै स्वामीजी पधार्‌या। एक बाई कह्यौ—स्वामीजी ! म्हारै भैंस व्यावै जद पधारौ तौ हूं लाहौ लेवूं। ते किम ! भैंस व्यायां एक महिनां तांइ दूध-दही वावर देवै, पिण विलोवै नहीं। ते देवी रे टाणै पधारज्यो। जद स्वामीजी कह्यौ—थांरै कद भैंस व्यावै नै कद देवी हुवै ? म्हांनै कद समाचार हुवै नै म्है आवां ?

३६. धसके स्यूं तौ ताव न चढ्यौ

केलवा मैं एक बाई कहै—स्वामीजी पधारै तौ साधपणौ लेवूं। इम बात करवौ करै। पछै स्वामीजी पधार्‌या। धसका सूं बाई ने ताव चढ़ गयौ। सांझै दर्शण करवा आई जद स्वामीजी पूछ्यौ—कांइ थयौ ? यूं क्यूं बोलै है ? जद रीराटा करती कहै—स्वामीजी ! आपरौ पधारणौ हुवौ नै मोनै ताव चढ़ गयौ।

---

१. पिण दै नहीं (क्वचित्)।

जद स्वामीजी पूछ्यौ—दिख्या रा धसका सूं तोनै ताव न चढ्यौ है क ।

जद तिण कह्यौ—मन मै आइ तो खरी ।

जद स्वामीजी कह्यौ—यूं धसको पड़ै तो दिख्या रौ तौ काम जावजीव रौ है ।

३७. जमाई रोवा लाग जावै जद

खैरवा रो चतुरो साह स्वामीजी नै कह्यौ—महाराज ! साधपणा रा भाव उठै है । जद स्वामीजी कह्यौ- थांरौ हीयो काचौ है । घर रा पुत्रादिक रोवै जद थे ई रोवा लाग जावौ तौ पछै काम कठण ।

जद त्यां कह्यौ—आंसू तौ आय जावै ।

जद स्वामीजी कह्यौ—सासरै आणौ लेवा जमाई जाय जद स्त्री तौ रोवै । पिण उणरै देखादेख जमाई रोवा लाग जावै जद लोकां मै भूंडी लागै । ज्यूं साधपणौ लेवै जरे उणरा न्यातीला रोवै ते तौ आपरै स्वार्थ । पिण उणरी देखा-देख दिख्या लेणवालौ रोवा लाग जावै तौ बात विपरीत ।

३८. थारो धणी किणसूं मूवो ?

पींपार मै स्वामीजी गोचरी पधार्‌या । एक बाई इम बोली—भीखणजी री श्रद्धा लीधी तौ उणरौ धणी मर गयौ ।

जद स्वामीजी बोल्या : बाई ! तूं ही बालक इज दीसै । थारो धणी किणसूं मूवो ? तूं तौ भीखणजी री निंदा करै है ।

जद और बायां बोली—भीखणजी ए हीज छै ए हीज ।

तिवारे लचकाणी पड़ने घर मै न्हास गई ।

३९. डेरो मिल्या किसौ ज्ञान आय जावै ?

आऊवा मै उत्तमौजी ईरांणी बोल्यौ—भीखणजी थे देवरा निषेधौ छौ पिण आगै तौ बड़-बड़ा लखेसरी कोड़ेसरी त्यां देवळ कराया ।

जद स्वामीजी बोल्या—थांरा घरै पचास हजार रौ डेरौ थयां थे देवळ करावौ कै नहीं ।

जद ते बोल्यौ—हूं करावूं ।

जद स्वामीजी पूछ्यौ—थामैं जीवरा भेद, गुणठांणा, उपयोग, जोग, लेश्या किती ?

जद ते बोल्यौ—या तौ मोनै खबर नहीं ।

जद स्वामीजी बोल्या—इसा समझणा आगै ई ह्वैला । डेरौ मिल्यां किसौ ज्ञान आय जावै ?

४०. का कितरा नै कं कितरा ?

आऊवा मै नगजी सादूलजी रौ बेटौ बोल्यौ—भीखणजी तस्सुत्तरी मै 'ता' कितरा नै 'तं' कितरा ? जद स्वामीजी बोल्या—भगवती मैं 'का' कितरा नै 'कं' कितरा नै 'खं' कितरा ? 'खा' 'कितरा ? 'गा' कितरा नै 'गं' 'कितरा' ? 'घा' कितरा नै 'घं' कितरा ? जब कष्ट हुवौ ।

४१. एक भागां पांचूं भागे !

किण ही पूछ्यौ भीखणजी थे यूं कह्यौ—एक महाव्रत भागां पांचूं ई भागै सो यूं साथे पांचूं किम भागै ?

जद स्वामीजी बोल्या—पाप रौ उदौ हुवै जद संसार मै इ जीव दुःख भोगवै । जिम एक भिख्याचर नें शहर मै फिरतां-फिरतां पांच रोटी रो आटौ मिल्यौ । रोटी करवा लागौ । एक रोटी तौ उतार नै चूला लारै मेली । एक रोटी तवै सिकै । एक रोटी खीरै सिकै । एक रोटी रौ लोयौ हाथ माहे । अनै एक रोटी रौ लोयौ कठोती मै पड़्यौ । एक कुत्तौ आयौ सो कठोती मैं एक रोटी रौ लोयौ ते ले गयौ । तिण कुत्ता लारै भिख्यारी न्हाठौ । हेठौ पड़ीयौ सो हाथ मांहिलौ लोयौ धूळ मै वीखर गयौ । पाछौ आय देखै तो चूला लारै रोटी पड़ी हुंती ते मिनकी ले गई । तवै री तवै बळ गई । खीरै री खीरै बळ गई । इण रीतै एक महाव्रत भागां पांचूं भाग जावै ।

४२. कठिनाई मै भी अडोल

स्वामी भीखणजी वीलाड़ै पधार्‌या । गाम मै लोक लुगाई धेष घणौं करै । आहार पाणी री संकड़ाई ।

जद स्वामीजी साधां नै कह्यौ—एक मासखमण इहां रहिवा रा भाव है ।

जद साधु बोल्या—आहार पाणी री संकड़ाई घणी । घणां लोक आहार दे नहीं । जद स्वामीजी एक गौचरी तौ बारला गाम री करावै । एक गौचरी वड़ेर री । एक गौचरी महाजनां री करावै । सो स्वामीजी गौचरी उठ्या पिण लोकां रै बंधवस्ती—भीखणजी नै एक रोटी देवै तौ इग्यारै समाई दंड री । जठै जाय जठै आहार-पाणी री जोगवाई पूछ्यां कहै—म्हे तौ थानक समायक करां ।

एक जागा आहार-पाणी री जोगवाई पूछ्यां ते बाई कहै—म्हारी नणंद थांनक समायक करै । भीखणजी नै रोटी दीयां नणंद री समाइ गळ जावै । एह्वी ऊंधी सरधा ।

कठैइ भायौ दे देवै, कठेइ बाई दे देवै । कितरायक दिन नीकळ्या ।

रुघनाथजी नै खबर हुई जद जोधपुर सूं चाल्या आया। लोक बखाण सुणवा आया पिण ताकीद रा विहार सूं रुघनाथजी नै ताव चढ़ गयौ। कनै ठोठ चेलां नै ल्याया ते बखाण दे जाणै नहीं। जद परखदा पाछी फिरी। बाजार मै केयक स्वामीजी रौ बखाण सुणवा लाग गया। पछै लोक कहै—आपस मै चरचा करौ।

पछै ब्राह्मणां नै सिखाया म्हारै चेलौ अवनीत होय गयौ सो ब्राह्मणां नै दीयां पाप कहै। पछै ब्राह्मण स्वामीजी कनै आय बैदौ करवा लागा। जद रांमचंद कटारियौ बोल्यौ—थांनै दिया रुघनाथजी धर्म कहै तौ पच्चीस मण गोहां री कोठी भरी है ते परही देऊं। जद ब्राह्मण, रामचंद सारा रुघनाथजी कनै आया। रामचंदजी रुघनाथजी नै कह्यौ—थे धर्म कहौ तौ पच्चीस मण गोहूं ब्राह्मणां नै गांठ बंधाय देऊं। कहौ तौ गूघरी रंधाय देऊं। कहौ तौ आटौ पीसाय देऊं। कहौ तौ रोट्यां नै दो मण चणा रे आटा रौ खाटो कराय नै ब्राह्मणां नै जीमावूं।। घणों धर्म हुवै सो बतावो।

जद रुघनाथजी बोल्या—म्हे तौ साध हां। म्हारै कठै कहणो है रे? म्हारै तौ मूंन है।

जद रामचंद बोल्यौ—थांरे न कहणौ तौ उवे किस तरै सूं कहिसी? थां विचै तौ उवे संकड़ा चालै। मोटा होयनै कांइ लोकां न लगावौ हौ। चरचा करणी ह्वै तौ न्याय री चरचा करौ। यूं कहीनै पाछौ आयौ।

स्वामीजी रे मासखमण होयवा री त्यारी हुई। जद भारीमालजी स्वामी नै रुघनाथजी कनै मेल्या—थांरा श्रावक चरचा रौ कहै है सो चरचा करणी हुवै तौ करौ।

जद रुघनाथजी बोल्या—किणरै चरचा करणी है? पछै घणौं उपगार कर घणां नै समझाय स्वामीजी विहार कीधौ।

४३. मेरण्यां रो मोह

कंटाळिया मै एक भाई दिख्या लेवा त्यार थयौ। पिण बोल्यौ—म्हारै माता री मोहणीक है सो माता जीवै जितै तौ दिख्या आवती दीसै नहीं।

कितरायक दिनां पछै माता आऊखौ पूरौ कियौ। पछ फेर स्वामीजी उपदेश दीयौ। जद बोल्यौ—स्वामीजी! मगरै व्यापार करूं हूं सो मेरण्यां री मोहणी लागी?

जद स्वामीजी बोल्या—माता तौ एक हुंती ते मर गई पिण मेरण्यां तौ घणीं। सो कद मरै न कद थनै दिख्या आवै?

४४. घणौ धर्म किणनै? (१)

दान ऊपर भीखणजी स्वामी दृष्टंत दीधौ। पांच जणां सीर मै घणां रौ

खेत वाह्यौ। पांच सौ मण चणां नीपना। पांचूं जणां मतौ कीधौ—घर मैं धन तौ मोकळौ है। यां चणां रौ दान धर्म करौ।

जब एक जणै सौ मण चणां भिखार्यां नै लूंटाय दीया।

दूजै सौ मण रा भूंगड़ा सेकाय दीया। तीजै सौ मण चणां री गूघरी करायनै खवाई।

चौथे सौ मण चणां री रोट्यां कराय पाखती खाटौ करायनै जीमाया। पांचमें सो मण चणां वोसिरायनै हाथ लगावा रा त्याग कीया।

सावद्य दान मैं पुण्य धर्म कहै, ज्यांनै पूछीजै—घणौ धर्म किण न थयौ ?

४५. घणौ धर्म किणनै ? (२)

वलि दांन ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीधौ—एक बूढौ डोकरौ भिख्या मांगतौ फिरै। किण ही अनुकंपा आणनै सेर चणां दीया। जब डोकरै किण हि नै कह्यौ—एक जणै तौ मोनै सेर चणां दीया है, पिण दांत नहीं सो मोनै पीसे दौ। जब दूजी बाई अनुकम्पा आणनै पीस दिया।

आगै जायनै किणहि नै कह्यौ—मोनै एक जणै तौ धरमात्मा सेर चणां दीया है, दूजी बाई पीस दीया, तिणसूं तूं मोनै रोटी कर दै। जब तीजी बाई अनुकंपा आंणनै लंण पांणी घालनै सेर चून री रोट्यां कर दीधी। ते रोटी खाय तृप्त थयौ।

जब तृषा घणी लागी जद आगै जायनै कहै—है रे कोइ धरमात्मा ! मोनै पाणी पावै।

चोथी बाई अनुकंपा आंणनै काचौ पांणी पायौ।

एक जणै तौ चणां दीया, दूजी पीस दीया, तीजी रोट्यां कर दीधी, अवै त्रिखा लागी, सो कोई दयावांन पांणी पावै, जद चांरां मै घणौं धर्म किणनै थयौ ?

४६. इसा पोता चेला चाहिजै नहीं

टीकमजी रौ चेलौ कचरौजी जालोर रौ वासी सरीयारी मैं स्वामीजी कनै आयौ। कहै भीखणजी कठै ? भीखणजी कठै ?

जद स्वामीजी बोल्या—भीखण म्हारौ नांम है।

जद ते बोल्यौ—आपनें देखवा री म्हारै मन मै घणी थी। स्वामीजी बोल्या—देखौ।

पछै कचरौजी बोल्यौ—मौनै चरचा पूछौ।

स्वामीजी बोल्या—थे देखवा नै आया थांनै कांइ चरचा पूछां।

तब ते बोल्यौ—कांयक तौ पूछौ।

जद स्वामीजी बोल्या—थांरे तीजा महाव्रत रौ द्रव्य, खेत्र, काल, भाव,

गुण कांई है ?

जद ते बोल्यौ—आ तो मोनै कोई आवै नहीं, पानां मैं मंडी है।

स्वामीजी कह्यौ—पानौ फाट गयौ तथा गम गयौ ह्वै तौ कांई करसौ ?

जद ते बोल्यौ—म्हारा गुरां थांनै चरचा पूछी, जिणरौ थांने जाब न आयौ।

जद स्वामीजी कह्यौ—थांरा गुरां चरचा पूछी तिका ही ज चरचा थे मोनै पूछौ। उणांनै जाब दीयौ है तौ थांने इ द्यांला।

जद कचरौजी बोल्यौ—थे तौ म्हारै लेखा रा दादा गुरु हो सो हूं थांसूं कठा सूं जीतूं ?

जद स्वामीजी बोल्या—म्हारै तौ इसा पोता चेला कोइ चाहीजै नहीं।

४७. किण न्याय ?

उदैपुर मै स्वामीजी कनै एक भेषधारी आयौ अनै बोल्यौ—मोनैं चरचा पूछौ।

जद स्वामीजी कह्यौ—थे ठिकाणैं आयां नें कांइ चरचा पूछां ?

जद बोल्यौ—कांयक तौ पूछौ।

जद स्वामीजी कह्यौ—थे सन्नी के असन्नी ?

ते बोल्यौ—हूं सन्नी।

स्वामीजी पूछ्यौ—किण न्याय ?

जद ते बोल्यौ—ना, मिच्छामि दुक्कडं, हूं असन्नी।

स्वामीजी पूछ्यौ—असन्नी ते किण न्याय ?

जद ते बोल्यौ—नहीं, नहीं, मिच्छामि दुक्कडं, सन्नी असन्नी एक ही नहीं।

जद स्वामीजी बोल्या—ते किण न्याय ?

जद ते रीस कर नै बोल्यौ—थे न्याय-न्याय करनै म्हांरौ मत बिखेर्‌यौ। जातौ थकौ छाती मैं मूंकी री देई चालतौ रह्यौ।

४८. आसौजो ! जोवौ छौ कै ?

मांहढा मांहै स्वामीजी रात्रि रा वखांण वांचतां आसौजी नींद घणी लै। जद स्वामीजी कह्यौ—नींद आवै है ?

जद आसौजी बोल्यौ—नहीं महाराज !

बार-बार पूछ्यौ—नींद आवै है ?

जद ते कहै—नहीं महाराज !

जद स्वामीजी झूठ रौ उघाड़ करवा रै वासते उत्पात बुद्धी सूं वली पूछ्यौ—आसौजी ! जीवौ छौ कै ?

नहीं महाराज !

४९. साचा तौ म्हांनै ही कीधा

साधां माहो माही बात कीधी जब खेतसीजी स्वामी बोल्या—अबै तो अखैरांमजी स्वामी आतमा वस कीधी दीसै है। जब स्वामीजी बोल्या—पूरी प्रतीत नहीं। आ बात किण ही अखैरांमजी नै जाय कही। ते सुणनै त्यांनै गमी नहीं।

पछै राजनगर चौमासौ कीधौ। तिहां स्वामीजी मैं अनेक दोष पानां मैं उतार आहार पांणी तोड़्यौ।

चौमासौ उतार्‌यां स्वामीजी मिल्या। खेतसीजी स्वामी अखैरांमजी नै वंदना करवा ताकीद सूं गया, जब अखैरांमजी बोल्या—आंपांरै आहार पांणी भेळौ नहीं। पछै खप करनै अखैरांमजी नै समझाया। जब अखैरांमजी स्वामीजी कनै आंसू काढनै बोल्या—आप म्हारी प्रतीत न दीधी जिणसूं म्हारौ मन उदास थयौ। खेतसीजी तौ म्हारी प्रतीत दीधी।

जद स्वामीजी बोल्या—म्हे प्रतीत न दीधी तौ ही थे साचा तौ म्हांनैईज कीधा। गरीब साध खेतसीजी थारी प्रतीत दीधी तिणनैं झूठौ कीधौ। इम सुणनै राजी हुवा।

५०. एकलड़ौ जीव

स्वामीजी पुर पधार्‌या जब मेघौ भाट आय चरचा करवा लागौ—कालवादी इम कहै—'भीखणजी गाथा मैं तौ इम कहै—एकलड़ौ जीव खासी गोता। अनै नव पदार्थ मैं पांच जीव कहै। तिण लेखे पांचलड़ौ जीव खासी गोता इम कहिणौ।'

जद स्वामीजी बोल्या—सिद्धां मैं आतमा उवे किती कहै ? जद मेघौ भाट बोल्यौ—सिद्धां मैं तौ कालवादी आतमा चार कहै है।

स्वामीजी पूछ्यौ—त्यां च्यार आतमा नै कालवादी जीव कहै छै कै अजीव कहै ? जब मेघो भाट बोल्यौ—च्यार आतमां नें तौ उवे जीव कहै है।

जद स्वामीजी बोल्या—सिद्धां मैं आतमां च्यार कहै, ते च्यारां नै कालवादी जीव कहै छै, इण लेखै चौलड़ौ जीव तौ उणांरौ ई ठेहर्‌यौ। एकलड़ म्हांरी वधती ठेहरी। इम कही समझायौ। ते सुणनै घणौ राजी थयौ।

५१. आत्मा सात कै आठ ?

माधोपुर मैं गूजरमलजी श्रावक रै नैं केसूरांमजी रे चरचा री अड़बी थई। श्रावक मैं आतमा गूजरमलजी तौ आठ कहै अनै केसूरांमजी सात कहै।

गूजरमलजी बोल्या—चारित्र आतमां श्रावक मै नहीं हुवै तौ नीलोती रा त्याग रौ कांई काम ?

इतलै स्वामीजी पधार्‌या। उणांरै माहो माही अड़वी देख नै, एक जणौं नैड़ौ आय छानैं बात कर सकै नहीं तिणसूं दोनूं पासै बाजोट मेल दीयो। पछै न्याय बताय नै स्वामीजी दोनूं जणां नै समझाय दीया।

स्वामीजी कह्यौ—श्रावक मैं पांच चारित्र नहीं ते लेखै सात आतमाईज कैहणी अनै त्याग नीं अपेक्षाय देशचारित्र कहीयै, इम कहीनै अड़बी मेटी।

५२. समगत रहणी कठण

गूजरमलजी सूं स्वामीजी चरचा करतां पांनौ बाचनै बोल कह्यौ। जद गूजरमलजी कह्यौ—आप मोनै आखर बतावौ। जब स्वामीजी आखर बताय दीया नै बोल्या—गूजरमलजी ! थांरै समक्त रैहणी कठिण है। आसता कची तिणसूं। लोक सुणनै अचर्य थया।

पछै अंतकाल गूजरमलजी बोल्या—केसूरांमजी आदि भायां नै—स्वामी जी श्रद्धा आचार और तौ चोखा परूप्या, पिण 'नदी उतर्‌यां धर्म' या बात तौ स्वामीजी पिण खोटी परूपी।

भायां घणौंइ कह्यौ—नदी ऊतरवा री आज्ञा सूत्र मैं भगवांन दीधी छै तिणसूं पाप नहीं।

गूजरमलजी बोल्या—हीये बेसै नहीं।

जब लोक बोल्या—भीखणजी स्वामी कह्यौ थौ, थांरै समक्त रैहणी कठण है सो वचन आय मिल्यौ।

५३. उठौ ! पडिकमणौ करौ

पाली मैं रात्रि बखांण उठ्यां पछै स्वामीजी तौ बाजोट ऊपर बैठा। अनै दो भाया (विजयचंदजी पटवा तथा उणांरा साथी) दुकान हेठै ऊभा। चरचा करतां-करतां दोयांनेंइ समझायनै गुरु कराय दिया। इतरै पाछली रात्रि ना पडिकमणा री बेला आय गई। साधां नै कह्यौ—उठौ पड़िकमणौ करौ। साध पूछ्यौ—आप कद विराज्या ? जद स्वामीजी कह्यौ—आ तौ पूछौ—कद सोया ?

५४. नगजी सामी रो तेज

करेड़े स्वामीजी पधार्‌या । लोक कहै—नगजी सामी रो तेज घणौ ।

स्वामीजी पूछ्यौ—कांई तेज ? जद लोक बौल्या—नगजी गोचरी पधार्‌यां कुती घणी भुसै । घणौंई कह्यौ—हे कुती ! साधां नै मत भुस, मत भुस पिण कह्यौ मांनै नहीं । जद टांग पकड़नै वणण-वणण फेरनै फैंक दीधी । कुती पाधरी होय गइ । जठा पछै फेर भुसी नहीं ।

जद स्वामीजी बोल्या—कुती पड़ी जठै जागा पूंजी कै नहीं ? जद ते गृहस्थ बोल्या—थे पूंजौ जायनै । निकमा खूंचणा काढौ । इसा मूर्ख गृहस्थ ।

५५. संका है तौ चरचा करां

पाली मैं मयारांमजी गोचरी मैं आहार मंगायौ तिणसूं आठ रोटी बधती ल्यायौ । स्वामीजी गिणी नै कह्यौ—आहार मंगाया उपरंत ल्याया ।

जब मयारांमजी बोल्यौ—अठै मेल दौ अठै । जद स्वामीजी आठ रोटी काढ दीधी । मयारांमजी साधां नें धामी पिण कोई लै नहीं ।

जद बोल्यौ—परठ देवारा भाव है ।

स्वामीजी बोल्या—परठ नै दूजे दिन विगै टालज्यो । जद क्रोध करनै ऊंधौ बोलवा लागौ । कहै—हूं तौ इसा आचार्य राखूं नहीं । अकबक बोल्यौ । कहै—नव पदार्थ मैं पांच जीव च्यार अजीव री श्रद्धाइ भूठी । एक जीव आठ अजीव है । जद स्वामीजी खिम्याकर विस्वासी आहार अवेर नै बोल्या—आ थारै संका है तौ चरचा करांला । इम कहि उण बेलाईज तावड़ै मै विहार कीधौ ।

उतवण मैं सूत्र उत्तराधेन थी संका मेट दीधी । प्रायश्चित्त दीधौ । पछै वैणीरांमजी स्वामी नै सूंप दीधौ । कितरायक दिनां मैं छूट गयौ ।

५६. सोख किणने ?

स्वामीजी दिशा जातां एक भेषधारी साथै थयौ । ते नीलां ऊपर चालतौ देखी स्वामीजी बोल्या—छतै चोखै मारग नींलां ऊपर क्यूं हालौ ? जद ते बोल्यौ—म्हारौ नाम लीयौ है तौ हूं गाम मैं जाय कहिसूं भीखणजी नीला ऊपर दिशां गया ।

५७. कैहणो कोनी

रीयां पींपार बीचै एक भेषधारी मिल्यौ । स्वामीजी नें एकंत ले गयौ । थोड़ी वेला सूं पाछा पधार्‌या । जद हेम पूछै—स्वामीनाथ ! आपनें कांइ बात पूछी ?

स्वामीजी बोल्या—आलोवणा कीधी ।
वलि हेम पूछ्यौ—कांइ आलोवणा कीधी ?
जद स्वामीजी बोल्या—कैहणौ नहीं ।

५८. लड़नौ ह्वै तौ म्हासूं लड़

पुर बारै स्वामीजी दिशा पधार्‌या । जद एक भेषधारी आडौ फिर्‌यौ । दोलौ कूंडीयौ काढ्यौ । झखर करवा लागौ । जद एक गुवाळियौ आयौ उणनै कह्यौ—यां गुरां सूं मतकर । भारमलजी स्वामी कनै ऊभा ज्यां आश्री कह्यौ यां सूं कर, लड़नौ ह्वै तौ म्हासूं लड़ ।

५९. चोका रा नैहता, जीमावै एकीका नै

साधुपणौ लेइ चोखौ पालै ते मोटा पुरुष । कइ कहै—पांचमां आरा मैं साधुपणौ पूरौ पळै नहीं, इसौहीज अबारूं निभै । तिण ऊपर स्वामीजी दिष्टंत दीयौ—किणही चौका रा नैहता फेर्‌या, अनै जीमण वेला एकीका नै माहै आवा दैवै ।

लोक कहै—तैं चौका रा तौ नैहता दीया नै एकीका नै आवा दै ते क्यूं ।

जद कहै—म्हारी पौहच इतरी ज है । अमकडीअै तौ आपरै बाप रै लारै धूल उड़ाई, किरीयावर कीधौ नहीं । हूं तौ एकीका नै तौ आवा देवूं छूं ।

जब लोकां कह्यौ—तैंई न कीधौ हूंतौ तौ कुण थांरै बारणै बैठौ हो । तू चोका रा नैहता दे नै एकीका नैं जीमावै है सो थारौ जमारौ बिगड़ै है ?

ज्यूं लेवा री वेळां तौ पांच महाव्रत आदरघा अनै पाळवा री वेळां पूरा पाळै नहीं तिणरौ पिण इहलोक परलोक बिगड़ै ।

६०. दीवाळ्यौ कुण ?

साधु रौ आचार बतायां सूं केइ ढीला भागळ निंदा जाणै । तिण ऊपर स्वामीजी दिष्टांत दीयौ—एक साहूकार बेटा नै सीख देवै—लेवै जिण रौ पाछौ देणौ । न दीयां लोक देवाळ्यौ कहै । पाड़ोसी देवाळ्यौ ते सुणनै कूढ़ै । कहै—बेटा नै सीख न दै म्हारी छाती बाळै है । ज्यूं साधु साधु री आचार बतावै जद भेषधारी सुणनै कूढ़ै । कहै—म्हारी निंद्या करै है ।

६१. समझू जाणै

कोई कहै सावद्य दान मैं म्हारै मौन है । यूं न कहां—तू दै । इम कहै

नै पुण्य मिश्र दरसावै । तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टांत दीयौ ।

किण ही स्त्री कह्यौ—या लोटी म्हारै हाटे दीजो । समझू मन मैं जाणै पोता रा धणी नै दीराइ छै ।

ज्यूं सावद्य दान मैं पूछयां कहै—म्हारै मूंन है । रहस्य मैं पुण्य मिश्र दरसावै । समझू जाणैं यांरै पुण्य-मिश्र री श्रद्धा छै ।

६२. पाप क्यां नै ह्वै

पुन्य री श्रद्धा वाळा मिश्र री श्रद्धा वाळा चौड़ै तौ पुन्य मिश्र न परूपै पिण मन मैं पुन्य मिश्र सरधै । ते श्रद्धा ओलखायवा स्वामीजी दृष्टांत दीयौ ।

किण ही स्त्री नै कहै—थारे धणी रौ नाम पेमौ है ?

जब ते कहै—क्यां नें ह्वै पेमौ ।

नाथू है ? क्यां नै ह्वै नाथू ।

पाथू है ? क्यां नें ह्वै पाथू ? धणी रो नाम आयां अणबोली रहै । जद समझणौ जांणै इण रै धणी रौ नाम ओ हीज है ।

ज्यूं सावद्य दान मैं पाप है इम पूछयां कहै—क्यां नै ह्वै पाप । मिश्र है ? क्यां नै ह्वै मिश्र । पुण्य है ? जब मूंन रहै । जब समझू जांणै यांरै पुण्य री श्रद्धा है ।

६३. घर किणरौ

भेषधारीयां नै कहै—थानक थांरै अर्थे कीधौ, जद कहै—म्है कद कह्यौ, थानक म्हांरै वासतै कीजो । तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टांत दीयौ—ज्यूं डावड़ो कद कहै—म्हारी सगाइ कीजौ, पिण सगाइ कियां परणीजै कुण ? डावड़ो । बहु किण री बाजै ? डावड़ा री । घर किण रौ मंडै ? डावड़ा रो ईज । तिम थानक पिण त्यांरौ इज बाजै । ते हीज माहै रहै ते हीज राजी ह्वै ।

६४. म्है कद कह्यौ

तथा जमाई कदै कहै—म्हांरै वासतै सीरौ करौ ? पिण जीमैं परहो, जद दूजी बार फेर करै । सीरा नां सूंस कहै तौ क्यांनै करै । ज्यूं यै कहै—म्है कद कह्यौ—थानक म्हांरै वासते करौ । पिण त्यां रै वासतै कीधां माहै रहै परहा । जद दूजी बार फेर करै । थानक में रहिवा रा त्याग करै तौ क्यां नै करावै ?

६५. मारणा इ छोड़ौ

भेषधारी कहै—म्है जीव बचावां भीषणजी जीव बचावै नहीं ।

जद स्वामीजी बोल्या—थांरा बचावणा रह्या, थे मारणांई छोड़ौ। अंधारी रात्रि मै किंवाड़ जड़ो हो अनेक जीव मरै है। किंवाड़ जड़वा रा सूंस करौ तौ घणां जीवां री दया पलै। ज्यूं चोकीदार हो सो चोकी तौ छोड़ दीधी नै चोरयां करवा लाग गयौ। लोकां नें कहै—हूं चोकी देऊं छूं। सो जाबता रा पइसा देवौ।

जब लोक बोल्या—थारी चोकी दूर रही तूं चोरयां ही छोड़। तूं दिन रा हाट घर देख जावै नै रात्रि रा फारै चोरयां करै। पइसो-पइसो घर बैठा नै परहौ देस्यां। तू चोरयां छोड़।

ज्यूं ये कहै-म्है जीव बचावां। स्वामीजी बोल्यां—थांरा बचावणा रह्या, मारणांई छोड़ौ।

६६. दोष री थाप सूं साधपणौ किम रहसी ?

केइ इम कहै—हिवड़ां पांचमौ आरौ छै सो साधपणौ पूरो न पळै।

जद तिणनै स्वामीजी कह्यौ—चोथा आरा मैं तेलो कितरा दिनां रौ ?

जद ते कहै—तीन दिनां रौ।

स्वामीजी कह्यौ—एक भूंगड़ौ खावै तौ तेलौ रहै कै भागै ?

जद ते कहै—भागै ?

वलि स्वामीजी पूछ्यौ—पांचमां आरा मैं तेलौ कितरा दिनां रौ ? जद त्यां कह्यौ—तीन दिनां रौ। जद स्वामीजी बोल्या—एक भूंगड़ौ खाधां तेलौ रहै कै भागै ? जद कहै—भागै।

जद स्वामीजी बोल्या—एक भूंगड़ौ खाधां तेलौ परहो भागै तौ दोष री थाप सूं साधपणौ किम रहसी ? आरा रै माथै क्यूं न्हाखौ ?

६७. भागल कुण साबत कुण ?

केई कहै—अै दोष लगावै तौ ही आपां बिचै तौ आछा है। काचौ पाणी तौ न पीयै, स्त्री न राखै। तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टांत दीयौ—एक जणै तौ तीन एकासणा कीया। एकेक टक मैं छै छै रोटी खाधी। एक जणै तेलो कर नै आधी-आधी रोटी खाधी। यां मैं भागळ कुण नै साबत कुण ? तेलावाळो भागळ खोटौ, अनै एकसणावाळौ साबत चोखौ।

ज्यूं गृहस्थ लीया व्रत चोखा पाळै ते तौ एकासणावाळा सरीखौ। अनै साधपणौं लेनै दोष सेवै ते तेला मैं रोटी खाधी ते सरीखौ।

६८. जनम पत्री तौ पछै बणै

पाली मैं लखजी बीकानेरयौ मूंवौ जद इकावन रुपीया थानक रै

निमत्त उदकीया। तिण रुपीयां री जागा लेइ लकड़ा री खटकर कीधी। आरंभ थोड़ौ।

जद स्वामीजी नै किणहि कह्यौ—इणमैं कांइ आरम्भ है? विशेष आरंभ नहीं।

जद स्वामीजी कह्यौ—कोई जनमैं जद पहिलां अंकूरौ करै। जन्म पत्री वर्षफल तौ पछै हुवै। ज्यूं औ थानक अंकूरा ज्यूं तौ हुवौ। पिण लांबा आऊखावाळौ देखेला इण ऊपर चूंनौ चढ़तौ दीसै है। पछै कितरायक वर्षां पछै थानक ऊपर चूंनौ चढ्यौ, जद टेकचंद पौरवाळ कह्यौ—"भीषणजी कहिता था इण थानक ऊपर चूंनौ चढ़तौ दीसैं", सो अबै चढ़ै है।

६९. फुजाळ्या साऊ न हुवै

आगला नै समझावा दृष्टंत करड़ा दे, जद किणही स्वामीजी नै कह्यौ—आप दृष्टंत करड़ा देवौ।

जद स्वामीजी कह्यौ—रोग तौ गम्भीर कौ ऊठ्यौ, अनै कहै—म्हारै फूंजालो। पिण फुंजाल्यां साऊ न हुवै। हलवाणी रा डांम दीया साऊ हुवै।

ज्यूं मिथ्यात रूपीयौ रोग तौ करड़ो। ते दृष्टंत करड़ां सूं दटै।

७०. आचार्य पदवो आणो कठिन

तिलोकचंदजी नै चन्द्रभाणजी आचार्य पदवी रौ लोभ देयनै फटायो। जद स्वामीजी कह्यौ—थांनें आचार्य पदवी आवणी तौ कठिन है नै सूरदास री पदवी तौ आवै तौ अटकाव नहीं। थांनै चन्द्रभाणजी ऊजाड़ मैं छोड़तौ दीसै है।

कितरैयक वर्षां पछै चंद्रभाणजी तिलोकचंदजी नै निजर कची रौ नांम लेई ऊजाड़ मैं छोड्यौ। स्वामीजी रौ वचन आय मिल्यौ।

७१. विवेक

एक लाडू मैं जैहर एक मैं नहीं। समझणौ हुवै ते संका मिट्यां विना दोनूं न खावै। ज्यूं साध-असाध री संका नींकळ्यां बिना बंदणा करै नहीं।

७२. म्हांनै पुण्य किसतरै हुसी?

भेषधारी सावद्य दान मैं पुण्य कहै। समजू हुवै ते कीमत पकी करै। असंजती नें दीयां पुण्य कहौ छौ, तौ थे असंजती नै देवौ कै नहीं?

जद कहै—मोनै तौ दीयां दोष लागै, म्हारौ कल्प नहीं। तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ।

एक पुरुष नै किण हि कह्यौ—थारै वाई रौ रोग है सो सतखंडिया महिल थी हेठौ पड़, सो थारी वाई मिटै ।

जद ते बोल्यौ—ए वाय नौ रोग तौ थांरैइ छै, सो थे पिण पड़ौ ।

जद ते कहै—हूं तौ पड़ूं तौ म्हारा हाडका परहा भागै, तूं पड़ ।

जद ऊ पुरुष बोल्यौ—थारा हाडका भागै तौ माहरौ रोग किसतरै जासी । ज्यूं भेषधारी कहै—असंजती नै दीयां म्हांरौ साधपणौं परहो भागै । थे देवौ थांने पुण्य है ।

जद समजू बोल्यौ—थांरौ साधपणौं भागै तौ ए दांन दीधां म्हांनै पुण्य-धर्म किसतरै हुसी ?

७३. मूरख हुवै ते मानै

दोय जणां रै घणां काळ रौ वैर थौ । पछै हेत कीधौ । तिणनै नैहत्यौ । जीमावा घरे ले गयौ, भोजन परुसी कहै—भाइजी ! जीमौ ।

जब ते बोल्यौ—थे पिण भेळा जीमवा भेसौ । ऊ भेळौ बेसै नहीं ।

जद जीमवा आयौ ते बोल्यौ—था विनां औ भोजन जीमण रा त्याग है । जो इण भोजन में जैहर है जद तौ औ भेळो कोइ वेसै नहीं । अनै सुद्ध भोजन है तौ भेळौ वेससी । ज्यूं असंजती नै दीयां पुण्य कहै । जद समजू कहै —थे तौ न देवौ अनै दूजौ देवै तिण मैं पुण्य बतावौ । पिण आ बात तौ मूरख हुवै तौ मांनें । पुण्य-धर्म हुवै तौ पहिला पोतै कर दिखावौ जद दूजौइ मांनै ।

७४. बुद्धि सूं विचार्यौ

एक भेषधारी बोल्यौ—भीषणजी नै कटारी सूं परहा मारूं तौ बेहदौ मिट जावै । पछै केतलैं एक काळ तिणरौ शीळ भागौ । जद तिणनै साधपणौ नवौं दीयौ । लोकां मैं बात फैलाई— भीषणजी नै कटारी सूं मारवा रौ कह्यौ तिणसूं दिख्या नवी दीधी ।

आ बात स्वामीजी पिण सुणी । बुद्धि सूं विचार्यौ इणरौ शील भागौ दीसै छै । पछै ते मिल्यौ जद स्वामीजी पूछ्यौ—थांरौ शील घर-स्त्री सूं भागौ के और स्त्री सूं भागौ ?

जद ते बोल्यौ—पर स्त्री सूं तौ न भागौ, घर-स्त्री सूं पिण संघटा रूप हुऔ । पूरौ तौ न भागौ । तिण सूं दिख्या नवी दीधी ।

७५. कहणी करणी मैं फेर

कुसळौ, तिलोक भेषधारी संकडाइ मैं चालवा लागा । अनै मन मैं जाणैं भीषणजी रा श्रावकां नै फेरां । परूपणां सांकड़ी करली करवा लागा—साधू

नें तीजा पौहर नीं गोचरी करणी । गांम मैं रहिणौ नहीं ।

पछै स्वामीजी मिल्या । आगै देखै तौ पहिलां पौहर मैं गोचरी करै । स्वामीजी पूछ्यौ—थे तीजा पौहर नीं गोचरी कहौ नै पहला पौहर नीं क्यूं करौ । जद तड़क नै बोल्या—म्हे तो धोवण पाणी रै वासतै फिरां छां ।

जद स्वामीजी बोल्या—धोवण पाणी रौ दोष नहीं तौ दोय रोटी ल्यायां कांइ दोष ?

जद वले बोल्या—साधू नैं लड़ू खाणां नहीं । साधू नैं घी खाणौ नहीं । साधू रै क्या बछेरा बछेरी जणावणा है ? साधू नै गांम मैं रहिणा नहीं ।

जद स्वामीजी बोल्या—थे कहौ छौ साधू नै लड़ू खांणा नहीं तौ 'देवकी रा पुत्रां लाडू वहिरचा', सूत्र मैं कह्यौ छै ।

जद ते बोल्या—ऊवे तौ मोटै पुरुष छा ।

जद स्वामीजी कह्यौ—मोटा पुरुष है सो वले खावै इज है ।

जद क्रोध कर बोल्या—तुम तेरापंथी दांन दया उठाई है सो तुमनै जगत मैं भांड कर देस्यां ।

जद स्वामीजी बोल्या—दो हजार भेषधारी आगे कहै है, जो घटता है तौ दोय हजार पूरा हूवा । अनै आगै दोय हजार है तौ दोय वधता हूआ ।

पछै उठा सूं नैणवै गया । स्वामीजी रा श्रावकां रै संका घालण रौ उपाय करवा लागा । जद श्रावक पिण उणांरा ठागा रौ उघाड़ करवा लागा । दोयां मैं एक जणौ बेलै-बेलै पारणौ करै, तिणनैं कह्यौ—थे तपस्या ठीक करौ छौ, अनै अै दूजौरा तौ करै नहीं । जद औ बोल्यौ—लोळपणौं छूटां तप हुवै । औ लोळपी है ।

वले दूजा नै श्रावकां कह्यौ—थाने तौ उवे लोलपी कहै छै । तब ते बोल्यौ—ओ तपस्या करै, पिण क्रोधी छै । जद दूजोड़ानै कह्यौ—थानै तौ उवे क्रोधी कहै छै । जद दोनूं भेळा होय झगड़वा लागा । जद गृहस्थ बोल्या—

जोड़ी तौ जुगती मिली, कुशलौ नै तिलोक ।
ऊ थापै, ऊ ऊथपै, किण विध जासी मोख ।।

पछै फीटा पड़नै चालता रह्या ।

७६. दोनूं साचा

बावीस टोळा आपस मैं माहो माही उवै तौ उणांनै झूठा कहै, उवै उणांनें झूठा कहै ।

जद स्वामीजी बोल्या—कहिणी रै लेखै दोनूं साचा है । उवे ही झूठा है अनै उवे ही झूठा है । इण लेखै दोनूं साच बोलै है ।

७७. चार आंगुल बटकै रै वासते

पादू मैं एक भाये कह्यौ—हेमजी स्वामी री पछैवड़ी मोटी दीसै ।

जद स्वामीजी लांबपणै चोड़पणै माप दिखाई । उनमांन नींकली । पछै स्वामीजी तिणनें निषेध्यौ घणौ । कह्यौ—च्यार आंगुल रा बटका रै वासतै म्हांरौ साधपणौ म्हे गमावां इसा म्हांनै भोला जांण्या ? इतरी थांनै प्रतीत नहीं तौ रसता मैं काचौ पाणी पीवै तौ थानै कांइ खबर इत्यादिक घणौ निषेध्यौ ।

जब ते हाथ जोड़ नै बोल्यो—म्हारै भूठी संका पड़ी ।

७८. इण मै संका री कै बात ?

टोळा मै थकां रुघनाथजी साथै स्वामीजी गोचरी उठ्या । एक भायो चरखौ लोढ़तौ तिण रा हाथ सूं आहार वैहर्यौ ।

आगै रुघनाथजी बोल्या—भीखणजी ! संका पड़ी ? जद स्वामीजी बोल्या—साक्षात् असूजतौ ईज लीयौ । इणमैं कांइ संका पड़ै ।

जद रुघनाथजी बोल्या—भीखणजी ! दृष्टि ऊंडी राखणी । आगै थां सरीखौ एक नवौ चेलौ गुरां साथै गोचरी मैं असूजतौ लेतां गुरां नें वरज्या, जद गुरां ते आहार न लीयौ । पछै एकदा विहार करतां उजाड़ मैं तृषा घणी लागी । गुरां नें कहै—मोनै तृषा घणी लागी । गुरां कह्यौ—साधू रौ मारग है सेंठौ रहै । पिण चैलै तृषा मरतै काचौ पाणी पीधौ । मोटो प्राछित आयौ । नहींतर थोड़ा मै ई गुदरतौ । जद स्वामीजी जाण्यौ यांनै इसौईज दरसै ।

७९. साहूकार, देवाल्यो

केइ इम कहै—हिवड़ा पांचमौ आरौ है । पूरौ साधपणौ पळै नहीं । जद स्वामीजी बोल्या—खत मंडै तो साहूकार रै माथै नै देवाल्या रै माथै सरीखौ मंडै—धणी मांगसी तिवारै तुरत देसी । उजर करण पावै नहीं । आकरा दीपता लैहणा ।

पिण साहूकार देवाल्या री खबर तौ मांग्यां पडै । साहुकार तौ ब्याज सहित देवै नै देवाल्यौ मूळ ही मै तोटौ घालै ।

ज्यूं भगवंते सूत्र भाख्या तिण प्रमाणै चालै ते साध, अनै सूत्र प्रमाणै न चालै नै पंचमा आरा रौ नाम लै ते असाध ।

८०. पंचां नै पूछसूं

किण हि रै आंख्यां री कारी वैद कीधी । आंख्यां चोखी हुई । वैद बधाइ मांगै । जद कहै—पंचां नै पूछसूं । पंच कहसी सूझतौ हुवौ तौ बधाइ देसूं ।

जद वैद बोल्यौ—तौ नें ई काइ दीसै है ?

जद ते बोल्यौ—पंच सूझतौ हुवौ कहिसी तौ देसूं। जद वैद जाण्यो बधाई आय चुकी।

ज्यूं कोइ रै श्रद्धा बैसाणी तिण नें कह्यौ तूं गुरु कर। तब ते कहै दोय च्यार जणांनें पूछसूं तथा आगला गुरां नै पूछसूं। ते कहसी तौ गुरु करसूं। जब जाण्यां इणरै श्रद्धा पकी बैठी नहीं।

८१. बड़ौ मूरख

कोइ भेषधारचां नें छोड़नै साची श्रद्धा लीधी। गुरु कीधा। पिण उणां रौ परचौ छूटौ नहीं। वार वार जायवो करै।

जद स्वामीजी पूछ्यौ—यांरौ परचौ क्यूं राखै ?

जद ते बोल्यौ—म्हांरै आगलौ सनेह है।

जद स्वामीजी बोल्या—किण ही नें मेर पकड़ ले गया। डेरौ खोस लीधौ। फाटका पिण दीधा। पछै घर रा मैहनत कर छुड़ाय ल्याया। केतलै एक काळे मेला में भेळा थया। ओळख नै मेरां सूं मिल्यौ। लोकां पूछ्यौ—थारै कांइ सैंहद ?

जद बोल्यौ—म्हारै भाइजी रा हाथ रा फाटका लागा है। आ भाइजी रा हाथ री सहलाणी है।

जद लोकां जाण्यौ ओ पूरौ मूरख है।

ज्यूं यां कुगुरां रा जोग सूं तौ खोटा मत मैं पड़चौ हौ। तिण नें उत्तम पुरुषां चोखो मारग पमायो। नै ते बले कुगुरां सूं हेत राखै तौ बड़ौ मूरख।

८२. रखै, नवो कजीयौ करोला

सरियारी में स्वामीजी चोमासौ कीधौ। कपूरजी पोत्याबंध तिहां हुंतौ अनै पोत्याबंधां री वायां पिण हूंती। संवच्छरी आयां कपूरजी कह्यौ—भीखणजी ! वायां सूं बोलाचाली हुइ सो खमावा जाऊं।

जद स्वामीजी बोल्या—खमावा जावौ छौ पिण रखै नवौ कजीयौ करौला।

जद कपूरजी कह्यौ—नवौ कजीयौ क्यांनें करूं ?

पछ बायां कन जायनै बोल्यौ—आपांरै खमतखामणां है। थे तौ अजोगाई कीधी पिण म्हारै तो रागद्वेष राखणौ नहीं।

जद बायां बोली—अजोगाई थे कीधी कै म्है कीधी ? इम आपस मैं माहोमाहि झगड़ौ घणौ लागौ।

पछै पाछौ आयौ स्वामीजी नै कह्यौ—भीखणजी ! कजियौ तौ अपूठौ घणौ हुवौ।

जद स्वामीजी बोल्या—म्हे तौ थांनै पहिलां इज कह्यौ थौ।

८३. अठै कांइ दुःख थो ?

हेमजी स्वामी स्वामीजी नै कह्यौ—तिलोकजी, चंद्रभाणजी, सतोषचंद जी, शिवरामदासजी, आदि टोळा बारै जूजूवा फिरै ते सर्व भेळा होयनै एकठा रहै तौ यांरौ ई टोळौ होय जावै ।

जद स्वामीजी बोल्या—इसी करामात हुवै तो अठा सूं ईज क्यूं जावै ? अठै कांई दुख थौ ?

८४. श्रावक नै समजाय लेवां

भेषधारी कह्यौ—भीषणजी कोड़ कसायां बिचै ई खोटा ।

जद स्वामीजी बोल्या—उणांरै लेखै तौ यूं ही । कारण-कसाइ तौ बकरा मारै, उणांरौ कांइ बिगाडीयो ? म्हे उणांरा श्रावक समजाय लेवां उणांरौ मत खंडत करा छां जिण सूं कहै छै ।

८५. आज तौ रहवां हां

भीखणजी स्वामी सरियारी सूं विहार करतां सांमैंजी भंडारी पगां मैं पाग मेली बोल्यौ—आज तौ विहार मत करौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—आज तौ रहां छां पिण आज पछै इसी वीणती कीजौ मती ।

८६. इसी विणती कीजौ मती

आगरीया सूं स्वामीजी विहार करतां भायां हठ घणी कीधी । पिण स्वामीजी मांनी नहीं, विहार कीधौ । गाम बारे कितीयक दूर गया । भारमल जी स्वामी बोल्या—आज तौ भाया बेराजी घणा हूआ, आप विणती न मानी तिण सूं ।

जद स्वामीजी बोल्या—आज तौ पाछा चालौ पिण आज पछै इसी विणती कीजौ मती ।

८७. भगवान रै घर रा कासीद

केलवा मैं परषदा बैठां ठाकर मोहकमसींहजी पूछ्यौ—आपनै गाम-गाम री विणतीयां आवै, घणा लोग लुगाइ आपनै चावै, नर-नारी आपनै देखनै राजी घणां हुवै, बाई भाया नै आप बलभ घणां लागौ, सो कांई कारण ? आप मैं इसो कांई गुण ?

जद स्वामीजी बोल्या—कोई साहूकार प्रदेश थौ । तिण घरे कासीद मेल्यौ । खरची मेली । सेठाणी कासीद नें देखनै राजी घणी हुइ । उन्हा

पाणी सूं उणरा पग धोवाया । आछी तरै भोजन करनै जीमावै । कनै बैठी समाचार पूछै । साहजी डीलां मैं कीसायक छै ? सुखसाता है ? साहजी कठै पोहढै है ! कठै वेस है ! कासीद जिम-जिम समाचार कहै तिम-तिम सुणनै घणी राजी हुवै । पिण कासीद नें देखनै राजी हुवा रौ कारण धणीं रा समाचार कहै तिण सूं ।[1] तिम म्हैं भगवान रा गुण बतावां छां, संसार मोख रौ मारग बतावां छां । तिण कारण लोग लुगाई म्हांसूं राजी हुवै छै ।

८८. सो कुण देख्या

वले केलवा मै ठाकुरां पूछा कीधी--आप आगला तथा गया काल नां लेखा बतावौ छौ सो कुण देख्या है ?

जद स्वामीजी पूछ्यौ—थांरा बाप, दादा, पड़दादा आदि पीढीयां रा नाम तथा त्यांरी पुराणी बातां जाणौ हौ सो किण देखी है ?

जद ठाकर बोल्या—भाटां री पोथ्यां मैं बड़ेरां रा नाम वारता मंडी है तिण सूं जाणा हां ।

जद स्वामीजी बोल्या—भाटां रै झूठ बोलण रा सूंस नहीं । त्यांरा लिख्या पिण थे साचा जाणौ हौ तौ ज्ञानी पुरषां रा भाख्या शास्त्र झूठा किम हुवै ? उवै तौ साचा ही है।

इम सुणनै ठाकुर घणां राजी हुवा—भला जाब दीधा ।

८९. आपरो करणी मोटो है

ढूंढार मैं एक गाम स्वामीजी पधारया, जद ठाकुर अधेली रा टका पगा मैं मेल्या । जद स्वामीजी बोल्या—म्हे तौ टका पइसा कांइ ल्यां नहीं ।

जद ठाकर बोल्यौ—आप मोहर लायक हो पिण म्हारी पोहच इतरी ज है । अबकै पधारसौ जद रुपइयो निजर करसूं ।

जद स्वामीजी बोल्या—म्हे तौ रुपीयौ मोहर आदि काइ न राखां ।

इम सुण नै ठाकर घणौ राजी हुवौ । गुणग्राम करवा लागौ—आपरी करणी मोटी है ।

९०. समदृष्टि रै पाप लागै ?

पुर मैं स्वामीजी कनै गुलाब ऋषि दोय जणां सूं भेषधारयां रा श्रावक घणां साथे लेइ नै चरचा करवा आयौ । भेषधार्‌यां रा श्रावक ऊंधा अवळा बोलै ।

जद स्वामीजी बोल्या—होळी मैं राव बणाय साथै गेहरीया तमासा रूप हुवै । ज्यूं थे यांनै तौ राव बणाया नें थें गेहरीया ज्यूं बणीया दीसौ हौ । पिण

---

१. ते धणी रा समाचार रा जोगस्यूं ।

ज्ञान री बात तौ कांइ दीसै नहीं ।

हिवै स्वामीजी गुलाब ऋषि नै पूछ्यौ—शीतळजी रा टोळा रा साधां नें साध सरधौ के असाध ?

जद ते बोल्यौ—असाध सरधूं छूं ।

शीतळजी वालां संथारा कीया त्यांनै कांइ सरधौ ?

जद ते बोल्यौ—उणांरौ अकाम मरण । रघुनाथजी, जयमलजी आदि टोळा वालां नै कांई सरधौ ? जद बोल्यौ—असाध । उणांरा टोळा मैं संथारा किया तिकै ? जद बोल्यौ—अकाम मरण ।

पछै भेषधारयां रा श्रावक बोल्या—भीषणजी नै कांइ सरधौ ?

तब स्वामीजी पहिलां ही बोल्या—म्हे तौ यांनै आगै देख्याई नहीं अनै म्हारै यांरै श्रद्धा आचार मिल जासी तौ म्हे आहार पांणी भेळौ कर लेवां तौ म्हांरै अटकाव नहीं । तिवारै केयक तौ भेषधारयां रा श्रावक बिखर गया ।

हिवै स्वामीजी गुलाब ऋष नै पूछ्यौ—समदृष्टि नै पाप लागै कै न लागै ?

जब ते बोल्यौ—न लागै । स्वामीजी पूछ्यौ—समदृष्टि स्त्री सेवै तौ ?

जद ते बौल्यौ—तौ पिण पाप न लागै । थे पौता मैं समदृष्टि जाणौ हो थे स्त्री सेवौ तौ ? जद बोल्यौ—पाप तौ न लागै, पिण भेष मैं आ बात सोभै नहीं ।

जद स्वामीजी बोल्या—माथै पोत्यौ बांध नै सेवौ तौ ? इत्यादिक अनेक प्रश्न पूछ्या, जद पाछा जाब देवा असमर्थ थयौ, घणौ कष्ट हूवौ । जद क्रोध कर बोल्यौ—म्हांसूं चरचा करौ हौ पिण गोघूंदा नां भाया सूं चरचा करौ तो खबर पड़ै । गोघूंदा नां भाई तुंगीया नगरी नां श्रावक छै । गोघूंदा नां श्रावक अकबरी मौहर छै ।

जद स्वामीजी बोल्या—वलै थांरै तीखौ खेत्र हुवै सो बतावौ ।

गुलाब ऋषि बत्तीस सूत्र खांधै लीयां फिरतौ पिण सरधा खोटी । वले पांच महाव्रतां रा द्रव्य क्षेत्र काल भाव पूछ्या ।

जद बोल्यौ—पांनां मै मंड्यां है ।

स्वामीजी बोल्या—पांनौ फाट जासी तौ ? साधपणौ थे पाळो हौ कै पानौ पाळै ? इत्यादिक घणां कष्ट कीधा ।

० अै म्हांरा आगला गुरु

पछै स्वामीजी गोघूंदे पधार्‍या ।

गोघूंदे रै भायां सूं चरचा करनै समझाया । सुणनै गुलाब ऋष आयौ । स्वामीजी सूं चरचा करवा लागौ ।

जद भाया बोल्या—महाराज यांसूं चरचा तौ म्हे करसां । अै म्हांरा आगला गुरु है ।

पछै भायां गुलाब ऋष सूं चरचा करनै घणों कष्ट कीधौ।

जद क्रोध करनै बौल्यौ—गोघूंदा नां भाया ठीकरी रा रुपिया छै। घणों फीटौ पड़नै चालतौ रह्यौ।

पछै गौघूंदा रा भाया स्वामीजी नै अठारै सो बाइस पानां री भगवती बहिराइ। दूजो पन्नवणां सूत्र वहरायौ।

९१. एक भीखण बाकी रह्यौ है

पाली मैं खंतिविजय संवेगी रुघनाथजी सूं चरचा कीधी—किणहि साधां नै मिश्री रै भौळै लूंण वहिरायौ। खंतिविजय तौ कहै—फाक जांणौ पात्रे आय पड़्यौ तिण कारण, अनें रुघनाथजी कहै—धणीनै भुळावणौ अथवा परठ देणौ। ब्राह्मण नै साइदार थाप्यौ।

ते पिण बोल्यौ—फाक जांणो।

पछै रुघनाथजी आचारांग काढ्यौ। जद खंतिविजय रुघनाथजी कनै सूं पानौ खोस नै फाड़ न्हांख्यौ। घणां लोग लुगायां सुणतां कष्ट कीधा। जद संवेगीयां री बायां गावा लागी—

ज्ञानी गुरु जीता रे जीता सूतर रे परताप ज्ञानी गुरु जीता रे जीता।

जद रुघनाथजी घणां उदास हुआ। पछै श्रावका नै कह्यौ—इणनै जीतै जिसौ तौ भीखण है। म्हे बाइसटोळा साचा ज्यानें इ झूठा पाड़ै है तौ औ तौ प्रत्यख तांबा रौ रुपइयो है सो इणनै तौ हटावणौ सोरौ है। जद त्यारां श्रावक स्वामीजी रा श्रावकां नै कहिवा लागा—थांरा गुरु मेवाड़ मैं है सौ वीणती मेल नै बोलावौ।

पछै स्वामीजी पिण मेवाड़ थी मारवाड़ पधार्‌या। पाली मैं उणांरा श्रावक स्वामीजी नें कहिवा लागा—पूजजी कह्यौ है—खंतिविजय नै चरचा कर नै हठावौ। खंतिविजय ऊंधौ घणौ बोलै—ढूंढ़ियां रा मूंहढा मै आंगुळी घाती पिण दांत देख्यौ नथी। एक भीखण काळियौ रह्यौ है। इसौ ऊंधौ बौलै।

० निक्षेपां री चरचा

पछै स्वामीजी विचरता-विचरता काफरला पधार्‌या। खंतिविजय पिण पींपार नां घणां श्रावकां सूं देवळ नी प्रतिष्ठा हुवै त्यां आयौ।

खंतिविजय नै घणां लोक कहै भीखणजी सूं चरचा करणी। एकदा कुंभारां रै वास मै मारग बहता साह्मौ मिल्यौ। स्वामीजी नै पूछ्यौ—तांहरो नाम कांइ?

स्वामीजी बोल्या—म्हारो नाम भीखण।

खंतिविजय बोल्यौ—उवे तेरापंथी भीखणजी ते तुम्हे? जद स्वामीजी बौल्या—हां उवेईज।

जद खंतिविजय बोल्यौ—तमारा थी निक्षेपां नीं चरचा करवी छै ।

स्वामीजी बोल्या—निक्षेपा किता ?

ते बोल्यौ—निक्षेप चार—नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव ।

स्वामीजी पूछ्यौ—यां च्यारां मै वंदना-भक्ति किसा नीं करणी ।

खंतिविजय बोल्यौ—च्यारूं ही निक्षेपा नीं वंदना-भक्ति करवी ।

स्वामीजी बोल्या—एक भाव निक्षेपो तौ म्हे पिण वांदां पूजां छां । बाकी तीन निक्षेपां नीं चरचा रही । तिणमैं प्रथम नाम निक्षेपो । किणही कुम्भार नों नाम भगवान दियौ । तिणनैं थे वांदो कै नहीं ?

जद ते बोल्यो—तिणनैं सूं वांदीयै ? प्रभू नां गुण नथी ।

स्वामीजी बोल्या—गुण वाला नै तो म्हेइ वांदां छा ।

इम सुण जाव देवा असमर्थ थयौ । हिवै थापनां री चरचा स्वामीजी पूछी ।

रत्नां री प्रतिमां हुवै तौ बांदौ कै नहीं ?

ते बोल्यौ—बांदां ।

बलि पूछ्यौ सोनां री प्रतिमा हुवै तौ बांदौ ?

ते बोल्यौ—बांदां ।

रूपा री प्रतिमा हुवै तौ बांदौ ?

ते बोल्यौ—बांदां ।

सर्व धात री प्रतिमा हुवै तौ बांदो ? बांदां ।

पाषांण री प्रतिमा हुवै तौ बांदौ ?

तब ते बोल्यौ—बांदां ।

वली स्वामीजी पूछ्यौ—गोबर की प्रतिमा हुवै तौ बांदौ कै नहीं ?

खंतिविजय क्रोध करनै बोल्यौ—तमारा थी निक्षेपा नी चरचा करवी नहीं । तूं तो प्रभू नीं आसातना करै । अमनें गमें नथी । इम कही चालतौ रह्यौ । स्वामीजी पिण ठिकाणै आया ।

० हाथ क्यूं धूजे है ?

पछै खंतिविजय नै लोकां कह्यौ—भीखणजी सूं चरचा करौ । इम बार-बार कहिवा थी खंतिविजय घणां लोकां सहित आसरे दश हाट रै आंतरै आय बैठौ ।

हिवै स्वामीजी नै लोकां आय कह्यौ—खंतिविजयजी चरचा करबा आया है । सो आप पिण चालौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—म्हारा भाव तौ अठैईज छै । खंतिविजयजी इतरी दूर आया है, चरचा करवा रौ मन हुसी तौ इतरी दूर वले आय जावैला ।

जद लोकां खंतिविजय नै जाय कह्यौ । आप चालौ । इम कहिनै एक हाट रै आंतरै ल्याय बैसाण्यौ । बोल्यौ—अठा सूं तौ नहीं सरकीस ।

पछै लोकां स्वामीजी नै आय कह्यौ—अबे तौ आप ही पधारौ। जद स्वामीजी अनै भारमलजी स्वामी पधार्या। हिवै चरचा मांडी। स्वामीजी बोल्या—चरचा आचारंग आदि इग्यारा अंग सूत्रां री करणी। आचारंग सूत्र अ० ४ सू० २०,२१ मैं एहवौ कह्यौ छै—

"सव्वे पाणा सव्वे भूया सव्वे जीवा सव्वे सत्ता हंतव्वा—सर्व प्राण भूत जीव सत्त्व हणवा। एत्थ वि जाणह णत्थित्थ दोसो—इहां धर्म नै काजे जीव हण्यां दोष नहीं। अणारिय वयणमेयं—ए अनार्य नौ वचन छै।"

एह पाठ स्वामीजी बतायौ। जद खंतिविजय बोल्यौ—इणमैं खोट है। ल्याव रे चेला! आंपां री पड़त। पोथी खोलनै देख तौ। तिण मैं पिण इम हीज नीकल्यौ। तिवारे स्वामीजी बोल्या—वाचौ। जद परषदा मैं वाचै नहीं। हाथ धूजवा लागौ।

तिवारे स्वामीजी बोल्या—थांरौ हाथ क्यूं धूजै? हाथ तौ चार प्रकारै धूजै—कै तो कंपण वाय सूं। कै क्रोध रै बस हाथ धूजै। कै चरचा मैं हारयां हाथ धूजै। कै मैथुन रे वशीभूत।

जद क्रोध रै बस बोल्यौ—साळा रौ माथौ छेदीयै।

जद स्वामीजी बोल्या—म्हारे जगत् मैं स्त्रियां ते मा-बहिन समांन है। अनै थांरे घर मैं ई कोई स्त्री हुवै ते म्हारै बहिन। इण लेखै साळौ कह्यौ हुवै तौ जाण्या। अनै घर मैं स्त्री नीं हुवै नै मोनै साळौ कहो तौ झूठ लागै। अनै थै साधपणौ लीयौ जद छ काय हणवा रा त्याग कीया सो मोनै साध तौ न सरधौ पिण त्रसकाय मैं तौ छूं? 'माथौ छेदियै कह्यौ' ते मोनें हणवा रौ कांइ आगार राख्यौ। इम सुण घणौ कष्ट हुवौ।

पछै मोतीरामजी चोधरी कह्यौ—उठो परहा, म्हांनै लजावौ। अै तौ खिम्यावंत साधू छै अनै थैं अरल-बरल बोलौ। इम कही हाथ पकड़ उठाय ले गयौ।

* फेर चरचा न कीधी

पछै स्वामीजी नै खंतीविजय पींपार आया जब लोकां जाण्यौ अबै चरचा हुसी। स्वामीजी गोचरी जायै जठै·········रां श्रावक कहै—पूजजी कह्यौ है—खंतिविजय सूं चरचा कर कष्ट करौ। जद स्वामीजी बोल्या—उवै करसी तौ चरचा करवारा भाव छै। पछै सरूपजी मूंहतो खंतिविजय नै जाय कह्यौ—भीखणजी कहै सो चरचा करो। × × पिण खंतिविजय तौ फेर स्वामीजी सूं चरचा करी नहीं। स्वामीजी मासखमण रही विहार कीधौ। विहार करतां खंतिविजय रे उपाश्रय कनै उभा रह्या तौ पिण खंतिविजय चरचा न कीधी।

* गुळ रै बदळै अमल

फेर एकदा पाली मैं खंतिविजय सूं चरचा हुइ। मिश्री रै बदळै लूंण

आयां खंतिविजय कहै—पात्रै आय पड़यौ तिण सूं खाय जांणौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—गुळ रै बदळै किण ही अमल बहिरायौ, मिश्री रै बदळै सोमलखार बहिरायौ ते पिण थांरै लेखै खाय जाणौ पात्रै आय पड्यौ तिण कारण ! जब घणों कष्ट हुवौ शुद्ध जाब देवा असमर्थ ।

९२. खाधो तौ मिश्री, जाण्यौ जहर

पींपार नों वासी चोथजी बोहरौ पाली मै दुकान मांड़ी । चोमासौ उतर्‍यां स्वामीजी तिणरौ कपडौ लेवा गया । दोय वासती बहिराय पूछा कीधी—हूं थांनै असाध सरधूं । थांनें बासती दीधी मोनै कांइ हुवौ ?

जद स्वामीजी बोल्या—किण ही खाधी तौ मिश्री नै जाण्यौ जहर तौ ऊ मरै कै न मरै ?

जद स्वामीजी बोल्या—किण ही खाधी तौ मिश्री नै जाण्यौ जहर तौ ऊ मरै कै न मरै ?

जद ऊ बोल्यो—न मरै । उणरौ गुण मारवा रौ नहीं ।

तिम म्हे साध । त्यांनै तुमैं असाध जाणनै वहिरायौ तौ थारै जाणपणां मै खामी, पिण साधां नै बहिरायां धर्म छै ।

९३. आ वांचणी कुण दीधो ?

स्वामीजी अमरसींगजी रे थांनक गया । माहै खेजड़ी नो रूंख देखी स्वामीजी बोल्या—रात्री मै लघु परठता हुस्यो जद इणरी दया किम रहै ? तब त्यांरौ साध स्वामीजी री कूट काढनै बोल्यौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—आ कूट काढवा री वांचणी थांरा मन सूं इज सीख्या कै गुरां दीधी ?

जद अमरसींगजी चेला नै निखेध्यौ । स्वामीजी नें बोल्या—ओ तौ मूरख छै थे मन मै कांइ आणजो मती ।

९४. थारी कांई आसंग

गुमानजी रौ चेलौ रतनजी बोल्यौ—हूं भीखणजी सूं चरचा करूं । जद गुमानजी बोल्या—म्हे पिण भीखणजी सूं चरचा करतां संकां छा । सो थांरी कांइ आसंग ? जद रतनजी पूछ्यौ—क्यूं संको ?

जद गुमानजी बोल्या—भीखणजी चरचा कीधां तिणरो जाब पकड़ उणरी जोड़कर गृहस्थ नें सीखायनै गाम-गाम खुराब कर देवै । तिण कारण भीखण जी सूं चरचा करतां संकां ।

९५. असौ अन्याय तौ म्हे न करां

पाली मे स्वामीजी चौमासौ कीधौ जद बाबेचां हाट रा धणी नें कह्यौ—तोनै भाड़ौ दूणौ द्यां तूं हाट म्हांनें दे। जद हाट रौ धणी बोल्यौ—अवारू तौ स्वामीजी उतर्‌यां है, सो आखी पेढी रुपीया सूं जड़ देवौ तौ ही न द्यूं। स्वामीजी विहार किया पछै भलाइ लीज्यो। पछै बाबेचां जेठमलजी हाकम कनै जाय कूंचियां न्हाखी[1]। कह्यौ—कै तौ भीखणजी रहसी के म्हे रहस्यां।

जद हाकम बोल्यौ—इसौ अन्याय तौ म्हे न करां। बसती मै तौ वेश्या कसाई पिण रहै त्यांनें ई न काढां। तौ भीखणजी नै किम काढां?

हाकम दृष्टांत दियौ—विजयसिंहजी रौ राज है मोती बाळदीयौ, तिणरे लाख बळद तिण सूं लखी बाळदीयौ बाजतौ। ते लूण लेवा मारवाड़ आवतौ। ते लोकां रा खेत भेळै। जद जाटां विजयसिंहजी कनै पुकार करी—मोती बाळदीयौ म्हांरा खेत भेळै। राजाजी बाळदीये नै कह्यौ—जाटां रा खेत भेळ मती। जद मोती बोल्यौ—हूंतौ आवसूं जद यूं हीज हुसी। राजाजी कह्यौ—यूं ही होवै तौ म्हारे देश में आ मती। म्हारै लूण है तौ दूजा बाळदीया घणाई आवसी। अन्याय तौ करवा देवां नहीं।

तिमहीज जेठमलजी कह्यौ—थे जास्यौ तौ और व्यापारी आंण वसावसां पिण साधां नै काढां इसौ अन्याय तौ म्हे न करां।

जद बाबेचां कूंचियां लेई आप आपरै घरे गया। उपाय नहीं मिल्यौ।

० म्हे तौ अबे दान देवां नहीं

हिवे बाबेचां ब्राह्मणां नै कह्यौ—थांनै म्हे दान देवां तिणमै भीखणजी पाप कहै छै। म्हे तौ अबे दान देवां नहीं।

जद ब्राह्मणां स्वामीजी नै आय कह्यौ—म्हांनै दीयां आप पाप कहौ सो बाबेचा म्हांनै देवै नहीं।

जद स्वामीजी कह्यौ—थांनै वाबेचा पांच रुपीया देवै तौ पिण म्हांरै नां कहिवा रा त्याग है।

जद ब्राह्मणां वाबेचा नै आय कह्यौ—बापजी पांच रुपीयां रौ हुकम कीयौ है। इम सुण वाबेचा घणां फीटा पड़्या।

० परिषह खमवा किसायक सैठा

स्वामीजी राते बखांण वाचै जठै वाबेचा ढोलक बजावै, गावै, बखाण में विघ्न पाड़ै। जद भायां कह्यौ—महाराज! दूजी जायगां उतरौ।

जद स्वामीजी बोल्या—खेतसीजी नव दीक्षित है सो देखां परीसह

---

१. पछे वावेचा हाकम कनै, हाकम रो नाम जेठमल जी तिणा कनै जा कूंचियां नाखी (क्वचित्)।

खमवा किसायक सेंठा है । कितरा यक दिनां वेदौ कीयौ, पछै वाबेचा लातर गया ।

*** बेदौ मत करो**

पज्जुषण में इन्द्रध्वज काढयौ । सो स्वामीजी रा मूंढा आगै घणी बेळां ऊभा रही गावै बजावै तांन करै । जद केइ श्रावक वाबेचा सूं बेदौ करवा लागा जद स्वामीजी कह्यौ—बेदौ मत करौ । यांनें मत वरजौ । कारण ए प्रतिमां नै भगवांन मांनै है सो कै तौ भगवांन कनै करै, अनै कै भगवांन रा साधां कनै करै ।

जद वाबेचा बोल्या—ए तौ समी-समी विचारै । इम कही चालता रह्या ।

९६. सोभाचंद सेवग निरापेखी है

नाड़ोलाई रौ सोभाचंद सेवग, तिणनै वाबेचां पाली मै कह्यौ—भीखणजी खैरवै है सो त्यांरां अवर्णवाद विश्वर जोड़ । सतरै प्रकार नीं पूजा रचे है तिण मांहि सूं तोनै दस बीस रुपीया देसां ।

जद सोभाचंद बोल्यौ—भीखणजी सूं बात करनै पछै विश्वर जोड़सूं । इम कही खैरवै आयौ । स्वामीजी नै वंदना कीधी । स्वामीजी बोल्या—थारो नाम सोभाचंद ?

जद ते बोल्यौ—हां महाराज !

वली स्वामीजी पूछ्यौ—तूं रोड़ीदास सेवग रो बेटौ ?

ते बोल्यौ—हां महाराज !

पछै सोभाचंद बोल्यौ—आप भगवांन नै उथापौ हौ ए बात आछी न कीधी ।

जद स्वामीजी बोल्या—म्हे तौ भगवान रा वचनां सूं घर छोड़ साधपणौ लियौ सो म्हे भगवांन नें क्यांनै उथापां ?

वले सोभाचंद बोल्यौ—आप देवरौ उथापो ।

जद स्वामीजी बोल्या—देवळ रौ तौ हजारां मण पथर हुवै । म्है तौ सेर दोय सेर पिण क्यांनै उथापां ?

जद ते बोल्यौ—आप प्रतिमां उथापी प्रतिमां नै पथर कहौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—म्हे तौ प्रतिमां नै क्यांनै उथापां ? म्हांरै झूठ बोलवा रा सूंस है । सो म्हे तौ सोनां री प्रतिमां नै सोनां री, रूपा री नै रूपा री, सर्वधात री प्रतिमां नें सर्वधात री कहां, पाषाण री प्रतिमां नै पाषाण री कहां । इम सुण सोभाचंद घणौ हरख्यौ । अहो ! अहो ! इसा पुरुषां रा हूं अवगुण किम बोलूं ? इसा पुरुषां रा तौ गुण करणा चाहिजै ? इम विचार दोय छंद जोड़्या । स्वामीजी नै सुणाय वंदना कर पाली आयौ ।

वाबेचां पूछ्यौ—छंद जोड्या ?

सोभाचंद बोल्यौ—हां, जोड़्या ।

इम सुण उण सेवग नै साथे लेइ स्वामीजी रा श्रावकां कनै आय बोल्या—ओ सोभाचंद सेवग निरापेखी है । भीखणजी नै जाणै ज़िसा कहिसी । कहै भाई ! भीखणजी किसायक ?

जद सोभाचंद बोल्यौ कांइ कहिवावौ उणांरी श्रद्धा उणां कनै आंपांरी श्रद्धा आंपां कनै है । तौ पिण वाबेचां मांनें नहीं, बोल्या—तूं कह ।

पछै सोभाचंद बोल्यौ—भीखणजी मैं गुण-अवगुण मौनें दरसै जिसा कहिसूं ।

जद वाबेचा फेर बोल्या—तोनै दरसै ज्यूं ही कहै ।

जद सोभाचंद छंद जोड्या तिका कहिवा लागौ ।

छन्द

अनभय कथणी रहिणी करणी अति आठुंइ कर्म जिपै अधिकारो ।
गुणवंत अनंत सिद्धंत कला गुण प्राकम पोहोच विद्या पुण भारी ।
शास्तर सार वत्तीस जाणै सहु केवल ज्ञानी का गुण, उपकारी ।
पंचइंद्री कूं जीत न मानत पाखंड साध मुनिंद्र वड़ा सतधारी ।
साधवा मुक्ति का वास बन्दा सहुभीखम स्वाम सिद्धंत है भारी ।
स्वामी परभव के स्वार्थ साचहै वाचहै सूत्र कला विस्तारी ।
तेरा ही पंथ साचा त्रिहुं लोक मै नाग सुरेन्द्र नमैं नरनारी ।
सुणि वात है साच सिद्धंत सुज्ञान की बौहत गुणी करणी बलिहारी ।
प्रथी कै तारक पंचमै आर मै भीखम स्वांमी का मारग भारी ।।१।।

इम सुण वाबेचा तौ सरक गया । अनै स्वामीजी रा श्रावक राजी होय बीस पचीस रुपीया रै आसरे दीया ।

९७. फूलां रौ दृष्टांत न मिलै

स्वामीजी कनै देहरापंथी आयनै बोल्या—थानें नदी उतरघा मैं धर्म है तौ म्हे फूल चाढ़ावां तिणमैं पिण धर्म ।

जद स्वामीजी बोल्या—एक कांनीं नदी कड़ियां तांई अनै एक कांनीं गोड़ां सुधी, एक कांनीं सूकी तौ म्हे सूकी ऊतरां । पिण घणा पांणी वाली दो च्यार कोस री अवळाई सूं ई टळै तौ टाळां ।

अनै थे फूल चढ़ावौ सो एक तौ सूका फूल पड़्या है, एक—दो-तीन दिनां रा कुमळाया फूल है, एक काची कळीयां है थे किसा चढ़ावौ ?

जद उवे बोल्या—म्हे तौ काची कळीयां नखां सूं चूंटी चूंटी चाढ़ावां ।

जद स्वामीजी बोल्या—थांरा परिणाम तौ जीव मारवा रा अनै म्हांरा परिणांम दया पाळवा रा । इण न्याय नदी ऊपरै फूलां रौ दृष्टांत न मिलै ।

९८- साध इज बाजै

किणहि पूछ्यौ—भीखणजी थे और टोळा वाळा नै असाध सरधौ तौ यांनें अमुक टोळे रा साध, अमुक टोळे रा साध यूं क्यूं कहौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—कोइ रै किरीयावर थयां गाम मैं नेंहता फेरे । जद कहै—अमकड़ीया रै नैहतो खेमांसाह रै घर रौ । अमकड़ीया रै नैंहतो पेमांसाह रा घर रौ । अनै त्यां देवाळौ काढयौ हुवै तौ ही साह बाजै । ज्यूं साधूपणौ न पाळै अनै साधू रौ नाम धरावै तौ ते द्रव्य निक्षेपा रे लेखै साध ईज बाजै ।

९९. किमत तूं कर लै

किणहि पूछ्यौ—एतला टोळा है ज्यां मै साध कुण नै असाध कुण ?

जद स्वामीजी बोल्या—कोइ नें आंख्यां न सूझै तिण पूछ्यौ—सहर मै नागा किता नै ढकीया किता ?

जद वैद्य बोल्यौ—आंख्यां मै औषध घालनै सूझतौ तौ हूं कर देऊं, नागा ढकीया तूं देखलै ।

ज्यूं ओळखणा तौ म्हे बताय द्यां, साध असाध तूं देख लै । पेलां रौ नाम लेइ असाध कह्यां, आगलौ कजीयौ करै । तिणसूं ज्ञान तौ म्हे बताय द्यां पछै कीमत तूं कर लै ।

१००. साध कुंण ? असाध कुंण ?

वलि किणहि पूछ्यौ—यां में साध कुंण नै असाध कुंण ?

जद स्वामीजी बोल्या—किण ही पूछ्यौ—सैहर मै साहूकार कुंण देवाळ्यौ कुण ? लेयनै पाछौ देवै ते साहूकार । लेयनै पाछौ न देवै मांग्यां झगड़ौ करै ते देवाळ्यौ । ज्यूं पांच महाव्रत लेयनै चोखा पाळै ते साध अनै न पाळै ते असाध ।

१०१. म्हारो तौ जीव जावै है ?

कोइ बोल्यौ—अणुकम्पा आणनै काचौ पाणी पायां पुन्य है, कारण उणरा परिणाम चोखा है जीव बचावा रा । पिण पांणी रा जीव हणवारा भाव नहीं ।

जद स्वामीजी बोल्या—कोई कटारी सूं किण ही नै मारवा लागौ ।

जद ते बोल्यौ—मोनें मार मती ।

जद ते आदमी बोल्यौ—म्हारा तोनें मारवा रा भाव नहीं । हूं तौ कटारी नीं कीमत करूं छूं—आ कटारी किसीयक वहणी छै ।

जद ते बोल्यौ—बूडी थारी कीमत, म्हारौ तौ जीव जावै छै।
ज्यूं जीव खवायां परीणाम चोखा कहै, त्यांरी श्रद्धा खोटी।

१०२. ऊ तौ अवसर उण वेळां इज

भेषधारयां रै ठिकाणै स्वामीजी पूछ्यौ—थे कितरी मूरत्यां छौ।
जद उणां कह्यौ—म्हे इतरी मूरत्यां छा।
स्वामीजी ठिकाणै पधारयां पछै उणां नै किणहि कह्यौ—थाने तो भीखणजी भगत कीधा।
जद ऊ भेषधारी स्वामीजी कनै आय पूछ्यौ—थे कितरी मूरत्यां छौ।
जद स्वामीजी बोल्या—ऊ तौ अवसर उण वेळां इज थो म्हे तौ इतरा साध छां।

१०३. भीखणजी थे इ मांजो

स्वामीजी घर मै थकां दिशा गया। तिहां सोजत रा महाजन रौ साथ थयौ। पाछा आया जद ते तौ लोटीयां ने बार-बार मांजै, काचा पाणी सूं घणौ धोवै। अनै बोल्यौ—भीखणजी थे इ मांजौ।
जद स्वामीजी बोल्या—हूं तौ लोटीया मै न गयौ, हूं तौ दिशा दूर गयौ।
जद ऊ बोल्यौ—हूं किसौ लोटीया में गयौ।
जद स्वामीजी बोल्या—तौ इतरौ क्यूं मांजो ?
जद ते बोल्यौ—लोटीयो कनै हूंतो।
स्वामीजी बोल्या—थांरौ मूंहढौ माथौ पिण कनै हूंतौ इणनै रगड़ौ कै नहीं ?

१०४. थालो भांगो नहीं

भेषधारी कहै—भीखणजी घर मै थकां भाई-भाई न्यारा हुवा, जद ऊंखळ मै घाल थाळी भांग नें आधो आध कीधी।
जिणरौ प्रश्न हेमजी स्वामौ पूछ्यौ—घर में थकां थाळी भांगी कहै सो बात साची के झूठी ?
जद स्वामीजी बोल्यां—इसा म्हे भोळा नहीं सो पैहलांई रुपीया रो पूण करां। म्हे तौ औ काम नहीं कीयौ। अनै अमुक संप्रदाय रै आचारज रा गुरु तौ घर में थकां ऊंट हीज मार्‍यौ। खरवार लेई आवतां धाड़ आइ। जद जाण्यौ कपड़ौ ई ले जासी अनै ऊंट ई ले जासी। इम विचार तरवार सूं ऊंट नीं फींचा काटी मार न्हांख्यौ। गृहस्थपणां री कांई बात ? बाकी म्हे तौ घर में छतां थाळी भांगी नहीं।

१०५. लुगायां गाळ्यां गाबा लागी

स्वामीजी घर में छतां सासरे जीमवा गया । जद लुगायां गाळ्यां गायवा लागी 'औ कुंण काळौजी काबरौ' इम गावै ।

जद स्वामीजी बोल्या—थे खोडा आंधां नै तौ चोखौ बतावौ नै मोनें ऊंधी बोलौ । स्वामीजी रौ साळो खोड़ो हुंतौ । तिणसूं स्वामीजी कह्यौ—थे खोटा नै तो चोखौ कहौ अनै चोखा नें खोटौ कहौ । इम कही नै बिना जीम्यां भूखा इ उठ गया । घर मै थकांई झूठ नीं चिड़ हुंती सो झूठ न सुंहावतौ ।

१०६. गैहणो कठासूं आसो ?

घर मै छतां कंटाळौया मै कोई रौ गैहणौ चोर ले गयौ । जद 'बोरनदी' सूं आंधा कुम्हार नै बोलायौ । कुंभार रे डील मै देवता आवतौ कहे, तिणसूं तेहनें गैहणौ बतावा बुलायौ ।

कुंभार स्वामीजी नै पूछ्यौ—भीखणजी अठै किण रौ भर्म करै ।

जद स्वामीजी इण रौ ठागौ उघाड़ करवा कह्यौ—भर्म तौ मजन्यां रो करै है । हिवै रात्रि आंधे कुंभार देवता डील अणायौ । घणां लोक देखतां हाका करै । न्हांख दै रे ! न्हांख दै ।

जद लोक बोल्या—नाम बतावौ । जद बोल्यौ ओ-ओ-ओ–मजन्यौ रे मजन्यौ, गैहणौ मजन्यै लीयौ । जद अतीत घोटौ लेइ नै उठ्यौ । मजन्यौ तौ म्हारा बकरा रौ नांम है, म्हारै बकरे रै माथै चोरी देवौ । जद लोकां ठागौ जाण्यौ ।

स्वामीजी लोकां नै कह्यौ—थे सूझतां तौ गेहणौ गमायौ नै आंधा कनां सूं कढावौ सो गैहणौ कठासूं आसी ?

१०७. इसो दोहरो जद मुक्ति मिले

भीखणजी स्वामी नें घर मै छतां वैराग आयौ । जद कैरां रौ ओसावण तांबा रा लोटीया मै घालै नै ठामतां री बंडेळ मै मेळ्यौ । घणी वेळां सूं पीतां कष्ट घणौं हुवौ । तिवारै विचार्‌यौ साधपणौ दोहरौ घणों । वले विचार्‌यौ इसो दोहरौ जद मुक्ति मिलै । नवौ साधपणौ लीयां पछै इकावनां रे आसरै हेमजी स्वामी नै स्वामीजी कह्यौ—इसौ जाणनै साधपणौ लियौ । पिण इसौ पांणी पीवा रौ कदे इ काम पर्‌यौ दीसै नहीं । जद हेमजी स्वामी बोल्या—इसा वैराग सूं आप घर छोड्यौ जद उणां मै किसै लेखै रहौ ।

१०८. दोय घड़ी तौ सांस रोक ही रहां

टोळांवाळां मांही थी नीकळीया जद रुघनाथजी कह्यौ—भीखणजी ! अबारूं पांचमौ आरौ है, दोय घड़ी चोखौ साधपणौ पाळै तौ केवळ ज्ञांन पांमै ।

जद स्वामीजी बोल्या—यूं केवल ज्ञान उपजै तो दोय घड़ी तौ नाक भींचनै ई बैठा रहां । वलि प्रभव स्वामी आदि पंचमां आरा मैं हुंता त्यां चोखौ साधपणौ न पाळ्यौ कांई ?

१०९. म्हारी मा घणी रोई

रुघनाथजी रा टोळा माही थी नीकळतां रुघनाथजी आंख्यां मै आंसू काढवा लागा । जद स्वामीजी विचारयौ—घर छोड़तां यां विचै तौ म्हारी मा घणी रोई हुंती । इम विचार नैं छोड़ दीधा ।

११०. ढंढण रै अंतराय

गुणसठै रा साल चवद साधां सूं तथा चवदै आर्यां सूं देवगढ़ में भीखणजी स्वामी विराज्या हुंता, तिहां तीन भेषधारी आय बोल्या—भीखणजी ! म्हे तीन जणां त्यांनें इ पूरौ आहार नहीं मिल्यौ, तौ थांनें इतरा ठाणां नै आहार किण रीते मिलै ।

जद स्वामीजी बोल्या—द्वारका मै हजारां साधां नै आहार पाणी मिलतौ थौ अनै ढंढण रै अंतराय सो एकला नें ई कठिण ।

१११. तमाखू चोखो तौ है नहीं ?

घर मै छतां रजपूत नें साथै बोलावौ लेइ किण ही गाम जातां रजपूत बोल्यौ—तमाखू बिना आघो हालीजै नहीं ।

जद स्वामीजी बोल्या—ठाकरां आगै चालौ दिन थोड़ौ है ।

रजपूत बोल्यौ—तमाखू बिनां अबखाई ।

जद स्वामीजी पाछै रही आरणीयौ छाणौ नान्हों बांटी पुड़ी बांधनै कह्यौ—ठाकरां तमाखू चोखी तौ है नही इसड़ी है ।

जद तिण रजपूत चिबठी भरनै सूंघी अनै बोल्यौ—ठीक ईज है ।

जद स्वामीजी पुड़ी उणनें सूंपी । इसी चतुराइ करनै कुसलै खेमै ठिकाणै आया ।

११२. ते बुद्धो किण काम री ?

सरीयारी मै स्वामीजी चौमासौ कीधौ। विजैसिंहजी नाथजीदुवारै आवतां वर्षा रा जोग सूं सरीयारी मै रह्या। मसुदी स्वामीजी रा दर्शण करबा आया। प्रश्न पूछवा लागा—पहली कूकड़ी हुई कै अंडौ ? पहली घण हूवौ कै अैहरण। पहिलां बाप हूवौ कै बेटौ। इत्यादिक अनेक प्रश्नां रा जाब स्वामीजी युक्ति सूं दीधा। जद मसुदी राजी होय बोल्या—एह प्रश्न घणी जागा पूछ्या पिण इसा जाब किणहि दीधा नहीं। आपरी बुद्धि तौ इसी है सो किण ही राजा रा मसुदी थया हुंता तौ घणां देशां रौ राज एक घरे करता।

जद स्वामीजी बोल्या--पछै ऊ जाय कठै।

मसुदी बोल्या—जाय तौ नरक मैं।

जद स्वामीजी बोल्या—

बुद्धि जिणांरी जाणीयै, जे सेवै जिन धर्म।
अवर बुद्धि किण कांम री, सो पड़िया बांधै कर्म ।।

जिण बुद्धि फैलायां नरक पानैं पड़ै ते बुद्धि किण काम री, जद मसुदी घणां राजी हुवा।

११३. लातर गया

जोधपुर मै स्वामीजी पधार्या। जद भेषधारी भेळा होय चरचा करवा आया। ऊंधी अवळी चरचा करवा लागा—जीव बचायां कांइ हुवै ? विजयसिंहजी पड़हौ फेरायौ तेहनौ कांइ थयौ ? इत्यादिक राज मै डौढ़ी लगावा लागा।

जद स्वामीजी बोल्या—शास्त्र मै राजा री नरक गति कही। इत्यादिक सर्व चरचा शास्त्र खोल नै राजाजी कनै करौ। जब लातर गया।

११४. सम्यग्दृष्टि !

रुघनाथजी स्वामीजी नै पूछ्यौ विजयसिंहजी पड़हौ फेरायौ, तालाब, कूवां पर गळना नखाया। दीवां पर ढाकणां दिराया, बूढा बलद नै लादणौ नहीं, बूढ़ा बाप री चाकरी करणी, इत्यादिक कार्यां मै राजाजी नै कांइ हुवौ ?

जद स्वामीजी बोल्या—राजाजी समदृष्टि है कै मिथ्यादृष्टि ? इम पूछ्यां जाब देवा असमर्थ थया।

११५. समदृष्टि

किणहि कह्यौ—भीखणजी थे नै अन्य सम्प्रदाय वाळा सर्व एक होय जावौ। जब स्वामीजी बोल्या—महाजन, कुंभार, जाट, गूजर, सर्व एक थावौ कै नहीं ?

जद ऊ बोल्यौ—म्हे तौ एक न थावां। यांरी जाति ईज और है।

जद स्वामीजी बोल्या—ए पिण मूळगा मिथ्यात्वी है। गाजीखां मुल्लाखां रा साथी है।

तिण पूछ्यौ—गाजीखां मुल्लाखां कुण थया ?

जद स्वामीजी कह्यौ—एक ब्राह्मण-ब्राह्मणी प्रदेश गया। त्यां ब्राह्मण माल मोकळौ कमायौ। केतलै एक काळे ब्राह्मण आऊखौ पूरौ कीधौ। जद ब्राह्मणी पठाण रा घर मै पैठी। दोय पुत्र थया। एकण रौ नांम गाजीखां, दूजा रौ नाम मुल्लाखां दीयौ। केतलै एक काळे पठांण पिण काळ कर गयौ। जद ब्राह्मणी सर्व धन-पुत्र लेई देश आई। माल देख नै न्यातिला घणां आय भेळा हुवा। कोई भूवाजी कहै, कोई काकीजी कहै।

हिवै ब्राह्मणी कहै—डावडां नै जनेउ द्यौ। जीमणकर घणां ब्राह्मणां नें जीमाया। जनेउ देवा पुत्रां नै हेलौ पाड्यौ—आव रे बेटा गाजीखां, आव रे बेटा मुल्लाखां !

नाम सुण ब्राह्मण कोप कर बोल्या—हे पापणी ! अै काई नाम ? ब्राह्मणां रा नाम तौ श्रीकृष्ण, कै रामकृष्ण, कै हरिलाल, कै रामलाल, कै श्रीधर इत्यादिक हुवै। अनै एह तौ मुसलमान रा राम है। कटारी काढ नै बोल्या—साच बोल ए किण रा पेट रा है। नहीं तौ तोनैई मारसां। नै म्हेई मरसां।

जद आ बोली—मारौ मती। सर्व बात मांड नें कही। ए तौ पठाण रै पेट रा है।

जद ब्राह्मण बोल्या—हे पापणी ! म्हानें भिष्ट कीया। अबै गंगाजी जाय सिनांन, माटी रा लेपै करी शुद्ध थासां।

जद आ बोली—वीरा ! यां दोनूं डावरां नेंई तीर्थ ले जायनै सुद्ध करौ। सो फेर ब्रह्मभोज करनै जिमासूं।

जद ब्राह्मण बोल्या—एह तौ पठाण रा पेट रा मूल गा इ असुद्ध छै सो सुद्ध किम हुवै। म्है तौ मूल का सुद्ध छां। थारौ अन्न खाधौ, तिणसूं तीर्थ जाय सुद्ध होस्यां पिण अै मूलगा असुद्ध है ते सुद्ध किम हुवै।[1]

भीखणजी स्वामी कह्यौ—कोई साध नै दोष लागां प्राछित लेई सुद्ध

---

१. औ वीं बगतरी सामाजिक स्थिति रो चित्रण है। जैन परम्परा जातिवाद री समर्थक कद ही कोनी रही।

हुवै । पिण अै तौ मूळगा मिथ्यात्वी, श्रद्धा ऊंधी, गाजीखां मुल्लाखां रा साथी । ते सुद्ध किम हुवै । सुद्ध श्रद्धा आवै अनै पछै नवी दीक्षा रूप जन्म थयां सुद्ध हुवै ।

११६. बणी-बणाई बांमणी

किण हि पूछ्यौ—भीखणजी ए पिण धोवण ऊंन्हौ पांणी पीयै साध रौ भेष राखै, लोच करावै, अै साधु क्यूं नहीं ?

जद स्वामीजी बोल्या—अै बणी-बणाई ब्राह्मणी रा साथी है ।

ते बणी-बणाई ब्रांह्मणी कुंण ?

स्वामीजी बोल्या—एक मेरां रौ गांम हौ । जठै उत्तम घर नहीं । महाजन आवै सो दुख पावै । मेरां नै कह्यौ—अठै उत्तम घर नहीं सो म्हे थांनै लागत दां छां अनै अठै उत्तम घर विनां रोटी पांणी री अवखाई पड़ै ।

जद मेरां सैहर मै जाय माहजनां नै कह्यौ—म्हारै गांम बसौ थाँरौ उपरसरो राखसां । पिण कौई आयौ नहीं । जद एक ढेढां रौ गुरु मूऔ । तिणरी स्त्री गुरड़ी तिणनै मेरां ब्रांह्मणी बणाई । ब्रांह्मणी जिसा कपड़ा पैहराया । जागा कराय तुलसी रौ थांणौ रोप्यौ, जागां धवलकी । मेरणियां ब्रांह्मणी जिसौ घर कर दीयौ । दोय रुपीयां रा गोहूं मेल्या । अधेली नां मूंग, अनै एक रुपयां रौ घी मेल्यौ । कह्यौ महाजन आवै जिणांनै पइसा लेई रोटीयां कर घालबो कर ।

महाजन आवै ज्यां नै मेर ते ब्रांह्मणी रौ घर बताय देवै । केतलै एक काळै च्यार व्यापारी घणां कोसां रा थाका आया । मेरां नै कह्यौ—उत्तम घर बताऔ । जद ब्रांह्मणी रौ घर बतायौ ।

व्यापारी आयनै बोल्या—बाई रोटीयां करनै घाल । जद इण गोहूंरी जाड़ी रोटीयां कर माहै सुरहौ घी घाल्यौ । दाळ करी तिणमै काचरीयां न्हाखी ते महाजन जीमतां बखाण करै—फलाणां गाम री रांधण देखी । अमकड़ीयै सैहर नीं रांधण देखी । बड़ा-बड़ा सहरां री घणा गांमां री रांधण देखी । पिण इसी चतुराइ कोई देखी नहीं । दाल किसीक स्वाद हुई है । माहै काचरीयां घाल नै बहुत चोखी बणाइ है ।

जद आ बोली—वीरां ! काचरी रा स्वाद री तौ तीखण मिली हुंती तौ खबर पड़ती ।

जद अै बोल्या—तीखण कांई ?

जद आ बोली—काचरियां बंदारवा नै छुरी न मिली ।

अै बोल्या—छुरी न मिली तौ किण सूं बंदारी ?

जद आ बोली—दांतां सूं बनार-बनार नै माहै न्हांखी है ।

जद अै बोल्या—हे पापणी, म्हांनें भिष्ट किया । थाळी पटकवा लागा ।

जद आ बोली—रे वीरां ! थाली मती भांगज्यो। अमकड़ीयै डूम री मांगनै आंणी है।

व्यापारी बोल्या—तूं जात री कुण है ?

जद आ बोली—रे वीरां ! हूं बणी-बणाई ब्राह्मणी छूं। जात री तौ गरुडी छूं। अनै मेरां मोंनें ब्राह्मणी बणाई छै। मांड नै सारी बात कही।

भीखणजी स्वामी बोल्या—तिम अै धोवणऊंन्हौ पाणी पीवै, पिणसमकित चरित्र रहित तिण सूं बणी-बणाई ब्राह्मणी रा साथी है[1]।

११७. इसा भीखणजी कलावान

अमरसिहजी रै जीतमलजी हेमजी स्वामी नै कह्यौ—हेमजी ! सोजत मै भीखणजी चोमासौ कीधौ। तिहां नजीक अमरसिहजी रा साधां पिण चौमासौ कीधौ हुंतौ। सो लागतै चौमासे तौ मिश्रवालां नै उडावता नै इसो दृष्टान्त दीयौ—अमरसिहजी रा बड़ेरां रुघनाथजी जैमलजी रा बड़ेरां नें गुजरात थी मारवाड़ मै आण्यां। जद तौ माहो माँहि गाढौ हेत थौ। दोय तीन पीढी तांइ तौ हेत रह्यौ। पछै रुघनाथजी जयमलजी कौहलोजी ए बूदरजी रा चेला सो अमरसिहजी रा क्षेत्र जोधपुर आदि उरहा लिया। जद हेत रह्यौ नहीं। ज्यूं एक साहुकार जिहाज मै बैस समुद्र पार व्यापार करवा गयौ। पाछौ आवतां कपड़े री मंजूसा मै एक गर्भवती ऊंदरी आई सो व्याई।

साहुकार देखी नै बोल्यौ—इणनै समुद्र मै नहीं न्हांखणी। जाबता करै। पछै साहुकार पोता रै घरै आयौ। थोड़ा दिनां मै ऊंदरी रौ परिवार बध्यौ।

जद ऊंदरी बोली—औ साहुकार उपगारी है। सौ इणरौ आंपां नै बिगाड़ करणौ नहीं। साहुकार पिण ऊंदरा ऊंदरघां नै दुख न दै। एक दोय पीढीयां तांई तौ ऊंदरा ऊंदरघा बिगाड़ करघौ नहीं पछै बिगाड़ करवा लागा। साहुकार नां कपड़ा करंड़िया कुरटवा लागा।

ज्यूं दो-तीन पीढीयां तांई तौ अमरसिहजी रा साधां सूं हेत राख्यौ। पछै अमरसिहजी रा क्षेत्र दाबवा लागा, श्रावक-श्राविका फारवा लागा। बैसते चोमासै तौ औ दृष्टांत दीधौ। तिणसूं अमरसिहजी वाळा तौ राजी रह्या। मिश्रवाला नें समझावा लागा।

पछै उतरते चौमासै फतैचन्दजी गोटावत बौल्यौ—भीखणजी मिश्रवाला नें इज निषेधो पिण ए पुन्यवाळा नेड़ा बैठा त्यांनें क्यूं नहीं निषेधौ।

जद स्वामीजी बोल्या—एक जाट खेती बाई। जवार घणी नीपनीं। पाकी। च्यार चोर आय नै सिट्टां री गांठां बांधी। जाट देख उत्पात सं विचार, आय नै बोल्यौ—थांरी जाति कांई है ?

---

१. साधु रो वेष धार नै श्रद्धा, चारित्र थी रहित हुवै।
तिणरी ओळखाण हेतु ए दृष्टांत दियो।।

एक जणौ बोल्यौ हूं तौ रजपूत । दूजौ बोल्यौ—हूं महाजन ।

तीजौ बोल्यौ—हूं ब्रांह्मण । चौथौ बोल्यौ—हूं जाट छूं ।

जद जाट बोल्यौ राजपूत नै—आप तो धणी हो सो लेखै रौ लेवौ हो । महाजन बौहरौ है सो ठीक । ब्रांह्मण पुण्य रौ लेवै सो ही ठीक । पिण औ जाट किण लेखै लेवै ? इणनै म्हारी मा कन ओलूंभो दिवावसूं । इम कहि गांठ पटक, जवार मै ले जाय बांवळिया रै उणरी पाग सूं बांध दीयौ । फेर पाछौ आय नै बोल्यौ—म्हारी मा कह्यौ है रजपूत तौ लेखै लेवै, धणी है । बाण्यो ते पिण ठीक बोहरो है । पिण ब्रांह्मण किसै लेखै लेवै ? ब्रांह्मण तौ दीयौ लै । बिना दीयौ किम लै ? चाल म्हारी मा कनै । इम कही इणनै पिण पकड़ ले जाय नै बांवळिया रे बांध दीधौ । फेर आयनै बोल्यौ—रजपूत तौ लेखै लेवै पिण बाण्यां किण लेखै ले ? तूं किसै दिन मौनें धान दीयौ हो ? अनै कद म्हारौ बौहरौ थयौ । इम कहि ले जायनै तीजै बांवळिया रे इण नें बांध दीयौ । फेर पाछौ आयनै बोल्यौ—ठाकरां ! धणी हुवै सो जाबता करै कै चोरयां करै ? इम कही इणनें ई पकड़ ले जायनै बांध दीयौ । रावळे जायनै पकड़ाय दीयौ ।

बुद्धि सूं च्यारां नै पकड़्या माल राख्यौ । अनै एक साथै च्यारां सूं झगड़तौ तौ कद पूगतौ ।

ज्यूं मिश्रवाळां माहि सूं तौ केइ समझाया अबे पुनवाळां री बारी । पछै पुन री श्रद्धा वाळा नै निषेधवा लागा । इसा भीखणजी स्वामी कळावांन ।

११८. त्याग क्यूं करौ हो ?

किणहि कह्यौ—मोनें असंजती नै दान देवा रा त्याग करावौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—थे म्हारा वचन सरधीया प्रतीतीया रुचीया जिण सूं त्याग करौ हो कै म्हांनै भांडवा नै त्याग करौ हो । इम कहि नै कष्ट कीधौ ।

११९. लागा डाम पाछा लैणी आवै ?

पींपार मै एक जणै गुरु कीधा । तिणरा घरकां डरायौ । कहै—पाछौ जायनै समकत दे आव ।

जद ते पाछौ आयनै बोल्यौ—थांरी समगत पाछी उरही ल्यौ । सूंस कराया ते पाछा उरहा ल्यौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—डाम लागा पिण पाछा लैणी आवै है कै ?

१२०. क्लामना बिना निर्जरा

पुर सू विहार कर भीलवाड़ै आवतां मारग मे हेमजी स्वामी खेद पाया। जद चन्द्रभांणजी चोधरी नै कह्यौ—आज तौ खेद घणी पामी।

जद चन्द्रभांणजी चोधरी कह्यौ—भीखणजी स्वामी कहिता था प्रदेशां मे क्लामना थयां विनां निर्जरा हुवै नहीं।

१२१. धान माटी सरीखौ लागै

रिणिहि गांम मै जीवो मुंहतो नगजी भलकट नें कहै—

भाइजी ! भीखणजी स्वामी कहिता था—धांन माटी सरीखौ लागै जद संथारौ करणों बाकी आउखो थोड़ौ जांणीजै। जैसी आज आय बीती है पिण म्हांसूं संथारौ हुवै नहीं। इम करतां तिण हिज रात्रि आउखौ पूरौ कीधौ।

१२२. साधां रै असाता क्यूं !

किणहि पूछ्यौ—महाराज ! साधां रै असाता क्यूं हुवै ?

जद स्वामीजी बोल्या—किण हि भाठौ उछालनै हेठै माथौ मांड्यौ अनै पछै भाठौ उछालण रा त्याग कीया तौ आगै भाठौ उछाल्यौ ते तौ लागै पछै सूंस कीया तौ पछै न लागे। ज्यूं आगै पाप कर्म बांध्या ते तौ भोगवै पछै पाप रा त्याग कीया तिण रौ दु:ख न पड़ै।

१२३. चरचा कियां करणी ?

दामौजी सीहवा गाम रौ वासी पाली मै भेषधारयां रै थानक जाय भेषधारयां सूं चरचा कीधी। तिण मै केयक जाब तौ दीया नै केयक जाब आया नहीं।

पछै स्वामीजी नै कह्यौ—चरचा कीधी पिण जाब पूरा आया नहीं।

जद स्वामीजी बोल्या—दामां साह ! बोदी धूंणी नै दोय तीर लेई संग्राम मांड्यां किम जीतै। तीरां रौ भाथड़ौ पूठै बांध जुद्ध कीयां जीते। ज्यूं भेषधार्‌यां सूं चरचा करणी तौ पक्का जाब सीखनै करणी कच्चा जाब सूं न करणी।

१२४. हाथ मै कांई आयौ ?

किण हि पूछयौ—भीखणजी कोई बालक भाठा सूं कीड्यां मारतौ तिण रौ भाठौ खोसनै उरहौ लीयौ तिण नै कांई थयौ ?

जद स्वामीजी बोल्या—उणरा हाथ मै कांइ आयौ ?

जद ऊ बोल्यौ—उण रै हाथ मै भाठौ आयौ। जद स्वामीजी बोल्या—अबै थैइ विचार लेवौ।

१२५. आप रौ नाम कांई ?

पुर भीलवाडै बिचै स्वामीजी पधारतां, ढूंढार नीं तरफ रौ एक भायौ मिल्यौ। तिण पूछ्यौ—आपरौ नांम कांई ?

जद स्वामीजी बोल्या—म्हारौ नाम भीखण

जद ऊ बोल्यौ—भीखणजी री महिमा तौ घणी सुणी है सो आप एकला रूंख हेठै बैठा हो। म्है तौ जाण्यौ साथै आडंबर घणौ हुसी। घोड़ा हाथी रथ पालखी प्रमुख घणौ कारखानौ हुसी।

जद स्वामीजी बोल्या—इसौ आडम्बर न राखां जद हिज महिमा है साध रौ मारग औहीज है। इम सुणनै राजी हुवौ।

१२६. मिश्र री सरधा

काचौ पांणी पायां पुण्य सरधै ते पुण्य री सरधावाळा बोल्या—भीखणजी ! मिश्र री श्रद्धा घणी खोटी है।

जद स्वामीजी बोल्या—किणरी एक फूटी किणरी दोय फूटी। ज्यूं यां री तौ एक फूटी है अनै थांरी दोनूं फूटी है।

१२७. आरंभ घणौ हुवौ

रुघनाथजी वाला बोल्या—भीखणजी ! देखौ जोधपुर में जैमलजी वालां रे थानक आधाकर्मी आरम्भ घणौं हूऔ।

जद स्वामीजी बोल्या—यां रै तौ आरंभ थयौ अनै बीजां रै आरंभ हूंतौ दीसै है। कचा रा पका हुंता दीसै है।

१२८. मरणवालौ बूड़ै कै मारणवालौ !

किणहि पूछ्यौ—भीखणजी ! कोई बकरा मारतां नै बचायौ तिणनै कांई थयौ।

जद स्वामीजी बोल्या—ज्ञान सूं समझायनै हिंसा छोड़ायां तौ धर्म छै। स्वामीजी दोय आंगुली ऊंची करनै कह्यौ—औ तौ रजपूत नै औ बकरौ यां दोयां मै बूड़ै कुंण ? मरणवालौ बूड़ै कै मारणवाळौ बूड़ै ? नरक निगोद मै गोता कुण खासी ?

जद ऊ बोल्यौ—मारण वालौ बूड़ै ?

जद स्वामीजी बोल्या—साधू बूड़ता नै तारै रजपूत नै समझावै बकरा

न मार्‌यां तूं गोता खासी। इम ज्ञान सूं समझाय नै हिंसा छोड़ावै ते मोख रौ मारग है। पिण साधू बकरा नौ जीवणौ बांछै नहीं।

जिम एक साहूकार रै दोय बेटा। एक तौ करड़ी जागां रौ ऋण माथ करै अनै दूजौ करड़ी जागां रौ ऋण ऊतारै। पिता किणनै वरजै ? ऋण माथै करै तिण नै बरजै पिण ऋण उतारै तिण नें न बरजै। ज्यूं साधू तौ पिता समांन है अनै रजपूत नै बकरा दोनूं पुत्र समान है। यां दोयां मै कर्म ऋण माथै कुंण करै ? नै कर्म ऋण उतारै कुंण ? रजपूत तौ कर्म रूप ऋण माथै करै है अनै बकरा आगला बांध्या कर्मरूप ऋण भोगवै/उतारै है। साधू रजपूत नै वरजै तूं कर्मरूप ऋण माथै मत कर। ए कर्म बांध्यां घणां गोता खासी। इम रजपूत नै समझायनै हिंसा छोड़ावै।

१२९. उपकार संसार नौ क मोक्ष नौ

वलि संसार नां उपकार ऊपरै अनै मोक्ष नां उपकार ऊपरै स्वामीजी दृष्टांत दीयौ—किण ही नै सर्प खाधौ। गारडू झाड़ौ देई बचायौ। जद ऊ पगां लाग बोल्यौ, इतरा दिन तौ जीतब माइतां रौ दीयौ अनै अबै आज सूं जीतब आपरौ दीयौ। माता पिता बोल्या—थें म्हांनै पुत्र दीयो। बहिनां बोली—थे म्हांनै भाई दीयौ। स्त्री राजी हुई—चूड़ो—चूनड़ी अमर रहसी सो आपरौ परताप है। सगा सम्बन्धी राजी हुवा—आछौ काम कीधौ लाख रुपीया देवै ते बिचै ए उपकार मोटौ, पिण ए उपकार संसार नौ। हिवे मोक्ष नौ उपकार कहै छै—किणहि नें सर्प खाधौ। उजाड़ में तिहां साधु आया। जब ते कहै मोनै सर्प खाधौ झाड़ौ देवौ।

जद साधु कहै—म्हांनै झाड़ो आवै तौ है पिण देणौ न कल्पै।

जद ऊ बोल्यौ—मोनें ओखध बताबौ।

साधू बोल्या—ओषध जाणां छां पिण बतावणौ नहीं। जद ऊ बोल्यौ—यूंही मूंहढौ बांध्यां फिरौ हो क कांई थां मै करामात पिण है।

जद साधु बोल्या—म्हांमै करामात इसी है जदि म्हांरौ कह्यौ मांनै किण हि भव मै फेर सर्प खावै नहीं।

जद ऊ बोल्यौ—जिकाइ बतावौ।

जद साधु बोल्या—सागारी संथारौ करदै—इण उपसर्ग थी बच्यौ जद तौ बात न्यारी नहीं तौ च्यारूं इ आहार नां त्याग। इम सागारी संथारौ कराय नवकार सिखायौ। च्यारूं शरणां दीधा। परिणाम चोखा रखाया। आउखौ पूरौ कर देवता हुवौ, मोक्ष गामी हुवौ। औ उपकार मोक्ष नौ।

१३०. साधु किण नें सरावै ?

वलि संसार नां तथा मोक्ष नां मारग ऊपर स्वामीजी दृष्टांत दीयौ—

एक साहूकार रै दोय स्त्रियां एकण तौ रोवण रा त्याग किया, धर्म मै घणीं समझै। एक जणी धर्म मै समझै नहीं। केतले एक काळै प्रदेश मैं भरतार काळ कीधौ। सुणनै धर्म मै न समझै ते तौ रोवै बिलापात करै। समझै ते रोवै नहीं समता धार नै बैठी। लोग लुगाई घणां भेळा हुवा। ते सर्व रोवै तिणनै सरावै—ए धन्य है, पतिव्रता है। न रोवै तिणनै निंदै—आ पापणी तौ मूओइज बांछती थी इणरे आंसू ई आवै नहीं। अनै साधु किणनै सरावै? साधु तौ न रोवै तिणनै सरावै। ए प्रत्यक्ष मोक्ष रौ मारग न्यारौ नै लोक रौ मारग न्यारौ।

१३१. पाग कठा सूं आइ ?

केई कहै—आज्ञा बारै धर्म। जद स्वामीजी बोल्या—आज्ञा माही धर्म तौ भगवांन रौ परूप्यौ। पिण आज्ञा बारै धर्म कहौ ते किण रौ परूप्यौ?

ज्यूं किणहि पूछ्यौ—थारै माथै पाग ते कठा सूं आई?

जद साहूकार हुवै ते तौ पैंतौ बतावै—साइदार भरावे, अमकड़ीया बजाज कनै लीधी। अमकड़ीया रंगरेज कनै रंगाई। अनै चोरनै ल्यायौ हुवै तिण सूं पैंतो बतावणी आवै नहीं थोड़ा मै अटक जावै।

ज्यूं आज्ञा बारै धर्म कहै तथा अव्रत सेवाया धर्म कहै, ते ठाम-ठाम अटकै, पैंतो पूगावणी आवै नहीं।

१३२. चरचा घर धणी री तरै

कोई स्वामीजी कनै चरचा करवा आयौ। दान दया री व्रत अव्रत री चरचा करतां ठोड़ ठोड़ अटकै। अरड़ बरड़ बोलै। न्याय री एक चरचा छोड़ दूजी पूछै, दूजी छोड़ नै तीजी पूछै, पिण प्रथम न्याय री चरचा ते पार पुगावै नहीं। जद स्वामीजी बोल्या—घर रौ धणी खेत बाढ़े ते तो प्रांछ री प्रांछ उतारै। अनै चोर आय पड़ै तौ बाटा बरड़ौ करै—एक कठा सूं तोड़ै, एक कठा सूं तोड़ै, ज्यूं थें घर रा धणी होय न्याय री एक चरचा पार पूगाय दूजी करौ। चोर जिम मत करौ।

१३३. न्याय रा अर्थी नहीं

भेषधारी चरचा करतां आचार सरधा री न्याय री चरचा छोड़नै जीव बचावा रौ बैदौ घालै।

जद स्वामीजी बोल्या—कुबदी चोर हुवै तिकौ चौरी करनै जातौ लाय लगाय जावै। लोक तौ लाय रै धन्धे लाग जावै नै आप माल लेयनै चालतौ रहै। ज्यूं आचार तौ शुद्ध पालणी आवै नहीं तिण सूं आचार सरधा री न्याय

चरचा छोड़नै लोकां सूं लगावणी बातां करै—ए जीव बचाया पाप कहै, दान दया उठाय दीधी, भगवांन नै चूका कहै। इम लोकां नै लगावै पिण न्याय रा अर्थी नहीं।

१३४. भगवान रौ मारग पातसाई रस्तौ

कुमार्ग सुमार्ग ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ। भगवान रौ मारग अनै पाखंडीयां रौ मारग किम ओलखीयै। भगवान रौ मारग तौ पातसाई रस्ता जेहवौ सो कठेइ अटकै नहीं। अनै पाखंडीयां रौ मारग ढांढां री डांडी समान। थोड़ी डांडी दीसै आगै उजाड़। ज्यूं थोड़ौ सो दांन शीलादिक बतायनै पछै हिंसा मै धर्म बतावै।

१३५. वर्तमान मै हुवै तिको इज खरौ

केई पाखंडी इम कहै—भीखणजी री इसी श्रद्धा, बकरौ बचाया पछै ऊ कूंपळां खावै काचौ पाणी पीवै अनेक आरंभ करै तिण रौ पाप पाछै सूं आवै।

जद स्वामीजी बोल्या—म्हारै तौ आ सरधा—असंयती नें बचायां ऊ अनेक आरंभ करसी तिणरी अनुमोदनां रौ पाप उण वेला इज भगवांन देख्यौ जितरौ लाग चूकौ, अनै थे तपसा रौ धारणौ कोई नै करावौ 'आगमीया काळ नीं तपस्या नै धर्म मोनें हुसी' इम जाणनै। जद थांरे लेखै असंयती नें बचायां ऊ आरंभ करसी ते आगमीया काळ नौ पाप पिण थांनें लागसी थांरी श्रद्धा रै लेखै। कारण धर्म आगमीया काळ नौ पाछा सूं आवै तौ पाप पिण लागसी अनै भगवंते तौ कह्यौ—असंजती नै बचायां जितरौ पाप ज्ञानी पुरुषां देख्यौ तितरौ ऊण वेला इज लाग चूकौ।

१३६. पाप उणा नैं लागसी

किणहि पूछ्यौ—थे कोई नै सूंस करावौ ते सूंस परहा भांगै तौ थांनें पाप लागै।

जद स्वामीजी बोल्या—किणहि साहूकार सो रुपीयां रौ कपड़ौ बेच्यौ। नफौ मोकळौ थयौ। लेणवाळै एक-एक रा दो-दो कीधा तौ उणरौ नफौ उण साहूकार रै न आवै। तथा ऊ कपड़ौ लेण-वाळौ आगै जायनै सर्व कपड़ौ बाळ देवै तो तोटौ उणरा घर मै पड़ै पिण साहूकार रै घर मै नहीं। ज्यूं म्हे सूंस दिराया तिणरौ नफौ म्हांनै ह्वै चूकौ आगलौ सूंस चोखा पाळसी तौ नफौ उणनै। अनै भांगसी तौ पाप उणनै लागसी पिण म्हांनें न लागै।

१३७. नफौ भाव प्रमाणै

फेर स्वामीजी दृष्टांत दीयौ। किणहि दातार साधू नै घृत बहिरायौ। साधू नेहराइ राखी। तिण घृत सूं अनेक कीडयां मूई तौ पाप साधू नै लागौ पिण दातार नै न लागौ। अनै साधू ते घृत हरष सहित तपसी नै दीधौ पोते न खाधौ तिणरे तीर्यङ्कर गोत्र बंध्यौ ते नफौ साधू रै थयौ। आप आपरा भाव प्रमाणै नफौ हुवै।

१३८. बैरी नै पोखै, ते पिण बैरी

किणहि पूछ्यौ—असंजती जीव नै पोख्यां पाप कहौ छौ ते किण न्याय?

जद स्वामीजी बोल्या—किणहि रै रुपीयां री नोळी कड़ियां बंधी देखनै चोर लारै न्हाठौ। आगै तौ साहूकार अनै लारै चोर न्हाठौ जाय। इम न्हासतां चोर आखुड़ नै हेठौ पड्यौ जब किण हि चोर नै अमल खवाय पाणी पायनै सेंठौ कीयौ। तौ ते अमल खवावण वाळो साहूकार रौ बैरी जाणवौ, बैरी नै साझ दीयौ तिण कारण। ज्यूं छ काया रा हणवावाळा नें पोखै ते छ काया रौ बैरी जाणवौ, बैरी नै साझ दीयौ तिण माटै।

१३९. धर्म कठा सूं?

किणहि खेत बायौ। खेत पाकौ। इतलै धणी रे बाळौ दुखणी आयौ। जद किणहि औषध देइ सांतरौ कीधौ। साजौ हुवौ जद खेत काट्यौ। सहाज देणवाळा नें पिण पाप लागौ। ज्यूं पापी रे साता कीधां धर्म कठा सूं।

१४०. मोख रो उपकार

किणहि राजा दश चोर पकड़्या। मारवा रौ हुकम दीधौ। तिवारै एक साहूकार अरज कीधी—महाराज! एक-एक चोर नां पांच-पांच सौ रुपीया देऊं चोरां नै छोड़ो।

राजा कह्यौ—चोर दुष्ट घणां है सो छोड़वा योग्य नहीं। साहूकार फेर कह्यौ—नव तौ छोड़ौ। तौ पिण राजा मांनै नहीं। इम साहूकार घणी अरज कीधी जद पांच सौ रुपइया लैयनै एक चोर नै छोड्यौ। नगरी नां लोक साहूकार नै धिन-धिन कहीवा लागा, गुण-ग्रांम करै—बंदी छोड़ाय नै मोटौ उपकार कीधौ। चोर पिण घणौ राजी हुवौ। साहजी म्हां सूं घणौ उपकार कीधौ।

पछै चोर पोता रै ठिकाणै आय और चोरां रै न्यातीला नै समाचार कह्या। ते सुणनै द्वेष चढ्या। ते चोर ओरां नै लेइ आयौ। सैहर रै दरवाजै चीठी बांधी—नव चोर मार्‍या तिणरा इग्यारा गुणां निन्नांणवै मनुष मार्‍यां

पछै विष्टालौ कर सूं । साहूकार नै न मारूं । साहूकार ना बेटा पोता सगा संबंध्या ने पिण न मारूं । पछै मनुष मारवा लागौ । किणरौ इ बेटौ मारचौ, किणरौ इ भाइ मारचौ, किणरौ इ बाप मारचौ । सैहर मै भयंकार मंडचौ, नगरी नां लोक साहूकार नै निंदवा लागा । तिण रै घरै जाय रोवा लागा—रे पापी थारै धन घणो हुंतौ तौ कूवा मै क्यूं नहीं न्हाख्यौ । चौर छुडायनै म्हारा मनुष मराया । साहूकार लातरीयौ । सैहर छौड़नै दूजै गाम जाय वस्यौ । घणौ दुखी थयौ । जे लोक गुण करता तेहीज अवगुण करवा लागा ।

संसार नौ उपकार इसो है । मोख रौ उपकार करै ते मोटो तिण मै जोखौ नहीं ।

१४१. भारे करी माठी गति मै जाय

सरीयारी मै बौहरै खींवसरै पूछ्यौ—नरक मै जीव जावै तिण नें ताणै कुण ? जद स्वामीजी बोल्या—कूवा मै पत्थर न्हाखै तिण नै खैंचणवाळौ कुण ? भारे करी आफेइ तळे जाय तिम जीव कर्म रूप भारे करी माठी गति मै जाय ।

१४२. हळकापणा रै योग स्यूं तिरै

वलि बोहरै खींवसरै पूछ्यौ—जीव देवलोक मै जावै तिण नै ले जावण वाळौ कुण ?

जद स्वामीजी बोल्या—लकड़ा नै पाणी मै न्हांख्यां, ऊंचौ आवै ते कुण ही ल्यावै नहीं पिण हळकापणा रे योग सूं तिरै । तिम जीव पिण कर्म करी हळकौ थयां देवगति मै जावै ।

१४३. जीव हलकौ किम हुवै ?

किण ही पूछ्यौ—जीव हलकौ किम हुवे ?

जद स्वामीजी बोल्या—पइसो पाणी मै मेल्यां डूबै अनै उण ही पइसा नै ताप लगाय कूट-कूट नै बाटकी कीधी ते तिरै । उण बाटकी मै पइसो मेलै तौ ते पइसो पिण तिरै तिम जीव तप संयमादि करी आतमा हळकी कीधां तिरै ।

१४४. कुबद कर नै आप अलगो कहै

कोई साधां री निंद्या करै अनै आप कुबद करनै अळगौ रहै । तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—किण ही गाम मै एक चुगल रहतो । सो एकदा फोजवाळा आया ज्यांनें लोकां रौ धन धान बताय दीयो ।

फोजवाळा केयक तौ गया अनै केयक गया नहीं। गाम रा लोक बारे न्हास गया था सो केयक पाछा आया। चुगल धन धान बतायां री बात सुण नै लोकां ओळूंभौ दीधौ, अरे! इसा काम करै। जब ऊ चुगल फौजवाळां नै सुणायनै बोल्यौ—हूं बतावतौ तौ अमकड़ीया नौ खोड़ौ उठै गड्यौ ते बता देवतौ, फलांणा रौ खोड़ौ उठै गड्यौ ते बता देवतौ। उणरो धन फलांणी जागां गड्यौ ते पिण बता देवतौ। इम कुबद करनै बाकी रह्या ते पिण बताय दीधा।

तिम निंदक कुबदी हुवै ते निंद्या करतौ कूड़ बोलनै अळगौ रहै।

१४५. जद तौ म्हे हा ही नहीं

केयक स्वामीजी नै कहिवा लागा—इसी सरधा तौ कठै इ सुणी नहीं। थें दान दया उठाय दीधी। जद स्वामीजी बोल्या—पज्जुषणां मै कोई न आखा घालै नहीं, आटौ घालै नहीं। पज्जुषण धर्म रा दिनां मै ओ धर्म जाणै तौ औ दान देणौ बंद क्यूं कीयौ। आ बात नौ घणां काळ आगली है, जद तौ म्हे हा ही नहीं फेर आ थाप किण कीधी।

१४६. थे बेराजो क्यूं ?

केयक बोल्या—भीखणजी! थारां श्रावक कोई नै दान देवै नहीं। इसी श्रद्धा थांरी है।

जद स्वामीजी बोल्या—किणही शहर मै च्यार बजाज री हाटां हुंती। तिण मै तीन तौ विवाह गया। पाछै कपड़ादिक नां ग्राहक घणां आया। हिव एक बजाज रह्यौ ते राजी हुवै कै बैराजी।

जद ते बोल्या—राजी हुवै। जद स्वामीजी बोल्या—थे कहौ भीखणजी रा श्रावक दान नहीं देवै तौ जे लेवाळ ते सर्व थांरेईज आसी। औ थे कहो ते धर्म थांरैईज हुवै, थे बेराजी क्यूं थया। थे निंद्या क्यूं करौ। इम कहि कष्ट कीधौ। पाछौ जाब देवा समर्थ नहीं।

१४८. संलेखणा करणो पड़सी

स्वामीजी नवी दिख्या लीधां पछै केतलै एक वर्से तीन जणीयां दिख्या लेवा त्यारी थइ। जद स्वामीजी बोल्या—थे तीन जणीयां साथै दिख्या लेवौ अनै कदाचित एकण रौ वियोग पड़ जावै तौ दोयां नै कल्पै नहीं सो पछै संलेखणां करणी पड़सी। थांरो मन हुवै तौ दिख्या लीज्यौ। इम आरै कराय तीन जणीयां नें साथै दिख्या दीधी। पछै मोकळी आर्या थई पिण स्वामीजी री नीत ठंट सूं इ इसी तीखी हुंती।

१४८. गहूं-गहूं और खाखलो-खाखलो

दया ऊपर स्वामीजी तीन दृष्टंत दीया—

चौर हिंसक ने कुसीलिया, यांरे तांई हो साधां दीयौ उपदेश ।
यांनें सावद्य रा निरवद्य कीया, एहवी छे हो जिन दया धर्म रेश ।
भव जीवां तुमै जिन धर्म ओलखौ ।।१।।

किणही मेसरी नीं हाटे साधु ऊतरचा । रात्रे चौर आया । हाट खोली । साधु बोल्या—थे कुण हो ?

जब ते बोल्या—म्हे चौर छां । साहूकार हजार रुपइयां री थेली माहै मेहली है सौ म्हे परही ले जास्यां ।

जब साधां उपदेश दीधौ—चौरी ना फल माठा है । आगै नरक निगोद नां दुख भोगवणा पड़सी । भिन्न-भिन्न करनै भेद बताया । ए धन खासी तौ घर का सगलाई, अनै दुख थांनें भोगवणौ पड़सी । इम समझायनै चौरी नां त्याग कराया । साधां रा गुणग्राम चोर करतां थकां प्रभात थयौ । इतलै हाट रौ धणी आयौ । पेढ़ी नै नमस्कार करी थोड़ौ सो लटकौ साधां नै इ कीधौ । चौरां नै देख नै पूछ्यौ—थे कुण हो ?

ते बोल्या—म्हे चोर छां । थे हुंडी बटाय नै हजार रुपीयां री थेली माहै मेली, सो म्हे देखता हा । रात्रि मै आय लेवा लागा । साधां उपदेश दे समझाया नै चौरी नां त्याग कराया । सो यां साधां रौ भलो होइज्यो । म्हांनै डूबतां नै राख्या ।

मेसरी सुणनै साधां रे पगां पड्यौ, गुण गावा लागौ—म्हारी हाटे आप भलां इ उतर्या । म्हारी थेली राखी । एह धन चौर ले जावता तौ म्हारा च्यार बेटा कुंवारा रहिता । अबै च्यारूं इ परहा परणावसूं । ते आपरौ उपगार है ।

मेसरी इम कह्यौ, पिण साध तिणरौ धन राखवा उपदेश न दीयौ । चोरां नै तारबा उपदेश दीयौ ।

कसाई बकरां नै मारणहार हाथ मै कत्ती साधां कनै आय ऊभौ रह्यौ । जद साधां पूछ्यौ—तूं कुण है ?

जद ऊ बोल्यौ—हूं कसाई छूं ।

जद साधां पूछ्यौ—थांरे कांइ किसब ?

जब ते बोल्यौ—घरे बीस बकरा बंध्या त्यांरे गलै कत्ती कर नै बेचसूं ।

जद साधां उपदेश दीयौ—सेर धांन खांणों पड़ै तिण रै अर्थे इसा पाप करै ?

जद कसाई बोल्यौ—मोनै तौ भगवांन कसाई रै घरै मेल्यो है सो मोनै दोष नहीं ।

जद साध बोल्या—भगवांन क्यांनै मेहलै ? आगै माठा कर्म कीया तिणसूं कसाइ रै कुल ऊपनौ । वले इसा कर्म करै तौ नरक मै जाय पड़सी । इम भिन्न-भिन्न करनै समझायौ । बकरा मारवा रा जावजीव पचखांण कराया । कसाइ बोल्यौ —म्हारै घरै बीस बकरा बंध्या है सो आप कहौ तौ नीलौ चारौ नीरूं नै काचो पाणी पाऊं । आप कहौ तौ एवड़ मैं ऊछेरूं ? आप कहौ तौ कडि घालनै बाजार मै छोडूं । आप कहौ तौ आपने आण सूंपू । धोवण उन्हौ पाणी पाज्यो । सूखौ चारौ न्हाखजो । साधां रौ एवड़ न्यारौ उछेरौ ।

जब साध बोल्या—थारे सूंसा रौ जाबतौ कीजै । सूंस चोखा पालजै । इम सूंसां री भळावण देवै पिण बकरां री भळावण न देवै ।

कसाइ साधां रा गुण गावै—मौनैं हिंस्या छोड़ाइ तार्‌यौ । बकरा जीवता बचीया ते पिण हरखत हुआ ।

कोई एक पुरुष पर स्त्री नो लंपट । ते साधां कनै पर स्त्री गमन नो पाप सुणीनै, त्याग किया घणौ राजी होय साधां रा गुण गावै—आप मौनैं डूबता नें तार्‌यौ । नरक जातां नै राख्यौ ।

अनै उवा स्त्री शील आदर्‌यौ सुणनै उणरे कनै आयनै बोली—हूं तौ थां ऊपर इकतारी धार बैठी थी । सो कै तो म्हारौ कह्यौ मानो मो सागै गृहवासौ करौ, नहीं तौ कूवा मै जाय पड़सूं ।

जब तिण कह्यौ—मोनें तौ उत्तम पुरुषां पर स्त्री नो घणौ पाप बतायौ । तिण सूं म्है त्याग कीधा । म्हारै तौ थां सूं काम नहीं । जब स्त्री क्रोध रै वस कूवा मै जाय पड़ी ।

हिवै चोर समज्या अनै धन धणी रै रह्यौ । कसाइ समज्यौ नै बकरा बच्या लंपट शील आदर्‌यौ नै स्त्री कूवा मै पड़ी । चौर कसाइ लंपट यां तीनां नै तारवा नै उपदेश साधां दीयौ । आं तीनां नें साधां तार्‌या । ए तीनूं इ तिरघा । तिण रौ साधां नै धर्म थयौ । अनै धणी रौ धन रह्यौ, बकरा जीवां बच्या तिणरौ तौ धर्म अनै स्त्री कूवा मै पड़ी तिण रौ पाप साधां नें नहीं ।

केइ अज्ञानी कहै—जीव बच्या अनै धन रह्यौ तिण रौ धर्म । तौ उणरी श्रद्धा रै लेखै स्त्री मूई, तिण रौ पाप पिण लागै ।

१४९. जतन दया रौ कै कीड़ो रो ?

किण हि कह्यौ जीव बचीया ते धर्म ।

जद स्वामीजी बोल्या—कीड़ी नै कीड़ी जाणै सो ज्ञान कै कीड़ी ज्ञान ?

जद ऊ बोल्यौ—कीड़ी नै कीड़ी जाणै सो ज्ञान ।

कीड़ी न कीड़ी सरध सो सम्यक्त्व कै कीड़ी सम्यक्त्व ?

जद ते बोल्यौ—कीड़ी नै कीड़ी सरधै ते सम्यक्त्व ।

कीड़ी मारवा रा त्याग किया तिका दया कै कीड़ी रही जिका दया ?

जद ऊ बोल्यौ—कीड़ी रही तिका दया ।

जद स्वामीजी बोल्या—कीड़ी बायरा सूं उड़ गई तौ दया उड़ गई ?

जद ऊ विमासी विचारनै बोल्यौ—कीड़ी मारवा रा त्याग किया तिका दया पिण कीड़ी रही सो दया नहीं ।

जद स्वामीजी बोल्या—जतन दया रा करणा कै कीड़ी रा करणा ?

जद उ बोल्यौ—जतन दया रा करणा ।

१५०. ते ठीक हो छै

किणहि कह्यौ—सूत्र मै साधू नै जीव राखणा कह्या ।

जद स्वामीजी बोल्या—'ए तौ ठीक ही छै । ज्यूं रा ज्यूं राखणां किणहि नै दुख देणौ नहीं ।

१५१. इसा अजाण है

भेषधारयां रा श्रावकां रै पूरी पिछाण नहीं, तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—कोई भांड साधू रौ रूप बणायनै आयौ । तिणनै पूछै थे किणरा टोळा रा ?

जद तिण कह्यौ—म्हे डूंगरनाथजी रा टोळा रा ।

थांरौ नाम कांइ ? कहै—म्हारो नाम पत्थरनाथ ।

कांइ भणीया हो ?

तब ते कहै—भणीयौ तौ कांइ नहीं पिण बाइसटोळा रा तौ चोखा नै तेरापंथी खोटा या जाणूं छूं ।

जद थे मोटापुरुष । तिक्खुतो आयाहिणं पयाहिणं इम कहि वांदै । इसा अजांण है पिण न्याय निरणौ नहीं ।

१५२. भगवती किसो अधम्मो मंगल है ?

स्वामीजी भगवती बांचतां एक जणौ आय बोल्यौ—स्वामी ! धम्मो मंगल कहौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—भगवती सुणौ ।

जद ते बोल्यौ—स्वामीजी ! 'धम्मो मंगल सुणावौ' ।

जद स्वामीजी बोल्या—'भगवती किसौ अधम्मौ मंगल है' । यो ही धम्मो मंगल ईज है । गांम जातां सकुन लेवै गधा तीतर बोलावै, ज्यूं सुणौ ते तौ बात और, अनै निर्जरा हेतै सुणौ ते बात और ।

१५३. गधे री बात क्यूं करौ ?

किणहि पूछ्यौ—उजाड़ मै साधु थाकौ नै सहजे गाडौ आवतौ थौ तिण गाडा ऊपर साधू नै वैसाणनै गांम मै आण्यौ, उणनै कांई थयौ ?

जद स्वामीजी बोल्या—गाडौ नहीं हो नै पुंणीया गधेडा आवता ते ऊपर बैसांणनै गांम मै आण्यौ तिण नै कांइ थयौ ?

जद ऊ बोल्यौ—गधा री बात क्यूं करौ।

स्वामीजी बोल्या—थे गाडै बसांण आण्या धर्म कहौ तौ गधे बैसांण आंण्यां हि धर्म। साधू रै तौ दोनूं ही अकल्पनीक है।

१५४. पांचूं नै साथै छोड़ी

फतूजी आदि पांच जण्यां नै चंडावल मै स्वामीजी कह्यौ—थांरै कपड़ौ चाहीजै सो लेवौ। त्यां मांग्यौ तिण प्रमाणै दीधौ। मन मै संका पड़ी कपड़ौ बधतौ दीसै। तिवारै अखैरामजी स्वामी नै मेलनै त्यांरे ठिकाणै सूं कपड़ौ मंगायनै मापीयौ। कपड़ौ बधतौ नीकळयौ। पछै स्वामीजी त्यांनै घणी निषेधी। आगमीय काळ नीं अप्रतीत जांण नै पांचूं जण्यां नै साथै छोड़ दीधी।

१५५. समाई नहीं तौ संवर

ढूंढार मै एक भायौ। तिण रै बीरभाणजी संका पाड़ी। पछै स्वामीजी कनै आयौ। सामायक नौ उपदेश दीयौ। जद ते बोल्यौ—सामायक तौ न करूं, कदाच सामायक मै थांनै स्वामीजी महाराज कहिणी आय जावै तो मोनै दोष लागै।

जद स्वामीजी बोल्या—एक मुहुरत नौ संवर कर। इम कही संवर कराय पछै उण सूं चरचा कर भिन्न-भिन्न भेद बताय उण री संका मेटनै पगां लगाय दीयौ।

१५६. कठेइ सूत्र मै चाल्यो इज हुवेला

नाथजी द्वारा मै नैणसिंहजी रौ जमाई उदेपुर सूं आयौ। नैणसिंहजी कह्यौ—महाराज यांनै समझावौ।

जद स्वामीजी समझावा लागा। साधां नै आधाकर्मी थांनक मै रहीणौ नहीं।

जद ते बोल्यौ—ठीक है, न रहिणौ। वलि स्वामीजी कह्यौ—केयक साध नांम धराय नै आधाकर्मी थांनक मै रवै है।

जद ते बोल्यौ—रेवै छै तौ कठेयक सूत्र मै चाल्यौ हुवैला।

वली स्वामीजी बोल्या—साधू नै किंवाड़ जड़नौ नहीं, नित्य पिंड एक घर नौ लेणौ नहीं।

जद ऊ बोल्यौ—आ बात तौ साची कही। किंवाड़ जड़ै सो साधु रे कांइ रूखालनों है। किंवाड़ जड़ै सो साध हीज नहीं।

जद स्वामीजी कह्यौ—केइ किंवाड़ जड़ै है। एक घर नौ नित्य पिंड लैवे है। जद ते बोल्यौ—हां महाराज ! किंवाड़ जड़ै है, नित्य पिंड लैवे है, तौ कठेयक सूत्र मैं चाल्योइज हुवेला।

जद स्वामीजी जाण्यौ ओ तौ समजतौ कोइ दीसै नहीं, बुद्धि तीखी नहीं तिणसूं।

१५७. गोहां री दाळ न हुवै

कोई सूं चरचा करतां बुद्धी तौ जाबक काची देखी अनै लोक कहै—स्वामीजी इणनै समझावौ।

जद स्वामीजी बोल्या—दाल हुवै तौ मूंग मोठ चणा री हुवै पिण गोहां री दाळ न हुवै। ज्यूं हळुकर्मी बुधवंत हुवै ते समझै पिण बुद्धीहीण न समझै।

१५८. इतरा कारीगर नहीं

किणहि कह्यौ—आप उद्यम करौ तौ कानी-कानी हलुकर्मी जीव जगत मैं घणां इ है समझै जिसा।

जद स्वामीजी बोल्या—मकराणां रा पत्थर मैं प्रतिमा होयवा रौ गुण तौ है पिण इतरा करणवाला कारीगर नहीं। ज्यूं समजै जिसा तौ घणा इ है पिण इतरा समझावणवाला नहीं।

१५९. केवली सूत्र व्यतिरिक्त इज हुवै

वैणीरामजी स्वामी स्वामीजी नै कह्यौ—हेमजो नै बखांण अस्खलत परवरा मूंहड़ै तौ आवै नहीं जोड़ता जाय अनै बखाण देता जाय।

जद स्वामीजी बोल्या—केवली सूत्र व्यतिरिक्त ईज हुवै। उणांरै सूत्र री काम नहीं।

१६०. किसो केलू ल्यासी ?

वैणीरामजी स्वामी बालपणै था। जद स्वामीजी स्यूं कह्यौ—हींगलू सूं पात्रा रंगणा नहीं।

जद स्वामीजी बोल्या—म्हारै तौ पात्रा रंगीया इ है, थारै संका हुवै तौ तूं मत रंग।

जद बैणीरामजी स्वामी बोल्या—म्हारा कैलूड़ा थी रंगवा रा भाव है।

जद स्वामीजी बोल्या—कैलू लेवा जाय जद ऊली कांनी तौ पीळौ कचा रंग रौ केलू अनै आगे लाल पका रंग रौ केलू परचो देख नै थारे लेखै पहिला देख्यौ सो ही लेणौ। चोखौ केलू हेरै तौ ध्यान तौ सुरंग रंग रौ इज ठहरचौ। इम कहिनै समझाया पछै समझ गया।

१६१. दुरंगा क्यूं रंगौ ?

कोई कहै—पात्रां नै दुरंगा क्यूं रंगौ ?

जद स्वामीजी बोल्या—कुंथुवां री निगै चौखी तरै पड़ै। एक रंग सूं दूजै रंग ऊपर आवै जद दीसणौ सोहरौ। कोरौ हींगलू बोझल पिण हुवै। काळौ फोरौ हुवै। बासी उतारणौ सोहरो। इत्यादि अनेक कारण सूं जूजूवा रंग देवै तो पिण सूत्र मै वरज्या नहीं।

१६२. खूंचणां काढता

बालपणै बैणीरामजी स्वामी खूंचणां काढ़ता। स्वामीजी आप बिनां जोयां बिनां पूंज्या पग सरकाया।

एक दिन बैणीरामजी स्वामी तौ अळगा बैठा। देखनै स्वामी गुप्तपणै पूंजनै पग सरकायौ नै साधां नै कह्यौ—ऊ बेणो अळगौ बैठौ देखै है।

इतलै बैणीरामजी स्वामी बोल्या—ऊ स्वामीजी बिनां जोयां पग सरकायौ।

स्वामीजी नै और साध हसवा लागा। पछै साधां कह्यौ—पूंज नै पग सरकायौ।

जद लचकाणां पड़्या अनै पगां आय लागा।

१६३. इसा वनीत बैणीरांमजो

पींपार मै बैणीरांमजी स्वामी दूजी हाटे बैठा। स्वामीजी हेलौ पाड्यौ—ओ बैणीराम ! ओ बैणीराम ! इम दोय-तीन हेला पाड़्या पिण पाछा बोल्या नहीं।

जद गुमांनजी लुंणावत नें कह्यौ—बैणो छूटतौ दीसै है। जद गुमांनजी बैणीरांमजी स्वामी नै जाय कह्यौ—थांने हेला पाड़्या बोल्या नहीं तिण सूं स्वामीजी आ बात कही—'बैणौ छूटतौ दीसै है'।

इम सुण नै बैणीरांमजी स्वामी डरीया आयनै पगां लागा।

जद स्वामीजी बोल्या—रे मूरख ! हेलौ पाड़्यां पिण पाछौ बोलै नहीं ? बैणीरांमजी स्वामी नरमाई करनै बोल्या महाराज मैं सुणीयौ नहीं।

पछै घणीं नरमा करी ।

इसा वनीत तौ बैणीरांमजी स्वामी इसा जबर भीखणजी स्वामीजी ।

१६४. इसा स्वामीजी अवसर ना जाण

बैणीरांमजी स्वामी कह्यौ—हूं थली मै जाऊं चन्द्रभाणजी सूं चरचा करूं ।

जद स्वामीजी बोल्या—थारै उणांसूं चरचा करवा रा त्याग है । इसो हिज अवसर देखनै अै त्याग कराया । इसा स्वामीजी अवसर नां जाण ।

१६५. आंख्यां गमावता दीसै है

मेंणाजी आर्यां नै अनै बैणीरांमजी स्वामी नै (आश्रयी नै) स्वामीजी बोल्या—अै आंख्यां री ओषध घणौ करै सो आंखां गमावता दीसै है । तौ पिण ओषध छोड़्यौ नहीं । पछै आंख्यां घणी कच्ची पड़ गइ । ओषध घणौ कीधौ तिण सूं आंख्यां नै जोखौ थयौ ।

१६६. ते लेवा जोग नहीं

गुजरात सूं सिंघजी……आय नाथद्वारै मै स्वामीजी कनै दीक्षा लीधी । पछै कितरा एक दिन तौ ठीक रह्यौ । पछै सिरयारी मै अयोग्य जाणनै छोड़ दीयौ । ते मांहढ़े परहौ गयौ ।

पछै खेतसीजी स्वामी बोल्या—सिंघजी नै प्रायश्चित्त देइ नै पाछौ उरहौ ल्यौ, हूं जायनै ल्यावूं ।

जद स्वामीजी बोल्या—ते लेवा जोग नहीं । तौ पिण कमर बांधनै ल्यावा नै त्यार थया ।

जद स्वामीजी कह्यौ—उणां भेलौ थें आहार कीधौ है तौ थां भेलौ आहार करवा रा त्याग है । इम सुणनै मोटा पुरुष कोइ ल्यावा नै गया नहीं । इसा जबर भीखणजी स्वामी ।

पछै सिंघजी रा समाचार सुण्यां ऊ तौ राळी ओढ़नै घरटी रै जोड़ै सूतौ है ।

१६७. जायगां माप आवो

दोय साधां रे माहोमाहि अड़बी लागी । स्वामीजी कनै आया । इणरै लोट माही थी पाणी रा टपका पड़ता । ऊ तौ कहै—इती दूर आयौ, कहै—इतरा पांवड़ा । परस्पर विवाद करै । समझाया समझै नहीं ।

जद स्वामीजी कह्यौ—थें दोनूं जणां डोरी ले जायनै जागा माप आवौ । जद दोनूं जणां अड़बी छोड़नै सुद्ध होय गया ।

१६८. कच्चो तेहिज

बली दोय साधां रै आपस मै अड़बी लागी । ऊ कहै—तूं लोलपी । अनै ऊ कहै—तूं लोलपी । इम परस्पर विवाद करता स्वामीजी कनै आया तौ पिण झोड़ छोड़ै नहीं ।

जद स्वामीजी बोल्या—दोनूं जणां विगै रा त्याग करौ, आज्ञा रौ आगार राखौ । पहिलां आज्ञा मांगै तेहिज कचो । एक जणै च्यार मास रै आसरै विगै न खाधी, पछै आज्ञा मांगी । जद दूजा रे इ विगै रौ आगार होय गयौ ।

१६९. आंगुण किणरा सूझ्या ?

नाथजीद्वारा मै छपने रै वर्षे स्वामीजी रै वाय रा कारण सूं १३ मास रै आसरै रहिणौ पड़्यौ । तिहां हेम गोचरी गया दाल चणां री नै मूंगा री भेळी हुई ।

स्वामीजी देखनै पूछ्यौ—आ चणा री मूंगा री दाल भेळी कुंण कीधी ।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—मैं भेली आणी ।

जद स्वामीजी बोल्या—कारण वाळा रै बासते ऊदीर नै मांगनै न्यारी ल्याणी तौ जिहां इ रही, एह भेळी क्यूं कीधी । जद हेमजी स्वामी बोल्या—अजाण मै भेळी हुइ । जद स्वामीजी घणा निषेध्या । जद एकन्त जायगां जाय सूता । उदास थया । पछै स्वामीजी आहार कर आयनै कह्यौ—आंगुण आपरी आतमा रा सूझ्या कै म्हांरा सूझ्या ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—महाराज ! ओगुण तौ म्हारा इ सूझ्या ।

जद स्वामीजी बोल्या—ठीक है । आज पछै सावचेत रहीजे । उठ, जा आहार कर, इम कहीनै आहार करायौ ।

१७०. कांण राखै ज्यूं कोई नहीं

काफरला मै खेतसी स्वामी नै हेमजी स्वामी गौचरी गया । तिहां धोवण विनां चाख्यां भेळौ थयौ । तिवारै खेतसीजी स्वामी कह्यौ—हेमजी ! आज बिनां चाख्यां धोवण भेळौ कीयौ है, माफक न निकळीयौ तौ स्वामीजी इसा निषेधता दीसै है, बाकी कांण राखै ज्यूं कोइ नहीं । पछै काफरला नां देवरा मै पाणी चाख देख्यौ । चोखौ नीकल्यौ । जद मन राजी हुवौ ।

१७१. कारणीक रो जाबतो करता

कारण वाला साध रै वासतै दाल मंगावता तौ दोय कानीं मेलता । काइ चिरकी हुवै, काई खारी हुवै, किण ही मै लूण घणो हुवै, किण ही मे

लूंण थोड़ौ हुवै । कारणीक नै काई भावै काई न भावै । तिण सूं जूजूआ मेलता । इसी कारणीक रौ जाबता करता ।

१७२. थारै आसंका कठा सूं पड़ी ?

कांकरोली मै सैहलोतां री पौल मै स्वामीजी उतरघा । पचावनां रै वर्स । रात्रि मै पौल री बारी खोलनै स्वामीजी बारै दिशा गया ।

जद हेमजी स्वामी पूछ्यौ—महाराज ! बारी खोलवा रौ अटकाव नहीं कांइ ?

जद स्वामीजी बोल्या—ए पाली रौ चौथजी संकलैचौ दर्शन करवा आयौ । घणौ संकीलौ तौ औ छै पिण इण बात री संका तौ इणरै ई न पड़ी । तौ थारै आ संका कठा सूं पड़ी ?

जद हेमजी स्वामी कह्यौ—महाराज म्हारै संका क्यांनै पड़ै, हूं तौ पूछा करूं छूं ।

जद स्वामीजी बोल्या—तूं पूछै छै इण रौ अटकाव नहीं । इणरौ (खिड़की खोलण रौ) अटकाव हुसी तौ म्हे क्यांनै खोलसां ।

१७३. आंधा जीमणवाळा आंधाइ परुसण वाला

ज्यांरौ आचार खोटौ श्रद्धा पिण खोटी इसा तौ समदृष्टहीण गुरु नै इसा ही श्रद्धा भ्रष्ट समक्तहीण श्रावक । ते कहै—म्हानै भीखणजी साध श्रावक सरधै नहीं ।

जद स्वामीजी बोल्या—कोयलां री तौ राब, काळा बासण मै रांधी, अमावस नीं रात्री, आंधा जीमण वाळा, आंधाइ परुसण वाला, जीमता जाय नै खूंखारौ करै, कहै—खबरदार ! काळौ कूंखौ टाळजो । कांई टाळै । सर्व काळौ ही काळौ भेळौ हुवौ ।

ज्यूं श्रद्धा आचार मै ठिकाणौं नहीं ते साध श्रावक किम हुवै ।

१७४. डांडा इ सूझै नहीं

भेषधार्यां रा श्रावक बोल्या—भीखणजी ! इण बात रौ तार काढौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—तार कांइ काढै डांडा इ सूझै नहीं । ज्यूं आधाकर्मी आदिक मोटा दोष ही सूझै नहीं तौ छोटा दोषां री खबर किम पड़ै ।

१७५. ढांकणी मैं उसार्यौ

वायरै वंग घरटी मांडी । पीसती जाय ज्यूं उडतौ जाय । आखी रात्री पीसनै ढांकणी मै उसार्यौ । ज्यूं साधपणौ श्रावकपणौ लेयनै जाण-

जाणनै दोष लगावै अनै प्रायश्चित्त लेवै नहीं त्यांरै लारै क्यूं ही विशेष रहै नहीं ।

१७६. दंड तौ उ गाम देवै ईज है

धामली मै आर्य्यां विना भळायां चोमासौ कियौ । तिहां आहार पाणी री संकडाइ घणी पड़ी ।

किण हो स्वामीजी नै पूछ्यौ—महाराज ! धामली मै आर्य्यां बिना भळायां चोमांसौ कियौ त्यां नै कांई दंड देसौ ?

जद स्वामीजी बोल्या—प्रथम दंड तौ ऊ गांम देवैईज है । बच्यो खुच्यो वै आसी जद देस्यां । पछै भेळा थया जद त्यां आर्य्यां नें प्राछित्त देई सुध्र कीधी ।

१७७. साहमी बोलै जोसी

धनांजी री प्रकृति कडली जाणनै स्वामीजी विचार्यौ आ भारमलजी सूं निभणी कठिन है । साहमी बोलै जीसी है । यूं जाणनै छोड़ण रौ उपाय कर नै कळा सूं परपूठै छोड़ दीधी ।

१७८. औ पद सांचो कै झूठो ?

छै लेश्या हुंती जद वीर मैं, हूंता आठूं कर्म ।
छद्मस्थ चूका तिण समैं, मूरख थापै धर्म ।
चतुर नर समझौ ज्ञान विचार ।

आ गाथा जोड़ी जद भारमलजी स्वामी कह्यौ—'छद्मस्थ चूका तिण समै' औ पद परहौ फेरौ, लोक बेदौ करें जिसौ है ।

जद स्वामीजी बोल्या—औ पद साचौ कै झठौ ?

जद भारमलजी स्वामी कह्यौ—है तौ साचौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—साचौ है तौ लोकां री कांई गिणत है । न्याय मारग चालतां अटकाव नहीं ।

१७९. बिचै बोलवा रौ काम होज कांई ?

सम्बत् अठारै तेपनै स्वामीजी सोजत चोमासौ कीधौ । पछै विचरता-विचरता मांढ्ढै पधार्या । तिहां सरीयारी सूं गृहस्थपणै मै हेमजी स्वामी दर्शण करवा आया । पौळ रा चौतरा ऊपर तौ स्वामीजी पोढ्या अनै हेठै मांचौ बिछायनै हेमजी स्वामी सूता । जद साध नै स्वामीजी माहो माहि साध आर्यां नै क्षेत्रां मै मेलवा री बातां करै—उण साध नै उण गांम

मै मेलणौ, फलाणै नै अमुक गांमें मेलणौ। पिण सरीयारी मेलवा री बात न कीधी।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—स्वामीनाथ सरीयारी मै साध आर्य्यां नै मेलवारी बात ही न कीधी ? जद स्वामीजी करड़ा वचनै करी घणा निषेध्या। कह्यौ—गृहस्थ सुणता बात हीज न करणी, साधां रै विच बोलवारौ कांम हीज कांइ ? जद हेमजी स्वामी नै करली घणी लागी। मूंन साझ नै सूय रह्या।

० म्हां जीवतां लेसी क ?

पछै प्रभाते हेमजी स्वामी तौ दर्शण करनै सरीयारी कांनी नींबली रौ मारग लीधौ अनै स्वामीजी कुशलपुरा कानीं विहार कीधौ। आगै जातां स्वामीजी नें कांयक सकुन पाल हूवा जद पाछा फिर्या। आप पिण नींबली कांनीं पधार्या। हेमजी स्वामी री चाल तौ धीरै नै स्वामीजी री चाल उतावळी सो आय पूगा। हेलौ पाड्यौ—हेमड़ा ! म्हेई आया हां। जद हेमजी स्वामी ऊभा रहिनै बंदना कीधी।

जद स्वामीजी बोल्या—आज तौ थां ऊपर हीज आया हां।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—भलांई पधार्या।

अबै स्वामीजी बोल्या—तने साध-पणौ लेऊं-लेऊं करतां नै ललचावतां नै तीन वर्स रै आसरै हूआ है अबै समाचार पका कहि दै।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—स्वामीनाथ ! साधपणौ लेवारा भाव खराखरी है।

स्वामीजी बोल्या—म्हां जीवतां लेसी कै चल्या पछै लेसी ? आ बात सुणनै घणी करडी लागी। स्वामीनाथ ! इसी बात क्यांनै करौ। आप रै संका हुवै तौ नव वर्सां पछै कुशील रा त्याग कराय देवौ।

जद स्वामीजी बोल्या—त्याग है थारै। चट त्याग करावता ईज हूवा। त्याग करायनै बोल्या—परणीजवा रै वासतै नव वर्ष थें राख्या है कै ? हां स्वामीनाथ !

जद स्वामीजी फेर बोल्या—एक वर्स तौ परणीजतां लागै पाछै आठ वर्स रह्या। तिण मै एक वर्स स्त्री पीहर रहै। पाछै रह्या सात वर्स। तिण मै दिन रा त्याग है थारै। पाछै रह्या साढा तीन वर्स। साढा तीन वर्स मै पांच तिथ रा त्याग है। पाछै रह्या दोय वर्स नै च्यार मास रै आसरै रह्या। इम संकोचतां-संकोचतां पौहर रौ लेखौ आदि करतां घड़ियां रै लेखै छ मास रौ कुशील आसरै बाकी रह्यौ।

वले स्वामीजी बोल्या—परण्यां पछै एक दोय छोहरा-छोहरी हुवै नै स्त्री मर जावै जद सर्व आपदा पोता रै गलै पड़ै। दुखी हुवै। पछै साधपणौ

आवणौ कठिन है। इम कहीनै वले उपदेश देवा लागा—जावजीव सील आदर लै, जोड़ लै हाथ। इतलै खेतसीजी स्वामी बोल्या—'जोड़ लै-जोड़ लै, हाथ जोड़ लै'[1], स्वामीजी केवै है। जद हाथ जोड़्या।

स्वामीजी पूछ्यौ सील अदराय देऊं। इम दोय वार पूछ्यौ।

जद हेमजी स्वामी बोल्या अदराय देवौ। जद स्वामीजी जावजीव पंच पदां री साख कर त्याग कराय दीया।

हेमजी स्वामी बोल्या—अबै सरीयारी बेगा पधारजो।

जद स्वामीजी बोल्या—अबारूं तौ हीरांजी नै मेलां हां, साध रौ पड़िकमणौ परहौ सीखजै। इम कहिनै नींबली मैं आया।

ए सर्व बात ऊभां कीधी। नीबली मै आंयां पछै हेमजी स्वामी कनै मिठाइ थी, तेहनौ बारमौ व्रत नीपजायौ।

० आप बड़ो भारी काम कीधौ

भारमलजी स्वामी नै स्वामीजी कह्यौ। अबै थारै नचीताई थई। आगै तौ म्हे हा, अनै अबै पाखंड्यां सूं चरचादिक रौ कांम पड़ै तौ हेमजी है ईज। हेमजी स्वामी बोल्या—म्हैं सील आदर्यौ ते बात अबारूं लोकां मैं प्रसिद्ध न करणी।

जद स्वामीजी बोल्या—हूं न करूं। हेमजी स्वामी तौ सरीयारी आया नै स्वामीजी चेलावास पधार्या। बैणीरांमजी स्वामी नें सर्व बात कही। हेमजी शील आदर्यौ, पिण कह्यौ—बात प्रसिद्ध न करणी। बैणीरांमजी स्वामी सुणनै घणां राजी हुवा। स्वामीजी नें घणां प्रशंस्या—आप बड़ी भारी कीधी। म्हैं घणी ई खप कीधी, पिण कांइ टब लागी नहीं, आप आछी कीधी। अनै सील आदर्यौ ते बात प्रकट करणी, छांनें न राखणी। आप भलांई मत कहौ।

बैणीरांमजी स्वामी बात प्रसिद्ध कर दीधी। चेलावास रा बाई भाई राजी घणां हूआ। म्हे तौ पहिलां इ जाणता हा हेमजी दिख्या लेसी।

० गाम में कुंवारा डाबरा घणा इ

पछै स्वामीजी सरीयारी पधार्या। हेमजी स्वामी वनोला जीमै। महा सुदि १३ शनैशर वार दिख्या रौ महूर्त्त ठहरायौ। पछै बाबा रौ बेटौ भाई रावलै जाय पुकार्यौ।

जद ठकुरांणी स्वामीजी नै चाकरां साथै कहिवायौ—गाम मै रहिजो मती।

जद गांम रा पंच भेळा हौयनै हेमजी स्वामी नें साथ लेई रावळे गया।

जद ठकुराणी हेमजी नै गैहणा कपड़ा सहित देखनै बोला हूं तौनै यं का

१. जोड़ ले (क्वचित्)।

यूं गैहणां कपड़ां सहित परणाय देस्यूं । म्हारा दौलतसिंह रौ सूंस है ।

जद हेमजी स्वामी जाब दीधा—परणावौ तौ गांम मै कुंवारा डावरा घणां ई है । म्हारै तौ सूंस है । इम कही स्वामीजी कनै आय बैठा । स्वामीजी नै गांम मै रहिवा री आज्ञा लेयनै पंच पिण पाछा आया ।

० पछै तेरह थया

माघ सुदी १५ पछै हेमजी स्वामी रै छ काया हणवा रा त्याग हूंता सो न्यातिलां कह्यौ—फागुण बिद दूज रै साहवै बहिन नै परणाय नै दिख्या लीजो । सो उणांरौ कह्यौ मान्यौ ।

पछै स्वामीजी नै आय पूछ्यौ ।

जद स्वामीजी निषेध्या । रे भोळा ! अनर्थ करै है । एक दिन पिण न उलंघणौ । पछै पाछा आयनै जे बीज रै साहवै बहिन परणाय दिख्या लैणी इसौ कागद कीधौ हूंतौ सो फाड़ न्हाख्यौ, नै घरका नै कह्यौ—थे इसा दगा करौ । म्हारौ त्याग भंगावौ ।

जद लोक बोल्या—भीखणजी समझाया दीसै है । पछै इकवीस दिन बनोला जीमी नै माघ सुदी १३ नै १८५३ गाम बारै, बड़ला रे नीचै हजारूं मनुष्य भेळा थया घणां ओछव मोच्छव सहित स्वामीजी रे हस्ते दिख्या लीधी ।

आगै सर्व बारै साध हुंता पछै तेरह थया । तठा पछै बधवौ कीधा—बधोतर थइ । बंक चूलीया मै कह्यौ—सं० १८५३ पछै धर्म रौ घणौ उद्योत हुसी, ते बात आय मिली । दिख्या देई स्वामीजी विहार कीधौ । पछै घणौ उपकार थयौ ।

१८०. एक भीखणजी स्वामी इज है

कच्छ देश थी टीकम दोसी पाली मै आयौ । अनेक बोलां री संका पड़ी ते मेटवा ।

जद पाली मै भेषधार्‌यां रा श्रावकां कह्यौ—टोडरमलजी थांरी संका मेट देसी । थे थानक मैं चालौ । इम कही थानक मैं ले गया । टीकम दोसी टोडरमलजी सूं चरचा कीधी । टीकम दोसी रा प्रश्नां रा जाब आया नहीं ।

जद टीकम दोसी बोल्यौ—यां प्रश्नां रा जाब देणवाळा तौ एक भीखण जी स्वामी इज है और कोइ दिसै नहीं, इम कही ठिकाणै आयौ ।

केतलायक दिनां पछै स्वामीजी मेवाड़ सूं मारवाड़ पधार्‌या । सरीयारी होय नै गुणसठै वर्ष पाली चौमासौ कीधौ । टीकम दोसी मोकळा प्रश्न पूछ्या । ज्यांरा जाब स्वामीजी दीधा । टीकम दोसी बोल्यौ—बंकचूलिया मै

कह्यौ—'संवत अठारे तेपना पछै धर्म रौ उद्योत होसी', इण वचन रै लेखै तो तेपनां पहिली साध नहीं, इम संभवै ।

जद स्वामीजी बोल्या इहां साध नहीं, इसौ तौ कह्यौ नहीं । सं० १८५३ पछै धर्म रा घणा उपकार आसरी उद्योत कह्यौ छै । तेपना पहिला थोड़ौ उद्योत छौ तेपना पछै घणौ उद्योत । इम न्याय बताय समझायौ ।

१८१. खूंचणो काढ़ै तो तेलो

भारमलजी स्वामी बालक था जद स्वामीजी कह्यौ—गृहस्थ खूंचणौ काढै तिसौ कांम न करणौ । गृहस्थ खूंचणौ काढै तौ तेला रो दंड ।

जद भारमलजी स्वामी बोल्या—कोई झूठौई खूंचणौ काढै तौ ?

जद स्वामीजी कह्यौ—झूठौ खूंचणौ काढै तौ आगला पाप उदै आया । तौ पिण भारमलजी स्वामी बड़ा वनीत पिण था सौ वचन अंगीकार कर लीधौ । इसा उत्तम पुरुष खूंचणौ कढावै किण लेखै ।

१८२. नींद में हेठो पड़ जाऊं तो ?

बालपणै भारमलजी स्वामी नै आखी उत्तराधेन ऊभा-ऊभा चीतारणी इसी आज्ञा स्वामीजी दीधी ।

जद भारमलजी स्वामी बोल्या—स्वामीनाथ कदाचित नींद मैं हेठो पड़ जाऊं तौ ?

जद स्वामीजी पाछौ फरमायो—पूंज नै खूणैं ऊभा रहौ ।

इण रीते ऊभा आखी उत्तराधेन री सझाय अनेक बार कीधी । इसा वैरागी पुरुष ।

१८३. प्रकृति सुधारवा रौ उपाय

साध आर्यां री प्रकृती करड़ी देखता तौ तिण री खोड़ खामी मेटवानें इम दष्टांत देता—कषाय रौ टूक, जाणै बासति रौ टूक, सर्पनीं परै फूं, इम कहि नै प्रकृती सुधारवा रो उपाय करता ।

१८४. छेहड़े जाता मोर्‌यो मारू

भेषधारी बखांण वांणी देवै सूत्र सिद्धंत वाचै, छेहडै जीव खुवायां पुन मिश्र परूपै, सावद्य अनुकंपा मै धर्म कहै तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—बायां रात्रि मै संसार लेखै चोखा-चोखा गीत गावै अनै छेहड़ै जातां मोर्‌यौ मारू गावै । ज्यूं भेषधारी पहिलां तौ बखाण मै अनेक बांता कहै, पिण छेहड़ै सावद्यदान सावज्ज दया में पुण्य मिश्र परूपै ।

१८५. इसा दृढ़धर्मी

विजैचंदजी पटवा नै आसकरण दांती कह्यौ—विजैचंदजी थांरा गुरु भीखणजी कमाड़ खोलनै मेड़ी मैं ऊतर्‌या। इम सुणनै विजयचंदजी बोल्या—न ऊतरै।

जद आसकरण कह्यौ—विजैचंद भाई! म्हारी प्रतीत तौ राख।

जद विजयचंदजी बोल्या—थारी प्रतीत पूरी है। तूं भूठा बोलौ है। इम कहि निषेध दीयौ, पिण साधां नै आयनै पूछीयौई नहीं। पछै आ बात स्वामीजी सुणनै बोल्या—विजैचंद पटवा रै जाणै क्षायक सम्यक्त्व दीसै है। साधां मैं अनेक दोष लोक कहै है। इण नै सुणावै है, पिण साधां नै पाछौ पूछवारौ इज काम नहीं, इसौ दृढ़धर्मी।

१८६. मौनै निगै न पड़ीं

एक दिवस विजैचंदजी आथण रा स्वामीजी कनै सामायक पड़िकमणौ करवा आया। बादळां मै दिन दीसै नहीं जद स्वामीजी नै अर्ज करी—महाराज, उदक चुकाय दिरावौ।

जद स्वामीजी उदक चुकाय दीयौ। पछै तावड़ौ दीठौ दिन घणौ नीकलीयौ, जद स्वामीजी बोल्या—साधां रै रात रा पांणी पीणौ नहीं, गृहस्थ रै रात रा सूंस न हुवै, ते रात्रि ना पिण परहौ पीयै। जद विजैचंदजी हाथ जौडनै पगां पड्‌यौ अनै बोल्या—मोटा पुरषां! आप तौ अवसर नां जाण छौ, मोनै निगै न पड़ी। इसौ साधां रौ वनीत सो पकी तरमाई करी।

१८७. उपकार रै वास्तै

नांनजी सांमी हेमजी स्वामी नै कह्यौ—हेमजी! भीखणजी स्वामी म्हां साधां नै तौ हाट मै बैसांणता। कंठ मिलाणवाळा भाया आडा वैसता। परसेवौ घणौ हुंतौ। उपकार रै वासतै कष्ट रौ अटकाव नहीं, इम स्वामीजी फुरमावता।

उंन्हाळै चौमासै सरीयारी पकी हाटै बखांण दैता, भीखणजी स्वामी भारमलजी स्वामी दोनूं आगै जोड़ै विराजता, पाखती कंठ मिलावण-वाळौ भायौ बैसतौ, बीजा साध माहै बैसता। गरमी रौ बड़ौ कष्ट। इण पर परिषह सहिनै उपकार कीधौ।

१८८. आहार उनमान स्यूं द्यो

सं० १८५६ रै वर्स नाथ दुवारै चौमासौ पांच साधां सूं कीधौ। भारमलजी स्वामी (१) खेतसीजी स्वामी (२) हेमजी स्वामी (३) तौ एकंतर करता। स्वामीजी आठम चवदस रा उवास करता। उदैरामजी बेलै-बेलै पारणौ। पारणां मै आम्बिल।

खेतसीजी स्वामी उदैरामजी नै आहार अधिकौ देवै। जद स्वामीजी वरज्यौ। बेला रौ पारणौ है आहार उनमान सूं दौ। तौ पिण अधिक देवा री चेष्टा देखनै स्वामीजी फुरमायौ—खेतसी ! उदैरांमजी री मोत थारे हाथै हुंती दीसै है।

स्वामीजी रौ वचन आय मिल्यौ

कितलायक वर्सां पछै मारवाड़ मै इगसठै री साल उदैरांमजी आंबल बर्द्धमांन तप करतां इकतालीस ओली तौ हुई एक अठाई कीधी। अठाई रौ पारणौ खारचीयां कीधौ। डील मै कारण जांणनैं चेलावास भारमलजी स्वामी कनै आवतां कारोलीया गाम मै थाका।

जद भोपजी तपसी चेलावास आयनै समाचार कह्या। जद खेतसीजी स्वामी हेमजी स्वामी भोपजी तपसी जाय भोपजी रै खांधे बैसांण चेलावास लेय आया। घास रौ बिछावणौ करनै कह्यौ--आप लिखणौ कांई करौ, उदैरामजी स्वांमी नै पाणी पावौ। जद खेतसीजी स्वामी, हेमजी स्वामी दोनूं जणां आया। खेतसीजी स्वामी मौरां पाछै हाथ देयनै बैठा कीधा। इतलै आंख्यां फेर दीधी। भारमलजी स्वामी फरमायौ—सरधौ तौ थांरै च्यारूं ई आहार नां त्याग है। खेतसीजी स्वामी रा हाथ मैहीज चालता रह्या।

जद खेतसीजी स्वामी कह्यौ—मोनै स्वामीजी फुरमायौ थो के खेतसी! उदैरांमजी री मोत थारै हाथ आवती दीसै है। सो म्हारा हाथ मैं ईज चल गया। स्वामीजी रौ वचन आय मिल्यौ।

१८९. आ तौ रीत थेट री है

सोजत रा बाजार मै छत्री त्यां स्वामीजी विराज्या। वरजूजी नाथांजी आदि सात आर्य्यां और गाम थी आया। स्वामीजी नै आय बंदणां कीधी। उतरवा नै जागा चाहीजै।

जद स्वामीजी पोतै ऊठ नै नजीक उपाश्रौ जड़्यौ हूंतौ त्यां आर्य्यां रै साथै आया। बोल्या—छैरे कोई भायौ इण उपाश्रा री आज्ञा दैणवालौ।

जद एक भायौ बोल्यौ—म्हारी आज्ञा है। और जागां सूं कुंची ल्यायनै कमाड़ खोल दीया। पछै माहै आर्य्यां नै उतारनै आप पाछा ठिकाणै

पधारीया। एह समाचार नाथांजी रे मूंह सुण्या ज्यूं हीज लिख्या छै। आर्यां नै कमाड़ खोलायनै न ऊतरणौ इसी परूपै ते अजाण छै। आ तौ रीत थेट भीखनजी स्वामी थका री है।

१९०. थांरी आज्ञा री जरूरत नहीं

खैरवा रा भगजी दिख्या नै त्यार थया। जद काका बाबा रा भाई बैहदौ घणौ कीयौ। कहै—म्हारी आज्ञा नहीं।

जद स्वामीजी फरमायौ—थांरी आज्ञा रौ कारण नहीं।

पछै बड़ी बहिन री आज्ञा लेई दिख्या दीधी। पछै त्यां बैहदौ घणौ कीधौ। स्वामीजी रे मूंहढा-मूंहढ झगड़ौ घणां दिनां तांई कीधौ पिण स्वामीजी कांइ गिणत राखी नहीं।

पछै स्वामीजी भगजी नै पूछ्यौ—तोनै उवे पाछौ ले जावैला तौ तूं कांइ करैला। जद भगजी बोल्यौ—घर मैं ले जावै तौ म्हारै च्यारूइं आहार नां त्याग है। ए बात सं० १८५९ री। पछै दिख्या दीधी। साठै चौमासो सरीयारी कीधौ। तिहां चौमासा मैं ते काका बाबा रा बेटा भाई बैहदौ मोकळौ कीधौ। स्वामीजी न्याय मारग चालतां कोई री गिणत राखी नहीं।

१९१. मर्यादा बांधी

देसूरी वाला नाथूजी साध नै जीभ रौ लोलपी जाणनै घृत दूध दही मिष्टान कड़ाइ विगै खावा री मर्यादा साधां रै बांधी सं० १८५९ रे वर्स।

१९२. दिख्या दीधी तौ संभोग भेळौ नहीं

वीरभांणजी नै स्वामीजी फरमायौ—पना नै दिख्या देवा री आज्ञा नहीं। अनै जो दिख्या दीधी तौ आंपां रै आहार पाणी रौ संभोग भेळौ नहीं पछै वीरभांणजी पना नै दिख्या दीधी। जद स्वामीजी आहार पांणी नौ संभोग तोड़ नांख्यौ। पछै इन्द्र्यां सावज्ज इसी विपरीत सरधा ले उठ्यौ।

१९३. दिख्या दीज्यौ देख-देख

ओटा सोनार नै दिख्या दीधी। तथा वीरां कुंभारी नै दिख्या दीधी। ते समपणै प्रवर्त्या नहीं, तिणसूं महाजन बिनां और नै दिख्या देवा री रुचि ऊतरी।

१९४. संका रौ समाधान

टीकम दोसी रै अनेक बोलां री संका पड़ी । गुणतीस ओलिया रै आसरै लिखनै ल्यायौ । चरचा करवा लागौ । बोलै घणौ । जद स्वामीजी ओळिया बांच-बांच नें उणरा जाव लिखनै बचाय देता । छबीस ओळियां रै आसरै तौ संका मेट दीधी । जद घणौ रोयौ अनै बोल्यौ आप न हुंता तौ म्हारी कांइ गति हूंती । आप तीर्थंकर केवली समान हौ । इत्यादिक घणां गुण कीया । स्वामीजी री जोड़ां सुणनै घणौ राजी हुवौ । बोल्यौ ए जोड़ा नहीं, एह तौ सूत्रां री निर्युक्ति छै ।

घणी सेवा कर नै पाछौ कछ देश गयौ । वले संका पड़ी, जद चौविहार संथारौ कीधौ । म्हारी संका तौ सीमंधर स्वाम मेटसी । पन्द्रह दिनां रै आसरै संथारौ आयौ । आऊखौ पूरौ कीयो ।

१९५. अपछंदापणौ सिरे नहीं

चंद्रभाण नीकळवा लागौ जद स्वामीजी बोल्या—संलेखणा संथारौ करणौ सिरै पिण साधां नै छोड़नै अपछंदापणौ सिरे नहीं ।

जद ऊ बोल्यौ—म्हैं नै भारमलजी दोनूं जणां संलेखणां करां ।

जद स्वामीजी बोल्या—आंपे दोनूं जणां करां ।

जद चंद्रभाणजी बोल्या—थां साथै तौ न करूं भारमलजी साथै करूं ।

स्वामीजी फेर कह्यौ—आंपे करां ।

पछै चंद्रभाण तिलोकचंद दोनूं जणां मांन अहंकार रै घस टोला बारै नीकल्या । ते सहु विस्तार तौ स्वामीजी कृत रास थी जाणवौ । ते जाता थका बोल्या—विस्वा तौ म्हाराइ घटेला पिण थांरा श्रावकां नै तौ दाहे बलीया आकड़ा सरीखा करूं तौ म्हारौ नाम चंद्रभांण है ।

जद चतुरोजी श्रावक बोल्यौ—थे तौ थोड़ा कोश ह्वालौ अनै हूं कासीद मेलनै ठाम-ठाम खबर कराय देसूं सो थांनें मन करनै पिण कोइ बंछै नहीं । सो दाहे बलीया आकड़ा जिसा थे इज हुवोला ।

बाद मै उठा सूं चालता रह्या । पछै आगै रुघनाथजी मिल्या । त्यां कह्यौ—थेंम्हां मै परहा आवौ । थांरी रीत राखसां । वै उणां री बात मानी नहीं ।

० भीखणजी तो पगै है ?

पछै रोयट रा भायां नें किणहि कह्यौ—भीखणजी रा टोळा सूं चंद्रभाण तिलोकचंद दोनूं भणणहार साध नीकल गया ।

जद श्रावक बोल्यौ—भीखणजी तौ पगै है ? तौ कहै—उवै तौ है ।

जद भाया बोल्या—भीखणजी है तौ साध और मोकला ई हुंता दीसै

है। यां नीकल्यां रौ लिगार अटकाव नहीं।

० आप बड़ी तोली

पछै स्वामीजी उणानै अवगुणवाद बोलता जाणीनै उणांरे लारे-लारे विहार कीधौ। तिण सूं एक वर्ष मै सात सौ कोश आसरै चालणौ पड़्यौ। थेट चूरू तांइ पधारया। खेत्रां में कठैइ टिप लागी नहीं। उणां दोनां विहार करतां अनेक कूड़ कपट कीधा—जिण गाम जावता तिण गाम रौ मारग तौ न पूछता, अनै दूजा गाम रौ मारग पूछता, कारण लारे भीखणजी आवैला तिण सूं। पाछै लारे सूं स्वामीजी पधारता, अनै लोकां नै पूछता उवे किसै गाम गया है ?

जद लोक कहै फलाणै गाम रौ मारग पूछता हा। पछै स्वामीजी पोता री बुद्धी सूं विचार नै देखता उण गांमरौ मारग पूछ्यौ है, तौ फलाणै गाम गया दिसै है, सो तिण हिज गांम चालौ। जद साध कहता—ऊवे तौ उण गाम रौ मारग पूछ्यौ—कहता था, अनै आप अठि नै क्यूं पधारो ?

जद स्वामीजी फरमायौ—हूं जाणूं छूं उणांरी कपटाइ। उण गाम रो मारग पूछ्यौ तौ उण गाम नहीं गया अठिनें इज गया दिसै है। आगै जायनै देखता तौ बैठा लाधता। अनै कदेइ गोचरी करता मिलता। साध देखनै वड़ो आश्चर्य करता। आप बड़ी तोली।

उवे लोकां रै संका घाले ते ठाम-ठाम स्वामीजी संका मेट निसंक कीया। श्रावक-श्राविका नै सुद्ध कर दीया। उणांने ओळखाय दीया। मोटा पुरुष बड़ौ उद्यम कीयौ। भलो जिन मारग दीपायौ।

० वंदणा तौ करस्यां हिज

चूरू कानीं पधारया जद आगै चंद्रभाणजी तिलोकचंदजी पहिलां सिरांमदासजी नें संतोखचंदजी नै फंटाय नै आहार पाणी भेळौ कर लायौ।

पछै स्वामीजी पधारया जद सिवरांमदासजी संतोखचंदजी स्वामीजी नें आंवतां देखनै मथेन वंदामि कहिनै ऊभा थया।

जद चन्द्रभाणजी कह्यौ—आपां रै यांरै आहार पाणी तौ भेळौ नहीं नै थे बंदणां क्यूं कीधो ? जद सिवरांमदासजी संतोखचन्दजी बोल्या—आपां रा गुरु है सो वंदना तौ करस्यां इज। पछै उणां दोयां सूं स्वामीजो बात कर नै समझाया। चन्द्रभाण नै ओळखाय दीयौ।

पछै स्वामीजी तौ पाछा मारवाड़ पधारया। लारा सूं उणां चंद्रभाण तिलोकचंद सूं आहार पाणी तोड़ दीयौ। उणांनै ओळख पिण लीया। बोल्या—यां नें·········जिसा स्वामीजी कहता था जिसाइ ज नीकलिया। पछै सिवरांमदासजी संतोकचंदजी दोनूं सुलभ पणें रह्या। उवे दोनूं इ विमुख

रह्या तौ पिण स्वामीजी उणांरी गिणत राखी नहीं। इसा साहसिक पुरुष एकांत न्याय रा अर्थी।

१९६. सामजी और रामजी

सांमजी रांमजी बूंदी रा वासी। श्रावगी जाति रा बैद। दोनूं भाई वेला रा। उणीयारौ सूरत एक सरीखी दिसै। केलवे दिख्या लेवा आया। तिहां सांमजी दिख्या लीधी सं० १८३८ रे वर्स।

पछै थोड़ा दिनां पछै नाथजीदुवारा मै घणां वैराग सूं घणां महोछव सूं रंगूजी नै खेतसीजी स्वामी एक दिन दिख्या लीधी। जिन मारग रौ उद्योत घणौ थयौ।

पछे थोड़ा दिनां सूं रामजी स्वामी दीक्षा लीधी। खेतसीजी स्वामी सूं सामजी तौ बड़ा अनै रामजी छोटा। केतलै एक काळे सांम रांम रौ टोळौ कीधौ। न्यारा विचरी नै स्वामीजी रा दर्शण करवा विहार करनै आवै। जद खेतसीजी स्वामी सामजी रै भोळै रामजी नें बंदणा करै एक सरीखौ उणियारौ तिण सूं।

जद ते कहे—हूं रांमजी छूं, सांमजी तौ उवै छै। इण मुजब घणीं वार काम पड्यौ।

जद स्वामीजी बुद्धी सूं कह्यौ—रांमजी थे पहिला खेतसीजी नें बंदनां परही करौ, जद खेतसीजी जाण लेसी लारै बाकी रह्या जिकै सामजी छै। इसी बुद्धी स्वामीजी री।

१९७. जे ठंडो रोटो छौड़ै ते लाडू छोड़ दै

कोटावाळा दोलतरामजी रे टोळै रा च्यार साध स्वामीजी भेळा आया। व्रधमांनजी (१) बड़ो रूपजी (२) छोटो रूपजी (३) सूरतौजी (४) तिण मै छोटो रूपजी बोल्यौ—मोनै ठंडी रोटी न भावै।

जद स्वामीजी आहार नीं पाती करतां ठंडी रोटी ऊपर एक-एक लाडू मेल दीयौ। कह्यौ—जे ठंडी रोटी छोड़ै ते लाडू ही छोड़ देवौ। उन्हीं रोटी लेवै तिणरै लाडू न आवै। जद अनुक्रमें आप आपरी पांती उठाय लीधी। कोई नै पिण ठंडी उन्हीं बोलवा रौ काम नहीं।

१९८. तड़को क्यूं ?

गांम जाढण मै आसरै छव साधां सूं स्वामीजी पधार्या। गांम मै एक राजपूत रै आरौ। जिहां दोय भेषधारी आया सो आरा माही थी लापसी ले आया। पछै साधां नै पिण लोकां कह्यौ—आरा माही थी और साध

लापसी ल्याया सो थे पिण लेइ आवौ। जद साधां कह्यौ—म्हांनै तौ आरा मैं जाणौ कल्पै नहीं। पछै साधां आयनै स्वामीजी नें समाचार कह्या जद स्वामीजी जाण्यों पाली जावां छां कोइ म्हारो नाम अणहुंतो इज ले लेवै। इम विचारी नै भेषधारी कनै जाय पूछ्यौ—थे आरा माहि थी लापसी ल्याया कै नहीं ल्याया ?

जद उवै बोल्या—थे क्यूं पूछौ, थांरे म्हांरे किसौ आहार पांणी भेळौ है ?

स्वामीजी बोल्या—थेइ पाली जावौ हो अनै म्हेई पाली जावां छां सो ल्याया तौ होवो थे अनै कोई नांम लेवै म्हारौ इण वासते पूछां हां सो म्हारा पात्रा तौ थे देख लेवौ अनै थांरा म्हांनै दिखाय देवौ।

जद तड़कनै बोल्या—म्हैं ल्याया-ल्याया नै फेर ल्याया।

जद स्वामीजी बोल्या—तड़कौ क्यूं यूं ज कहो नीं म्हारै रीत है सो म्हे ल्याया। इम बुद्धि करि साच बोलाय ठिकाणें आया।

९९. गुळ कुण ल्यायौ ?

स्वामी टोळा मैं छतां दरजी रै गोचरी गया। जद दरजी बोल्यौ—थांरौ चेलौ काले गुळ ले गयौ सो आज दिन थांनै कल्पै कोइ नहीं।

जद स्वामीजी ठिकाणे आयनै सर्व नै पूछ्यौ—काळे दरजी रौ गुळ कुण ल्यायौ ?

जब सर्व नट गया। जद स्वामीजी सर्व नै लेयनै दरजी रै घरे आया दरजी नै कह्यौ—गुळ ले गयौ ते यां माहिलौ कुंण ?

जद दरजी एक छोटौ साध हुंतौ तिणनै बतायौ।

जद स्वामीजी तिण नै जाण लीयौ एहिज गुळ ल्याय न नट गयौ दीसै है।

इम ठागा रौ भूठ रौ उघाड़ कर दीयौ।

१००. लिखजो मती

पींपाड़ मैं भेषधारयां रौ श्रावक मालजी स्वामीजी सूं चरचा करतां। स्वामीजी पूछ्यौ—मालजी ! छव काय रा जीव खावै तौ कांइ हुवै।

जद तिण कह्यौ—पाप हुवै। वली पूछ्यौ—खवायां कांइ हुवै ? तिण कह्यौ—पाप हुवै।

जद स्वामीजी बोल्या— भारमलजी स्याही गाळ नै लिखज्यौ— मालजी पाणी पायां पाप कहै है।

जद मालजी उतावळौ बोलवा लागौ—म्हे पांणी पायां पाप कद कह्यौ ?

जद स्वामीजी बोल्या—पांणी छ काया माहै छै कै बारै ? जद बोल्यौ—है-है-है लिखजो मती-लिखजो मती ।

इम कहि कष्ट होयनै चालतौ रह्यौ ।

२०१. थे पूछ्यौ सो प्रश्न संभाळौ

भीलौड़ै स्वामीजी विराज्या तिहां भेषधार्‌यां रौ श्रावक आय प्रश्न पूछ्यौ—भीखणजी ! किणहि श्रावक सर्व पाप रा त्याग किया तिणनें आहार पांणी बहिरायां कांई हुवै ?

जद स्वामीजी बोल्या—धर्म हुवै ।

जद उण कह्यौ—थांरे तौ श्रावक नै दीयां पाप री श्रद्धा है, थे धर्म क्यूं कह्यौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—थे पूछ्यौ सो प्रश्न संभाळौ । श्रावक सर्व पाप रा त्याग कीया, जद ते श्रावक रौ साध ईज थयौ । ते साध नै दीयां धर्म ईज छै ।

२०२. तीन घर वधावणा

स्वामीजी बाईसटोला माहि थी नीकली नवौ साधपणौ पचखवानै त्यार थया । जद कनै साध था ज्यांरी प्रकृति देखी । भारमलजी स्वामी रौ पिता किश्नौजी ज्यांरी प्रकृति कडली । आहार वधतौ मंगावै । अधिकाइ री रोटी उत्तरती लै नहीं । चोखी न दै जद कजीयौ करै ।

जद भीलौड़ा मैं भारमलजी स्वामी नै कह्यौ—थांरौ पिता तौ साधपणा लायक नहीं सो परहौ छोड़स्यां । थांरौ कांई मन है ?

जद भारमलजी स्वामी कह्यौ—म्हारै तौ आप सूं काम है । आपरी इच्छा आवै ज्यूं कीजै ।

पछै किश्नौजी नै स्वामीजी कह्यौ—थांरै म्हारै आहार पांणी कोइ नहीं ।

इम निसुणी किश्नौजी बोल्यौ—म्हारा बेटा नै ले जासूं ।

जद स्वामीजी बोल्या—ऊ न आवै, आवै तौ उणरी इच्छा ।

जद जबरी सूं भारमलजी स्वामी नै लेयनै दूजी हाटे जायनै बैठौ । आहार पांणी आंणनै करावा लागौ ।

जद भारमलजी स्वामी बोल्या—हूंतौ न करूं । नित्य धामै पिण करै नहीं । तीजौ दिन आयौ वली घणी मनुहार करवा लागौ । जद भारमलजी स्वामी कह्यौ—थारा हाथ रौ आहार करवा रा जावजीव त्याग है । पछै भीखणजी स्वामी नै आंण सूंप्या । बोल्यौ—औ तौ थासूं इज राजी है । थां कनैईज राखौ । थें नवी दिख्या न लीधी है जितरै म्हारौइ ठिकांणौ

बांधौ ।

जद स्वामीजी ले जायनै जैमलजी न सूंप्या ।

जद जैमलजी बोल्या—देखौ भीखणजी री बुद्धि । किश्नाजी नै म्हांनै सूंपतां तीन घर बधावणां हूआ । म्हे तौ जाणां म्हारै चेलौ पानै पड़्यौ । किश्नौजी जाणै म्हारौ ठिकाणौ बंध्यौ । भीखणजी देखै म्हारौ दालिद्र टल्यौ ।

पछै केतलैयक काळे किसनौजी आदि दोय साध आरा माहि थी लापसी ल्याय चुकाय नै विहार कीधौ मारग मै तृषा घणी लागी । लापसी खायोड़ौ अनै उन्हाले रा दिन । तृषा सही पिण काचौ पांणी न पीधौ । आऊखौ पूरौ कर गया ।

आरा माहि थी लापसी ल्याया सो तौ उणां रै टौळा री रीत है पिण नेम मै दृढ़ रह्या । काळ कर गया पिण काचौ पांणी न पीधौ ।

२०३. तिण सूं बरजै

स्वामीजी कनै तथा साधां कनै लोक बखांण सुणवा आवै । त्यांनें भेषधारी वरजै । जद स्वामीजी दृष्टांत दीयौ—जिनऋष जिनपाल नै रेणादेवी तीन बाग तौ वरज्या नहीं अनै दक्षिण नौ बाग वरज्यौ । झूठ बोली । सर्प खावा रौ भय बतायौ । जांण्यौ दक्षिण रै बाग जासी तौ मोनै खोटी जांण लेसी । ठागा रौ उघाड़ होय जासी । यूं जाणनै दक्षिण रौ बाग वरज्यौ । ज्यूं भेषधारी बाईस टौला, चोरासी गच्छ, तीन सो त्रेसठ पाखंड, त्यांरे जातां तौ विशेष न वरजै अनै सुध साधां कनै जातां वरजै । कारण भीखणजी कनै गयां म्हांनै खोटा जांण लेसी । उवे म्हांरा श्रावक उरहा लेसी तिणसूं वरज ।

२०४. स्वामीजी बोल्या—

तथा भेषधारी लोकां नै साधां सूं भिड़कावै । जद स्वामीजी बोल्या—आगै भगू पुरोहित पिण बेटा नै भिड़काया कह्यौ—साधां रौ विश्वास कीजौ मती । बाप रा कहणा सूं बेटां पिण साधां नै खोटा जांण्या । पछै साधां सूं मिल्या जद बाप नै खोटौ जांणनै साधपणौ लीधौ ।

ज्यूं भेषधारी पिण साधां नै खोटा कहै । पिण उत्तम जीव हुवै ते साधां री संगत करनै ओळखणा करनै ठाय आवै ।

२०५. थाणै नहीं, खाणै बैसे है

आछा-आछा खेत्र देखनै भेषधारी थाणै बैसै । जद स्वामीजी बोल्या—

थाणै न बैसै, खाण बैसै है ।

असल थाणौ तौ अमीचंदजी रौ सो सैतालीसै मारवाड़ मै विखौ पड्यौ, जद दूजा थाणांवाळा तौ चौमासा मै पगां-पगां बिहार कर गया अनै अमीचन्दजौ तौ चोमासा मै पींपार सूं भाद्रवा विद १४ पज्जुसणा मै रात रा बाजरी रा गाड़ा ऊपर वेसीनै गया । मारग मै तृषा लागी जद काचौ पांणी पीधौ ।

जिकौइ जाट रा हाथ रौ । ते पिण अणगल पांणी पीधौ । तिण सूं खरौ थाणौ अमीचंदजी रौ सो पगै न हाल्या ।

२०६. सारा एक होय जावौ

किण ही स्वामीजी नै कह्यौ—थें नै बीजा टोळा एक होय जावौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—थे नै आड़ी जाति गिंवारादिक भेळा हुवौ कै नहीं ?

ते बोल्यौ—नहीं हुवां ।

जद स्वामीजी बोल्या—तिम हिज म्हे नै भेषधारी भेळा न हुवां । आड़ी जात ते महाजन रै घरै जनम लीयां ते भेळौ हुवै । ज्यूं भेषधारीयां नै पिण समगत आयां साधपणौ लीयां भेळा हुवां ।

२०७. आ चरचा तौ घणी झीणी है

भेषधार्‌यां रा श्रावक बोल्या—पडिमाधारी श्रावक नै सूझतौ आहार पाणी दीयां कांई हुवै ?

जद स्वामीजी बोल्या—कोई नै काचौ पांणी पावै तथा मूळा खवावै तिण मै थे कांइ सरधौ छौ ?

जद ते बोल्या—म्हांनै तौ पड़िमांधारी कौ ईज बतावौ, बीजी बात मै तौ म्हे न समझां । जद स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—कोई बोल्यौ मोनै कीड़ी कुंथऔ दिखावौ, जद तिणनै पूछ्यौ—तोनै हाथी दीसै है कै नहीं ?

जद ते बोल्यौ—कै हाथी तौ मोनै दीसै नहीं । जद तिण नै कह्यौ—हाथी पिण तोनै न सूझै तौ कीड़ी कुंथूआ किस तरै सूझसी ।

ज्यूं जीव खवायां मै पाप ते पिण थे न जांणौ तौ पडिमांधारी नै अव्रत सेवायां पाप थांरे किम बैसै ? आ चरचा तौ घणीं झीणी है ।

२०८. पोथी-पानां नै ज्ञान

केई कहै—पोथी नै आंगणै मेलणी नहीं, पूठ दैणी नहीं । पोथी पांनां ते तौ ज्ञान है, त्यांरी आशातना करणी नहीं ।

जद स्वामीजी बोल्या—पोथी पांनां नै थें ज्ञान कहौ छौ तौ पोथी-पानां फाट गया तौ कांइ ज्ञान फाट गयौ ? अथवा पोथी पानां सड़ गया तौ कांई ज्ञान सड़ गयौ ? पानां उड़ गया तौ कांइ ज्ञान उड़ गयौ ? पानां बळ गया तौ कांइ ज्ञान बळ गयौ ? पानां चोर ले गया तौ कांइ ज्ञान नै चोर ले गया ? पानां तौ अजीव है, ज्ञान जीव है। आखरां रा आकार ते तौ ओळखणां रै वासतै छै। पानां मैं लिख्या त्यांरौ जांणपणौ ते ज्ञान छै, ते आतमा छै, आपरै कनै छै, अनै पानां अनेरा छै।

२०९. पुन्य कै मिश्र ?

भेषधारी गृहस्थ नै कहै—अनेरां नै अन्नादिक दीधां पुन्य है या मिश्र है ?

जद गृहस्थ बोल्यौ—थांरै आहार बध्यां थे अनेरा नै द्यौ कै नहीं ?

जद ते कहै—म्हे तौ न द्यां देवा रौ म्हारौ कल्प नहीं। देवां तौ म्हांरौ साधपणौ भागै अनै थे अनेरा नै देवौ तिणमै थांनै पुण्य है या मिश्र है ?

तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—जिको वायरो वाज्यां हाथी उड़ जाय तौ रुइ री पूंणी क्यूं नहीं उडै। अवश्य उडै ईज।

ज्यूं साधू सूं अनेरा नै दान देवा थी साध रौ व्रत भागै तौ गृहस्थ नै पाप क्यूं नहीं लागै ? लागै इज।

२१०. हिंस्या बिना धर्म नहीं हुवे तौ ?

हिंस्याधर्मी कहै—हिंस्या बिनां धर्म नहीं हुवै। वलि दृष्टंत देइ कहै—दोय श्रावक था तिण मै एक जणै तौ अग्नि आरंभ ना त्याग कीधा, अनै एक जणै न कीधा। दोनूं जणां पइसै-पइसै रा चणां लीया। सोगन न कीधा तिण तौ सेकनै भूंगड़ा कीधा। अनै सौगन कीधा ते कोरा चणां चाब रह्यौ है। इतलै मासखमण रै पारणै मुनिराज पधार्या। सो जिणरै त्याग नहीं, तिण तौ भूंगड़ा वहिराय नै तीर्थंकर गोत्र बांध्यौ। अनै त्यागवालौ वैठो जुलक-जुलक जोवै। ऊ कांई वहिरावै।

इण न्याय हिंसा थी धर्म हुवै। अनै हिंसा बिना धर्म न हुवै। इम कहै तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—

दोय श्रावक हुंता। तिणमैं एक श्रावक तौ जाव-जीव लगै शील आदर्यौ। अनै एक जणै कुशील ना त्याग कीया। परणीजीयौ। पछै तिणरै पांच पुत्र थया। मोटा हुवा। धर्म मै समझ्या। वैराग आयौ। दोय बेटां नै हरख सूं दिख्या दीधी। घणौ हरख आयौ तिण सूं तीर्थंकर गोत्र बांध्यौ।

थे हिंस्या मैं धर्म कहौ सो थांरे लेखै कुशील मैं पिण धर्म ठहर्‌यौ। हिंसा बिनां धर्म नहीं तौ कुशील बिना पिण धर्म नहीं थांरे लेखै।

इम कह्यां कष्ट थयौ। पाछौ जाब देवा असमर्थ।

२११. है रे कोई बेरी ?

कोई नै बेरी न करणों। तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—है रे कोई बेरी ?

जद संसार मैं तौ कहै—दे नीं उधारो। अनै धर्म लेखै है रे कोई बेरी ? तो कहै—पूछै नीं करली चरचा। करली चरचा पूछ्यां जाब न आवै जद आफे ई बेरी हुवै।

है रे कोइ बेरी ? तौ कहै—काढै नीं खूंचणौ। खूंचणौ काढ्या आगलै नें दोहरी लागै जद क्रोध मैं आय नै आफे ई बेरी हुवै।

२१२. सूता-सूता करबा रौ ठिकाणो

भीखणजी स्वामी नै किणही कह्यौ—आप तौ पुखता हो। वर्सा में घणा हो सो पड़िकमणौ बैठा इज करौ। इतरी खेद क्यां नै करौ।

जद स्वामीजी बोल्या—म्हे जो पड़िकमणौ बैठा-बैठा करां तौ लारला सूता-सूता करबा रौ ठिकाणो है।

२१३. महात्मा धर्म

पुर माहै स्वामीजी फरमायो—दस प्रकारे श्रमण धर्म।

जद जैचंद वीरांणी बोल्यौ—महाराज ! दश प्रकारै यति धर्म। जद स्वामीजी फरमायौ—भलांइ महात्मा धर्म कहौ नीं।

२१४. नीत लारै बरकत

कोई साध बार-बार उपयोग चूकै, पिण नीत मै फरक नहीं तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयो—धांन रौ कुणकौ पड्यौ देखनै किणहि साध नै गुरां कह्यौ—ओ धान रौ कुणको पड्यो है सो पग दीज्यो मती।

जद तिण कह्यौ—स्वामीनाथ ! कोइ देवूं नीं। थोड़ी बार थी फिरतौ-फिरतौ आयनै पग दे दीधौ।

जद गुरु बोल्या—थांनै इण ऊपर पग देणौ वरज्यौ थो नीं ? जद ऊ साध बोल्यौ—स्वामीनाथ ! उपयोग चूक गयौ। जब दूजी बेलां फेर फिरतां-फिरतां पग दे घाल्यौ। वलि गुरां निषेध्यो, आगै थांनें वरज्यौ थो नी। जद वले बोल्यो—महाराज ! उपयोग चूक गयो।

जद गुरु बोल्या—अबै पग लागै है तो सवेरै विगै रा त्याग है।

थोड़ी वेला सूं फिरतां-फिरतां वले पग दे दीयौ। इम उपयोग चूकनै वार-वार पग लागों तो ते कुणका उपर पग देवा थी नै विगै टालवा थी राजी नहीं। पिण उपयोग मैं खामी है। नीत सुद्ध है, दोषां री थाप नहीं तिण सूं। नीत साफ पिण, उपयोग चूकै कर्मां ना उदय थी तेहथी असाध न हुवै। अनै मोह नां उदय थी जाण-जाण नें दोष सेवै, दोष रो थाप करै, दोष रौ प्राछित पिण न लेवै तिणसूं असाध हुवै।

२१५. एक आखर रौ फरक

किणहि पूछ्यौ—थांरै नै फलाणा रै कांइ फेर? जद स्वामीजी बोल्या—एक आखर रौ फरक। एक अकार नौ फेर। साध रै अनै असाध रै एक आखर रो फेर है। तेहीज म्हांरै नै यांरै फेर है।

२१६. परिग्रह किणरौ ?

कोई थानक रै अर्थे रुपीया उदकै। जद स्वामीजी बोल्या—ए रुपीया थानक मैं रहै ज्यांरा हीज जांणवा जिण ऊपर दृष्टंत—अमकडीया गढ़ मैं इतरो खजीनौ ते खजीनौ गढ़पति नो ईज जाणवौ।

ज्यूं स्थानक रै अर्थे रुपीया ते पिण परिग्रह थानक मैं रहै ज्यांरौ हीज जांणवौ।

२१७. ओळ्यां खांगी क्यूं ?

हेमजी स्वामी लिखणौ करता हा। स्वामीजी नै पानौ बतायौ। ओळ्यां खांगी देखनै स्वामीजी बोल्या—करसणी हळ खड़ै ते पिण चामां पाधरी कांढै है। सो ओळ्यां बांकी क्यूं लिखी। ओळ्यां पाधरी लिखणी।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—तहत स्वामीनाथ!

२१८. व्याकरण भण्यां हो ?

स्वामीजी कनै एक ब्राह्मण आयनै पूछ्यौ—साधां! व्याकरण भण्यां हो? स्वामीजी बोल्या—म्हे तौ व्याकरण कोई भण्या नहीं।

जद ब्राह्मण बोल्यौ—व्याकरण भण्यां बिना शास्त्र ना अर्थ हुवै नहीं।

जद स्वामीजी बोल्या—थे तौ व्याकरण भण्या हो?

जद ऊ बोल्यौ—हूं तौ व्याकरण भण्यौ छूं।

थे शास्त्र नां अर्थ कर लेवौ।

जद ऊ बोल्यौ—हूं तौ शास्त्र नां अर्थ कर लेवूं।

जद स्वामीजी पूछ्यौ—'कयरे मग्गे अक्खाया' इणरौ अर्थ कहौ ।

जद ऊ ब्राह्मण बोल्यौ—कयरे-कहतां केर । मग्गे-कहतां मूंग । अक्खाया-कहतां आखा न खाणा ।

जद स्वामीजी बोल्या—औ तौ अर्थ आयौ नहीं ।

जद ऊ बोल्यो—इणरौ अर्थ किम छै ।

जद स्वामीजी बोल्या—'कयरे' कहतां किसा, 'मग्गे' कहतां मोक्ष रा मार्ग, 'अक्खाया' कहतां तीर्थंकरे कह्या । एहनौ अर्थ इम छै ।

२१९. केवली राज किम करै !

संवत १८५४ स्वामीजी ४ साधां सूं खैरवै चौमासा कीधौ । तिहां पज्जुसणां में केयक श्रावक गच्छवास्यां कनै सुणवा गयां । उपाश्रय बखांण सुणनै पाछा स्वामीजी कनै आया नै कहिवा लागा—स्वामीनाथ ! आज उपाश्रय मै बखांण सुणीयौ तिणमै इसो बात बाची—कुर्मापुत्र केवलज्ञान ऊपना पछै ६ मास राज कीधौ । एतलै दोय साध आय ऊभा । वंदना न करी ।

जद कुर्मापुत्र बोल्या—म्हांनै केवलज्ञान ऊपनौ है नै थे वंदना न करौ सो किण कारण ?

जद साध बोल्या—आप केवली छौ पिण लिंग गृहस्थ नौ छै तिण कारण आपनै वंदणा म्हे न कीधी ।

जद कुर्मापुत्र बोल्या—ठीक कही । अबै जाणीयौ ।

आ बात आज उपाश्रय सुणी सो साची है कांई ?

जद स्वामीजी बोल्या—आ बात साची जाणै जिणमै समक्त ही नहीं । राज करै ते तौ मोह कर्म रा उदय थी करै । अनै केवली मोह कर्म नै क्षय कियौ । सो केवली थया पछै राज किम करै । आ बात बाचणवाला में तौ समक्त प्रतख न दीसै । पिण थां सुणवा वाळां री पिण संका पड़ै है । इम कही समझाय दीया ।

२२०. बुद्धि बिनां समदृष्टी किम हुवै ?

कैलवा मै नगजी आंख्यां अखम श्रावक हुंतौ । बुद्धि घणी कोइ नहीं । बीरभांणजी कह्यौ—म्हे नगजी नै समदृष्टी कीधौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—समदृष्टि आवै जिसी तौ उणरी बुद्धि दीसै नहीं सो समदृष्टी किसतरै कीधौ, कांई सीखायौ ।

जद बीरभांणजी बोल्या—'ओलखणा दोहरा भव जीवां' आ ढाल सिखाइ । अनै एक नंदण मणीयारा नौ बखांण सीखायौ ।

पछै कैलवै स्वामीजी पधारया । नगजी नै स्वामीजी पूछ्यौ—तूं नंदण-मणीयारा नौ बखाण सीख्यौ है, 'सो औ मणीयौ लकड़ा रौ है कै सोना रौ है,

कै रुद्राछीमाला रौ है ?

जद नगजी बोल्यौ—शास्त्र मै चाल्यौ है सो मणीयो सोना रो ह्वैला लकड़ा रौ रुद्राछ रौ कीकर हुसी ।

वलि स्वामीजी पूछ्यौ—रे नगजी ! 'साधवीयां नै जड़णौ चाल्यो' सो ए धवियां गाड़लिया लोहारां नी छोटी धवियां है कै बीजा लौहारां नी मोटी धमणि ते मोटी धवियां है ?

जद नगजी बोल्यौ—नान्हीं धवियां क्यांन हुवै महाराज शास्त्र मै कह्यौ है सो धवियां मोटी हुसी ।

पछै स्वामीजी मन मै जाण लियौ सौ बुद्धि बिनां समगति किम हुवै । बीरभांणजी समदृष्टि कीयौ केहता, सो बात कची ठैहरी ।

२२१. औ पिण धर्म कहिणौ

भेषधारी कहै—कोई नै रुपीया दीयां उणरी ममता ऊतरी तिण रौ धर्म हुऔ ।

जद स्वामीजी बोल्या—किण हि रे बीस हळ री तथा बीस बीघा री खेती हुंती सो दस बीघा तथा दस हळ री खेती किण ही ब्राह्मण नै दीधी तौ उण रै लेखै या पिण ममता ऊतरी । औ पिण धर्म तिणरै लेखै कहिणौ ।

२२२. थारे पिण बैठी दीसै छै

पाली मै हीरजी जती स्वामीजी दिशा पधारया जद साथै-साथै जाय । ऊंधी-ऊंधी चरचा पूछै । तिण री श्रद्धा—हिंसा मै धर्म १ सम्यक्त्वी ने पाप न लागै २ सर्व जगत रा जीव मारयां एक समों संसार बधै नहीं ३ सर्व जीव नीं दया पाळ्यां एक समों संसार घटै नहीं ४ होणहार हुवै ज्यूं हुवै करणी रौ काम नहीं, केवली देख्यौ जद मोक्ष परहौ जासी ५ इत्यादिक विरुद्ध श्रद्धा स्वामीजी कनै कहै । जद स्वामीजी पाछौ जाब दीधौ नहीं । मारग चालतां न बोलणौ जिण कारण ।

जद हीरजी बोल्या—म्हे कही जिकी श्रद्धा थांरै पिण बैठी दीसै है जिण सूं थे पाछौ जाव दीधौ नहीं ।

जद स्वामीजी बोल्या—कोई भंडसूरो भिष्टौ खातौ हौ । साहुकार दिशां जातौ सेहजै दृष्टि पड़ी देखनै भंडसूरो बोल्यौ—साहजी रौ पिण मन हुऔ दीसै है ।

ज्यूं थे पिण बोलौ हो । पिण थांरी असुद्ध श्रद्धा भिष्टा समान जाणा छां सो मन करनै इ बंछा नहीं ।

२२३. असुद्ध वासण में घो कुण घालै ?

एक दिन हीरजी प्रश्न विपरीतपणै पूछवा लागौ। कहै—मोनें इणरो जाव देवौ।

जद स्वामीजी बोल्या—कोई भिष्टा सूं भरीयौ ठीकरौ लेई आयौ। कहै—इणमें मोनें घी तोल दो। तौ असुद्ध बासण मैं घी कुण घालै ?

ज्यूं असुद्ध खोटौ विपरीत हुवै तिणनै शुद्ध जाब बतायां गुण दीसै नहीं। जिणसूं अबारूं जाब न देवां।

२२४. पोतै गळै जद वस्त्र रै रंग चढ़ावै

वैरागी री वाणी सुण्यां वैराग आवै। तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—कसूंबो पोतै गळै जद वस्त्र रै रंग चढावै। पिण कसूंबा री गांठ बांधै तो पिण वस्त्र रै रंग न चढै पोते न गळ्यो तिण सूं।

ज्यूं सुद्ध श्रद्धा आचारवंत वैरागी साधु पोते वैराग मैं लीन हुआं औरां रे वैराग चढावै।

२२५. सरधणा एक, फर्शणा जुदी

कोई कहै—साध रौ धर्म और नैं गृहस्थ रौ धर्म और।

जद स्वामीजी बोल्या—चोथा गुणठाणा री छठा गुणठाणा री अनै तेरमां गुणठाणा री, श्रद्धा तौ एक छै। अनै फर्शणा जुदी छै। काचा पांणी मै अपकाय रा असंख्याता जीव अनै नीलण रा अनंता जीव चोथा छठा तेरमां गुणठाणा वाळा सर्व सरधै परूपै। पिण फर्शणा मै फेर—चोथा पांचमां गुणठाणा रा धणी तौ पांणी रो आरम्भ करै है। अनै साधु रै त्याग है ए फर्शणा जुदी है।

हिंस्या मै पाप चौथा पाचमां छठा तेरमां गुणठाणा वाळा सर्व सरधे परूपै। इण लेखै सरधणा तौ एक। अनै चोथा पांचमां वाळा हिंस्या करै है अनै साधू रै हिंस्या रा त्याग है। ए फर्शणा जुदी है। पिण सरधणा जुदी नहीं।

चौथा तेरमां गुणठाणा वाळा री सरधा एक छै। तेरमां गुणठाणा वाळा री श्रद्धा सूं चौथा गुणठाणा वाळा री श्रद्धा मैं फरक पड्यां चौथा गुणठाणा रौ पैहलै गुणठाणै आय जावै।

२२६. बात नहीं, बतुओ प्यारो

रोयट मै स्वामीजी सालभद्र रौ वखांण दीधौ, सो भाया सुणनै घणां राजी हुआ। स्वामीनाथ ! आगै सालभद्र रौ बखांण तौ घणी वार सुण्यौ,

पिण इण रीते तौ आगै सुण्यौ नहीं ।

जद स्वामीजी बोल्या—बखांण तौ ऊहीज है पिंण कहिण वाळा रै मूंहढा मैं फेर है ।

२२७. जागां तौ परिग्रह मांहो है

किणहि पूछ्यौ—पोसावाळा नै जागा दीधी जिणरौ कांई हुवै ? जद स्वामीजी बोल्या—उण कह्यौ—म्हारी जागा मैं पोसा करौ, इम कहिण वाला नैं धर्म ।

जद फेर पूछ्यौ—जागा दीधी जिण नै कांइ हुवौ । जद स्वामीजी बोल्या—जागा किसी आघी दीधी है । जागां मैं पोसा री आज्ञा दीधी जिण रौ धर्म है । जागा तौ परिगह माहै छै, ते सेव्यां सेवायां, धर्म नहीं । सामायक पोसा री आज्ञा देवै ते धर्म है ।

२२८. सामायक री जाबता

कोई कहै—सामायक मै पूंजनै खाज खणैं तौ श्रावक नें धर्म है । विनां पूंज्यां खाज खणे तौ पाप लागै ।

जद स्वामीजी बोल्या—कीड़ी माछर सामायक मै चटकौ दीयौ ते चटकौ काया रै दीयौ कै सामायक रै दीयौ ?

जद तिण कह्यौ—चटकौ काया रै दीयौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—पूंजेनै खाज खणै है सो जाबता सामायक री करै है कै काया री करै है ?जद उण ऊंधी श्रद्धा सूं कह्यौ—जाबता सामायक रा करै है ।

जद स्वामीजी बोल्या—खाज न खणतौ तौ ही सामायक रा जाबता तौ अपूठी घणी हुंती । जे बिना पूंज्यां खाज खाणवा रा त्याग । जो पूंजै नहीं तौ खाज खणणी नहीं । खाज न खणै तौ मछरादिक ना चटका सह्यां निर्जरा घणी हुंती । तिण सूं सामायक घणी पुष्ट हुंती । तिण कारण पूंजै सो सामायक री जाबता रै अर्थे न पूंजै । अनै जे चटकौ काया रै दीयौ पिण सामायक रै न दीयौ इम तौ तेहिज कहै । तौ काया री जाबता रै अर्थे शरीर पूंजै नै खाज खणै छै । पिण सामायक री जाबता रै अर्थे पूंजै नहीं । जे अढाई द्वीप बारला तिर्यंच श्रावक सामायक पोसा करै ते किसी पूंजणी राखै छै ? अनै सामायक री जाबता तौ त्यांरै पिण तीखी छै । अजैणा न करै ते हीज सामायक री जाबता छै ।

२२९. पोसा मैं पडिलेहण क्यूं ?

पोसा मैं श्रावक कोई तौ वस्त्र घणा राखै, कोइ थोड़ा राखै । घणा राखै

जिण रै घणी अव्रत। थोड़ा राखै जिण रै थोड़ी अव्रत। जद कोई कहै—पोसा मैं पड़िलेहण न करै तौ उणनै प्राछित क्यूं देवै ?

जद स्वामीजी बोल्या—पोसा मैं अणपड़िलेह्या उपगरण भोगवण रा त्याग। तिण पड़िलेह्या तौ नहीं अनै भोगव्या जिण लेखै त्याग भागा। तिणरौ प्राछित्त आवै। पोसा मैं पिण शरीर अव्रत मैं है। ते शरीर नीं साता रै अर्थे वस्त्रादिक आघा पाछा पूंजणादिक करै ते सावद्य छै।

जे वस्त्र राख्या जिणरौ पड़िलेहण न करै अनै न भोगवै तौ विशेष कष्ट ऊपजै, तिण सूं पोसौ अपूठौ पुष्ट हुवै। ते कष्ट सहिण री समर्थाई नहीं, तिण सूं वस्त्रादिक पड़िलेही नै भोगवै छै।

जिम कोई रै अछांण्यौ पांणी पीवा रा त्याग। हिवै ते पाणी छांणै ते पीवा रै वासतै पिण दया रै वासते नहीं। नहीं छाणै तौ दया अपूठी चोखी पळै।

ते किम ?

जे न छाणै जद पीणौ नहीं। जे अछांण्यौ पीवा रा तौ त्याग अनै छांणै नहीं तौ पीणौ पड़ैईज नहीं। इण वासतै जे छांणै ते पोता री अव्रत सेवा रै वासतै छांणै। तिण में धर्म नहीं।

२३०. सो व्रत अनै अव्रत दोनूं ई सूक जावै

केई कहै—श्रावक री अव्रत सींच्यां व्रत वधै। तिण ऊपर कुहेत लगावै—नींब रा रूंख मै आंबौ रूंख ऊगौ। नींब री जड़ीया मै पाणी कूढ्यां नींब नै आंबौ दोनूं ई प्रफुल्लित हुवै, ज्यूं श्रावक री अव्रत सींच्यां व्रत अव्रत दोनूं वधै।

जद स्वामीजी बोल्या—इम अव्रत सींच्यां व्रत बधै तौ तिण रै लेखै श्रावक स्त्री सेवै तिण पिण अव्रत सेवी तिण सूं व्रत पुष्ट हुवै।

तथा नींब री जड़ीया मै अग्नि न्हाख्यां दोनूं बळै ज्यूं किण हि जावजीव सीळ आदरयौ तौ अव्रत बाळी तिण रै लेखै व्रत अव्रत दोनूं बळै।

तथा गृहस्थ नै पारणौ करायां अव्रत सींची, तिण सूं व्रत वधती कहै तौ तिण रै लेखै उवास कीयां करायां अव्रत सूकां व्रत पिण सूक जावै।

इम हिंस्या, झूठ, चोरी, मैथुन, परिग्रह सेव्यां सेवायां अव्रत सींची तौ उण रै लेखै व्रत पिण वधती कहिणी। तथा हिंस्या, झूठ, चोरी, मैथुन, परिग्रह रा त्याग कीयां करायां अव्रत सूकै तौ तिण रै लेखै व्रत पिण सूकी कहिणी।

२३१. मून पारसो

कई कहै—सावद्य दान मै पुन पाप मिश्र न कहिणौ तिण सूं सावद्य दान मै म्हे मूंन राखां।

जद स्वामीजी मुनी रौ दृष्टंत दीयौ—ज्यूं एक मुनी गांम मै आयौ। साथै मौकळा चेला। आटौ घी गुळ मूंहढा सूं बोल नै तौ मांगै नहीं, पिण सानी करनै मांगै। आंगुळीया ऊंची करै—इतरा सेर आटौ इतरा सेर घी इतरी दाल इतरौ गुळ।

जद गांम रा चौधरी पटवारी ओछौ धामै जद चेला नै हुंकारौ करनै घर हाटां रा कैलू फोड़ावै।

जद लोक बौल्या :

"मुनि मून पारसी भणै, हूंकारै षट काया हणै।
अणबोल्यां ई ऊदम करै, तौ बोल्या कहौ काह गति करै ।।"

स्वामीजी बोल्या—जिसी उण मुनी री मूंन जिसी सावद्य दान मै यांरै मूंन है। मूंहढा सूं तौ मून कहिता जाअै पिण श्रावक-श्राविका नें जीमायां पुन मिश्र री आमना करै। लाडूआं री दया पळावा री आंमना करै।

२३२. खोल नै दै तौ लै नहीं

भेषधारी पोते हाथै तौ कमाड़ जड़ै उघाड़ै अनै गृहस्थ खोल नै देवै तौ लेवै नहीं तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—जिम कोई मानवी पर गाम जातां भंगी भींट लीयौ।

उणनै पूछ्यौ—तूं कुण?

जद तिण कह्यौ—हूं भंगी छूं।

जद तिण कह्यौ—म्हारौ भातो भींट लियो।

इम कहितां माहो माहि गालि रालि बोलतां बथोबथ आय गया। भंगी ऊपर आय बैठौ।

भंगी कहै—मौनै छोड़।

जद उ कहै—छोड़ूं नहीं।

जद भंगी कहै—तूं कहै ज्यूं करूं मोनै छोड़ौ।

जद ऊ बौल्यौ—थारी स्त्री कनै चौकौ दराय कोरा घड़ा मै पांणी मंगाय महाजन रा हाट सूं आटौ लेई इसी री इसी रोटी कराय देवै तौ छोड़ूं।

जद भंगी कबूल करी। उण कह्यौ—जिण रीते स्त्री कनै रोटी कराय दीधी।

जे समजणौ हुवै ते उणनें मूरख जांणै। जे भंगी री भींटी तौ न खाधी नै भंगी री कीधी खाधी तिण सूं उणनै विवेक रौ विकळ जांणै।

ज्यूं गृहस्थ कमाड़ खोल नै देवै ते तौ लेवै नहीं अनै अंधारी रात्रि मै हाथ सूं कमाड़ जड़ै उघाड़ै तिण री संक आणै नहीं।

२३३. इहलोक-परलोक में भूंडा दीसै

केई कहै—कारण पड़ीयां साधू नै असूझतौ लेणौ। अनै श्रावक नै पिण अल्प पाप बहुत निरजरा ह्वै।

जद स्वामीजी बोल्या—रजपूत रौ बेटौ संग्राम करतां न्हांस जावै ते सूर किम कहीयै। तिण नै राजा पटौ किम खावा दै। लोकिक मै आबरू किम रहै।

ज्यूं भगवंत रा साधु बाजै नें कारण पड़ीयां असूझतौ दीयां, अल्प पाप बहुत निरजरा कहै, असूझता री थाप करै, ते इहलोक परलोक में भूंडा दीसै।

२३४. मारग कांइ ओळख्यौ ?

हलूकर्मी जीव खोटा गुरु छोड़नै साचा गुरु करै। जद भेषधारी तथा त्यांरा श्रावक कहै—पाली में विजैचंद पटवौ रूपीया देई नै श्रावक करै है।

जद स्वामीजी बोल्या—थांरा श्रावक रूपीया साटै परहा जावै जद उणां थांरौ मारग कांइ ओलख्यौ? अनै रुपिया साटै अै समज्या कहौ छौ तौ बाकी रा पिण परहा जाता दीसै है। इण लेखै थांरौ मारग उणां ओळख्यौ नहीं।

२३५. वर्तमान काल मै मून

सावद्य दांन देवै लेवै साधु नै पूछै तौ वर्तमान काल मै मून राखणी। तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—हलवाणी रा छेहड़ा दोनूं कानीं बळै अनै वीचै ठंडी। उठी सूं पकड़्या हाथ बळै नै दूजा छेहड़ा सूं पकड़ै तौही हाथ बळै। विचासूं पकड्यां हाथ न बळै।

ज्यूं वर्तमान काळे सावद्य दान मै पुण्य कह्यां छ काय री हिंस्या लागै। पाप कह्यां अन्तराय पड़ै। तिण सूं ते काळ मै मून राखणी।

२३६. नीलोती खावा नें

केई कहै—भगवांन नीलोती खावा नै बणाई है।

जद स्वामीजी बोल्या—थारै लेखै नाहर आयां तूं क्यूं न्हासै। तोनै ई भगवांन नाहरा रौ भक्ष बणायो है। सो थारै लेखै नाहर रै खावा नै तोनें ई बणायौ।

जद ऊ बोल्यौ—म्हारौ जीव दोहरौ हुवै, दुख पावै।

तौ सर्व जीव पिण इम हीज जांण। मार्यां दुख पावै है।

२३७. कांचरिया रौ अटक्यौ किसौ विवाह रहै है ?

हेमजी स्वामी दिख्या लेवा त्यार थया, जद किणहि ग्रहस्थ स्वामीजी नै कह्यौ—महाराज हेमजी दिख्या लेवा त्यार थया पिण तमाखू रौ व्यसन है।

जद स्वामीजी बोल्या—काचरियां रौ अटक्यौ किसौ विवाह रहे है ?

२३८. जमारौ एहल ईज गयो

पुर मैं छाजू खाभीयौ स्वामीजी कनै आय नै 'आबूगढ़ तीर्थ ताजा' आ ढाळ कहिवा लागौ। तिण मैं गाथा—आबूगढ़ तीर्थ नहीं जुहार्‍यौ।

तिण ऐहल जमारौ हार्‍यौ।

जद स्वामीजी बोल्या—आबूगढ़ थे जुहारचौ कै नहीं जुहार्‍यौ ?

जद छाजूजी बोल्यौ—महाराज ! म्हे तौ आबूगढ़ कोई जुहार्‍यौ नहीं।

जद स्वामीजी बोल्या—इण लेखै थांरौ जमारौ तौ ऐहल ईज गयौ।

जद छाजूजी बोल्यौ—बापजी ! म्हारा गळा मै ईज घाली।

२३९. इसी थांरो दया

पुर माहै भांनौ खाभीयौ स्वामीजी कनै आय बोल्यौ—महाराज भीलोड़ा मै दया पाळी। सात रुपीयां रा पकवांन मुरमुरीयां आदि हुंता तिण मै सोलह जणा चूकाय गया। कळाकंद बधीयौ सो आथण रा दही मै न्हाख सबर-सबर सबोर गया।

जद स्वामीजी कह्यौ—तूं कहितौ ई इसो लोळपणौ करै है सो खातां किसोयक अनर्थ कीधौ हुवैला।

जद भांनौ खाभीयौ बोल्यौ—म्हारे साथै वर्ष पांचेक रौ डावरौ थो सो उणनै तौ हाथ पकड़ उठाय दियौ—काले औ कीसौ उपवास करेलौ इम कहि नै।

जद स्वामीजी बोल्या—थे तौ इसौ आहार कीयौ है सो स्त्रीयादिक थी अकार्य ही कर उभौ रहै अनै डावड़ौ तौ इसौ काम करतौ नही। सो तोनें तौ पोख्यौ नै उणनै उठाय दियौ सो इसौ थांरो धर्म नै इसी थांरी दया है।

२४०. कटार कोई पूणी नहीं है

भीखणजी स्वामी रुघनाथजी कनै घर छोड़वा त्यार थया जद स्वामीजी री भूआ बोली—दिख्या लीधी तौ हूं कटारी खायनै मर जासूं।

जद घर मैं छतां स्वामीजी बोल्या—पूणी नहीं है सो पेट मै घालै। कटारी घणी करली है सो इसी बात क्यूं कर।

२४१. जद एक हो जावै

भेषधारी कहै—म्हे एक छां। अनै भीखणजी न्यारा है।

जद किण ही कह्यौ—थांरे मांहोमाहि वणै नहीं नै भीखणजी सूं चरचा रौ काम पड़्यां एकै क्यूं थावौ।

जद भेषधारी बोल्या—रजपूतां रै भायां-भायां रै तौ माहोमाहि वणै नहीं पिण चोर नै काढ़वा सर्व एकै होय जावै।

ए बात स्वामीजी सुणीनै दृष्टंत दीयौ—वास-वास रा कुतां रै माहोमाहि तौ कजीयौ। उण वास रा कुत्ता दूजा वासवाळा नै आवा दै नहीं। दूजा वासवाळा स्वान उण वासवाळा नै आवा दे नहीं। आपस मै माहोमाहि कजीया घणा करै। अनै हाथी नीकळ्यां सगळा भेळा होयनै भूसवा लाग जावै। त्यां स्वान रै माहोमाहि कद एकौ थौ? पिण हाथी री वेळां सर्व एकै होय जावै।

इसौ स्वान रौ स्वभाव। ज्यूं भेषधारी माहोमाहि उवे तौ उणांरी श्रद्धा खोटी कहै। उवे उणांरी श्रद्धा खोटी कहै, माहोमाहि अनेक बोलां रौ फेर आपस मै केयक साध पिण न सरधै। अनै साधां सूं चरचा रौ काम पड़ै जद स्वान ज्यूं एकै होय जावै।

२४२. ठंडो रोटी जीव क अजीव

केयक तौ लाळ वाळी ठंडी रोटी मै बेंद्री जीव कहै। पगां मै बाळा ज्यूं रोटी में लाळा, ज्यूं कहै अनै केयक टोळा वाला ठंडी रोटी बहिर नै परही खाए छै। जिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—कोई मूठी भर्यां चणां गोहूं खावै तौ उणनै साधु कहीजै के असाधु कहीजै?

जद ते बोल्या—गोहूं खाए तिणनै तौ असाध कहीजै।

जद स्वामीजी बोल्या—गोहूं खाए तिणनें असाधु कहीजै लटां खाए जिणनें साधु किम कहियै। जे ठंडी रोटी में जीव कहै त्यांरे लेखे ठंडी रोटी खाए ते लटां रा खाणहार। ते लटां रा खाणहार नें साधु किम कहियै। इण न्याय ठंडी रोटी में जीव कहै त्यांरै लेखै ठंडी रोटी खावणहार असाध ठहर्या।

अनै जे ठंडी रोटी खाए त्यांनें पूछीजै—झूठ बोलै ते साध के असाध?

जद ते कहै असाध।

जद स्वामीजी बोल्या—थे तौ ठंडी रोटी नै अजीव कहौ अनै उवे बेइंद्री जीव कहै। इम थांरै लेखै इज झूठाबोला। उणां नें कहीजै—त्यां झूठाबोला नै साधु किम कहीजै?

तथा थे तौ ठंडी रोटी नै अजीब कहो अनै उवे ठंडी रोटी मै जीव कहै।

अनै अजीव नै जीव सरधै तिण नै मिथ्यात्वी कह्या छै। इम थांरे लेखै ठंडी रोटी मै जीव कहै त्यानें मिथ्यात्वी कहीजै।

इम उणां रै लेखै उवे असाध अनै उणांरै लेखै उवे असाध। अनै मुख सूं कहै म्हे माहोमाहि साध सरधां छां। एहवौ त्यांरै मिथ्यात्व रूपीयौ अंधारौ घट मै छै।

२४३. जोड़ै ते आछो कै तोड़ै ते आछो

किणही कह्यौ—भीखणजी ! थे तौ जोड़ा घणी करौ।

जद स्वामीजी बोल्या—एक साहुकार रै दो बेटा। एक तौ जोड़ै ने एक तोड़ै गमावै। हिवै जोड़ै ते आछौ, कै तोड़ै गमावै ते आछो ? संसार नै लेखै जोड़ै तिणनै आछो कहै। तोड़ै गमावै तिणनै आछौ न कहै। इम कहीं कष्ट कीधौ।

२४४. यूं जोड़ा छां

आगरीयां मै प्रतापजी कोठारी बोल्यौ—स्वामीनाथ ! आप जोड़ां किसतरै करौ छौ।

जद स्वामीजी एक टोपसी में सपेतो हुंतो इतलै बायरो वाज्यो। एहवौ प्रस्ताव देख नै आप गाथा जोड़ता थका ईज बोल्या—

न्हानी सी एक टोपसी
माहे घाल्यौ सपेतौ।
जत्न घणा कर राखजो।
नहीं तौ पड़ैला रेतो।।१।।

ए गाथां जोड़ता बोल्या—यूं जोड़ा छां। जद प्रतापजी सुणनै घणौ राजी हुऔ।

२४५. मोनै साता उपजावै

श्रीजीदुबारा मैं छपना रै वर्स एक दादूपंथी आयौ। स्वामीजी रौ बखांण सुणनै घणौ राजी हुऔ। सुणतां-सुणतां एक दिन स्वामीजी नै कहै—आप श्रावकां नै कहो सो मोनै साता उपजावै।

जद स्वामीजी बोल्या—श्रावकां नै कहिनै तोनै जीमावौ, भावै पात्रा माहि थी काढ नै देवौ। ग्रहस्थ नै कहिणो हुवै तौ रोटयां बंधती वहिरनै ईज तोनें परही देवां।

जद दादूपंथी बोल्यौ—तौ थांरे श्रद्धा लोकां नै वरजवा री ना कहिवा री है।

जद स्वामीजी बोल्या—देतां नै ना कहौ भावै थांरो खोसल्यौ।
पछै दादूपंथी चालतौ रह्यौ।

२४६. थांने धन है

पोता नीं महिमा बधारवा छळ सूं बोलै ते ओळखायवा अर्थे स्वामीजी दृष्टंत दियौ—किण हि बेलौ कीयौ। ते आप रौ बेलौ चावौ करवा उपवास-वाळा रा गुण करै—तूं धन है सो इण करली ऋतु मैं उपवास कीयौ है।

जद उपवासवाळौ बोल्यौ—म्हे तौ उपवास ईज कीयौ है, पिण थे बेलो कीधौ है सो थांने धन है।

इम छल वचन करी आप रौ बेलों चावौ करै ते मानी अहंकारी जाणवौ।

२४७. कठे दर्शन देवूं ?

रुघनाथजी री मा पिण घर छोड़नै उणां मै भेष लीयो हूंतौ। सो डील मै कारण पड्यौ। जद रुघनाथजी बोल्या—भीखणजी संसार रै लेखै म्हारी मां नै दर्शन दीजौ। जद स्वामीजी दर्शन देवा गया। थानक जायनै त्यां आर्या नै पूछ्यौ।

जद आर्या कह्यौ—उवै तौ गोचरी गया। जद स्वामीजी पाछा आया।

जद रुघनाथजी कह्यौ—थे दर्शन दीया ?

जद स्वामीजी बोल्या—किसी ठीक किण मेड़ी ऊपर गोचरी करै, सो हूं कठै दर्शन देवूं ?

आ बात टोळा माहि थकां री छै।

२४८. धरम हुवै कै पाप ?

केई हिंसाधर्मी कहै—एकेंद्री विचै पंचेंद्री रा पुन्य घणा तिण सूं एकेंद्री मार पंचेंद्री बचायां धर्म घणौ हुवे।

जद स्वामीजी बोल्या—एकेंद्री थी बेंद्री रा पुन्य अनंत गुणा। बेंद्री थी तेंद्री रा पुन्य अनंत गुणा। चउरेंद्री थी पंचेंद्री रा पुन्य अनंत गुणा। अनै कोई पंचेंद्री मरतौ हुवै तिणनै पइसाभर लटां खवाय नै बचायौ तिणनें धर्म हुवै कै पाप हुवै ? इम पूछ्या जाव देवा असमर्थ थयौ।

स्वामीजी बोल्या—जिम बेंद्री मार पंचोंद्री बचायां धर्म नहीं तिम एकेंद्री मार पंचोंद्री बचायां धर्म नहीं।

२४९. म्हे इसो काम न करावां

हिंसाधर्मी इम कह्यौ—आचार्य उपाध्यायादिक बड़ौ साधु हुंतौ ते विषय रौ बाह्यौ ग्रहस्थ होयवा लागौ। जद कोई श्रावक आपरी बहिन बेटी सूं अकार्य कराय नै पाछौ थिर कीधौ। तिण रौ बड़ौ लाभ हुवौ।

जद स्वामीजी बोल्या—थांरा गुरु भ्रष्ट हुंता हुवै तौ थांरी बहिन सूं इसौ कांम करावौ कै नहीं ?

जद ते बोल्या—म्हे तौ इसौ काम न करावां।

जद स्वामीजी बोल्या—थे इण बात रौ धर्म कहौ तौ इसौ कार्य क्यूं न करावौ। थे इसौ कांम न करावौ तौ बीजा रै बहिन बेटी किणरै ऊगलतू पड़ी है।

इसी ऊंधी परूपणा तौ कुशीलीया कुपात्र हुवै सौ करै।

२५०. पानै पड्यौ सो ही खरो

अढाई सौ बेला आदि तप पूरौ थयां पछै आप-आप री सामग्री मै लाडू दरावै छै।

जद स्वामीजी बोल्या—ए आपरै मुतलब लाडू दरावै छै। जांणै म्हांनै ई वहिरावसी।

जद किण ही कह्यौ—सामीनाथ अै लाडू किसा सगलाई वहिरै छै।

जद स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—एक साहुकार री बेटी परणीजै जद चंवरी मै ब्रांह्मण वेद पाठ भणतौ पोता री डाबरी कनै घी चोरावा री धुन उठाई—घी चोरे, घी चोरे, घी चोरे।

जद डावरी बोली—स्यां मै चोरूं, स्यां मै चोरूं, स्यां मै चोरूं, स्यां मै चोरूं।

जद ब्रांह्मण बोल्यौ—कोरूं करवूं, कोरूं करवूं, कोरूं कवूं, कोरूं करवूं।

जद डाबरी बोली—सुस जासी, सुस जासी, सुस जासी, सुस जासी।

जद ब्राह्मण बोल्यौ—तुम्हारा बाप नौ स्यूं जासी, तुम्हारा बाप नौ स्यूं जासी, तुम्हारा बाप नौ स्यूं जासी, तुम्हारा बाप नौ स्यूं जासी।

जद तिहां गीतां मै जाटणी बैठी थी ते घी चोरवा री धुन मै समझ गई।

जद जाटणी गीत मै गावा लागी—सुणजौ हौ वनरी रा हौ बाबा थांरौ घृत मूसत है।

जद ब्राह्मण जाटणी नै कह्यौ—रंडे म करी संवादं। अर्द्धो अर्द्ध समायरे।

स्वामीजी बोल्या—ज्यूं तिण ब्राह्मण कोरा करवा मै घी चोरायौ। सुस

जाअै तो पिण जांण्यौ पांनै पड्यौ सोही खरौ। जाटणी नै आधो घृत पिण देणौ ठहराय दियौ। तिम भेषधारी पिण सामग्री मै लाडू दरावै ते सर्व न वहिरावै कांयक छोहरा-छोहरी पिण खाय जावै। तौ पिण देखै पांनै पड़्यौ सोही खरौ। इम आपरै मुतळब ए रीत ठैहराइ है।

२५१. अन्यायी नै पाधरौ करै

न्याय री सीख न मांनै अनै अजोगाई अन्याय करै, तिणनै पाधरौ करवा ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ। एक साहुकार री हवेली मूंहढै रावळीयां तमासौ मांड्यौ। जद साहूकार वरज्यौ—इण ठांम तमासौ मत करौ। लुगायां बहू-बेटी सुणै थे मूंहढा सूं फीटा बोलौ। ते कारण म्हारी हवेली रै मूंहढै तमासौ मत करौ। इम समजाया पिण रावळीयां मान्यौ नहीं। तमासौ मांड्यौ। लोक ढणा भेळा हूआ। राबळीयां तांन कर रह्या।

जद साहुकार हवेली ऊपर नगारां री जोड़ी चढ़ाय छोहरा नै कह्यौ—नगारा बजावौ।

जद छोहरा नगारा बजावा लागा। जद रामत मै भंग पड़्यौ। लोक बिखर गया। रावळीयां रै हाथे दान पिण न आयौ नै भूंड़ा पिण दीठा। ज्यूं कोई न्याय री सीख न मानै अन्याय करै जद बुद्धिवंत बुद्धि कर कष्ट करै। कळा चतुराई कर अन्याई नै पाधरौ करै।

२५२. हूं पिण मनुषां नै भेळा करूं

साधु बखाण देवै। तिहां परषदा मोकळी देखनै उपगार मोकळों देखनै जद भेषधारी तथा भेषधारयां रा श्रावक साधां री निंद्या करै, लोकां नें भेळा करै, तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टांत दीयौ—किण ही साहूकार रै हाटे गराक घणा। भीड़ घणी देखनै पड़ोसी देवाल्यौ तिण नै गमै नहीं। जाण्यौ इण रै इतरी भीड़ तौ हूं पिण मनुषांनै भेळा करूं। इम विचार कपड़ा न्हांख नागौ हूऔ। नाचवा लागौ। मनुष्य तमासौ देखवा घणा भेळा हूआ।

जद औ मन मै राजी हूऔ। ज्यूं साधां कनै परषदा देखनै भेषधारी तथा त्यांरा श्रावकां नै गमै नहीं जद ते पिण कदाग्रह करै। मनुष भेळा करै।

२५३. भगवान रौ समरण कर

संवत १८५५ पाली चौमासै खेतसीजी स्वामी रै कारण ऊपनौ रात्रि दिशां रौ उलटी रौ। जद स्वामीजी हेमजी स्वामी न जगायनै खेतसीजी स्वामी रसतै पड़्या सो आप खांच पकड़नै ले आया।

स्वामीजी बोल्या—संसार नीं माया काची। खेतसीजी सरीषौ यूं होय

गयौ। पछै खेतसीजी स्वामी नै सुवांण नै सरांणा माहि थी नवी पछेवड़ी काढ नै ओढाय दीधी। थोड़ी वेळा छै सावचेत थया। मूंहढै बोलवा लागा।

जद कह्यौ—आप रूपांजी नै आछीतरै भणावजो।

जद स्वामीजी बोल्या—तूं तौ भगवांन रौ समरण कर। रूपांजी री चिंता क्या नै करै। पछै खेतसीजी स्वामी रौ पिण कारण मिट गयौ।

२५४. पांच रूपिया तौ कठीने जावै

सुपात्रदांन री कळा सीखाववा ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—किणहि गाम मै साधां चौमासौ कीधौ। एकांतर ग्रहस्थ रै अंतराय तूटै तौ दोय महिना जोग मिल्यां पांतरै-पांतरै पाव-पाव घी वहिरावै तौ चौमासा मै १५ सेर रै आसरै थयौ। ४ तथा ५ रुपीया रै आसरै थयौ। तिणमै रसांण आवै तौ तीर्थंकर गोत्र बांधै। कोई अनेक भव छेदकर देवै। अनै छकाय रा प्रतिपालक रै साता ऊपजै। अनै ग्रहस्थ रै आरा मौसर मै व्याहव मैं अनेक रुपीया लगावै तिण मैं पांच रुपीया तौ कठीनै जावै। ए शीख श्रावकां नै तारिवा भणी स्वामीजी दीधी।

२५५. बापरां रौ जमारौ बिगड़तौ दीसै है

किण ही साहूकार आरौ कीयौ। घणा गाम नेंहत्या। लोक जीमतां कांयक बारदांनौ घट गयौ। जद पर गाम रा आया ते तौ जीम्यां नहीं तौ पिण कहै—आरा जगा रा है सो घटताइ आया है बधताई आया है। वले वे हिज कहै घड़ी दो घड़ी पछै जीमसां कांई कारण नहीं। अनै एक जणौ उण साहूकार रौ द्वैषी बाजार मै आय गदरा ऊपर तौ लोटै है अनै मूंहढा सूं कहै आरौ बिगड़्यौ रे बिगड़्यौ।

जद किणही पूछ्यौ—करियावर मै गुळ गाळवा मै तौ थेई सैमल ईज हुसौ न, बारदांनौ घट्यौ क्यूं?

जद ऊ बोल्यौ—नहीं सा। म्हांनै पूछ्यौ ही कदी। म्हांनें पूछ्यौ हुवै तौ बारदांनो घटै ईज क्यूं? अने आरौ विगडै ईज क्यूं।

जद बलि उण नै पूछ्यौ—थे जीम्यां कै नहीं।

जद ऊ बोल्यौ—म्हे—तौ आछीतरै जीम लीया। पहिलाई जांणता था। इणरै बारदांनौ घटतौ दीसै है।

हिवै स्वामीजी बोल्या—इसा पूतला कुपात्रां नै पोख्या सो आरौ कांई बिगड़ै बापरां रौ जमारौ बिगड़तौ दीसै है।

२५६. और ही घणी चरचा है

आमेट मै पुर रा बाइ भाइ वांदवा आया। त्यां चरचा करतां

पूछ्यौ—छह प्रज्या दस प्राण जीव कै अजीव ?

जद कोई तो जीव कहै । कोई अजीव कहै । इम आपस मै तांण घणी करवा लागा । पछै स्वामीजी नै आयनै पूछा कीधी—महाराज ! छह प्रज्या दस प्रांण जीव कै अजीव ?

जद स्वामीजी बौल्या—जिण चरचा में भर्म हुवै ते चरचा करणी ज नहीं और ही घणी चरचा है । इम कही समझाय दीया । तांण मेट दीधी ।

२५७. संसार रै मोह को ओळखांण

संसार नौ मोह औळखावा स्वामीजी दृष्टांत दौयौ । कोइ परण्यां पछै बाल अवस्था मै आउषौ पूरौ कर गयौ । जद लौक मै घणौ भयंकार मच्यौ । लोक हाय-हाय करता कहै—बापरी छोहरी रौ कांइ घाट हुसी । बापरी १२ वर्स री रांड हुई सो आ दिन किण रीत सूं काटसी । इम विलाप करै ।

स्वामीजी बोल्या—लोक तौ जांणै ए दया करै है पिण अंतौ उणरा कांम-भोग बांछै है । जाणै ऊ जीव तौ रह्यौ हुंतौ तौ २।४ डावरा डावरी हुंता । आ सुख भोगती तौ ठीक इम बांछै पिण या न जांणै आ घणा काम-भोग भोगवती माठी गति मै जाती । जिणरी चिंता नहीं तथा ऊ किसी गति मै गयौ तिका पिण चिंता नहीं । ज्ञानी पुरुष हुवै ते तौ मरण जीवण रौ हर्ष सोग न आणै ।

२५८. संतोष आय गयौ

हेमजी स्वामी घर मै छतां एक बहिन थी तिणनै मामौ आय मौमाळ ले गयौ । हेमजी स्वामी चिंता करवा लागा । भीखणजी स्वामी कनै आय कह्यौ—स्वांमीनाथ ! आज तौ मन उदास घणौ । बहिन री मन मै घणी आवै । असवार लारे मेलनै पाछी बोलाय लेऊ, मन मै तौ इसी आवै ।

जद स्वामीजी बोल्या—इसा संसार नां सुख काचा । संजोग रौ विजोग पड़ जावै । शारीरिक मानसीक दुख ऊपजै जरै भगवंत मोक्ष रा सुख सास्वता स्थिर कह्या है, जठै सुखां रौ कदेइ विरहौ पड़ै ईज नहीं ए स्वामीजी रा वचन सुणनै संतोष आय गयौ ।

२५९. मन मै आई तौ खरी

एक आर्य्या पाली मै बेलौ कीयौ । पछै पारणा री आज्ञा मांगनै आरा वाळा रा घर सूं दूजै दिन पारणौ करवा लापसी आणौ । स्वामीजी नै दिखाई । पूछै स्वामीजी विचारचौ नै पूछ्यौ—थे बेलौ कीयौ सो इण लापसी रे वास्ते ईज न कीधौ है ? साच बोल ।

जद आर्या बोली—स्वामीनाथ ! मन मै आई तौ खरी ।

जद स्वामीजी और साध साधव्यां नै आरा रै दूजै दिन जाणौ वरज दीयौ । आचार्य कनै साध-साध्वी त्यांरी वरजणा न कीधी ।

२६०. ग्रहस्थ रै भरोसै रहिणौ नहीं

संवत १८५७ स्वामीजी पुर चौमासौ कीधौ । सौ फौजवाळा आवता जाणनै स्वामीजी विहार करवा लागा ।

जद भाया बोल्या—आप विहार क्यूं करौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—आगै अठै टोळावाळां चोमासौ कीधौ । फौज रा जोग सूं गाम रा लोक कई परहा गया ।

पिण टोळावाळा बोल्या—म्हे तौ चौमासा मै बिहार न करां । इसी अड़बी सूं विहार न कीधौ । पछै फौज आई टोळावाळा नागोरचां री गुवारी मै जाय रह्या । त्यांनें पकड़नै कह्यौ—माल बतावौ । मरचां री धूई दीधी । मरचां रौ तोबड़ौ मूंहढै बांध्यौ । परीषह घणौ दीधौ । तिण कारण विहार करण रा भाव है । रहिवा रा भाव नहीं ।

जद भाया बोल्या—महाराज ! आप विहार मत करौ । म्हे आपनें आछी तरै लेइ जावसां । आपनै मेलनै जावां नहीं । जद स्वामीजी सुसता रह्या ।

पछै फोज रौ हळबळौ पड़चौ जद भाया तौ रात्रि रा कानी-कानी न्हास गया । प्रभाते स्वामीजी पिण विहार करनै गुरला पधारचा । केई भाया पिण गुरलां आया । त्यांनें स्वामीजी कह्यौ—थें कहिता हूंता म्हे आपनै लेइ नै जासां पिण थे तो न्हास नै उरहा आया । जद भाया बोल्या—म्हे मगरी ऊपर ऊभा देखता था । उवे स्वामीजी पधारै, उवे स्वामीजी पधारै ।

जद स्वामीजी बोल्या—अळगा ऊभा देख्यां कांई हुवै । थे कहिता था म्हे साथै रहिसां पिण साथै तौ रह्या नहीं । सो ग्रहस्थ रौ कांइ भरोसौ । ग्रहस्थ रै भरोसै रहिणौ नहीं ।

२६१. हूं मार्ग जाणूं छूं

नींबली सूं विहार करनै स्वामीजी चेलावास पधारै जद मार्ग पूछवा लागा । जद जैचंदजी श्रावक बोल्यौ—स्वामीनाथ ! मार्ग तौ हूं जाणूं छूं सुखे-सुखे पधारौ । आगै नीलां मै ले जाय न्हांख्या । मार्ग चोखौ लाधौ नहीं । जद स्वामीजी जैचंदजी नै घणौ निषेध्यौ—तूं कहितौ थो नी—हूं मार्ग जांणूं छूं ।

जद जैचंदजी बोल्यौ—हूंतौ मार्ग चूक गयौ ।

स्वामीजी बोल्या—ग्रहस्थ रे भरोसै रहिणौ नहीं ।

२६२. इसा जगत मैं बुद्धिहीण

दूजौ कोई जाब देवै तिणमैं ई न समझै अनै आपरी भाषा रौ ई आप अजाण ते ऊपर स्वामीजी दृष्टांत दीयौ । एक बाई बोली—म्हारौ भरतार अखर लिखै ते बीजा सूं बंचै नहीं ।

जद दूजी बाई बोली—म्हारौ भरतार अखर आप लिखै सो आप रा लिख्या आप सूं ई न बंचै । इसा जगत में बुद्धिहीण । ज्यूं केइ आपरी भाषा रा आप ही अजाण । त्यांनै केवली भाष्या धर्म री ओलखणा किस तरै आवै ।

२६३. भाठौ न्हाखै तौ ?

साधू गोचरी मैं आहार मंगायां सूं बधतौ ल्यायौ ।
जद स्वामीजी पूछ्यौ—आहार बधतौ क्यूं आण्यौ ।
जद ऊ बोल्यौ—जोरावरी सूं न्हांख दीयौ ।
जद स्वामीजी बोल्या—जोरावरी सूं भाठौ न्हांखै, तौ लेवौ कै नहीं ?

२६४. एकेन्द्री कद कह्यौ ?

एकेन्द्री मार पंचेंद्री पोष्यां लाभ है इम किण हि कह्यौ ।

जद स्वामीजी बोल्या—थारौ अंगोछो किणहि खोस नै ब्रांह्मण नै दीयौ तिण मैं लाभ है कै नहीं ? अथवा किण हि रौ खोडौ खोस नै लूंटाय दीयौ तिण मै लाभ है कै नहीं ?

जद कहै—औ तौ लाभ नहीं । उण धणी रा मन बिना दीधौ तिण सूं ।

जद स्वामीजी बोल्या—एकेंद्री कद कह्यौ म्हारा प्राण लूंटनै ओरां नै पोखो ।। इण न्याय एकेंद्री नीं चोरी लागी तिण सूं लाभ नहीं ।

२६५. विलापात किया कांई हुवै ?

दुख ऊपनां लोक विलापात करै तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टांत दीयौ—किण ही साहूकार गोहां रा खोडा भरया । ऊपर दर लीप नै तीखा किया । एक पाड़ोसी तिण पिण खोडा मै धूल खात कचरौ न्हाखनै दर लीप नै ऊपर साफ कीधौ । गोहां रा भाव आया । एक-एक रा दोय-दोय हुवै ।

साहूकार खोड़ौ खोल बेचवा लागौ । पाड़ोसी पिण गोहां री साई लेइ गराक साथै ल्याय खोड़ौ खोल्यौ । माहै खात नीकल्यौ । रोवा लागौ । देखा देख लोग पिण रोवा लागा । देखौ बापरा रै गोहूं चाहीजै नै खात नीकल्यौ । इम कहि रोवा लागा ।

जद किण ही समझणै पूछ्यौ—अरे थैं माहै घाल्यौ कांइ थो। जद रोवतौ बोल्यौ—म्हैं घाल्यौ तौ यो हीज थौ।

जद ऊ बोल्यौ घाल्यो खात तौ गोहूं कठासूं नीकलसी? ज्यूं जीव जिसा पुन्य पाप बांध्या तिसा उदय आवै। विलापात कीयां कांई हुवै।

२६६. दान-दया उठाय दीधी

चेलावास रा जूंझारसिंहजी ठाकुर, त्यां कनै रुघनाथजी आय बोल्या—म्हारै चेलौ भीखण है सो बकरा बचायां पाप कहै है। दांन-दया उठाय दीधी।

जद स्वामीजी आय बोल्या—ठाकरां, कलाल रा घर नौ पांणी साधु नै लेणौ कै नहीं।

जद ठाकर बोल्या—कलाल रा घर नौ तौ साधु नै लेणौ नहीं।

जद स्वामीजी बोल्या—इणां नै पूछौ ऐ लेवै कै नहीं। जद रुघनाथजी ऊठ नै चालता रह्या।

२६७. भूठौ अर्थ घालणौ कठे ?

गूंदोच मैं रुघनाथजी स्वामीजी सूं चरचा करतां आवसगसूत्र काढनै बतायौ। ओ देखौ काउसग भांगनै ई उंदरा नै मिनकी कनां सूं छोड़ाय देणौ।

जद स्वामीजी उणांरा टोळा माहै थकां सं० १८११ रा साल रौ आवसग काढ बतायौ। ओ थांरा देखा देख लिख्यौ। तिण मैं तौ औ अर्थ कोई मंड्यौ नहीं।

जद रुघनाथजी बोल्या—म्हैं तौ ओर नी देखादेख ओ अथै घाल्यौ है।

जद स्वामीजी बोल्या—इसौ भूठौ अर्थ घालणौ कठे है?

जद पोतीयाबंधणीयां बोली—म्हारा पात्रा मै ऊन्हौ पांणी सो ल्यौ इण मै पांना परहा गाळौ। जद रुघनाथजी नै घणौ कष्ट थयौ। जिन मारग रौ उद्योत थयौ। घणा लोक समज्या।

२६८. मुदै बोल बैठा

स्वामीजी सूं कोइ चरचा करतां मुदै श्रद्धा रा बोल बैठा तौ पिण बोल्यौ—आप कही सो बात तौ ठीक छै। पिण केई बोल पूरा गाह्य मै आवै नहीं। जद स्वामीजी दृष्टांत दीयौ। दस सेर चावलां रौ चरू चूला ऊपर चढायां ऊपरला चोखा सीज्या हाथ सूं देख्यां तौ सैणो हुवै ते हेठला पिण सीज्या जाणै अनै मूर्ख हुवै ते जाणै ऊपरला तौ सीज्या पिण हेठै कोरा नहीं

—इम विचार हेठै हाथ घालै तौ हाथ बळ। ज्यूं चतुर हुवै तो मुदं बोल बैठां जांणै बीजा बोल पिण साचा ईज हुसी।

२६९. कोरो सुणीयां न जाय

स्वामीजी सूं चरचा करतां न्याय निरणो बतायां पिण मानै नहीं। जद स्वामीजी बोल्या—किणहि रोगी नै वेद ओषध पावा लागौ। कहै—ओ ओषध पी जा, रोग जातौ रहसी।

जद रोगी बोल्यौ—मूंहढा मै तौ घालूं नहीं। म्हारा मौरां मै कूढ़ दौ। ओषध चोखौ है तौ मोरां मै कूढ़्यांई रोग परहो जासी।

जद वैद बोल्यौ—पीधां बिना तौ रोग न जाय। ज्यूं सूत्र रौ वचन साधां रौ वचन सरध्यां मिथ्यात्व रूप रोग जाय। पिण सरध्यां बिनां कोरौ सुणीयां न जाय।

२७०. आ बा ही है।

सं० १८५४ रे वर्स चंदू वीरां नै टोळा बारै काढी। जद पींपाड़ मै आया नै हेमजी स्वामी विराज्या तिण हाट घणा भेषधारी रा श्रावक सुणतां साध आर्य्यां रा अवगुणवाद बोलवा लागी।

जद लोक बोल्या—या देखौ यांरा टोला माहै हूंती सो अबे भीखणजी रा टोळा रा अवर्णवाद बोलै है।

जद स्वामीजी साहमली हाट सूं उठनै पधारनै बोल्या—आ कहै तिण रौ थे साच मांनौ हो तो आ आगै रुघनाथजी रा टोळा मै फतूजी री चेली हुंती। जद फतूजी रै माथै दोष रौ मेजर पड्यौ जद पैहली तौ आ चंदूजी यूं कहीती थी सूर्य मै खेह हुवै तौ म्हारी गुरुणी में खेह हुवै। पछै इण हिज, बाई रौ ओढवा रौ चोसरौ कपड़ौ जाच गुरुणी नै ओढाय नै नवी दिख्या दराइ। तिका आ बा ही है। ए स्वामीजी रौ वचन सुणनै लोक कांनी-कांनी बिखर गया। चंदूजी पिण चालती रही। तिण रौ बाप विजैचंद लूणावत आदि न्यातीलां पिण तिण नै अजोग जाणी।

२७१. सैंहदी जागां छूटै नाहीं

केईकां रै श्रद्धा बैठी तौ पिण कुगुरु रौ संग छोड़ै नहीं। तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ। गाड़ा रा बेहूं चीला रै बीच मै सुसलै घर कीधौ। आवतां जातां माथां में डसी री लागै। तौ पिण ठिकाणौ छोडै नहीं।

इतरै दूजै सुसलै कह्यौ—अठै माथा मै लागै सो या जायगा परही छोड़ो। जद सुसलो बोल्यौ—सैंहदी जायगा छूटै नहीं।

ज्यूं साची श्रद्धा री रहिस बैठी तौ पिण आगला सेंहदा कुगुरु त्यांरौ संग छोडै नहीं ।

२७२. हिंसा रा कामी

सं० १८५५ पाली मैं हेमजी स्वामी टीकमजी सूं चरचा करतां एक मेसरी बोल्यौ—सर्प नै च्यार पइसा देई काळबेल्या कनां थी छुड़ायौ तिण रौ कांई थयौ ?

जद टीकमजी बोल्यौ—चोखौ धर्म थयौ ।

जद ऊ मेसरी बोल्यौ—ते सर्प पाधरो ऊंदरां ना बिल माहै गयौ ।

जद टीकमजी बोल्यौ—मांहै ऊंदरौ हुसी नहीं तौ ।

ए बात हेमजी स्वामी स्वामीजी नै आय कही ।

जद स्वामीजी बोल्या—किणहि कागला नै गोळी बाही । कागलौ उड़ गयौ तौ कागला रौ आउषौ ऊभौ । पिण गोली वावणवाळा नै तौ पाप लाग चूकौ । ज्यूं साप छोडायौ ते साप ऊंदरां ना बिल माहै गयौ । माहै ऊंदरौ नहीं तौ ऊंदरा माथे भाग । पिण सर्प नै छोड़ावण वाळौ तौ हिंसा रौ कामी ठैहर चूकौ ।

भीखणजी स्वामी हेमजी स्वामी नै कह्यौ इसौ जाब देणौ ।

२७३. बखांण सीख

हेमजी स्वामी दिख्या लेइ दसवैकालिक सीख्या । पछै उत्तराध्ययन सीखवा लागा ।

जद स्वामीजी बोल्या—बखांण सीख । कंठकला है तिण सूं । मुदै उपगार तौ बखाण रौ है । मोटा पुरसा रै इसी उपगार नीं नीत ।

३७४. बखाण थोड़ा

हेमजी स्वामौ नें भारमलजी स्वामी कह्यौ—म्हे टोळा वाळा माहै थी नीकल्या । जद केतला एक वर्सां तांई चौमासा मै अंजणा देवकी रौ बखाण तीन-तीन बार बांचता । बखाण थोड़ा तिण कारण ।

२७५. नदी रै दो तीरां पर

सं० १८२४ भीखणजी स्वामी तौ चौमासौ कंटालीयै कीधौ । भारमल जी स्वामी नै बगड़ी करायौ । बीच मैं नदी वहै सो मोटापुरुषां पहिला कहि राख्यौ तिण सूं नदी री ऊली तीर तौ स्वामीजी पधारता अनै पैली तीर भारमलजी स्वामी पधारता । माहोमाहि वातां कर हेतु युक्ति सीख मति

आछी तरै दर्शन देई पाछा कंटालीयै पधार जाता । अनै भारमलजी स्वामी बगड़ी पधारता । आ बात भारमलजी स्वामी कहिता था ।

२७६. म्हे या न जाणता

भीखणजी स्वामी हेमजी स्वामी नै कह्यौ । म्हे उणानै छोड्या जद पांच वर्स तांइ तौ पूरौ आहार न मिल्यौ । घी चोपर तौ कठै । कपड़ौ कदाचित् वासती मिलती ते सवा रुपीया री । तौ भारमलजी स्वामी कहिता पछैवरी आपरै करौ । जद स्वामीजी कहिता—एक चोलपटौ थांरै करौ एक म्हांरै करौ ।

आहार-पांणी जाचनै उजाड़ मै सर्व साध परहा जावता । रूंखरा री छायां तौ आहार पांणी मेलनै आतापना लैता, आथण रा पाछा गांम मै आवता ।

इण रीते कष्ट भोगवता । कर्म काटता । म्हे या न जांणता म्हांरौ मारग जमसी, नै म्हांमै यूं दिख्या लेसी नै यूं श्रावक श्राविका हुसी ।

जाण्यौ आत्मा रा कारज, सारसां मर पूरा देसां इम जाणनै तपस्या करता ।

पछै कोइ-कोइ रै सरधा बैसवा लागी । समझवा लागा ।

जद थिरपालजी फतैचन्दजी आदि माहिला साधां कह्यौ—लोग तौ समझता दीसै है । थे तपसा क्यूं करौ । तपसा करण मै तौ म्हे छां ईज । थे तौ बुद्धिवांन छौ सो धर्म रौ उद्योत करौ । लोकां नै समझावौ । जद पछै विशेष खप करवा लागा । आचार अनुकंपा री जोड़ां करी व्रत अव्रत री जोड़ा करी । घणा जीवां नै समझाया । पछै वखांण जोड्या ।

२७७. थारै लेखण काढवा रा त्याग है

बालपणा मै भारमलजी स्वामी लिखणौ करता जद बार-बार लेखण कढायवौ करै । पछै भीखणजी स्वामी बोल्या—थारै लेखण काढवा रा त्याग है । जद आफेइ काढ़वा लागा । इम करतां-करतां लेखण काढवा री कळा घणी चोखी आई ।

२७८. टंटौ मिट्यौ

किण हि रै रोगादिक ऊपनां हाय तराय करै जद स्वामीजी बोल्या—यूं न करणौ । रोगादिक ऊपनां गाढौ रैहणो ।

ज्यूं किण हि रै माथै दैणौ हो । देवा रा परिणाम नही हुंता । पिण पैलै जबरी सूं लीया । जद मूर्ख तौ विलाप करै । समझणौ हुवै ते देखै दैणौ मिट्यौ । पछै ई दैणा पड़ता तौ पैहला टंटौ मिट्यौ । माथा रौ ऋण

मिटचौ। ज्यूं रोगादिक ऊपनां सैणौ जांणै बंध्या कर्म भोगव्यां टंटौ मिटचौ। यूं जांणनै विलाप न करै।

२७९. वरतारौ समदृष्टी देवता रौ

स्वामीनाथ बखांण मै भैरू शीतला नै निषेधै। जद हेमजी स्वामी बोल्या—आप देवता नै निषेधौ सो दोष करैला।

जद स्वामीजी बोल्या—वरतारौ समदृष्टी देवता रौ है सो फोड़ा पाड़ै तौ समदृष्टी इंद्र वज्र री देवै तिण सूं डरता साधां नै दुख न देवै।

२८०. इसौ साध रौ मारग

स्वामीजी बोल्या—मूंओ मनुष्य कांम आवै तौ साधु संसार लेखै गृहस्थ रै काम आवै। साधु कनै कोई आयौ। पांच रुपीया भूल गयौ। दूजौ ले गयौ। साधु जांणै इणरा रुपीया है। अनै ऊ ले गयौ, आय नै पूछै—म्हारा—रुपीया अठै था सो कुण ले गयौ? तौ साधु बतावै नहीं। एक धर्म सुणावा रौ सींजारौ है। बाकी सावद्य कांमां रै लेखै साधु गृहस्थ रै कांम आवै नहीं, इसौ साध रौ मारग है।

२८१. तिण मै दोष नहीं

भीखणजी स्वामी ग्रहस्थ री थकी पाड़िहारी सूई कतरणी छुरी रात्रि एक तथा घणा दिना रात्रि राखता।

जद भेषधारी बोल्या—साध नै सूई रात्रि राखणी नहीं। छुरी कतरणी पिण रात्रि राखणी नहीं।

जद स्वामीजी बोल्या—बाजोट मै लोह रा खीला है। तथा शंख पत्थर पत्थर ना ओरीया पिण पाड़िहारा रात्रि रहै छै। तथा लोह रा हमांमदस्ता आदि पिण पाड़िहारा रात्रि ग्रहस्थ रा थका रहै, तिण मै दोष नहीं। तौ सूई कतरणी छुरी ए पिण गृहस्थ रा थका पाड़िहारा रात्रि रहै, तिणमै दोष नहीं।

२८२. संथारौ करणौ

भेषधारी बोल्या—सूई भागै तो तेला रौ प्राछित आवै।

जद स्वामीजी बोल्या—थांरै लेखै बाजोट भागै तौ संथारौ करणौ।

२८३. वांदणा बगड़ै ज्यांरा गवीजै

भेषधारी बोल्या—भीखणजी थे आचार नीं जोड़ां गावै है सो बांदणां

गावै है।

जद स्वामीजी बोल्या—वांदणा तौ बगड़ै ज्यांरा गवीजै है। शुद्ध रीत प्रमाणै चालै ज्यांरा वांदणा कोई गवीजै नहीं।

२८४. घर तौ लूट लियौ नै माथै वले डंड

पींपार मै भीखणजी स्वामी गाथा कही

अचित वस्त नै मोल लरावै।
सुमति गुप्त हुवै खंड़ जी।
महाव्रत तौ पाचूंइ भागै।
चौमासी रौ दण्ड जो
साध म जाणौ इण चलगत सूं।

आचार की चौपाई, ढाल १ की पांचवीं गाथा।

आ गाथा सुणनै मौजीरांमजी बौहरौ बोल्यौ—अरे जसू उरहौ आव रे! अरे जसू उरहौ आव रे। घर तौ लूंट लीयौ ने माथै वले डंड करै। ज्यूं भीखणजी महाव्रत तौ पांचूंई परहा भागा कहै। अनै वले चौमासी रौ दंड कहै छै।

जद स्वामीजी बोल्या—पांच महाव्रत भागा पछै चौमासी रौ दंड न कह्यौ है। इहां तौ इम कह्यौ—महाव्रत पांच भागै पिण कतरा भागै? चौमासी रो दंड आवै जितरा भागै इम कही समझाया।

२८५. वर्तमान काळे मूंन

केई कहै सावद्यदांन मै भगवान मूंन कही है सो वर्तमान काळ विना पिण मूंन राखणी। पुन्य पाप न कहिणौ। तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—तीन जणां रै इसी सरधा। एक जणौ सावद्यदान मै पुन्य सरधै। एक एक जणौ सावद्यदान मै मिश्र सरधै। एक जणौ सावद्यदान मै पाप सरधै। यां तीनूं जणां अभिग्रह कियौ आ संका मिटै तौ घर मै रहिवा रा त्याग। अबे ए संका काढवा दरबार मै तौ जाए नहीं। अैतौ संका काढवा साधां कनै ईज आवै। हिवै साधां नै पूछ्यां साधु कहै म्हांरै मूंन है। तौ त्यांरी संका किम मिटै। इण लेखै वर्तमांन काळे मून। सुयगडांङ्ग श्रु० १ अ० ११ तथा श्रु० २ अ० ५ अर्थ मै मून कही। अनै उपदेश में भगवती श० ८ उ० ६ भगवान गौतम नै कह्यौ—तथारूप असंजती नै सचित्त अचित्त सूझतौ दीयांएकंत पाप इण—न्याय उपदेश मै छै जिसा फल बताय समझाय साधपणौ परहौ देवै।

२८६. सामायक नै धको देई पाड़ै है

केइ कहै—साधु सामायक पड़ावै नहीं तौ पाड़णी सीखावै क्यूं ?

जद स्वामीजी बोल्या—साधु सामायक पड़ावै नहीं। सो किसौ सामायक नै धको देई पाड़ै है। एक मूहूर्त्त नी सामायक कीधी। अनै एक मुहूर्त्त थयां सामायक तौ आय गई। पाड़ै सो तौ दोष अतिचार नीं आलोवणा करै है। ते आलोवणा री भगवान री आज्ञा। जिण स्यूं पाड़वा री ाटी सीखावै है। अनै वर्तमान काल मै पड़ावै नहीं। सो ते ऊठ नै परहौ जाय तिण आश्री पड़ावै नहीं। पिण दोष री आलोवणा करायां सीखायां दोष नहीं।

२८७. एहीज भाव भक्ति करसी

एक जणौ स्वामीजी सूं चरचा करतां ऊंधौ अवळौ बोलै। जद स्वामी जी नै किण हि कह्यौ—महाराज! ए ऊंधौ अंवलौ बोलै तिण सूं कांई चरचा करौ।

जद स्वामी बोल्या—नान्हों बालक समज न आई जितरै बाप री मूंछां खांचै। पिता री पाग मै देवै। पिण समज आयां पछै ऊ हीज चाकरी करै। ज्यूं साधां रा गुण न ओळख्या जितरै ए ऊंधौ अवलौ बोलै गुण ओळख्यां पछै एहीज सेवा भक्ति करसी।

२८८. अबारू टीपणा तेज है

साध राते वखाण देवै। भेषधारी पिण राते वखाण देवै। साध बाजार मै ऊतरै। देखादेख भेषधारी पिण बाजार मै ऊतरै। इम देखादेख कार्य करै। पिण शुद्ध श्रद्धा आचार विनां पाधरी न पड़ै। तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—एक साहूकार मै पोतै तौ समझ नहीं अनै पाड़ोसी नी देखादेख व्यापार करै। पाड़ोसी वस्तु खरीदै तिका वस्तु ओ पिण खरीदै। जद पाड़ोसी विचारयौ ओ देखादेख करै है कै मांहे समझ है। जद पाड़ोसी बेटा नै कहै, अबारू टीपणां तेज है, सो देसावरां सूं खरीदणा। थोड़ा दिनां मै एक-एक रा दोय-दोय हुवै है।

एक बात सुण नै साहूकार देसावर जाय नै टीपणां जूंना नवा खरीद्या। सो पूंजी रौ नास थयौ।

ज्यूं साधां री देखादेख भेषधारी पिण कार्य करै पिण शुद्ध श्रद्धा आचार विना कांई गरज पळै नहीं।

२९९. देवाळौ किम ऊतरै ?

किणहि कह्यौ—भेषधारी पिण तपसा मासखमणादिक करै। लोच करावै। धोवण ऊन्हौं पांणी पीवै। या करणी यांरी यूं ही जासी कांई ?

जद स्वामीजी बोल्या—किणहि लाख रुपीयां रौ देवाळौ काढ्यौ । पछै पइसा रौ तेल आंण्यौ तिणरौ पइसौ परहौ दीयौ यौ पइसा रौ साहूकार । रुपीया रा गोहूं आण्या नै रुपीयो परहौ दीयौ तौ रुपीया रौ साहूकार । इम पइसा रुपीया रौ तौ साहूकार थयौ पिण लाख रुपीयां रौ देवाळौ काढ्यौ तिण रौ साहूकार नहीं । ज्यूं पांच महाव्रत पचखी आधाकर्मी स्थानक निरंतर भोगवै । इत्यादिक अनेक दोष सेवै । तिण रौ प्राछित पिण नहीं लेवै । ओ मोटो देवाळौ, लोच सूं नै तपस्या सूं कठै ऊतरे ।

पछै मासखमणादिक पचखे नै चोखो पाळै ते तपसा नौ साहूकार पिण पांच महाव्रत भांग्या ते देवाळौ किम ऊतरै ?

२९०. दान मुख्य काया जोग

किणहि कह्यौ—उघाड़े मूंहढै बोलनै साध नै वहिरावै तौ वहिरी लेवै अनै एक दांणा ऊपर पण पग लागां लेवै नहीं । घर असूझतौ गिणै ते किण कारण ?

जद स्वामीजी बोल्या—साधां नै वहिरावै ते मुख्य काया रौ जोग है । तिण काया रा जोग सूं चालतां ऊठतां बेसतां अजैणा करतां वहिरावै तथा वहिरावतां फूंक देवै अनै तिणनै पहिला साधां आरे कीयौ ह्वै तौ घर असूझतौ ह्वै । अनै साधू आरे कीयौ नहीं अनै ते ऊठतौ अजैणा करै तौ ऊहीज असूझतौ थयौ ।

उघाड़े मुख बोलै ते वचन रौ जोग है, ते बोलतां अजैणा सूं घर तथा बोलणावाळौ एक ही असूझतौ नहीं ह्वै । उववाइ मैं कह्यौ— जे निंद्या करनै देवै तौ लेणौ । तौ जे निंद्या करै गाळ बोलै ते किसी जैणा करै है इण कारण बोलवारी अजैणा सूं तेह नें असूझतौ न कहीयै तिण सूं तिणरा हाथ सूं लीयां दोष नहीं ।

२९१. घी सहित घाट उरहो लीधो

सं० १८५५ रै आषाढ़ महीनै नाथजीदुवारै स्वामीजी घणा साध आर्य्यां सूं विराज्या । तिहां अजबूजी गौचरी उठ्या । किणहि घी बहिरायौ । आगै गयां एक बाई घाट वहिराय नै पूछ्यौ—थे किण री आर्य्यां ?

जद त्यां कह्यौ—म्हे भीखणजी स्वामी रा टोळा री ।

जद ते बोली—हे रांडां ! थे पैलकेई म्हारी रोटी ले गई । उरही दो म्हारी घाट । इम कहि घाट लेवा लागी ।

जद एक व्रजवासणी वरजै—हे कीकी ! अतीत नै दीयौ पाछौ मत लै हे ।

जद ते बोली—कुत्ता नै न्हांख देसूं पिण इणां कनां सूं तौ उरहौ लेसूं। इम कहि घी सहित घाट जबरी सूं उरही लीधी।

अजबूजी ए बात स्वामीजी नै आय कही।

जद स्वामीजी घणा विमासवा लागा। पछै बोल्या—इण कळिकाळ मै नहीं पिण देवै, ना पिण कहै जाणनै असूझता पिण होवै, पिण देई नै उरहो लेवै ए बात तौ नवीज सुणी।

व्रजवासणी रा कहिण थी बात गाम मै फैली।

उणरा धणी नै लोक कहै—हाटै तौ थे कमावौ नै घरे थांरी बहू कमावै। ऊ पिण मन मै लाजै। थोरा दिनां पछै राखड़ी रे दिन तौ एकाएक बेटौ मर गयौ। थोड़ा दिनां मै धणी पिण मर गयौ। जद सोभजी श्रावक तुकौ जोड्यौ।

बादर साह री दीकरी, कीकी थांरौ नांम।
घाट सहित घी ले लियौ, ठाली कर दीयौ ठांम ?

पछतावौ

कितरायक काळ पछै उणरै घरे साध गोचरी गया। वहिरायवा लागी। साधां पूछ्यौ—थारो नाम कांई ?

जद बोली—उवा हूं पापणी छूं। आर्य्यां रा पात्रा माहि थी घाट लीधी ते। कोई तौ परभव मै देखै म्है इण भव मै देख लीधा पाप ना फळ। इम कहि पछतावा लागी।

२९२- सब घरां मै गोचरी क्यूं नहीं जावौ

सं० १८५६ नाथजीदुवारा मै हेमजी स्वामी, स्वामीजी नै कह्यौ—आंपै श्रावकां रे ईज गोचरी जावां अनुक्रम घरां री गोचरी जावां नहीं सो कारण कांई।

जद स्वामीजी बोल्या—अठै द्वेष घणौ तिण सूं अनुक्रमे गोचरी न करां।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—आप फुरमावौ तौ हूं जाऊं।

जद स्वामीजी बोल्या—भलांइ जावौ।

जद मोहनगढ़ मै गौचरी फिरतां एकण घरे गोचरी गया। पूछ्यौ—आहार-पाणी री जोगवाई है ?

जद ते बाई बोली—रोटी लूंण ऊपर पड़ी है।

जद हेमजी स्वामी मैडी ऊपर दूजौ घर है तिहां गौचरी गया। ऊपरलै घर बाई ऊंधी अंवळी बोली—घणौ झौड़ कीधौ। पिण रोटी दीधी। घणी बेळां लागी। जद हेठली बाई जाण्यौ ए साध म्हांरा इज दीसै। पाछा हेठा ऊतरतां बाई बोली—आप पधारौ आहार वहिरौ। इम कहि वहिरावा रोटी

हाथ मै लीधी । जद हेमजी स्वामी कह्यौ—बाई ! तूं कहिती थी रोटी लूंण पर पड़ी है ।

जद उवा बोली —म्हैं तौ तेरापंथी जाण्या था तिण सूं कह्यौ ।

जद हेमजी स्वामी कह्यौ—बाई ! छां तौ तेरापंथी ज । थारौ मन ह्वै तौ दे ।

जद दोरी सी बिना मन बोली—ल्यौ ।

पछै आगला घरां गया । आहार-पाणी री जोगवाई पूछी, जद ते कहै—म्हांरै तौ तेरापंथ्यां न रोटी देवा रा त्याग है ।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—रोटी देवा रा त्याग है ? पाणी ह्वै तौ पाणी वहिराव । जद ऊठ नै पाणी वहिरायौ ।

पछै स्वामीजी नै आयनै समाचार सुणाया । स्वामीजी सुणनै राजी हुआ ।

२९३. जैसा गुरु वैसा देव और धर्म

गुरां री कीमत ऊपर स्वामीजी ताकड़ी री दांड़ी रौ दृष्टंत दीयौ—जिम ताकड़ी री डांडी रै तीन बेज हुवै । बिचला बेज मै फरक ह्वै तौ अन्तरकाणी ह्वै । विचलौ बेज तंत ह्वै तौ अन्तरकाण न पड़ै । ज्यूं देव गुरु धर्म विच मै गुरु आया । जो गुरु चोखा ह्वै तौ देव पिण चोखा ह्वै । धर्म पिण चोखौ बतावै । गुरु खोटा ह्वै तौ देव मै फरक पाड़ देवै अनै धर्म मै ई फरक पाड देवै ।

जो गुरु मिलै ब्रांह्मण—तौ देव बतावै शिव, अनै धर्म बतावै ब्राह्मण जीमावौ ।

गुरु मिलै जो भोपा तौ—देव बतावै धर्म राजा । धर्म बतावै भोपा जीमावौ पाती लेवौ ।

गुरु मिलै कामड़िया तौ—देव बतावै रामदेवजी । धर्म वतावै जमा री रात जगावौ कामड़ी जीमावौ ।

गुरु मिलै मुल्ला तौ—देव बतावै अल्ला । धर्म बतावै जबै करौ ।

एर चरंती मेर चरंती । खेत चरंती बहु तेरा ।

हुकम आया अल्ला साहिब रा सो गला काटूं तेरा ।

अनै जो गुरु मिलै निर्ग्रंथ तौ—देव बतावै असल अरिहंत । धर्म भगवांन री आज्ञा में ।

गजी, मेंमूंदी, वासती । तीनूं एकण गोत ।

जिणनै जैसा गुरु मिल्या, तिसा काढिया पोत ।

इण दृष्टंते जैसा गुरु मिलै तैसा ई देव अनै धर्म बतावै ।

२९४. म्हांरैं करणी सूं कांई

केई अजाण कहै—म्हे तौ ओघा मुहपती नै वांदां । म्हांरै करणी सूं कांई काम ।

तिण ऊपर स्वामीजी बोल्या—ओघा नै वांद्यां तिरै तौ ओगौ तौ ह्वै है ऊंन रौ अनै ऊंन होवै है गाडर नी । जो ओघा नै वांद्यां तिरै तौ गाडर नां पग पकरणा— धिन है माता तूं सो थारो ओगौ पैदास हुव है ।

अनै मुहपती नै वांद्यां तिरै तौ मुहपती तौ होवै है कपास री अनै कपास हुवै वण रौ । जो मुहपती नै वांद्यां तिरै तौ । वण नै नमस्कार करणौ—धन्य है सो थारी मुहपती हुवै है ।

२९५. माहै तांबो नै ऊपर रूपो

कोई कहै—ए भेषधारी दोष लगावै तौ पिण ग्रहस्थ विचै तौ आछा है । तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—एक साहूकार नी हाटे प्रभाते कोई पइसो लेई आयौ । कहै साहजी पइसा रौ गुळ है ? जद तिण पइसौ लेई वांदनै उरहो लीयौ । गुळ दे दीयौ । जाण्यौ प्रभाते तांबा नाणा री बोहवणी हुई ।

दूजे दिन रुपीयौ लेई आयौ । कहै साहजी रुपीया रा टका है । जद तिण रुपीया लेई वांदनै उरहौ लीयौ । टका गिण दीया । मन मैं राजी हुऔ आज रूपा नाणा रौ दर्शन हूऔ ।

तीजै दिन खोटौ रुपीयौ लेई आयौ । कहै साहजी रुपइया रा टका है ? जद ते राजी होय बौल्यौ—म्हारै काल कौ गराक आयौ । रुपीयौ हाथ मैं लेई देखै तौ खोटौ । माहे तांबो नै ऊपर रूपो । अलगौ न्हांख नै बोल्यौ—प्रभाते खोटा नांणा रौ दर्शन हुऔ ।

जद ऊ बोल्यौ—साहजी वैराजी क्यूं हुआ । परसूं तौ म्है पइसो आण्यौ सो तांबो नांणौ वांद्यौ । काले रुपीयौ आण्यौ सो रूपो नाणौ वांद्यौ । अनै इणमैं तौ तांबौ रूपो दोनूं है सो दोय वार वांदो ।

जद ऊ बोल्यौ—रे मूरख ! परसूं तौ एकलौ तांबो हो सो ठीक । काले एकलौ रूपो हो सो विशेष चोखौ । उवे तौ न्यारा-न्यारा हा । तिण सूं खोटा नहीं । अनै इणरै माहै तौ तांबो अनै ऊपर रूपा रौ भोळ तिण सूं ए खोटो । ए कांम रौ नहीं ।

इण दृष्टंते पइसा समान तौ ग्रहस्थ श्रावक । रुपीया समान साधु । खोटा रुपीया समान भेषधारी । ऊपर भेष तौ साध रौ नै लखण ग्रहस्थ रा । ए खोटा नांणा सरीषा । नां तौ साध में नां ग्रहस्थ मै अधबेर । ए वांदवा जोग नहीं श्रावक ही प्रशंसवा जोग आराधक । साधु ही प्रशंसवा जोग आराधक । पिण खोटा नांणा रा साथी भेषधारी आराधक नहीं ।

२९६. आप 'जी' क्यूं कहवो ?

किण हि कह्यौ—टोळावाळा नै वंदणा कीयां उवे कहै—दया पालौ'। केई पाछौ खमावै। अनै आप 'जी' कहौ सो कारण कांई ?

जद स्वामीजी बोल्या—नाथां नै कहै–आदेश। जद उवे कहै आदि पुरुष कूं। पोतै आदेश झेलै नहीं।

पोता मै गुण नहीं तिणसूं। आदेश कियौ ते आदि पुरुष कूं भलायौ।

गुसांइ नै कहै नमो नारायण।

जद ते बोल्या—नारायण। इणरौ मुदौ ओ म्हां में करामात कोई नहीं है। नमस्कार नारायण कूं करौ।

वैष्णु नै कहै राम-राम जद उवे कहै रामजी। उणां पिण रामजी नै भलायौ। पोतै झेल्यौ नहीं।

फकीर नै कहै सांइ साहिब। जद ऊ कहै साहिब। उण पिण साहिब नै भळायौ।

जती नै कहै गुरांजी बंदनां। जद उवे कहै–'धर्म लाभ'। धर्म करौ तौ लाभ हुसी। म्हांरै भरोसै रहिजो मती।

भेषधारी नै कहै खमाउं स्वांमी, वांदूं स्वांमी। उवे कहै दया पाळौ। दया पाल्यां निहाल हुसौ पिण म्हांनें वांद्यां कोई तिरौ नहीं। इण रौ मुदौ यो है। ए पिण वंदणा झेलै नहीं। घर में माल विना हुंडी सीकारणी आवै नहीं। अनै साधां नै वंदना करै। जद उवे कहै—'जी' थांरी वंदना म्हे सतकारी थानें वंदणा रौ धर्म होय चूकौ।

कोई कहै—'जी' कहिणो कठै चाल्यो है।

तिण रौ उत्तर—रायप्रसेणी मै सूरीयाभ वंदना कीधी जद भगवांन छ बोल कह्या। तिण मै 'जीयमेयं सूरियाभा !' ए वंदना करौ ते थारौ जीत आचार है इम कह्यौ।

कोई कहै 'जीय' शब्द सूत्र मै है, थे 'जी' एक अक्षर ईज किम कहौ छौ।

तेह नौ उत्तर—ए 'जीय' शब्द नौ एक अक्षर 'जी' ते देश है। ते देश कह्यां दोष नहीं। सूत्र मै कठैक तौ वचन रौ पाठ वयण आवै अनें कठैक 'वय' आवै। इहां पिण देश आयौ। तथा धर्मास्तिकाय नै कठैक तो धम्मत्थिकाए एहवौ पाठ। कठैक 'धम्मा धम्मे आकासे'।

इहां पिण देश कह्यौ—तिम 'जीय' ए पाठ नौ देश 'जी' इम कहिवै दोष नहीं।

२९७. सपूत कपूत

स्वामीनाथ बोल्या—धर्म तौ दया म है।

जद हिंसाधर्मी बोल्या—दया-दया स्यूं पुकारौ छौ। दया रांड पड़ी उखरली मैं लौटै।

जद स्वामीजी कह्यौ—दया तौ माता कही। उत्तराध्ययन अ० २४ मैं आठ प्रवचन माता कही छै। तिण मैं दया आय गई। जिम कोई साहूकार आउखौ पूरौ कीयौ। लारै तिण री स्त्री रही। सो सपूत हुवै सो तौ तिण माता रा यत्न करै अनै कपूत हुवै ते ऊंधा अवळा बोलै।

ज्यूं दया रा धणी तौ भगवान ते तौ मुक्ति गया। लारे साध श्रावक सपूत ते तौ दया माता रा यत्न करै। अनै थां जिसा कपूत प्रगटीया सो रांड-रांड कहिनै ईज बोलावौ।

२९८. चोधरपणें मैं खींचातांण घणी

साधपणौ लेई शुद्ध न पाळै अनै साधरौ नाँम धरावै नाम धराय पूजावै। तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—एक सुसला रै पाछै दोय छाळी नाहर दोड़्या। जद सुसलौ न्हासनै बिल मैं पैस गयौ। बिल मैं आगै लूंकड़ी बैठी तिण पूछ्यौ—तूं सास धमण होय न्हासनै क्यूं आयौ?

सुसलौ कुबदी ते बोल्यौ—अटवी ना जनावर भेळा होय न मोनै चोधर पणौ देवै। सो हूं तौ कोई लेऊं नहीं। तिण सूं न्हास नै उरहौ आयौ।

जद लूंकड़ी बोली—अरे! चोधरपणा मैं तौ बड़ौ स्वाद है।

जद सुसलौ बोल्यौ—थारौ मन हुवै तौ तूं लै। म्हारै तो कोई चाहीजै नहीं। जद लूंकड़ी चौधरपणौ लेवा बारै नीकली।

जद दोनूं छाली नाहर उभा हा। सो दोनूं कान पकड़ लिया। सद लोही झरती पाछी आई।

जद सुसलै पूछ्यौ—पाछी क्यूं आई।

तब लूंकड़ी बोली—चोधरपणै मैं खांचातांण घणी सो कान तूट गया तिण सूं पाछी आइ। ज्यूं साधपणौ लेई चोखौ न पाळै दोष लगावै प्राछित न ले अनै साध रौ नाम धरावै। लोकां मैं पूजावै ते इहलोक परलोक मैं लूंकड़ी ज्यूं खुराब ह्वै। नरक-निगोद मैं गोता खावै।

२९९. धसका पड़ै

किण हि कह्यौ—भीखणजी! जिहां थे जावौ तिहां लोकां रै धसका पड़ै।

जद स्वामीजी—बोल्या—गारड़ू आवै गाम मैं ते कहै डाकणियां नै

प्रभाते नीला कांटां मै बाळसां जद धसका डाकणियां रै पड़ै। तथा त्यांरा न्यातीलां रै पड़ै। पिण दूजा लोक तौ राजी हुवै।

ज्यूं साध गाम मै आयां भेषधारी हीण आचारी ज्यां रै धसका पड़ै। कै त्यांरा श्रावकां रै धसका पड़ै। अनै हलुकर्मी जीव ह्वै ते तौ घणा राजी ह्वै। जाणै वखांण सुणसां, सुपात्र दान देसां, ज्ञान सीखसां, साधां री सेवा करसां, इम राजी हुवै।

३००. पीलौ हो पीलौ निजर आवै

स्वामीजी सूं चरचा करतां कोई ऊंधो अवळौ बोलै—थांरी श्रद्धा कपट री। आचार मै प्रपंच घणौ।

जद स्वामीजी बोल्या—म्हारी श्रद्धा आचार तौ चोखौ है। पिण थांनै इसोज दीसे है। आप री आंख्यां मै पीळियौ घणौ वापरियौ मनुंष पीळा ई पीळा दीसै।

जद लोक बोल्या—मनुंष तौ फरहा फूटरा है। पिण थारी आंख मै पीळियौ है। तिण सूं मनुंष थांरी निजर मै पीळा आवै है।

ज्यूं श्रद्धा तौ पोता री कपट री। गुरु पोता रा खोटा सूझै नहीं अनै साधां नै खोटा कहै, कपट री श्रद्धा कहै।

३०१. तीन नावा

चोखा गुरु खोटा गुरु ऊपरै नावा नो दृष्टंत स्वामीजी दीयौ—तीन नावा। एक तौ काठ की साजी नावा, एक फूटी नावा, एक पत्थर नीं नावा।

साजी नावा समान तौ साधु आप तिरै ओरां नै तारै। फूटी नावा समांन भेषधारी, आप डूबै भोळां नै डबोवै। पत्थर की नावा समांन तीन सौ तेसठ पाषंडी ते प्रत्यक्ष विरुद्ध दीसै।

समझूं प्रथम तौ त्यानै मांनै नहीं। कदाच जो गुरु किया ह्वै तौ छोड़णा सोहरा। फूटी नावा सरीषा भेषधारी त्यांनै छोड़णां दोहरा। चुतर बुद्धिवांन ह्वै ते छोड़ै।

३०२. ते कांई साधपणौ पाळै

भूखां मरतां रोटी रै वासतै वेष पहरै त्यांनै कहै साधपणौ चोखौ पाळजो। जद स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—पति मूवां तिणरी स्त्री नै सीढ़ी रे बांधनै बाळै तिण नै कहै सती माता तेजरा तोड़ज्यो। तौ उवा कांई तेजरा तोड़ै। ज्यूं भूखां मरतां रोटी रे वासतै भेष पहरै ते कांई साधपणौ पाळै।

३०३. पकवान तौ कड़वा कीधा

कुगुरां रा पखपाती नै साधु सुहावै नहीं। ते ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—जीमणवार में तावबाळो जीमवा गयो। बीजा लोकां नै कहै—पकवांन तौ कड़वा कीधा।

जद लोक बोल्या—म्हांनै तो चोखा लागै। तोनै कड़वा लागै सो थारा डील म जुर है।

ज्यूं मिथ्यात रूपीयौ रोग तिण नै साधु चोखा न लागै।

३०४. म्हे कातीक रा ज्योतिसी छां

किणहि कह्यौ—भीखणजी थे ढाळां मै टोळावाळां रा चरित ओळषाया सो थांनें किसी खबर पड़ी।

जद स्वामीजी बोल्या—म्हे आषाड़ महीनां रा ज्योतसी नहीं छां। काती महिनां रा ज्योतसी छां। ज्यूं आषाड़ महीनां रौ ज्योतसी हुवै ते आगूंच काती महिनां रौ धान रौ भाव बतावै।

ज्यूं म्हें आगमीया काळ आश्री न कही।

अनें काती महीनां रौ ज्योतषी ते भाव वर्त्ते तेहीज कहै।

ज्यूं म्हे वर्त्तमान चिरत देख्या जिसा बताया।

३०५. मिथ्यात रोग गमावा रौ अर्थी

मिथ्यात रूपीयौ रोग गमावा रौ अर्थी तिणनै सरधा आचार री ढाळां विशेष प्यारी लागै तिण ऊपर स्वामी दृष्टंत दीयौ—ज्यूं वैद कहै—लौ तेजरा री गोळी, लौ तेजरा री गोली। तौ तेजरौ गमावा रौ अर्थी तिणनै तेजरा री गोळी विशेष प्यारी लागै।

ज्यूं श्रद्धा आचार री ढाळां साध श्रावक नै तौ प्यारी लागै ईज है। अनै उणानै विशेष प्यारी लागै।

३०६. नीसाणे चोट लागे है

मिथ्यात मिटावा स्वामीजी हेतु युक्ति दृष्टंत देवै। जद किण हि पूछयौ—इतरा हेतु युक्ति दृष्टंत क्यूं आंणौ।

जद स्वामीजी बोल्या—नीसांणै चोट लागै है। नीसांणा विना चोट नहीं।

ज्यूं मिथ्यात गमावा नै अर्थे हेतु युक्ति दृष्टंत देवां हां।

३०७. ओ मार्ग किता वर्ष चालसी ?

किण हि पूछ्यौ—आप रौ इसौ सांकड़ौ मारग कितराइक वर्ष चालतौ दीसै है ?

जद स्वामीजी बोल्या–सरधा आचार मैं सेंठा रहै । वस्त्र पात्र उपगरण री मर्यादा न लोपै । थानक नहीं बंधीजै । तठा ताईं मारग चोखौ हालतौ दीसै है ।

आधाकर्मी थानक बंध्यां वस्त्र पात्र री मर्यादा लोप देवै कल्प लोपनै रहिवौ करै, जद ढीला पड़ै, अनै मर्यादा प्रमाणै चालै जितरै ढीला न पड़ै ।

३०८. नाम में फेर है

आधाकर्मी थानक मैं रहै अनै घर छोड्या कहै, तिण ऊपर स्वामीजी दृष्टंत दीयौ—ज्यूं जती रै उपासरौ । मथेरण रै पोशाल । फकीर रै तकीयौ । भक्तां रै अस्तल । फुटकर भक्तां रै मंढी । कानफड़ां रै आसण । संन्यासां रै मठ रामसनेहियां रै रामदुवारौ, कठे यक कहै राममोहिलो । घर रा धणी रै घर । सेठ रै हवेली । गाम रा धणी रै कोटरी । कठे यक कहै रावलो । राजा रै मैहल तथा दुरबार । अनै साधां रै थानक । नाम मैं फेर है, बाकी सगला घर रा घर है ।

कठे क कसी बूही । कठे यक कुदाला बूहा । पिण छ काया रौ आरम्भ तौ ज्यूं रौ ज्यूं परहौ हुऔ ।

३०९. उवे तौ खप करै है

अमरसींगजी रै बड़ेरो बोहतजी नै किणहि पूछ्यौ—शीतळजी रा साधां मैं साधपणौ है ?

जद बोहतजी कह्यौ—उणा मैं तौ किहां थी, हूंतौ मोमें ई न सरधूं ।

जद फैर पूछ्यौ—भीखणजी मैं साधपणौ है ? जद बोहतजी कह्यौ—उणा मैं तौ हुवै तौ अटकाव नहीं । उवे तौ खप करै है ।

३१०. भीखणजी चोखा साध है

जैमलजी पुर मैं वखाण देतां घणी परिषदा मैं किण हि गृहस्थ पूछ्यौ—भरी सभा मैं मिश्र भाषा बोल्यां महामोहणी कर्म बंधै । भीखणजी साध है कै असाध ?

जद जैमलजी बोल्या—भीखणजी चोखा साध है, पिण म्हांनै भेषधारी-भेषधारी कहै तिण सूं म्हे ई निह्नव कहां छां ।

३११. न करावौ तौ सरावौ क्यूं ?

जैतारण मैं धीरो पोखरणौ तिणनै टोडरमलजी कह्यौ—भीखणजी कहै थोड़ा दोष सूं साधपणौ भागै। जो यूं साधपणौ भागै तौ पार्श्वनाथजी री २०६ आर्य्यां हाथ पग धोया, काजळ घाल्या, डावरा डावरी रमाया ते पिण मरनै इन्द्र नीं इंद्राणियां हुई अनै एकावतारी हुई।

जद धीरजी पोखरणै कह्यौ—पूज्यजी, आंपां री आर्य्यां रै काजळ घलावौ हाथ-पग धौवावौ, डावरा डावरी रमावा री आज्ञा दौ। सो ए पिण एकावतारी होय जावै।

जद टोडरमलजी कह्यौ—रे मूरख, म्हे इसो काम क्यांनै करां।

जद धीरजी कह्यौ—न करावौ तौ उणां नै सरावौ क्यूं।

३१२. थाप क्यूं करौ ?

फेर टोडरमलजी धीरे पोखरणै नै कह्यौ—भीखणजी सूत्र नौ पाठ उथाप्यौ। साधु नै असूझतौ दोयां अल्प पाप बहुत निर्जरा भगवती मैं कह्यौ है।

जद धीरजी कह्यौ—पूज्यजी, आप गोचरी पधारघा म्हारै, कटोरदान मैं लाडू है। ते कटोरदान गोहां मैं है सो बारे काढ वहिराय देसूं। म्हारे ई अल्प पाप बहुत निर्जरा हुसी।

जद टोडरमलजी कह्यौ—रे मूरख, म्हे क्यां नै ल्यां।

जद धीरजी कह्यौ—न ल्यौ तौ थाप क्यूं करौ ?

उपसंहार

ए दृष्टांत केयक तौ स्वामीजी रे मूंढै सुण्यां। केयक और जागां पिण सुण्यां। तिण अनुसारे मंड़ाया, कोई संक्षेप हुंतो तिणनें उनमान न्याय जाणनै वधारचौ। विस्तार जाणनै संकोच्यो। तिण मैं कोई विरुद्ध आयौ हुवै तथा झूठ लागौ हुवै आघौ पाछौ विपरीत कह्यौ हुवै तौ "मिच्छामि दुक्कड़ं।"

दुहा

संवत उगणीसे तीए, कार्तिक मास मझार।
सुदि पख तेरस तिथ भली, सूर्यवार श्रीकार १
हेम जीत ऋष आदि दे, द्वादश संत दिपंत।
श्रीजीद्वारा शैहर मैं, कीयौ चौमासौ धर खंत २
हेम लिखाया हर्ष सूं, लिख्या जीत धर खंत।
सरस रसै करो सोभता, भीक्खू नां दृष्टंत ३
उत्पतिया बुद्धि आगला, भीक्खू गुण भंडार।
हितकारी दृष्टंत तसु, सांभळतां सुखकार ४

हिन्दी अनुवाद

१. बात करामात

बूंदी में सवाईराम ओस्तवाल से चर्चा करते समय भिक्षु ने कहा—"गाय और भैंस के मुंह के आगे अधिक चारा डालने पर वे उसे इधर-उधर बिखेर देते हैं।"

वह बोला—"मुझे पशु बना दिया।" वह नाराज हो गया।

तब स्वामीजी[1] ने कहा—"तुम यदि पशु हो गए, तो मेरा ज्ञान चारा हो जाएगा।" ऐसा कहने पर वह राजी हो गया। फिर उसने भिक्षु को गुरु बना लिया।

० कृष्णार्पण

किसी समय वेषधारी साधुओं ने सवाईराम से कहा—"हमने तेरापंथी साधुओं को इस प्रकार उत्तर दिया, इस प्रकार उत्तर दिया, उन्हें परास्त कर दिया।

तब सवाईराम बोला—"दो जनों के झगड़ा होने पर एक आदमी अपने घर को कृष्णार्पण कर देता है। दूसरा कलह करने से डरता है, अपने घर की सुरक्षा करता है। इसी प्रकार तेरापंथी साधु अपने साधुपन की सुरक्षा करता है। वह अंट-संट बोलने से भय खाता है। तुमने अपना घर कृष्णार्पण कर रखा है। तुम्हारे सामने अपने साधुपन की सुरक्षा का प्रश्न नहीं। इसलिए तुम जैसा मन में आता है, वैसा बोलते हो।" यह कह कर उसने उन वेषधारी साधुओं को निरुत्तर कर दिया।

० झूठी चुगली

एक दिन चर्चा करते समय वेषधारी साधुओं ने कहा—"तुम हमें दोषी बतलाते हो। पर तुम्हारे गुरुओं को भी छोटे किवाड़ खोलने का दोष लगता है।

तब सवाईराम ने कहा—"किसी राजा का एक मंत्री राजस्व का गबन नहीं करता। दूसरा मंत्री उससे द्वेष रखता था, इसलिए उसने उसकी शिकायत की—"यह राजस्व का गबन करता है।"

राजा ने दोनों को इकट्ठा कर पूछा, तब चुगलखोर मंत्री ने कहा—"इसने बच्चों को सरकारी पन्ने, स्याही और लेखनी दी है।"

तब उस मंत्री ने कहा—"मैंने बच्चों को पन्ने, स्याही और लेखनी दी है, वे उन्हें पढ़ाने के लिए दी हैं। वे शिक्षित होने पर सरकारी सेवा में ही लगेंगे।" यह सुन राजा प्रसन्न हो गया। चुगलखोर मंत्री लज्जित हो गया।

जैसे चुगलखोर मंत्री ने झूठी चुगली की और झूठा दोष बतलाया, वैसे तुम भी छोटा किवाड़ खोलने का दोष बतलाते हो, इसलिए तुम भी झूठे हो।"

२. उपकार ही किया

पाली में भीखणजी स्वामी आज्ञा ले एक दुकान में ठहरे। एक आचार्य ने उस दुकान वाले के घर जाकर उसकी पत्नी से कहा—"ये कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा तक

१. आचार्य भिक्षु के लिए प्रस्तुत कृति में स्वामीजी, भिक्खु, भिक्षु आदि प्रयोग किया गया है।

तुम्हारी दुकान नहीं छोड़ेंगे।"

तब उस बहिन ने स्वामीजी से कहा—"तुम्हें यहां रहने की मेरी आज्ञा नहीं।"

तब भिक्षु ने कहा—"चतुर्मास में भी तुम कहोगी तब हम यहां से चले जाएंगे।"

उस समय वह बहिन बोली—"मुझे तुम्हारे जैसे ही साधु कह गए हैं कि चतुर्मास शुरू होने पर वे यहां से नहीं जाएंगे। इसलिए मेरी आज्ञा नहीं।"

उसके मना करने के बाद आचार्य भिक्षु स्वयं गोचरी गए। उदयपुरिया बाजार में दुकान की दूसरी मंजिल की याचना की। उसके प्राप्त हो जाने पर आप स्वयं वहां बैठ गए, साधुओं को भेज उपकरण मंगवा लिए। दिन में वे उस दूसरी मंजिल पर रहते और रात को वे नीचे दुकान में व्याख्यान देते। परिषद् काफी जुट जाती। बहुत लोगों ने सम्बोधि प्राप्त की। आचार्यजी ने शय्यातर (दुकान-मालिक) से बहुत कहा—"तुमने इन्हें जगह क्यों दी? ये अविनीत हैं, निह्नव (मिथ्या प्ररूपणा करने वाले) हैं।

तब उसने कहा—"कार्तिक पूर्णिमा तक तो मनाही नहीं करूंगा।"

कुछ दिनों बाद बहुत वर्षा हुई। स्वामीजी जिस दुकान में पहले ठहरे थे, उस दुकान का शहतीर टूट गया। सैकड़ों मन वजन नीचे गिरा। इस बात को सुन स्वामीजी ने कहा—"जो हमें दुकान छुड़ाने में रहे, उन पर छद्मस्थ स्वभाव के कारण आक्रोश की लहर आने का प्रसंग था। पर उन्होंने हमारा उपकार ही किया। (यदि हम वहां रहते तो आज क्या होता?)"

ऐसे थे स्वामीजी क्षमाशील।

३. अच्छा या बुरा?

पीपाड़ में आचार्य रुघनाथजी के शिष्य जीवणजी ने आचार्य भिक्षु से कहा—"साधु आहार करता है, वह 'अव्रत' और 'प्रमाद, है।

तब स्वामीजी ने कहा—"जो काम भगवान की आज्ञा में है, वह अच्छा है।" पर जीवणजी ने यह बात मानी नहीं। फिर स्वामीजी ने पूछा—"साधु आहार करता है वह काम अच्छा है या बुरा?"

जीवणजी ने कहा—"साधु आहार करता है, वह बुरा काम है; त्याग करता है, वह अच्छा काम है।"

शौच आदि के लिए जाते-आते समय रास्ते में मिलते, तब स्वामीजी पूछते—"जीवणजी! बुरा काम करके आए हो या जाकर करना है?"

इस प्रकार बार-बार पूछने से जीवणजी सकपका गए और बोले—"भीखणजी! साधु आहार करता है, वह अच्छा ही काम है।"

४. बिना लाभ का आरम्भ

कंटालिया में भीखणजी स्वामी का मित्र था, नाम था गुलोजी गादिया। उससे स्वामीजी ने पूछा—गुला! तुमने खेती की है?

"हां, स्वामीनाथ! की है।"

स्वामीजी ने पूछा—"उपज कितनी हुई और खर्च कितना लगा?

गुलजी बोले—"स्वामीनाथ! दस रुपये लगे हैं। कुछ हल जोतने के भाड़े के,

कुछ निदाई के और कुछ बीज के। कुल दस रुपये लगे।"

स्वामीजी ने पूछा—"वापस कितने आए ?"

तब गुलजी ने कहा—"स्वामीनाथ ! लगभग दस रुपयों का माल वापस आया—कुछ रुपयों के मूंग, कुछ चारा, कुछ बाजरी, सब दश रुपयों का माल वापस आया। जितना लगा, उतना आ गया। बेचारी खेती का कोई दोष नहीं।"

तब स्वामीजी बोले—"गुला ! ये दश रुपये कोठे के आले में पड़े रहते तो तुझे इतना पाप तो नहीं लगता। ऐसा आरम्भ क्यों किया ?"

५. प्रसन्नता या अप्रसन्नता

देसूरी का नाथो नाम का साधू। उसने स्त्री, मां और पुत्री को छोड़ दीक्षा ली, पर उसकी प्रकृति कठोर। वह अच्छी तरह आज्ञा में नहीं चलता। वह लगभग तीन वर्ष गण में रहा, फिर उससे अलग हो गया। वह जिनके पास था, उन साधुओं ने स्वामीजी से कहा—"नाथो गण से अलग हो गया।"

तब स्वामीजी बोले—"किसी के फोड़ा बहुत दर्द करता था और वह फूट गया; तो वह राजी है या नाराज ?"

"ऐसे ही दुःखदायी के अलग हो जाने पर अप्रसन्नता नहीं होती।"

६. राग-द्वेष

राग-द्वेष की पहचान करने के लिए स्वामीजी ने दृष्टांत दिया कोई बच्चे के सिर पर मारता है, तब लोग उसे उलाहना देते हैं—'भले आदमी ! बच्चे के सिर पर क्यों मारता है ?' और किसी ने बच्चे के हाथ में लड्डू दिया, मूली दी, उसे कोई नहीं बरजता।" इस राग को पहिचानना कठिन है और उस द्वेष को पहिचानना सरल है। इसीलिए शास्त्रकार ने वीतराग' कहा, वीतद्वेष' नहीं। राग बाद में मिटता है और द्वेष पहले ही मिट जाता है।

७. सिरोही राव का 'पालका'

सं० १८५२ के लगभग आचार्य जयमलजी के संप्रदाय से गुमानजी, दुर्गादासजी, पेमजी, रतनजी आदि सोलह साधु अलग हो गए। स्थानक, नित्य-पिंड, कलाल के घर से पानी लेने आदि कुछ बातों का परित्याग कर उन्होंने नया साधुपन स्वीकार किया, पर 'पुण्य' के विषय में श्रद्धा तो वही थी। तब लोग कहने लगे—"जैसे भीखणजी संघ से अलग हुए, वैसे ही ये भी अलग हुए।"

तब स्वामीजी बोले—"उन्होंने सिरोही के रावजी का "पालका" बनाया है। सिरोही—राव के सामन्तों और कामदारों ने विचार किया कि उदयपुर, जयपुर और जोधपुर नरेशों के पास पालकी है। अपने भी पालकी बनाएं। ऐसा सोच, बांस के डंडों को बांध, उस पर छाया करने के लिए ऊपर लाल वस्त्र डाल "पालका" बनाया। पालकी का बांस तो मुड़ा हुआ होने के कारण टेढ़ा होता है, इस बात को वे समझ नहीं पाए और उन्होंने जो 'पालका' बनाया, उसमें सीधे बांस डाल दिये। इसलिए वह भद्दा पालका बन गया। वैसे पालके में राव को बिठा हवा खाने के लिए निकले। उसके साथ आगे और पीछे अनेक लोग गांव बाहर तक आए। उस समय खेत के पास

वृक्ष की छाया के नीचे उन्होंने विश्राम किया। तब किसान बोले—"यहां मत जलाओ रे, मत जलाओ। बच्चे और बच्चियां डरेंगे।

तब रावजी के साथ वाले कर्मचारी बोले—"मत बोलो रे, मत बोलो। ये रावजी हैं रे, रावजी। तब किसान बोले—"बात डुब गई। रावजी मर गए? हमने तो सोचा—रावजी की मां मर गई है।" तब कर्मचारियों ने किसानों से कहा—"जयपुर, जोधपुर वालों के पास पालकी है। इसलिए रावजी के 'पालक' बनाया था, अतः रावजी यहाँ हवा खाने के लिए आए हैं।

तब किसान बोले—इसे 'डोल' (रथी या बैकुंठी) जैसा क्यों बनाया?

स्वामीजी बोले—"जैसा सिरोही रावजी का पालका, वैसा ही इनके नए साधुपन का स्वीकार। किन्तु श्रद्धा मिथ्या है। ये जीव खिलाने में पुण्य मानते हैं, सावद्य दान में पुण्य मानते हैं, इसलिए इनमें सम्यक्त्व और चारित्र—दोनों में से एक भी नहीं।"

८. जैसा संग, वैसा रंग

गुमानजी के साधु दुर्गादासजी से भीखणजी स्वामी ने कहा—"हम आधाकर्मी (साधु-निमित्त कृत) स्थानक में दोष बतलाते, तब तुम मानते नहीं और अब उनसे (आचार्य जयमलजी से) अलग हो जाने के बाद तुम भी आधाकर्मी स्थानक का निषेध करने लग गए।"

तब दुर्गादासजी बोले—"रावण के सामन्त उसे बुरा जानते थे, फिर भी गोली राम की ओर ही दागते थे। वैसे ही हम उनके साथ थे, तब हम भी स्थानक का निषेध नहीं करते थे और आप स्थानक का निषेध करते, तब हम आपसे द्वेष करते थे।"

९. धीमे-धीमे दृढ़ होंगे

गुमानजी के साधु पेमजी ने हेमराजजी स्वामी से कहा—"तीन तुम्बे अधिक थे, वे आज फोड़ डाले।"

तब हेमराजजी स्वामी ने कहा—"उनसे अलग होकर नया साधुपन स्वीकार किए हुए तुमको बहुत दिन हो गए। फिर तीन तुम्बे अधिक थे, वे आज फोड़ डाले, उसका क्या कारण?

तब पेमजी ने कहा—हम शिथिल हो गए थे, सो अब दृढ़ धीमे-धीमे होंगे।

फिर हेमराजजी स्वामी ने भीखणजी स्वामी से कहा—"महाराज! आज पेमजी ने ऐसी बात कही—"हम शिथिल पड़ गए, सो अब दृढ़ धीमे-धीमे होंगे।"

तब स्वामीजी बोले—तुमने यों क्यों नहीं कहा—किसी ने आजीवन शीलव्रत स्वीकार किया। छह महीनों के बाद वह बोला—"एक स्त्री मैंने आज छोड़ी है।" तब किसी ने कहा—"तुम्हें शील स्वीकार किए तो बहुत महीने हो चुके हैं?" तब वह बोला—"शिथिल पड़े थे, अब दृढ़ धीमे-धीमे होंगे।"

१०. साधु-असाधु

पादु के उपाश्रय में भीखणजी स्वामी और हेमराजजी स्वामी गोचरी के लिए जा रहे थे। इतने में सामीदासजी के दो साधु मलिन वस्त्र पहने, कंधों पर पुस्तकों का जोड़ा

उठाए हुए, विहार करते हुए, "भीखणजी कहां है ? भीखणजी कहां है ?" यह कहते हुए आए ।

स्वामीजी ने कहा—"मेरा नाम है भीखण ।"

तब वे बोले—"आपको देखने की मन में थी ।"

तब स्वामीजी ने कहा—"देखो ।"

तब वे बोले—"आपने सब बात अच्छी की, पर एक बात अच्छी नहीं की ।"

स्वामीजी ने पूछा—"क्या ?"

तब उन्होंने कहा—"हम बाईस संप्रदायों के साधु हैं, उन्हें आप असाधु बतलाते हैं ।"

तब स्वामीजी ने पूछा—"तुम किनके साधु हो ?" तब उन्होंने कहा—"हम सामीदासजी के साधु हैं ।"

तब स्वामीजी ने कहा—"तुम्हारे संप्रदाय में ऐसा लिखत (विधान) है कि इक्कीस संप्रदायों में से कोई साधु तुम्हारे संप्रदाय में आए तो नई दीक्षा देकर उसे संप्रदाय में मिलाएं । ऐसा लिखत है, क्या तुम जानते हो ?"

तब वे बोले—"हां ! हम जानते हैं ।" तब स्वामीजी ने कहा—"इक्कीस संप्रदाय को तो तुम लोगों ने ही असाधु स्थापित कर दिया । गृहस्थ को दीक्षा देकर अपने में मिलाते हो और उन्हें भी दीक्षा देकर अपने में मिलाते हो । इस हिसाब से इक्कीस संप्रदायों को तुमने गृहस्थ के बराबर समझ लिया । इस दृष्टि से इक्कीस संप्रदायों को तुमने ही असाधु स्थापित कर दिया । एक तुम्हारा सम्प्रदाय बचा । भगवान् ने कहा—'जिसे दो उपवास का प्रायश्चित्त प्राप्त हो, उसे कोई तीन उपवास का प्रायश्चित्त दे, तो देने वाले को तीन उपवास का प्रायश्चित्त आए ।' तुम उन्हें (इक्कीस संप्रदायों को) साधु मानते हो और फिर उन्हें नई दीक्षा देते हो, सो तुम्हारे हिसाब से तुम्हें नई दीक्षा लेनी होगी । इस हिसाब से तुम्हारा संप्रदाय भी असाधु ठहर जाता है ।" यह सुन वे बोले—"भीखणजी ! आपकी बुद्धि प्रबल है ।" यह कहकर जाने लगे ।

स्वामीजी ने कहा—"यदि तुम यहां रहो, तो आज चर्चा करें ।" तब वे बोले—"हमारी यहां रहने की स्थिरता नहीं है ।" यह कहकर वे चलते बने ।

११. मान्यता और प्ररूपणा का भेद

एक गांव में स्वामीजी ठहरे हुए थे । वहां अमरसिंहजी के दो साधु—ईसरदासजी और मोजीरामजी आए । वे जहां ठहरे वहां स्वामीजी गए और उनसे प्रश्न पूछा—"किसी व्यक्ति ने अनुकम्पा ला भूख से पीड़ित आदमी को मूली दी । उसमें क्या हुआ ?"

जब वे बोले—"ऐसा प्रश्न, जो मिथ्यात्वी होता है, वही पूछता है ।"

तब स्वामीजी बोले—"पूछने वालों ने तो पूछ लिया, पर उत्तर देने वाला उत्तर देने से मिथ्यात्वी बनता हो, तो उत्तर मत दो ।"

तब वे बोले—"हम तो मूली में पाप बतलाते हैं ।"

तब स्वामीजी ने कहा—"मूली में पुण्य और पाप दोनों हैं । पर अनुकम्पा ला

मूली खिलाने पर कुछ लोग 'मिश्र' कहते हैं।"

तब उन्होंने कहा —"जो 'मिश्र' कहता है, वह पापी।"

फिर पूछा—"कोई पाप कहता है?"

वे बोले—"जो पाप कहता है, वह भी पापी।"

फिर पूछा— "कोई पुण्य कहता है ?"

तब बोले—"जो पुण्य कहता है, वह भी पापी।"

तब स्वामीजी गहरी विचारणा कर बोले—"कुछ लोग पुण्य मानते हैं।"

तब वे बोले—"वही मानेगा, जो मन में जचेगा।"

तब स्वामीजी बोले—"तुम्हारी मान्यता पुण्य की है। तुम लोग पुण्य की प्ररूपणा नहीं करते, किन्तु उसे मानते हो।" इत्यादि बातें कर उन्हें निरुत्तर कर स्थान पर पधारे।

१२. स्वर्गगामी या नरकगामी

पाली में एक व्यक्ति स्वामीजी से चर्चा करते समय अन्ट-सन्ट बोला। उसने कहा—"तुम्हारे श्रावक ऐसे दुष्ट हैं कि किसी के गले में फांसी का फंदा नहीं निकालते।" वह बहुत विपरीत बोलने लगा, तब स्वामी भीखणजी बोले—"तुम्हारा और हमारा मत कहो। समुच्चय में ही बात करो।"

तब कुछ पास आकर बोला—"क्या समुच्चय में बात कहूं ?"

तब स्वामीजी बोले – "एक आदमी ने वृक्ष से लटक कर फांसी ले ली। उस मार्ग से जाते हुए दो व्यक्तियों ने उसे देखा—"एक फांसी के फंदे को खोलता है, वह कैसा और जो फांसी के फंदे को नहीं खोलता, वह कैसा ?"

तब वह बोला—"जो फांसी के फंदे को खोलता है, वह महान, उत्तम पुरुष है, मोक्षगामी, स्वर्गगामी और दयालु है।" इस प्रकार उसके अनेक गुण बतलाए। "फांसी के फंदे को नहीं खोलने वाला महान् पापी, महान् दुष्ट और नरकगामी है।"

तब स्वामीजी ने कहा—"तुम और तुम्हारे धर्मगुरु दोनों जा रहे हो तो उसके फांसी के फंदे को कौन खोलेगा ?"

तब वह बोला—"मैं खोलूंगा।"

"तुम्हारे गुरु खोलेंगे या नहीं ?"

तब वह बोला—"वे क्यों खोलेंगे; वे तो साधु हैं।"

तब स्वामीजी बोले—"मोक्षगामी और स्वर्गगामी तो तुम ठहरे और तुम्हारे हिसाब से नरकगामी तुम्हारे गुरु ठहरे।"

तब वह अपने ही तर्क में उलझ गया और उत्तर देने में असमर्थ रहा।

१३. मुझे तो अवगुण 'निकालने' हो हैं

किसी ने कहा—"भीखणजी ! बाईस संप्रदाय वाले तुम्हारे अवगुण निकालते हैं ?"

तब स्वामीजी बोले—"अवगुण निकालते हैं या भीतर डालते हैं ?"

तब वह बोला—"निकालते हैं।"

तब स्वामीजी ने कहा—"भले ही निकाले", कुछ-एक वे अवगुण "निकाल" रहे हैं, कुछ-एक मैं "निकाल" रहा हूं। मुझे तो अवगुण "निकालने" ही हैं।

१४. 'सातो'

पीपाड़ में कुछ लोगों ने मनसूबा कर पूछा—"भीखणजी ! लोकभाषा में यों कहा जाता है—"सात-सात दूंगा और एक-एक गिनूंगा।" उसका अर्थ क्या है ?"

तब स्वामीजी बोले—"उसका अर्थ बिल्कुल सीधा है। सात सुपारी देते हैं और एक "साता" गिनते हैं।"

लोग यह सुनकर आश्चर्यचकित हो गए।

१५. तुम्हारे लिए नरक ही बचा

भीखणजी स्वामी देसूरी जा रहे थे। बीच में घाणेराव के महाजन मिले। उन्होंने पूछा—"तुम्हारा क्या नाम है ?"

स्वामीजी बोले—"मेरा नाम है भीखण।"

तब वे बोले—"भीखण तेरापंथी, वे हो तुम !"

तब स्वामीजी ने कहा—"हां, वही हूं।"

तब वे क्रोध के साथ बोले—"तुम्हारा मुंह दीख जाने पर आदमी नरक में जाता है।"

तब स्वामीजी ने कहा—"तुम्हारा मुंह दीखने पर ?"

तब वे बोले—"हमारा मुंह दीखने पर आदमी देवलोक और मोक्ष में जाता है।"

तब स्वामीजी ने कहा—"हम तो यों नहीं कहते—किसी का मुंह दीखने पर कोई स्वर्ग या नरक जाता है। परन्तु तुम्हारे कहने के हिसाब से तुम्हारा मुंह हमने देखा; अतः मोक्ष और देवलोक में तो हम जाएंगे। और हमारा मुंह तुमने देखा है, अतः तुम्हारे कहने के अनुसार तुम्हारे हिस्से में नरक ही रहा।"

१६. प्रायश्चित्त किस बात का ?

सं० १८४५ के वर्ष (स्वामीजी ने) पीपाड़ में चातुर्मास किया। हस्तुजी और कस्तुरांजी का पिता था जगू गांधी। उसे चर्चा करते समय स्वामीजी की मान्यता में विश्वास पैदा हो गया। उसके बाद वेषधारी साधु ने जगू गांधी से कहा—"भीखणजी की मान्यता गलत है—किसी श्रावक को बासती[2] देने में भी पाप कहते हैं और किसी गृहस्थ की चादर चोर ले गया, उसमें भी पाप कहते हैं। इस प्रकार चोर और श्रावक को सरीखा गिनते हैं।"

तब जगू गांधी ने स्वामीजी से यह बात पूछी—"यह कैसे न्याय संगत होगा ?"

तब स्वामीजी ने कहा—"उनसे पूछना—"तुम्हारी चादर कोई चुरा कर ले गया

---

१. साता—सुपारी, सिंघोड़ा खारक आदि की पांच-पांच अथवा सात-सात की संख्या, जो विवाह के समय कन्या या वर पक्ष में दी-ली जाती है।

२. खादी का एक प्रकार। इस विषय में एक दोहा है—गजी मेमूंदी, बासती……।

अथवा तुमने अपनी चादर किसी श्रावक को दे दी, इन दोनों में से तुम्हें किस बात का प्रायश्चित्त करना होगा ?" यदि वे चोर चादर को चुरा कर ले गया, उसका प्रायश्चित्त न बतलाये और श्रावक को चादर दी, उसका प्रायश्चित्त बतलाए, तो उनके हिसाब से ही श्रावक को चादर देना दोषपूर्ण ठहरता है।"

इसके बाद जगू गांधी ने उनको छोड़ स्वामीजी को गुरु बना लिया।

१७. बहुत अप्रिय लगा

संवत् १८४५ में पीपाड़ चातुर्मास में बहुत लोगों ने स्वामीजी के विचारों को स्वीकार किया। जगू गांधी ने स्वामीजी के विचारों को स्वीकार किया, वह वेषधारियों के श्रावकों को बहुत अखरा। तब लोगों ने कहा—"भीखणजी ! जगू ने आपके विचारों को स्वीकार किया, वह दूसरों को भी अखरा, किन्तु खेतसीजी लूणावत को बहुत ज्यादा अखरा। वह बहुत चिंता करता है।"

तब स्वामीजी ने कहा—"कोई परदेश में मर गया, उसकी खबर आने पर चिंता तो बहुत लोग करते हैं पर लम्बी कैंचूली तो एक ही पहनती हैं[1]।"

१८. रात छोटी और बड़ी

उसी (पीपाड़ के) चातुर्मास में (स्वामीजी का) व्याख्यान सुन लोग बहुत राजी होते थे। कोई द्वेषी कहता—"रात बहुत चली गई। सवा प्रहर या डेढ़ प्रहर।" तब स्वामीजी ने कहा—"दुःख की रात बड़ी लगती है। विवाह आदि के प्रसंग पर सुख की रात छोटी लगती है। ठीक संध्या के समय पर मनुष्य मर जाता है, तो वह दुःख की रात्रि बहुत बड़ी लगती है। इसी प्रकार जिनको व्याख्यान अच्छा नहीं लगता, उन्हें रात बहुत बड़ी लगती है।

१९. झांझ विवाह की या शव यात्रा की

उसी (पीपाड़ के) चतुर्मास में कुछ लोग व्याख्यान नहीं सुनते, दूर बैठे निंदा करते हैं। तब किसी ने कहा—"भीखणजी ! आप तो व्याख्यान देते हैं और ये निंदा करते हैं।'

तब स्वामीजी ने कहा—"झांझ के बजने पर कुत्ते का स्वभाव रोने का होता है, पर वह यों नहीं समझता कि यह झांझ विवाह की है या शव यात्रा की। वैसे ही ये यह नहीं समझते कि व्याख्यान में ज्ञान की बात आती है, उससे राजी होना तो कहीं रहा, प्रत्युत निंदा करते हैं। इनका निंदा करने का स्वभाव है, इसलिए इन्हें उलटी बात सूझती है।"

२०. जैसा गुड़ वैसा मिठास

उस पीपाड़ में एक गेबीराम नाम का चारण 'भक्त' था। लोगों में पूजा जाता था। वह अन्य भक्तों को लपसी खिलाता था। उसे लोगों ने बहकाया—"तुम भक्तों को लपसी खिलाते हो, उसमें भीखणजी पाप कहते हैं।"

तब वह भक्त गेबीराम हाथ में घोटा ले, घुंघरु बजाता हुआ, स्वामीजी के पास

---

१. स्त्री विधवा होने पर लम्बी कैंचूली पहनती है।

आया और बोला—"हे भीखण बाबा ! मैं भक्तों को लपसी खिलाता हूं, उसमें क्या होता है।"

स्वामीजी बोले—"लपसी में जैसा गुड़ डाला जाता है, वह वैसी ही मीठी होती है।"

यह सुन वह बहुत राजी हुआ, भीखण बाबा ने बहुत अच्छा उत्तर दिया।

लोग बोले—"भीखणजी ने मानो पहले ही उत्तर घड़ रखा था।"

२१. खेती गांव की सीमा पर····

सं० १८५३ में स्वामीजी ने सोजत में चतुर्मास किया। बहुत लोगों ने स्वामीजी के विचार को स्वीकार किया। तब किसी ने कहा—"भीखणजी ! आपने उपकार तो अच्छा किया, बहुत लोगों को तत्त्व समझा दिया।"

तब स्वामीजी बोले—"खेती तो की है, पर गांव की सीमा पर। यदि गधे उसमें नहीं घुसेंगे, तो वह टिक पाएगी, अन्यथा उसका टिकना कठिन है।"

२२. लड्डू खण्डित है पर है बूंदी का

स्वामीजी अपने गुरु से पृथक् हो गए। साध्वियों की दीक्षा नहीं हुई थी, तब की बात है। किसी ने कहा—"तुम्हारे तीर्थ तीन ही हैं। लड्डू है, पर वह खण्डित है।"

तब स्वामीजी बोले—"खण्डित तो है, पर है वह चौगुनी/चार गुणा चीनी, घी का।"

२३. समालोचना भी आवश्यक

रीयां गांव में स्वामीजी ने व्याख्यान में आचार की गाथा कही। उसे सुन मोतीराम बोहरा बोला—"भीखणजी! बन्दर बूढ़ा हो जाता है, फिर भी गूलांचें भरना नहीं छोड़ता। वैसे ही तुम बूढ़े हो गए, फिर भी तुमने दूसरों की टीका-टिप्पणी करना नहीं छोड़ा है।

तब स्वामीजी बोले—"तुम्हारे बाप ने हुण्डियां लिखीं, तुम्हारे दादे ने हुण्डियां लिखीं, तुमने भी पाट-पाटिए समटे नहीं।"[1]

दीपचंद मुणोत ने मन में सोच अपने साथी-मित्रों से कहा— 'भीखणजी का ऐसा वचन निकला है, इसलिए लगता है कि इसके पाट-पाटिए सिमट जाएंगे।"

तब सब ने अपने-अपने रुपए टान लिए। कुछ ही दिनों में उसका दिवाला निकल गया, पाट-पाटिए सिमट गए—व्यापार ठप्प हो गया।

२४. हिंसा में पुण्य कैसे ?

रीयां गांव में अमरसिंहजी का साधु तिलोकजी स्वामीजी के पास आकर बोला—"सूत्र में अन्न-पुण्य, पान-पुण्य आदि नव प्रकार के पुण्य बतलाए हैं। भगवान ने प्रदेशी की 'दानशाला' कही, पर पापशाला नहीं कही। भगवान ने 'अन्नपुण्य' कहा, पर 'अन्नपाप' नहीं कहा। अरे ! तुमने तो दान-दया उठा दी।"

स्वामीजी बोले—"किसी ने अनुकम्पा कर किसी को सेर बाजरा दिया। उसमें

---

१. यह वाक्यांश है। इसका अर्थ है—दुकान उठाई नहीं, दिवाला निकाला नहीं।

पुण्य तो है न ?"

तब वह बोला—"हम क्या जाने ? हम तो लिखा हुआ पढ़ते हैं । हमने आगरा का पानी पिया है, हमने दिल्ली का पानी पिया है ।"

तब स्वामीजी बोले—"दिल्ली और आगरा में तो गायें कटती हैं । इसमें (दिल्ली और आगरा का पानी पिया, उसमें) कौन सी विशेषता हुई ? सूत्र पढ़े हो, तो बतलाओ ।"

इतने में लूंका गच्छ का रतनजी यति आया । उसने यह बात सुनी और तिलोकजी को टोकते हुए बोला—"हम शिथिल हो गए हैं, तो भी अनाज के एक दाने में चार पर्याप्ति, चार प्राण मानते हैं । उसे खिलाने से पुण्य कैसे होगा ? और तुम मुख-वस्त्रिका बांध कर क्यों खराब हुए, जबकि तुम एकेन्द्रिय जीव को खिलाने में पुण्य बतलाते हो ?"

इस प्रकार उसे निरुत्तर कर दिया, तब वह चला गया ।

२५. वास्तविकता कौन जानेगा ?

रीयां गांव में हरजीमलजी सेठ ने कपड़ा लेने की प्रार्थना की । स्वामीजी बोले "तुम साधुओं के लिए वस्त्र मोल लेकर देते हो, तो उसे हम नहीं ले सकते ।"

तब सेठ बोला—"दूसरे साधु तो लेते हैं । मैंने वस्त्र खरीद कर दिया, उसमें मुझे क्या हुआ ?"

तब स्वामीजी बोले—"उन्हीं को पूछ लो ।"

तब सेठ बोला—"कहने में तो वे भी खरीद कर वस्त्र देने में पाप ही बतलाते हैं, पर उसे स्वीकार तो कर लेते हैं ।"

"हमारे पहनने-ओढने के वस्त्रों में से कोई वस्त्र आप लें ।

तब स्वामीजी बोले—"वह भी नहीं लेंगे । दूसरे साधु भी वस्त्र ले गए और भीखणजी भी वस्त्र ले गए । इसमें वास्तविकता का पता कौन लगाएगा ?"

२६. यह झगड़ा हमसे नहीं निपटेगा

हरजीमलजी सेठ अनुरागी हो गया, तब आचार्य रूघनाथजी का साधु उरजोजी एक लंबा कागज लेकर पढ़ने लगा । भीखणजी ने अमुक गांव में सचित्त पानी लिया, अमुक गांव में किवाड़ बन्द कर सोए, अमुक गांव में नितपिंड आहार लिया—इत्यादि अनेक दोष उस पत्र से पढ़ने लगा ।

तब सेठ बोला—"तुम जोधपुर जाओ । राजा के पास जा पुकार करो । यह तो बकवास है । यह झगड़ा हमसे निपटने वाला नहीं है । तुम इतने दोष बतलाते हो और भीखणजी कहेंगे—'हमने एक भी दोष का सेवन नहीं किया ।' इसकी सचाई हम कैसे जान पाएंगे ?"

तब उरजोजी बोला—"भीखणजी भी हमें कहते हैं, तुम्हें यह दोष लगता है, तुम्हें यह दोष लगता है ।"

तब सेठ बोला—"भीखणजी तो सूत्र के साक्ष्य से समुच्चय में (किसी का नाम लिए बिना) कहते हैं—"साधुओं को यह काम करना नहीं है, साधुओं को यह काम करना नहीं है ।"

यह कह उसे निरुत्तर कर दिया ।

२७. सूखे ठूंठों को क्या शीतदाह लगे ?

पीपाड़ में व्याख्यान के समय बहुत लोगों के सुनते हुए ताराचंद सिंघी बोला—"तुम व्याख्यान सुनते हो, तुम्हें शीतदाह लग जाएगा, कुम्हला जाओगे।"

तब स्वामीजी बोले—"शीतदाह हरे वृक्षों को जलाता है, पर वह सूखे ठूंठों को क्या जलाएगा ?"

यह सुन लोग बहुत राजी हुए कहने लगे—"अच्छा उत्तर दिया।"

२८. मृत्युभोज के लड्डू

किशनगढ़ में स्वामीजी पधारे। गोचरी के लिए गए। वेषधारी साधु चर्चा करने उनके पीछे-पीछे आए। स्वामी "पांडिया के बास" मोहल्ले में गोचरी के लिए गए। वेषधारी साधु उस मोहल्ले के मोड़ पर चर्चा करने की दृष्टि से खड़े थे।"

तब मलजी मेहता ने कहा—"इस चर्चा में तुम स्वाद नहीं पाओगे।" बहुत कहा—पर उन्होंने उनकी एक बात नहीं मानी। इतने में स्वामीजी गोचरी कर वापस आए।

तब वेषधारी साधुओं ने कहा—"भीखणजी ! तुम वैरागी कहलाते हो, इस मोहल्ले में 'मृत्युभोज' था, वहां से पकवान लाए हो ?"

तब भीखणजी स्वामी ने कहा—"इसमें दोष क्या ?"

तब वेषधारी साधु बोले—"तुम वैरागी कहलाते हो और ऐसा काम करते हो ?"

बहुत लोग इकट्ठे हो गए। स्वामीजी बोले—"हम तो मृत्युभोज के पकवान नहीं लाए।"

तब वेषधारी साधुओं ने कहा—"यदि नहीं लाए हो, तो पात्र दिखलाओ।"

स्वामीजी ने बहुत देर तक पात्र नहीं दिखलाए। पीछे वेषधारी साधुओं ने पात्र दिखलाने के लिए बहुत आग्रह किया। तब बहुत लोगों के सामने उन्होंने पात्र दिखलाए। उनमें लड्डू नहीं। तब वेषधारी साधु बहुत लज्जित हुए। तब मलजी ने कहा—"मैंने तुम्हें पहले ही बरजा था कि भीखणजी से चर्चा मत करो। क्या लाभ हुआ ? बहुत लोगों में तुमने अपनी प्रतिष्ठा गंवाई।"

२९. श्रावक और कसाई[1]

खेरवे में स्वामीजी के पास ओटो सियाल अंट-संट बोला—"तुम श्रावकों को देने में भी पाप कहते हो और कसाई को देने में भी पाप कहते हो। इस दृष्टि से तुमने श्रावक और कसाई को समान गिन लिया।"

तब स्वामीजी बोले—"ओटोजी ! तुम्हारी मां को लोटा भर कर सजीव पानी पिलाने से क्या होता हैं !"

तब वह बोला—"पाप होता है ?"

तब स्वामीजी फिर बोले—"वेश्या को लोटा भर कर सजीव पानी पिलाने से क्या

---

१. 'भिक्खु दृष्टांत' मूल राजस्थानी विभाग में 'कसाई' के स्थान पर भूल से 'वेश्या' मुद्रित हो गया है।

होता है ?"

तब वह बोला—"इसमें भी पाप है।"

तब स्वामीजी बोले—"तुम्हारे हिसाब से तुमने मां और वेश्या को क्या समान गिन लिया ?"

तब वह बहुत कठिनाई में फंस गया। लोग बोले—"मोटोजी ! तुमने मां और वेश्या को सरीखा मान लिया ?"

३०. मुनि वस्त्र कैसे रख सकता है ?

ढूंढाड़ प्रदेश में स्वामी भीखणजी के पास कुछ सरावगी चर्चा करने के लिए आए और बोले—"मुनि धागे जितना भी वस्त्र नहीं रख सकता। जो रखते हैं, वे परिषह से दूर भागते हैं।"

तब स्वामीजी बोले—"परीषह कितने हैं ?"

तब वे बोले—"परीषह बाईस।"

तब स्वामीजी बोले—"पहला परीषह कौन-सा है।"

तब वे बोले—"पहला परीषह भूख का है।"

स्वामी ने पूछा—"तुम्हारे मुनि आहार करते हैं या नहीं ?"

तब वे बोले—"दो दिन से एक बार करते हैं।"

तब स्वामीजी बोले—"तुम्हारे मुनि तुम्हारे ही हिसाव से प्रथम परीषह से पराजित हो गए।"

तब वे बोले—"हमारे मुनि भूख लगने पर आहार करते है।"

तब स्वामीजी बोले—"हम भी ठंड लगने पर कपड़े ओढते हैं।"

स्वामीजी ने फिर पूछा—"तुम्हारे मुनि पानी पीते हैं या नहीं ?"

तब उन्होंने कहा—"पानी भी पीते हैं।"

तब स्वामीजी बोले—"तुम्हारे मुनि इस हिसाब से दूसरे परीषह से भी पराजित हो गए।"

तब वे बोले—"वे प्यास लगने पर पानी पीते हैं।"

तब स्वामीजी बोले—"हम भी सर्दी आदि से बचने के लिए वस्त्र ओढते हैं। और यदि भूख लगने पर अन्य खाने तथा प्यास लगने पर पांनी पीने से वे परीषह से पराजित नहीं होते हैं, तो ठंड आदि से बचने के लिए वस्त्र रखने पर भी हम परिषह से पराजित नहीं होते।"

इत्यादि अनेकविध चर्चा से वे निरुत्तर हो गए।

० तुम लड़ने की दृष्टि से आए हो ?

फिर दूसरे दिन वे बहुत इकट्ठे होकर आए। स्वामीजी शौचार्थ जंगल जा रहे थे। वे सामने मिले। टेढे होकर बोले—"हम तो चर्चा करने आए और आप शौच के लिए बाहर जा रहे हैं ?"

उनके चेहरों की भाव-भंगिमा देखकर स्वामीजी बोले—"आज तो तुम लड़ने की दृष्टि से आए लगते हो।"

तब वे बोले—"आपको इस बात की कैसे खबर पड़ी ?"

स्वामीजी बोले—"हममें अवधि आदि अतीन्द्रिय ज्ञान तो नहीं है, फिर भी तुम्हारे चेहरे की भाव भंगिमा देखकर हमने कहा।"

तब वे सच बोले—"हम आए तो लड़ने की दृष्टि से ही थे, दान-दया की चर्चा करनी थी।"

तब स्वामीजी बोले—"दान-दया के उत्तर तो बहुत लिखे पड़े हैं। चर्चा तो कल वाली ही कड़ी थी।"

बाद में उनमें से कुछ लोग चर्चा कर स्वामीजी की शरण में आ गए।

३१. सवस्त्र या निर्वस्त्र

एक दिन बहुत सारे सरावगी लोगों ने स्वामीजी से कहा—"यदि आप वस्त्र न रखें, तो आपकी करनी (तपस्या) बहुत कठोर होगी।"

तब स्वामीजी ने कहा—"हमने श्वेताम्बर शास्त्रों के आधार पर घर छोड़ा है। उनमें तीन चादर, चोलपट्टा आदि रखने का विधान है, इसलिए हम वस्त्र रखते हैं। यदि दिगम्बर शास्त्रों के प्रति विश्वास हो जाए, तो हम वस्त्रों को छोड़ नग्न हो जाएंगे, फिर वस्त्र नहीं रखेंगे।"

३२. रोटी के लिए कैसे छोड़ूं ?

एक बहिन बहुत बार स्वामीजी से आहार लेने के लिए प्रार्थना किया करती थी—कभी मेरे घर भी आप गोचरी के लिए पधारें। एक दिन स्वामीजी उसके घर पर पधारे। वह स्वामीजी को बहुत राजी हुई और आहार देने लगी।

तब स्वामीजी ने पूछा—"लगता है, तुम्हें हाथ तो धोने पड़ेंगे।"

तब वह बोली—"हाथ तो धोने पड़ेंगे।"

तब स्वामीजी ने पूछा—"हाथ सजीव पानी से धोओगी या गरम पानी से ?"

तब वह बोली—"गरम पानी से धोऊंगी।"

तब स्वामीजी बोले—"कहां धोओगी ?"

तब उसने नाली की ओर संकेत करते हुए कहा—"यहां धोऊंगी।"

तब स्वामीजी ने कहा—"यह पानी कहां गिरेगा ?"

तब उसने कहा—"यह नीचे गिरेगा।"

स्वामीजी ने कहा—"नीचे पानी गिरने से वायुकाय आदि जीवों की हिंसा होगी, इसलिए मैं तुम्हारा आहार नहीं ले सकता।"

तब वह बोली—"आप तो आहार देखकर ले लें। हम गृहस्थ हैं और अपना कार्य करते हैं, उसमें आपको क्या आपत्ति होती है ? हमारी सांसारिक क्रिया हम कैसे छोड़ेंगे ?

तब स्वामीजी ने कहा—"हे बहिन ! तुम्हारी इस कर्म बंधन करने वाली सावद्य क्रिया को भी तुम नहीं छोड़ती हो तो रोटी के लिए मैं अपनी निरवद्य क्रिया को कैसे छोड़ूं ?" यह कह कर स्वामीजी वहां से चले गए।

३३. समझाने की कला

माधोपुर में अनेक लोग आचार्य के अनुयायी बने। गोचरी जाने पर वे कहते—आगे पधारो। बहनें यह नहीं चाहतीं। तब भाइयों ने बहिनों से कहा—इस शरीर में सबसे ऊंचा सिर होता है और सबसे नीचे पैर होते हैं। इनके पैरों में हम शिर झुकाते हैं, फिर चौके की क्या बात ? ऐसा कह, उन्हें समझा, स्वामीजी को भीतर ले जाकर आहार का दान दिया।

लगता है कि यह कला भी भाइयों को स्वामीजी ने सिखलाई थी।

३४. जैसा दिया जाता है वैसा पाता है

'काफरला' गांव में साधु गोचरी गए। एक जाटनी के घर में धोवन पानी था, पर वह साधुओं को दे नहीं रही थी। उसने कहा—जैसा दिया जाता है, वैसा मिलता है। मैं धोवन पानी नहीं पी सकती। (इसलिए इसे नहीं दे सकती।)

साधुओं ने आकर स्वामीजी से कहा—एक जाटनी के घर पर धोवन पानी बहुत है किन्तु वह दे नहीं रही है तब स्वामीजी वहां पधारे और बहिन से कहा—"धोवन का पानी दो।"

तब उस बहिन ने कहा—"जैसा दिया जाता है वैसा मिलता है और मुझसे धोवन पानी पीया नहीं जाता।" (इसलिए इसे नहीं दे सकती।)

तब स्वामीजी ने कहा—"गाय को घास डाली जाती है और वह दूध देती है। ऐसे ही साधुओं को धोवन पानी देने से सुख मिलता है।'

यह सुन कर उसने कहा—"लो महाराज !"

स्वामीजी धोवन पानी ले अपने स्थान पर आ गए।

३५. भैंस का प्रसव हो, तब आएं

खारची में स्वामीजी पधारे। एक बहिन ने कहा—',स्वामीजी ! मेरी भैंस का प्रसव हो तब पधारे, तब मैं दूध देने का अच्छा लाभ ले सकती हूं।

वह कैसे ?

भैंस के प्रसव होने पर एक मास तक उसका दूध-दही देवी के चढ़ा खा-पी लेते हैं। उसका बिलौना नहीं करते। भैंस के प्रसव के समय आप पधारें।"

तब स्वामीजी बोले—"कब तुम्हारे भैंस का प्रसव हो, कब हमें समाचार मिले और कब हम आए ?

३६. दीक्षा के डर से तो ज्वर नहीं हुआ ?

केलवा में एक बहिन कहती है—"स्वामीजी यहां पधारेंगे, तब साध्वी बनूंगी।" इस प्रकार वह बात करती रहती है। कुछ दिनों बाद स्वामीजी वहां पधार गए।"

स्वामीजी के आने के डर से उसको ज्वर चढ़ गया। सांझ के समय वह दर्शन करने आई। तब स्वामीजी ने पूछा—"क्या हुआ ? इस प्रकार क्यों बोलती हो।"

तब सुबकती हुई वह बोली—"स्वामीजी आप पधारे और मुझे ज्वर हो गया।"

तब स्वामीजी ने पूछा—"दीक्षा के डर से तो ज्वर नहीं हुआ है ?

तब वह बोली—"यह बात मन में आई तो थी।"

तब स्वामीजी ने कहा—"यों दहलती हो, तो कैसे काम होगा ? दीक्षा का काम तो जीवन भर का है।"

३७. यदि दामाद रोने लग जाए

खेरवा के चतरो शाह ने स्वामीजी से कहा—"महाराज ! मन में दीक्षा लेने का विचार उठ रहा है।"

तब स्वामीजी ने कहा—"तुम्हारा हृदय दुर्बल हैं। तुम्हारे पुत्र आदि रोने लगते हैं, तब यदि तुम भी रोने लग जाओ, तो काम कठिन होगा।"

तब उसने कहा—"आंसू तो आ ही जाते हैं।"

तब स्वामीजी ने कहा—"दामाद ससुराल में अपनी स्त्री को लाने जाता है, तब उसकी स्त्री तो रोती है, पर उसके देखा-देखी दामाद भी रोने लग जाए, तो वह लोगों में भद्दा लगता है। इसी प्रकार कोई साधु बनता है, तब उसके सम्बन्धी रोते हैं, यह तो उनका स्वार्थ है, पर उनके देखा-देखी दीक्षा लेने वाला रोने लग जाए, तो बात बिगड़ जाती हैं।"

३८ तुम्हारा पति कैसे मरा ?

पीपाड़ में स्वामीजी गोचरी पधारे। एक बहिन ने इस प्रकार कहा—"अमुक बहिन ने भीखणजी की मान्यता स्वीकार की, उससे उसका पति मर गया।"

तब स्वामीजी बोले—"बहिन ! तू भी अवस्था में छोटी लगती हैं। तू तो भीखणजी की निंदा कर रही है, फिर तेरा पति कैसे मर गया ?

तब पास में खड़ी बहिनों ने कहा—"भीखणजी ये ही हैं।" तब वह लज्जित होकर घर में भाग गई।

३९. सम्पत्ति मिलने से कौन-सा ज्ञान आ जाता है ?

आऊवा में उत्तमोजी ईराणी बोला—"भीखणजी ! तुम देवालय का निषेध करते हो पर पुराने जमाने में तो बड़े-बड़े लखपति और करोड़पति लोगों ने देवालय बनाए थे।"

तब स्वामीजी बोले—"तुम्हारे घर में पचास हजार की सम्पत्ति होने पर देवालय कराओगे या नहीं ?

तब वह बोला—"मैं कराऊंगा।

तब स्वामीजी ने पूछा—'तुम्हारे में जीव के भेद, गुणस्थान, उपयोग, जोग, लेश्या कितनी ?

तब वह बोला—"यह तो मैं नहीं जानता।"

तब स्वामीजी बोले—"ऐसे ही समझदार पहले हुए होंगे ! सम्पत्ति मिलने मात्र से कौन-सा ज्ञान आ जाता है ?

४०. 'का' कितने और 'कं' कितने ?

आऊवा में सावुलजी का बेटा नगजी बोला—"भीखणजी ! "तस्सुत्तरी" के पाठ

में 'ता कितने और 'तं' कितने ?

तब स्वामीजी बोले—"भगवती में 'का' कितने 'कं' कितने, 'खा' कितने 'खं' कितने, 'गा', कितने और 'गं' कितने, 'घा' कितने और 'घं कितने ?"

तब वह निरुत्तर हो गया।

४१. एक के खण्डित होने पर, सब खण्डित

किसी ने पूछा—"भीखणजी ! तुम ऐसे कहते हो कि एक महाव्रत के खण्डित हो जाने पर पांचों ही महाव्रत खण्डित हो जाते हैं", यह कैसे ?

तब स्वामीजी बोले—"जब पाप का उदय होता है, तब जीव संसार में ही दुःख भोगता रहता है।"

जैसे, एक भिक्षाचर को शहर में घूमते हुए पांच रोटी का आटा मिला। वह रोटी बनाने लगा। एक रोटी सेक कर उसने चूल्हे के पीछे रखी, एक रोटी तवे पर सिक रही है, एक रोटी अंगारों पर सिक रही है, एक रोटी का लोंदा हाथ में है, एक रोटी का आटा कठौती में है। उस समय एक कुत्ता आया। वह कठौती में पड़े हुए एक रोटी के आटे को ले भागा। उस कुत्ते के पीछे भिखारी दौड़ा। वह लड़खड़ा कर नीचे गिर गया। उसके हाथ में रोटी का लोंदा था, वह धूल में मिल गया। वापस आकर देखा, तो जो रोटी चूल्हे के पीछे रखी थी, वह बिल्ली ले गई, जो तवे पर थी वह तवे पर ही जल गई तथा जो अंगारों पर थी, वह अंगारों पर ही जल गई। इस प्रकार एक महाव्रत के खण्डित होने पर पांचों ही महाव्रत खण्डित हो जाते हैं।

४२. प्रतिकूलता में भी अजेय

स्वामी भीखणजी बिलाड़ा पधारे। स्त्री और पुरुष बहुत द्वेष करते। आहार और पानी भी पूरा नहीं मिलता। तब स्वामीजी ने साधुओं से कहा—एक मास तक यहां रहने का भाव है।

तब साधु बोले—यहां आहार-पानी की बहुत कठिनाई है। अनेक व्यक्ति आहार नहीं देते।

इस स्थिति में स्वामीजी ने एक साधु को आसपास के गांवों में भेजना शुरू किया। एक साधु को रावलों में और एक साधु को गांव के महाजनों के घर भेजने लगे।

स्वामीजी स्वयं आहार लाने के लिए गए किन्तु महाजनों में यह निषेध व्यवस्था की गई थी 'भीखणजी को एक भी रोटी देगा उसे ग्यारह सामायिक का दंड भुगतना पड़ेगा। जहां जाते और भोजन-जल के बारे में पूछते वहां उत्तर मिलता—हम तो स्थानक में सामायिक करते हैं।

किसी एक स्थान पर आहार-पानी के बारे में पूछने पर उस बहिन ने कहा—मेरी ननद स्थानक में सामायिक कर रही है। भीखणजी को रोटी देने से उसकी सामायिक नष्ट हो जाएगी, ऐसी उल्टी श्रद्धा।

कहीं भाई आहार-पानी दे देता और कहीं बहिन आहार-पानी दे देती।

इस प्रकार कुछ दिन बीत गए। आचार्य रुघनाथजी जोधपुर से चल कर आए।

लोग व्याख्यान सुनने आए। वे लम्बे विहार करके आए थे इसलिए उन्हें ज्वर हो गया। उनके पास जो साधु थे वे अनपढ़ थे। वे व्याख्यान देना जानते नहीं थे। तब परिषद् जैसे आई वैसे ही लौट गई। बाजार में कुछ लोग स्वामीजी का व्याख्यान सुनने लग गए। कुछ दिनों बाद लोगों ने कहा—आप परस्पर चर्चा करें।

एक दिन ब्राह्मणों को उकसाया। मेरा शिष्य अवनीत हो गया, वह ब्राह्मणों को दान देने में पाप कहता है। ब्राह्मण स्वामीजी के पास आ विवाद करने लगे। उस समय रामचंद्र कटारिया बोला—यदि तुम्हें दान देने में आचार्य रघुनाथजी धर्म कहें तो मेरी कोठी में २५ मन अनाज भरा पड़ा है वह सारा का सारा दान कर दूंगा। तब ब्राह्मण और रामचन्द्र सारे लोग आचार्य (रघुनाथजी) के पास आए। तब रामचन्द्र ने कहा—मेरी कोठी में २५ मन अनाज पड़ा है। यदि आप ब्राह्मणों को देने में धर्म कहें तो मैं २५ मन गेहूं इनकी पोटली में डाल दूं। आप कहें तो घूघरी बनाकर इन्हें खिला दूं, आप कहें तो आटा पिसा कर दे दूं। आप कहें तो रोटियां बना दो मन चना की कड्ढी बना ब्राह्मणो को भोजन करा दूं। जिसमें ज्यादा धर्म हो वह आप बताएं।

तब आचार्य रघुनाथजी बोले हम तो साधु हैं हम कैसे कह सकते हैं, भाई! हम इस विषय में मौन हैं।

तब रामचन्द्र बोला—आप इस विषय में कुछ नहीं कह सकते तो भीखणजी कैसे कहेंगे? आपकी अपेक्षा तो वे कठोर आचार पालते हैं। आप बड़े हैं फिर लोगों को कैसे उकसाते हैं? चर्चा करनी हो तो न्याय की चर्चा की जाए। यह कह कर वह वापिस लौट आया।

स्वामीजी को रहते एक मास होने को आया। तब आपने भारीमालजी स्वामी को आचार्य रघुनाथजी के पास भेजा। आपके श्रावक चर्चा करने की बात करते हैं। यदि चर्चा करनी हो तो करें।

आचार्य रघुनाथजी ने कहा—किसे चर्चा करनी है रे!

वहां बहुत उपकार हुआ। बहुत लोगों को तत्त्व समझाकर आचार्य भिक्षु वहां से विहार कर गए।

४३. मेरणियों का मोह

कंटालिया में एक भाई दीक्षा लेने को तैयार हुआ, पर वह बोला—"मेरा अपनी मां के प्रति मोह है। अतः मेरी माता जीवित है, तब तक लगता है मैं दीक्षा नहीं ले पाऊंगा।" कुछ दिनों बाद उसकी मां की मृत्यु हो गई।

उसके बाद स्वामीजी ने उसे फिर उपदेश दिया। तब वह बोला—स्वामीजी! मैं पहाड़ी इलाके में व्यापार करता हूं। वहां मेरिणयों[1] के प्रति मेरे मन में मोह हो गया है।"

स्वामीजी बोले—"मां तो एक थी सो मर गई, पर मेरणियां तो बहुत हैं। वे सब कब मरें, कब तूं दीक्षा ले?"

४४. अधिक धर्म किसे? (१)

दान पर भीखणजी स्वामी ने एक दृष्टांत दिया। पांच व्यक्तियों न साझेदारी में

चनों की खेती की। ५०० मन चने पैदा हुए। पांचों जनों ने विचार किया—"घर में धन तो बहुत है। इन चनों का दान कर धर्म कमाएं।"

एक व्यक्ति ने १०० मन चने भिखारियों को लूटा दिया।

दूसरे ने १०० मन चनों के भूंगड़े भूनाए।

तीसरे व्यक्ति ने १०० मन चनों की 'घूघरी' करके खिलाई।

चौथे व्यक्ति ने १०० मन चनों की रोटियां कराई और साथ में कढी बना कर खिलाई।

पांचवें व्यक्ति ने १०० मन चनों का विसर्जन कर उन्हें छूने का भी त्याग कर दिया।

जो सावद्य-दान में पुण्य-धर्म बतलाते हैं उन्हें पूछना चाहिए कि इनमें अधिक धर्म किसे हुआ?

४५. अधिक धर्म किसे (२)

स्वामीजी ने दान के विषय में एक और दृष्टांत दिया। एक बूढ़ा आदमी भीख मांगता हुआ घूम रहा था। किसी ने अनुकंपा कर उसे सेर चने दिए। तब उस बूढ़े ने किसी से कहा—"एक आदमी ने तो मुझे सेर चने दिए पर मेरे दांत नहीं है, इसलिए तुम इन्हें पीस के आटा बना दो।" तब दूसरी बहिन ने अनुकपा कर चनों को पीस आटा बना दिया।

उसे आगे जा किसी से कहा—मुझे एक धर्मात्मा ने तो सेर चने दिए। दूसरी बहिन ने उन्हें पीस आटा बना दिया। तुम मुझे उस आटे की रोटियां बना दो। तब तीसरी बहिन ने उस सेर आटे में नमक और पानी मिला उसकी रोटियां बना दीं। वह रोटी खाकर तृप्त हो गया।

कुछ देर बाद उसे बहुत प्यास लगी।

तब वह आगे जाकर बोला—"है रे कोई धर्मात्मा, जो मुझे पानी पिलाए।" तब चौथी बहिन ने अनुकंपा कर सजीव जल पिलाया।

एक व्यक्ति ने सेर चने दिए, दूसरे ने पीस के आटा बना दिया, तीसरे ने उसकी रोटियाँ बना दीं, चौथे ने उसे पानी पिलाया। इन चारों में अधिक धर्म किसे हुआ?

४६. ऐसा पौत्र-शिष्य नहीं चाहिए

टीकमजी का शिष्य जालोर वासी कचरोजी सिरियारी में स्वामीजी के पास आया और बोला—"भीखणजी कहां हैं? भीखणजी कहां हैं?"

तब स्वामीजी बोले—"भीखण मेरा ही नाम है।"

तब वह बोला—"मेरे मन में आपको देखने की बड़ी उत्कंठा थी।"

तब स्वामीजी बोले—"लो देख लो।"

फिर कचरोजी बोला—"मुझे आप कोई प्रश्न पूछें?"

स्वामीजी बोले—"तुम देखने आए हो, फिर तुम्हें क्या प्रश्न पूछें?"

वह बोला—"कुछ तो पूछो।"

---

१. 'मेर' जाति की महिलाएं

तब स्वामीजी बोले —"तुम्हारे तीसरे महाव्रत के द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव और गुण क्या है ?"

तब कचरोजी बोला—"यह तो मैं नहीं जानता। यह पन्ने में लिखा हुआ है।"

तब स्वामीजी ने कहा—"यदि पन्ना फट गया या गुम हो गया, तो क्या करोगे ?"

तब वह बोला—"मेरे गुरु ने तुम्हें प्रश्न पूछा, उसका तुम्हें उत्तर नहीं आया।"

तब स्वामीजी बोले—"तुम्हारे गुरु ने मुझे जो प्रश्न पूछा, वही प्रश्न तुम मुझे पूछ लो। उनको उत्तर दिया है, तो तुम्हें भी देंगे।"

तब कचरोजी बोला—"मेरे हिसाब से तुम तो मेरे दादा-गुरु हो। अतः तुम्हें मैं कैसे जीत पाऊंगा ?"

तब स्वामीजी बोले—"मुझे ऐसे पौत्र-शिष्य नहीं चाहिए।"

४७. इसका हेतु क्या है ?

उदयपुर में स्वामीजी के पास एक वेषधारी साधु आया और बोला—"मुझे आप प्रश्न पूछें।"

तब स्वामीजी बोले—"तुम हमारे स्थान पर आए हो, फिर क्या प्रश्न पूछें ?

तब वह बोला—"कुछ तो पूछें ?

तब स्वामीजी ने कहा—"तुम संज्ञी (समनस्क) हो या असंज्ञी (अमनस्क) ?"

तब वह बोला—"मैं संज्ञी हूं।"

स्वामीजी ने पूछा—"तुम संज्ञी हो, इसका न्याय बताओ।

तब वह बोला—"नहीं, नहीं, मैंने गलत कह दिया, उसके लिए "मिच्छामि दुक्कड़"[1], मैं असंज्ञी हूं।"

स्वामीजी ने पूछा—"तुम असंज्ञी हो उसका न्याय बताओ।'

तब वह बोला—"मिच्छामि दुक्कडं।" मैं न संज्ञी हूं, न असंज्ञी हूं।

तब स्वामीजी बोले—"संज्ञी-असंज्ञी दोनों नहीं हो, यह किस न्याय से ?"

तब वह रोष में आकर बोला—"तुमने 'न्याय, न्याय' कर हमारा संप्रदाय बिखेर दिया।' वह जाते-जाते छाती में मुक्के का प्रहार कर गया।

४८. आसोजी ! जी रहे हो ?

मांढा में स्वामीजी रात को व्याख्यान दे रहे थे। आसोजी नींद बहुत ले रहे थे। तब स्वामीजी ने कहा—"आसोजी ! नींद आ रही है ?"

आसोजी बोला—नहीं महाराज।"

बार-बार पूछा—"नींद आ रही है ?"

उसने बार-बार कहा—"नहीं, महाराज !"

तब स्वामीजी ने उसके असत्य को प्रगट करने के लिए अपनी प्रत्युत्पन्नमति क प्रयोग करते हुए पूछा—"आसोजी ! जी रहे हो ?"

"नहीं, महाराज !"

---

१. "मिथ्या दुष्कृत"—प्रायश्चित्त।

४९. सच्चा तो मुझे ही किया

मुनि अखैरामजी के बारे में साधु परस्पर बात कर रहे थे। तब खेतसीजी स्वामी बोले—"अब तो अखैरामजी स्वामी ने अपनी आत्मा को वश में किया है, ऐसा लगता है।" तब स्वामीजी बोले—"मुझे पूरी प्रतीत नहीं है।" यह बात किसी ने अखैरामजी तक पहुंचा दी। उन्हें वह बात अच्छी नहीं लगी।

मुनि अखैरामजी ने राजनगर में चतुर्मास किया वहां उन्होंने स्वामीजी के बारे में अनेक दोष पन्ने में लिखकर संघ से अपना सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया।

चतुर्मास पूरा होने पर अखैरामजी स्वामीजी से मिले। खेतसीजी स्वामी बड़ी तत्परता के साथ उन्हें वंदना करने गए। तब अखैरामजी बोले "मैं संघ से अलग हो चुका हूं। खेतसीजी स्वामी ने प्रयत्न कर अखैरामजी को समझाया। तब अखैरामजी आंसू बहाते हुए स्वामीजी से बोले—आपने मेरी प्रतीति नहीं की उससे मेरा मन उदास हो गया, जबकि खेतसीजी ने मेरा विश्वास दिलाया था।

तब स्वामीजी बोले—"मैंने प्रतीति नहीं की, यह ठीक ही था। तुमने सच्चा तो मुझे ही बनाया। बेचारे खेतसी ने तुम्हारा विश्वास दिलाया, तुमने उसी को झुठलाया।"

यह सुन वे (अखैरामजी) राजी हो गए।

५०. "एकलड़ो" जीव

स्वामीजी पुर पधारे। मेघो भाट आकर चर्चा करने लगा—"कालवादी ऐसा कहते हैं कि भीखणजी उपदेश की गाथा में तो ऐसा कहते है, "अकेला जीव संसार में भ्रमण करेगा" और नव पदार्थ में पांच को जीव बतलाते हैं। इस दृष्टि से "एकलड़ा" जीव संसार में भ्रमण करेगा ऐसा नहीं, किन्तु "पांचलड़ा" जीव संसार में भ्रमण करेगा, ऐसा कहना चाहिए।"

तब स्वामीजी बोले—कालवादी सिद्ध जीवों में कितनी आत्मा बतलाते हैं?"

तब मेघो भाट बोला—"वे सिद्धों में चार आत्मा बतलाते हैं।"

तब स्वामीजी ने पूछा—कालवादी चार आत्माओं को जीव कहते हैं या अजीव?"

तब मेघो भाट बोला—"वे चार आत्माओं को जीव बतलाते हैं।"

तब स्वामीजी बोले—"वे सिद्धों में चार आत्मा बतलाते हैं और वे उन आत्माओं को जीव बतलाते हैं। इस दृष्टि से "चौलड़ा" जीव तो उन्होंने ही मान लिया। एक "लड़" हमारी अधिक हुई।" यह कह उसे समझा दिया। स्वामीजी का उत्तर सुन वह बहुत प्रसन्न हुआ।

५१. आत्मा सात या आठ?

माधोपुर में श्रावक गूजरमलजी और केसूरामजी परस्पर चर्चा में उलझ गए। गूजरमलजी ने श्रावक में आठ आत्माएं[1] बतलाईं और केसूरामजी ने सात।

१. मूल आत्मा की तरह आत्मा की पर्याय भी आत्मा कहलाती है। उनका वर्गीकरण करने से आत्मा के आठ प्रकार होते हैं।

गूजरमलजी बोले—"यदि चारित्र आत्मा श्रावक में न हो तो उसके सचित वनस्पति खाने के त्याग का क्या अर्थ ?"

इतने में वहां स्वामीजी पधारे। उनके परस्पर बढ़े हुए विवाद को देखकर 'कोई कानों में बात न कर सके' इस दृष्टि से स्वामीजी ने अपने दोनों और पट्ट रखवा दिए। फिर अपेक्षा-दृष्टि का प्रयोग कर दोनों को समझाया। स्वामीजी ने कहा—"श्रावक में पांचों ही 'चारित्र'[1] नहीं होते, इस दृष्टि से उसमें आत्माएं सात कही जा सकती हैं और त्याग की अपेक्षा उसमें आंशिक चारित्र होता है इस दृष्टि से उसमें आत्माएं आठ कही जा सकती हैं। यह कह कर उनकी उलझन सुलझा दी।

५२. सम्यक्त्व रहना कठिन

गूजरमल से चर्चा करते समय स्वामीजी ने पन्ना पढ कर एक तत्त्व बतलाया। तब गूजरमलजी ने कहा—"आप मुझे अक्षर पढ़ाएं तब स्वामीजी ने अक्षर पढ़ा दिए।

स्वामीजी ने कहा—'गूजरमल ! तुम सम्यक्त्व को रख सकोगे, यह कठिन लगता है। क्योंकि तुम्हारी आस्था कच्ची है।" यह सुन कर लोगों को आश्चर्य हुआ।

जीवन की संध्या में गूजरमल ने केसूरामजी आदि भाइयों से कहा—"स्वामीजी की मान्यता और आचार सम्बन्धी प्ररूपणा तो सही है, पर मुनि नदी को पार करे, उसमें धर्म है' यह प्ररूपणा स्वामीजी की भी सही नहीं है।"

भाइयों ने बहुत कहा—"भगवान ने नदी पार करने की आज्ञा सूत्र में दी है। इस लिए उस प्रवृत्ति में पाप नहीं है।"

गूजरमलजी बोले—"यह बात हृदय में नहीं बैठती।"

तब लोग बोले—"भीखणजी स्वामी ने कहा था, 'तुम सम्यक्त्व को नहीं रख सकोगे, वह वचन प्रमाणित हो गया।"

५३. उठो प्रतिक्रमण करो !

पाली में रात्रीकालीन व्याख्यान समाप्त होने पर स्वामीजी पट्ट पर विराज रहे थे और दो भाई (विजयचंदजी पटुआ और···उनके साथी दुकान के नीचे खड़े थे। चर्चा करते-करते दोनों को अनुयायी बना दिया। इतने में पश्चिम रात्री हो गई, प्रतिक्रमण का समय आ गया। साधुओं से कहा—"उठो, प्रतिक्रमण करो !"

[साधुओं ने पूछा—"आप कब विराज गये ?"

स्वामीजी ने कहा—"यह तो पूछो कि आप कब सोये ?"]

५४. नगजी स्वामी का तेज

करेड़ा में स्वामीजी पधारे। लोक कहते हैं—"नगजी स्वामी का तेज बहुत है।"

स्वामीजी ने पूछा—"क्या तेज है ?"

तब लोगों ने कहा—"नगजी स्वामी गोचरी पधारते हैं, तब कुत्ती बहुत भौंकती है।

(बहुत कहा—रे कुत्तिया ! साधुओं को देख मत भौंक, पर वह कहा नहीं मानती। तब उन्होंने कुत्तिया की टांग पकड़ उसे घुमाया और फेंक दिया। वह सीधी

---

१. जैन शास्त्रों में पांच प्रकार का चारित्र बतलाया गया है। वे साधु में ही होते हैं।

हो गई। उसके बाद उसने भौंकना बंद कर दिया।"

तब स्वामीजी बोले—"कुत्तिया गिरी, वहां जगह का प्रमार्जन किया या नहीं ?"

तब वे गृहस्थ बोले—"तुम वहां जाकर उसका प्रमार्जन करो। व्यर्थ ही दोष बतलाते हो।

ऐसे मूर्ख थे वे गृहस्थ !

५५. शंका है तो चर्चा करें

पाली की घटना है। मयारामजी गोचरी में जितनी रोटियां मंगाई थीं, उनसे आठ रोटियां अधिक ले आए।

स्वामीजी ने गिन कर कहा—"आहार मंगाया, उससे अधिक लाए हो।"

तब मयारामजी बोला—"जो अधिक हो, उसे यहां रख दो, यहां रख दो।"

तब स्वामीजी ने आठ रोटिया निकाल उसे दे दीं। मयारामजी ने दूसरे साधुओं को लेने का अनुरोध किया, पर किसी ने उन्हें लिया नहीं।

तब वह बोला—"इन रोटियों को विधिवत् एकान्त में डाल देने का विचार है।"

स्वामीजी ने कहा—"ऐसा करो तो दूसरे दिन विगय (दूध, दही, आदि) का वर्जन कर देना।"

तब आक्रोश में आकर अंट-संट बोलने लगा—"मैं तो ऐसे आचार्य को मान्य नहीं करूंगा।" उसने अंट-संट बोलते हुए कहा—"नव पदार्थों में पांच जीव और चार अजीव, यह मान्यता ही मिथ्या है।" उनमें एक जीव और शेष आठ अजीव हैं।"

तब स्वामीजी क्षमापूर्वक उसे आश्वस्त कर आहार को समेट, बोले—आओ, तुम्हें शंका है, तो उसकी चर्चा करेंगे।" ऐसा कह कर वे उसी समय धूप में ही विहार कर गये।

उत्तराध्ययन सूत्र के आधार पर उसकी शंका मिटा दी। प्रायश्चित्त दिया और मुनि वेणीरामजी के पास रख दिया। कुछेक दिनों के बाद वह संघ से अलग हो गया।

५६. सीख किसे ?

स्वामीजी शौचार्थ जा रहे थे। एक वेषधारी साधु साथ हो गया। उसे हरियाली पर चलता देख स्वामीजी बोले—"यह साफ मार्ग रहा, फिर हरियाली पर क्यों चलते हो ?"

तब वह बोला—"मेरे बारे में यदि किसी को यह कहा, तो मैं गांव में जाकर कहूंगा कि भीखणजी हरियाली पर शौच-निवृत्ति कर रहे थे।

५७. मैं नहीं बता सकता

रीयां और पीपाड़ के बीच में एक वेषधारी साधु मिला। स्वामीजी को एकान्त में ले गया। थोड़ी देर से वापस आ गए। तब मुनि हेमराजजी ने पूछा—"स्वामीनाथ ! उसने आप से क्या पूछा ?"

स्वामीजी बोले—"उसने अपने दोषों की आलोचना की।"

मुनि हेमराजजी ने पूछा—"किन दोनों की आलोचना की थी ?"

तब स्वामीजी बोले—"मैं नहीं बता सकता।"

५८. लड़ना हो तो मुझसे लड़ो

पुर के बाहर स्वामीजी शौच-निवृत्ति के लिए गए। एक वेषधारी साधु उनके सामने आ रास्ता रोक कर खड़ा हो गया। और उनके चारों तरफ गोलाकार लकीर खींची और बकझक करने लगा। तब एक चरवाहे ने आकर उसे कहा—"इन गुरुजी से झगड़ा मत कर।"

भारीमालजी स्वामी की ओर इंगित करते हुए बोला 'विवाद करना हो तो इन से कर लड़ना हो तो मुझ से लड़।"

५९. निमंत्रण सबको, भोजन एक को

साधुपन स्वीकार कर उसे भली-भांति पालता है, वह महान् पुरुष होता है। कुछ कहते हैं—"पांचमें आरे में पूरा साधुपन नहीं पाला जा सकता है। इस समय ऐसा ही साधुपन पाला जा सकता है।" इस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया।

किसी ने भोज के लिए पूरे परिवारों को निमंत्रण दिया। भोजन के समय वह प्रत्येक परिवार में से एक-एक व्यक्ति को भीतर ले जाता है, शेष सबको बाहर ही रोक देता है।

लोगों ने कहा—"तुमने पूरे परिवार को सामूहिक निमंत्रण दिया और उनमें से एक-एक को भोजन करने भीतर ले जाता है, यह क्यों ?

तब वह बोला—"मेरी सामर्थ्य इतनी ही है।" उसने आगे कहा—"अमुक ने अपने पिता के पीछे धूल उड़ा दी, मृत्यु-भोज किया ही नहीं। मैं एक-एक को तो भोज कराता हूं।"

तब लोगों ने कहा—"तुम भी मृत्यु-भोज नहीं करते तो कौन तुम्हारे द्वार पर आकर धरना देता ? पूरे परिवारों को सामूहिक निमंत्रण देकर एक-एक को भोजन कराते हो, इससे तुम्हारा जन्म बिगड़ता है।"

इसी प्रकार दीक्षा लेते समय पांच महाव्रत स्वीकार करता है और आचरण के समय उनका पूरा पालन नहीं करता, उसके इहलोक और परलोक—दोनों बिगड़ जाते हैं।

६०. दिवालिया कौन ?

साधु का आचार बताया जाता है, उसे कुछ शिथिल आचार वाले निंदा मानते हैं। इस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—

एक साहूकार अपने बेटे को शिक्षा देता है—"जिससे उधार ले, उसकी राशि लौटा देनी चाहिए। न लौटाने वाले को लोग दिवालिया कहते हैं।" उसका पड़ोसी दिवालिया था, वह यह सुन कर जल-भुन जाता है। वह कहता है—"यह बेटे को शिक्षा नहीं दे रहा है, मेरी छाती को जला रहा है हृदय पर आघात लगा रहा है।"

इसी प्रकार कोई साधु-साधु का आचार बतलाता है, उसे सुन कर वेषधारी साधु जल-भुन जाता है और कहता है—"यह मेरी निंदा कर रहा है।"

६१. समझदार जान लेता है

कुछ लोग कहते हैं, "सावद्य दान के विषय में हम मौन रहते हैं। हम ऐसा नहीं कहते कि 'तू दे'।" वे इस प्रकार कहते हैं और उसमें पुण्य और मिश्र[1] का प्रतिपादन करते हैं। इस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया

किसी स्त्री ने कहा—"यह लोटा हमारी दुकान में दे देना।" समझने वाला मन में जानता है कि उसने वह अपने पति को देने के लिए दिया है।

इसी प्रकार सावद्य दान के विषय में पूछने पर कहते हैं कि इस विषय में हम मौन हैं। छिपे-छिपे पुण्य और मिश्र का प्रतिपादन करते हैं। समझने वाला जान लेता है कि सावद्य दान के विषय में इनकी पुण्य और मिश्र की मान्यता है।

६२. किसने कहा पाप है ?

पुण्य और मिश्र की मान्यता वाले प्रत्यक्ष तो पुण्य और मिश्र की प्ररूपणा नहीं करते, पर मन में तो पुण्य और मिश्र की मान्यता रखते हैं। उस श्रद्धा की पहिचान करवाने के लिए स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—

किसी स्त्री को कोई कहता है—"तुम्हारे पति का नाम 'पेमो' है ?"

"किसने कहा पेमो है ?"

"नाथू है ?"

"किसने कहा नाथू है ?"

"पाथू है ?"

"किसने कहा पाथू है ?"

पति का मूल नाम आने पर वह मौन हो जाती है। उससे समझ लेना चाहिए कि उसके पति का नाम यही है।

इसी प्रकार "क्या सावद्य दान में पाप होता है ?" यह पूछने पर कहते हैं "किसने कहा पाप है ?"

"क्या मिश्र है ?"

"किसने कहा मिश्र है ?"

"क्या पुण्य है ?" यह पूछने पर वे मौन हो जाते हैं। तब समझने वाला जान लेता है, इनके 'पुण्य' की मान्यता है। इसी प्रकार मिश्र के बारे में भी यही बात लागू होती है।

६३. घर किसका बसेगा ?

वेषधारी साधुओं को कोई कहता है—"स्थानक तुम्हारे लिए बनाया हुआ है।" तब वे कहते "हमने कब कहा हमारे लिए स्थानक बनाएं।" इस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया।

लड़का कब कहता है 'मेरी सगाई (मंगनी) कर दो ?

पर सगाई करने पर ब्याह कौन करेगा ?

---

१. जिस प्रवृत्ति में पुण्य और पाप का मिश्रण हो, उसे मिश्र कहते हैं।

"वह लड़का ही करेगा।"

"वह वधू किसकी कहलाएगी ?"

"लड़के की।"

"घर किसका बसेगा।"

"लड़के का ही बसेगा।"

इस प्रकार स्थानक किनका कहलाएगा ?

उन्हीं साधुओं का। वे ही उस स्थानक में रहते हैं। वे ही प्रसन्न होते हैं।

६४. हमने कब कहा ?

दामाद कब कहता है कि मेरे लिए हलुआ बनाओ। पर बनने पर वह खा लेता है। वह उसे खा लेता है, इसलिए दूसरी बार भी उसके लिए हलुआ बना दिया जाता है। यदि वह हलुआ खाने का त्याग कर लेता है तो फिर वह किसलिए बनाया जाएगा ?

इस प्रकार ये साधु कहते हैं, 'हमने कब कहा हमारे लिए स्थानक बनाओ,' उनके लिए बनाए गए स्थानक में वे रह जाते हैं। तब उनके लिए वे बनाये जाते हैं। यदि वे स्थान में रहने के त्याग करें, तो फिर गृहस्थ किसलिए बनाए !

६५. मारना तो छोड़ो

वेषधारी साधु कहते हैं—"हम मरते जीवों की रक्षा करते हैं, भीखणजी नहीं करते।"

तब स्वामीजी बोले—"तुम्हारी रक्षा की बात दूर रही, मारना तो छोड़ो। अंधेरी रात्री में दरवाजे बन्द करते हो अनेक जीव मर जाते हैं। यदि दरवाजे को बन्द करने का त्याग करो, तो अनेक जीवों की रक्षा हो जाएगी। जैसे कोई चौकीदार था, उसने चौकीदारी तो छोड़ दी और चोरी करने लग गया। लोगों को कहता है 'मैं चौकीदारी करता हूं, इसलिए मुझे सुरक्षा करने के लिए पैसे दो।'

तब लोग बोले—'तुम्हारी चौकीदारी दूर रही, तुम चोरी करना तो छोड़ो। तुम दिन में दुकान और घर देख जाते हो और रात को सेंध मारते हो, चोरी करते हो। पैसे तुम्हें घर बैठे ही दे देंगे, तुम चोरी करना छोड़ दो।'

वैसे ही वेषधारी साधु कहते हैं—'हम जीवों की रक्षा करते हैं।'

स्वामीजी बोले—'तुम्हारी रक्षा की बात दूर रही तुम उन्हें मारना छोड़ो।'

६६. दोष की स्थापना करने पर साधुपन कैसे रहेगा ?

कुछ लोग ऐसा कहते हैं—"अभी पांचवां अर है। इसलिए पूरा साधुपन पाला नहीं जा सकता।" तब उनको स्वामीजी ने कहा—"चौथे अर में 'तेला' (तीन दिनों का उपवास) कितने दिनों का होता है ?"

तब उन्होंने कहा—"तीन दिन का होता है।"

स्वामीजी ने कहा—"एक भूंगड़ा (भूना हुआ चना) खा ले, तो तेला रहता है, या टूट जाता है ?

तब उन्होंने कहा—''टूट जाता है।

स्वामीजी ने फिर पूछा —''पांचवे अर में ''तेला कितने दिनों का होता है ?

तब उन्होंने कहा—''तीन दिनों का होता है।

स्वामीजी ने पूछा—' इस समय एक भूंगड़ा खा लेने पर तेला रहता है या टूट जाता है ?

तब उन्होंने कहा—''टूट जाता है।

तब स्वामीजी बोले—'तब तुम पंचम काल के सिर पर क्यों दोष मढ़ते हो ? एक भूंगड़ा खा लेने पर तेला टूट जाता है, तो दोष की स्थापना करने पर साधुपन कैसे रहेगा ?

६७. त्याग को तोड़ने वाला कौन और पालने वाला कौन ?

कुछ लोग कहते हैं—''ये (शिथिलाचारी साधु) दोषों का सेवन करते हैं, फिर भी अपने से तो अच्छे हैं। ये सजीव जल नहीं पीते, स्त्री का सेवन नहीं करते। इस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया —

एक व्यक्ति ने तीन एकासन किए। प्रत्येक दिन उसने छह-छह रोटियां खाईं। एक व्यक्ति ने तेला (तीन दिन का उपवास) किया और प्रत्येक दिन आधी-आधी रोटी खाई। इन दोनों में त्याग को तोड़ने वाला कौन और पालने वाला कौन ? तेला करने वाले ने त्याग को तोड़ा और एकासन करने वाले ने त्याग का पूरा पालन किया।

इसी प्रकार गृहस्थ स्वीकार किए हुए व्रतों का सम्यक् पालन करता है, वह एकासन करने वाले जैसा है और जो साधुपन को स्वीकार कर दोषों का सेवन करता है वह तो तेले में रोटी खाने वाले जैसा है।

६८. जन्मपत्री तो बाद में बनती है

पाली की घटना है। लखजी बीकानेर मरणासन्न था, तब उसने स्थानक के निमित्त इक्कावन रुपये देने की घोषणा की। उन रुपयों से एक जगह खरीद कर वहां लकड़ी का फाटक लगा दिया। इसमें विशेष आरंभ नहीं हुआ तब किसी ने स्वामीजी से कहा—''इसमें कौन-सा आरम्भ है। कोई विशेष आरंभ नहीं हुआ।''

तब स्वामीजी ने कहा—''कोई जन्मता है, उस समय उसके जन्म का समय अंकित किया जाता है, जन्मपत्री और वर्षफल तो बाद में बनते हैं। वैसे ही इस स्थानक की स्थापना तो हो गई है, लम्बे आयुष्य वाला देखेगा, इस पर भवन खड़ा हो रहा है।''

फिर कुछ वर्षों बाद उस स्थान में भवन खड़ा होने लगा, तब टेकचंद पोरवाल ने कहा—भीखणजी कहते थे—यहां भवन खड़ा होगा सो अब हो ही गया।

६९. फूलझड़ी से क्या होगा ?

सामने वालों को समझाने के लिए कड़े दृष्टांत का प्रयोग किया जाता। तब किसी ने स्वामीजी से कहा—''आप कड़े दृष्टांत का प्रयोग करते हो।''

तब स्वामीजी ने कहा—''रोग तो गंभीर बात का हुआ और कहता है, इसे

फूलझड़ी से दाग दो।" पर फूलझड़ी से दागने पर वह रोग कैसे मिटेगा ? वह मिटेगा आग में तपे हुए लोहे के कुश[1] के दागने से।

ऐसे ही मिथ्यात्व का रोग बड़ा जटिल है, वह कड़े दृष्टांत के बिना कैसे मिट सकता है ?

७०. आचार्य पद तो मिलना कठिन है

चन्द्रभाणजी ने तिलोकचंदजी को आचार्य पद का प्रलोभन देकर स्वामीजी से विमुख कर दिया। तब स्वामीजी ने कहा—"तुम्हें आचार्य पद तो मिलना कठिन है। लगता है, सूरदास-पद मिल जाए। यह भी लगता है, तुम्हें चन्द्रभाणजी जंगल में छोड़ेगा।"

कुछ वर्षों बाद चन्द्रभाणजी ने तिलोकचंदजी को दृष्टि की दुर्बलता के कारण जंगल में छोड़ दिया।[2] स्वामीजी का वचन सत्य हो गया।

७१. विवेक

एक लड्डू में जहर मिला हुआ है और दूसरे में नहीं है। किन्तु समझदार आदमी निर्णय किए बिना दोनों में से किसी को भी नहीं खाता। इसी प्रकार साधु और असाधु का निर्णय किए बिना किसी को भी वंदना नहीं करता।

७२. हमें पुण्य कैसे होगा ?

वेषधारी साधु सावद्य दान में पुण्य कहते हैं। समझदार आदमी उसका सही मूल्यांकन करता है। "तुम असंयती को देने में पुण्य बतलाते हो, सो उसे देते हो या नहीं ?"

तब वे कहते हैं—"हम साधु हैं। इसलिए असंयती को देने से हमें दोष लगता है, उसे हम नहीं दे सकते।"

इस विषय में स्वामीजी ने एक दृष्टांत दिया—एक पुरुष से किसी ने कहा—"तुम्हारे शरीर में वायु का रोग है, सो सात मंजिले मकान से छलांग भरो, तुम्हारा वायु का रोग मिट जाएगा।"

तब वह बोला—"यह वायु का रोग तो तुम्हारे शरीर में भी है, पहले तुम छलांग भरो।"

---

१. राजस्थानी कोष खण्ड ४ पृष्ठ में 'हलवानी' के अन्तर्गत उद्धृत।

२. चूरू से विहार कर चन्द्रभाणजी और तिलोकचंदजी जुहारिया जा रहे थे। रास्ते में चन्द्रभाणजी ने एक गोलाकार कुंडल बनाया। उसमें चींटियां चल रही थीं। तिलोकचंदजी से पूछा—"बताओ, यहां क्या है ?" वे बोले "मुझे कुछ भी दिखाई नहीं देता। तब चंद्रभाणजी ने कहा—तुम्हें खड़े-खड़े चींटिया दिखाई नहीं देतीं, इसलिए तुम अब अकेले चल नहीं सकते। अब तुम मारणान्तिक संलेखना शुरू कर दो। उन्होंने कहा—"अभी शरीर दुर्बल नहीं है। मैं संलेखना प्रारंभ कैसे कर सकता हूं ? आप मेरे आगे-आगे चलें, मैं आपके पीछे-पीछे चलूंगा। उन्होंने कहा—"यह संभव नहीं है।" उस समय चन्द्रभाणजी जंगल में ही उनका संबंध-विच्छेद कर आगे चले गये। स्वामीजी ने जो कहा, वे दोनों बातें एक साथ सत्य हो गईं।

तब वह बोला—"छलांग लगाने से मेरी तो हड्डियों का कचूमर निकल जाएगा। तुम्हीं छलांग लगाओ।"

तब वह बोला—"तुम्हारी हड्डियों का कचूमर निकल जाएगा, तो मेरा वायु का रोग कैसे मिटेगा ?

वैसे ही वेषधारी साधु कहते हैं, "असंयती को देने से हमारा साधुपन भग्न हो जाता है। तुम दो, तुम्हें पुण्य होगा।"

तब समझदार आदमी ने कहा—"जिस दान से तुम्हारा जिस साधुपन भग्न होता है, उस दान से हमें पुण्य कैसे होगा ?"

७३. यह बात तो मूर्ख मान सकता है

(इसी विषय में दूसरा दृष्टांत) दो मनुष्यों के परस्पर लंबे समय से वैर-विरोध चल रहा था। बाद में उन्होंने परस्पर मेल-मिलाप कर लिया। एक व्यक्ति दूसरे को निमंत्रण देकर भोजन कराने अपने घर ले गया। भोजन परोस कर बोला—"भाई साहब ! भोजन करें।"

तब वह बोला—"तुम भी मेरे साथ भोजन करने बैठो।" वह उसके साथ भोजन नहीं करता।

तब वह बोला—"यदि तुम साथ में भोजन नहीं करोगे, तो मुझे भी भोजन करने का त्याग है।"

उसका निष्कर्ष था कि यदि भोजन में विषैले द्रव्य मिलाए हुए हैं, तब तो यह भोजन नहीं करेगा और यदि वह शुद्ध है तो साथ में भोजन कर लेगा।

ऐसे ही असंयती को दान देने में पुण्य बतलाते हैं तब समझदार आदमी जान लेता है कि ये स्वयं तो देते नहीं और दूसरों को देने में पुण्य बतलाते हैं। किन्तु यह बात तो जो मूर्ख होगा, वही मानेगा। यदि उसमें पुण्य हो, तो पहले स्वयं वैसा करेंगे, दूसरा व्यक्ति तभी उसे मानेगा।

७४. बुद्धि की पकड़

एक वेषधारी साधु बोला—"यदि भीखणजी को कटारे से मार डालूं तो हमारा झगड़ा ही समाप्त हो जाए।" कुछ समय बाद उसका शील भंग हो गया। तब उसे नई दीक्षा दी गई। लोगों में यह बात फैलाई गई कि इसने भीखणजी को कटार से मारने की बात कही, इसलिए इसे नई दीक्षा दी गई।

यह बात स्वामीजी ने भी सुनी। आपने अपनी बुद्धि से विचार किया—"लगता है, इसका शील भंग हुआ है।"

एक दिन वह मिला तब स्वामीजी ने पूछा—"तुम्हारा शील तुम्हारी संसार-पक्षीया पत्नी से भंग हुआ अथवा अन्य स्त्री से भंग हुआ ?"

तब वह बोला—"पर स्त्री से भंग नहीं हुआ और अपनी संसारपक्षीया स्त्री से भी स्पर्श रूप भंग हुआ, पूर्ण भंग नहीं हुआ। फिर भी नई दीक्षा दी गई।"

७५. कथनी-करणी का अन्तर

वेषधारी साधु कुसलोजी और तिलोकजी कठोर चर्या में चलने लगे। उनकी

नीति यह थी कि इस प्रकार हम भीखणजी के श्रावकों को अपने पक्ष में कर सकते हैं। बड़ी कठोर प्ररूपणा करने लगे—"साधु तीसरे प्रहर में ही गोचरी करे। गांव में न रहे।"

कुछ दिनों बाद स्वामीजी मिले। आपने देखा कि वे पहले प्रहर में गोचरी कर रहे थे। तब स्वामीजी ने पूछा—"तुम तीसरे प्रहर में गोचरी करना बतलाते हो फिर पहले प्रहर में गोचरी कैसे कर रहे हो ?

तब वे तड़क कर बोले—"हम तो धोवन पानी लाने के लिए घूम रहे हैं।"

स्वामीजी बोले—"धोवन पानी लाने में दोष नहीं है, तो रोटी लाने में क्या दोष होगा ?"

वे फिर बोले—"साधु को लड्डू नहीं खाना चाहिए, उसे घी नहीं खाना चाहिए। उन्हें कौन-से बच्चों और बच्चियों को पैदा करना है ?"

स्वामीजी बोले—"तुम कहते हो, 'साधु को लड्डू नही खाना चाहिए,' तो 'देवकी के पुत्रों ने लड्डू का दान लिया'—यह सूत्रों में बतलाया गया है, वह कैसे ?"

तब वे बोले—"वे तो महान् पुरुष थे।"

तब स्वामीजी बोले—"महान् पुरुष होते हैं, वे ही खाते हैं।"

तब वे क्रोध कर बोले—"तुम तेरापंथियों ने दान-दया का लोप कर दिया, इसलिए हम तुम्हें लोगों की दृष्टि में गिरा देंगे।"

स्वामीजी बोले—"दो हजार वेषधारी साधु पहले से ही यह बात कह रहे हैं, उनमें यदि दो कम हैं, तो तुम उस संख्या को पूरा कर दो और यदि दो हजार पूरे हैं तो तुम दो अधिक हो जाओगे ?"

वहां से वे नेणवे गांव में गए। स्वामीजी के श्रावकों को शंकित बनाने का प्रयत्न करने लगे। तब श्रावक भी उनकी ठगाई को प्रकट करने लगे।

उन दोनों में एक बेले-बेले पारणा (प्रति दो दिवसीय उपवास के बाद भोजन) करता था। श्रावकों ने उसे कहा—"तुम तो तपस्या ठीक करते हो। तुम्हारा दूसरा साथी तपस्या नहीं कर रहा है।"

तब वह बोला—"तपस्या लोलुपता छूटने पर होती है मेरा साथी खाने का लोलुप है।"

तब श्रावकों ने उसके साथी से कहा—"तपस्या करने वाला तुम्हें लोलुप बतलाता है।"

तब वह बोला—"वह तपस्या करता है, पर क्रोधी है।"

तब उन्होंने तपस्या करने वाले से कहा—"तुम्हारा साथी तुम्हें क्रोधी बतलाता है। तब वे दोनों इकट्ठे हो परस्पर झगड़ने लगे। यह देख लोग बोले—

"जोडी तो जुगती मिली, कुशलो ने तिलोक।
ऊ थापै ऊ ऊथपै, किण विध जासी मोख।।

"इन दोनों की कैसी जोड़ी मिली है। परस्पर एक दूसरे को हीन बतला रहे हैं। इनका मोक्ष कैसे होगा ?

फिर तिरस्कृत हो वहां से चले गए।

७६. दोनों सच

एक ही बड़े संप्रदाय के अवान्तर संप्रदायों में बंटे हुए साधु परस्पर एक दूसरे को झूठा बतलाते थे। तब स्वामीजी बोले—"कथनी की दृष्टि से दोनों सच हैं।" वे भी झूठे हैं इस दृष्टि से दोनों सच बोल रहे हैं।

७७. चार अंगुल वस्त्र खण्ड के लिए

पादू में एक भाई ने कहा—"हेमजी स्वामी की चादर प्रमाण से बड़ी लग रही है। तब स्वामीजी ने लम्बाई और चौड़ाई दोनों ओर से नाप कर उसे दिखा दी। वह प्रमाणोपेत निकली। तब स्वामीजी ने उसे बहुत उलाहना दिया। आपने कहा "चार आंगुल के वस्त्र-खण्ड के लिए क्या हम अपना साधुपन खोएंगे? क्या तुम हमें इतने भोले समझ रहे हो? तुम्हें इतनी ही प्रतीति नहीं है तो कोई साधु यदि मार्ग में सजीव जल पी ले या और कुछ कर ले, तो तुम कहां-कहां उसके पीछे जाओगे? इस प्रकार उसे बहुत कड़ी चेतावनी दी।

तब वह हाथ जोड़ बोला—"मुझे झूठा ही संदेह हो गया, आप क्षमा करें।"

७८. इसमें शंका की क्या बात?

तेरापंथ—दीक्षा से पूर्व स्वामीजी अपने गुरुजी के साथ गोचरी के लिए गए। एक भाई चरखा कात रहा था, उसके हाथ से आहार का दान लिया।

तब गुरुजी बोले—"भीखणजी! क्या शंका हुई?"

तब स्वामीजी बोले—"साक्षात् अकल्पनीय आहार का दान लिया, उसमें फिर शंका की क्या बात?"

तब गुरुजी बोले—"भीखणजी! दृष्टि गहरी रखनी चाहिए। पहले तुम्हारे जैसा एक नया शिष्य गुरु के साथ गोचरी गया था। अकल्पनीय आहार लेते समय उसने गुरु को वरजा था। तब गुरु ने वह आहार नहीं लिया। फिर किसी समय जंगल में विहार करते समय उसे बहुत प्यास लगी। उसने गुरु से कहा "मुझे बहुत प्यास लगी।' गुरु ने कहा—"साधु का मार्ग है, दृढ़ता रखो। पर शिष्य प्यास से छटपटा रहा था। उसने सजीव जल पी लिया। उसे बड़ा प्रायश्चित्त प्राप्त हुआ। अन्यथा थोड़े प्रायश्चित में ही उसका काम निपट जाता।"

तब स्वामीजी ने सोचा—"इनकी दृष्टि ही ऐसी है।"

७९. साहूकार—दिवालिया

कुछ साधु कहते हैं—"अभी पांचवां अर है, पूरा साधुपन नहीं पाला जा सकता।

तब स्वामीजी बोले—"ऋण पत्र साहूकार और दिवालिया दोनों के लिए लिखा जाता है—जब ऋण-दाता मांगेगा तब तुरन्त रुपये लौटा देंगे। उसमें कोई आपत्ति नहीं करेंगे। चमकते हुए खरे रुपए लेंगे।"

"पर साहूकार और दिवालिया का पता तो वापस मांगने पर ही चलता है। साहूकार ब्याज-सहित लौटा देता है और दिवालिया मूल से भी मुकर जाता है।

"इसी प्रकार भगवान् ने सूत्र का निरूपण किया, उसके अनुसार जो चलता है वह साधु और पांचवें अर का नाम लेकर जो उसके अनुसार नहीं चलता वह असाधु है।

८०. पंचों को पूछूंगा

एक वैद्य ने किसी आदमी की आंखों की शल्य-चिकित्सा की। आंख के ठीक होने पर वैद्य ने पुरस्कार मांगा।

तब वह बोला—"पंचों को पूछूंगा। यदि पंच कहेंगे, 'तुझे दीखने लग गया,' तब मैं तुम्हें पुरस्कार दूंगा।"

तब वैद्य बोला—"तुम्हें कैसा दिखाई देता है ?"

तब वह फिर बोला—"पंच कहेंगे कि 'तुझे ठीक दिखाई दे रहा है,' तब तुम्हें पुरस्कार दूंगा।"

वैद्य ने सोचा—"पुरस्कार मिल चुका !"

इसी प्रकार किसी को सिद्धांत समझाकर कहा जाता है, 'अब तुम गुरु स्वीकार करो,' तब वह कहता है, 'दो-चार व्यक्तियों को पूछूंगा और पहले जो गुरु हैं, उन्हें भी पूछूंगा। वे कहेंगे तो गुरु-धारणा कर लूंगा।' तब जान लेना चाहिए इसने सिद्धांत को ठीक से नहीं समझा।

८१. बड़ा मूर्ख

किसी व्यक्ति ने वेषधारी साधुओं को छोड़ सच्चा सिद्धांत स्वीकार कर लिया और स्वामीजी का अनुगामी बन गया, परन्तु वेषधारी साधुओं से संग-परिचय नहीं छोड़ पा रहा था। वह बार-बार उनके पास जाता।

तब स्वामीजी ने पूछा—"उनका संग-परिचय क्यों रखता है ?"

तब वह बोला—"मेरे मन में उनके प्रति पहले का स्नेह-भाव है।

तब स्वामीजी बोले—"किसी व्यक्ति को 'मेर' पकड़ कर ले गये और उसका घर-बार लूट लिया, उसकी पिटाइ भी की। बाद में घर वाले परिश्रम कर उसे छुड़ा लाए। कुछ समय बाद मेले में इकट्ठे हुए। वह 'मेरों को पहिचान उनसे मिला। तब लोगों ने पूछा—"इनके साथ तुम्हारी क्या जान-पहिचान है ?' तब वह बोला—मेरे शरीर पर भाई साहब के हाथ की चोट लगी है, यही भाई साहब से मेरी जान-पहिचान है।"

तब लोगों ने जान लिया, 'यह पूरा मूर्ख है।'

इसी प्रकार इन कुगुरुओं के योग से कोई मिथ्या मार्ग की ओर जा रहा था। तब सद्गुरु उसे अच्छे मार्ग पर ले गए और यदि वह उन कुगुरुओं से संग-परिचय रखता है, तब वह बड़ा मूर्ख है।

८२. कहीं नया झगड़ा खड़ा न हो

स्वामीजी ने सिरियारी में चतुर्मास किया। वहां पोतियाबंध मत का कपूरजी नाम का साधु था और उस मत की कुछ श्राविकाएं भी थीं। संवत्सरी-पर्व आया, तब कपूरजी ने स्वामीजी से कहा—"भीखणजी ! श्राविकाओं से खटपट हो गई, अतः उनसे क्षमायाचना करने जा रहा हूं।"

स्वामीजी बोले—"तुम क्षमायाचना करने जा रहे हो, पर कहीं नया झगड़ा खड़ा न कर दो।"

तब कपूरजी ने कहा—"नया झगड़ा क्यों करूंगा ?"

उसके बाद में वह श्राविकाओं के पास जाकर बोला—"अपन परस्पर क्षमायाचना करते हैं। तुमने तो बहुत अयोग्य व्यवहार किया, पर मुझे तो राग-द्वेष नहीं रखना।"

तब श्राविकाओं ने कहा—"अयोग्य व्यवहार तुमने किया है या हमने ?" इस प्रकार परस्पर झगड़ा बढ़ गया।

वापस आकर स्वामीजी से बोला—"भीखणजी ! झगड़ा तो उल्टा बढ़ गया।"

तब स्वामीजी बोले—"हमने तुम्हें पहले ही कहा था।"

८३. यहां कौन-सा दुःख था

हेमजी स्वामी ने स्वामीजी से कहा—"तिलोकजी, चन्द्रभाणजी, सन्तोषचन्दजी, शिवरामदासजी आदि गण से पृथक् होकर अलग-अलग घूम रहे हैं। वे सब इकट्ठे होकर एक साथ रहें, तो उनका भी एक गण बन सकता है।

तब स्वामीजी बोले—"ऐसी करामात हो, तो यहां से क्यों जाते ? यहां कौन-सा दुःख था ?"

८४. हम तो हृदय परिवर्तन करते हैं

किसी वेषधारी साधु ने कहा—"भीखणजी करोड़ कसाइयों से भी ज्यादा भारी।

तब स्वामीजी बोले—"उनकी दृष्टि से तो यह बिलकुल ठीक है। कारण, कसाई तो बकरों को मारते हैं। उन्होंने कहने वालों का क्या बिगाड़ा ? और हम तो उनके श्रावकों का हृदय-परिवर्तन करते हैं। फलतः श्रावक उनके सम्प्रदाय से टूट जाते हैं। इसलिए वे ऐसा कहते है।

८५. आज तो रह जाते हैं

भीखणजी स्वामी सिरियारी से विहार कर रहे थे। तब सामो भंडारी उनके चरणों में अपनी पगड़ी रख कर आग्रहपूर्वक बोला—"आज आप विहार न करें।"

तब स्वामीजी बोले—"आज तो हम रह जाते हैं, पर भविष्य में ऐसा आग्रहपूर्ण अनुरोध मत करना।"

८६. आज तो वापस चलें

स्वामीजी आगरिया से विहार कर रहे थे, तब भाइयों ने वहां रहने के लिए अत्यंत आग्रह किया। पर स्वामीजी ने उसे स्वीकार नहीं किया। वे विहार कर गए। गांव के बाहर कुछ दूर गए। तब भारीमालजी स्वामी बोले—"आपने प्रार्थना नहीं मानी, इसलिए बेचारे भाई बहुत खिन्न और रूंआसे हो गए।

तब स्वामीजी बोले—"आज तो वापस चलें, (पर उन्हें समझा देना कि) भविष्य में आग्रहपूर्ण अनुरोध न करें।"

८७. हम भगवान् के घर के सन्देशवाहक है

केलवा में परिषद् जुड़ी हुई थी। वहां के जागीरदार ठाकर मोखमसिंहजी ने स्वामीजी से पूछा—"गांव-गांव से आपके पास प्रार्थनाएं आती हैं। बहुत पुरुष और

स्त्रियां आपको चाहते हैं। वे आपको देखकर बहुत प्रसन्न होते हैं उन्हें आप बहुत प्रिय लगते हैं। इसका क्या कारण ? आपमें ऐसा कौन-सा गुण है ?"

तब स्वामीजी बोले—"कोई साहूकार परदेश गया हुआ था। उसने अपने घर सन्देशवाहक भेजा और खर्चे के लिए रुपए-पैसे भी भेजे। सेठाणीजी सन्देशवाहक को देखकर बहुत राजी हुई। गरम पानी से उसके पैर धुलाए। भली-भांति खाना पका कर उसे खिलाया। उसके पास बैठकर अपने पति के समाचार पूछने लगीं—"साहजी शरीर में कैसे हैं—उनका स्वास्थ्य कैसा है ? उनके शरीर में सुख-शांति है ? साहजी कहां सोते हैं ? कहां बैठते हैं ?' सन्देशवाहक जैसे-जैसे समाचार बतलाता है, वैसे-वैसे वह सुनकर बहुत राजी होती है। पर सन्देशवाहक को देख प्रसन्न होने का कारण यह है कि वह उसके पति का समाचार उसे बतलाता है।

"इसी प्रकार हम भगवान् के गुण और उनका सन्देश लोगों को बतलाते हैं। संसार से मुक्त होने का मार्ग बतलाते हैं। यही कारण है कि पुरुष और स्त्रियां हमसे बहुत प्रसन्न रहती हैं।"

८८. यह किसने देखा ?

किसी समय केलवा में ठाकर मोखमसिंहजी ने पूछा—"आप भविष्य और अतीत का लेखा-जोखा बतलाते हैं। वह किसने देखा है ?'

तब स्वामीजी बोले—"तुम्हारे बाप, दादे और परदादे हुए। तुम उन पीढ़ियों के नाम और उनकी पुरानी बातें जानते हो, वे सब किसने देखे हैं ?"

तब ठाकर बोले—"बही-भाटों की पोथियों में पुरखों के नाम और बातें लिखी हुई हैं उनके आधार पर हम जानते हैं।"

तब स्वामीजी बोले—"बहीभाटों के झूठ बोलने का त्याग नहीं है। उनकी लिखी हुई बातों को भी तुम सच मानते हो, तब फिर ज्ञानी पुरुषों द्वारा कहे हुए शास्त्र असत्य कैसे होंगे ? वे सत्य ही हैं।"

यह सुन ठाकर बहुत प्रसन्न हुए और बोले—"आपने बहुत अच्छा समाधान किया।"

८९. मेरी सामर्थ्य इतनी ही है

ढुंढाड (जयपुर राज्य का एक प्रदेश) के एक गांव में स्वामीजी पधारे। वहां के जागीरदार ने स्वामीजी के चरणों में अट्ठन्नी[1] के टक्के[2] रखे। स्वामीजी बोले—"हम तो टक्के-पैसे नहीं लेते।"

तब जागीरदार बोला—"आप मोहर लायक हैं, पर मेरी सामर्थ्य इतनी ही है। अगली बार आप पधारेंगे तब पूरा रुपया भेंट करूंगा।"

तब स्वामीजी बोले—"हम तो रुपए, मोहर आदि कुछ भी नहीं रखते।"

यह सुन जागीरदार बहुत खुश हुआ। वह गुणग्राम करने लगा—"आपकी करणी धन्य है।"

१. आधा रुपया।

२. दो पैसे का सिक्का।

९०. सम्यक्‌दृष्टि को पाप नहीं लगता ?

पुर की घटना है। ऋषि गुलाबजी दो साधुओं सहित स्वामीजी के पास चर्चा करने आए। वेषधारी साधुओं के अनेक श्रावक उनके साथ थे। वे श्रावक अंट-संट बोलने लगे।

तब स्वामीजी ने कहा—"होली में किसी को राव बना तमाशबीन 'गेरिआ' (होली खेलने वाले) उसके साथ होते हैं। उसी प्रकार ऋषि गुलाबजी को राव बना तुम लोग गेरिआ बने हो, ऐसा लगता है। ज्ञान की बात तो कुछ दिखाई नहीं देती।"

फिर स्वामीजी ने ऋषि गुलाबजी से पूछा—"शीतलजी के सम्प्रदाय के साधुओं को तुम साधु मानते हो या असाधु ?"

तब वे बोले—"असाधु मानता हूं।"

"शीतलजी के साधु अनशन करते हैं, उन्हें तुम क्या मानते हो ?"

तब वे बोले—"अकाम-मरण।"[1]

"रुघनाथजी, जयमलजी आदि सम्प्रदायों के साधुओं को क्या मानते हो ?"

तब वे बोले—"असाधु मानता हूं।"

"उनके साधु अनशन करते हों, उसे क्या मानते हो ?"

"अकाममरण।"

"फिर वे श्रावक बोले—आप भीखणजी को क्या मानते हैं ?"

उनके उत्तर देने से पहले ही स्वामीजी बोले—"हमने इन्हें पहले कभी देखा ही नहीं। हमारी और इनकी मान्यताएं तथा आचार परम्पराएं मिल जाएं, तो हमें इनके साथ संघीय सम्बन्ध स्थापित करने में कोई संकोच नहीं होगा।" उस समय उनमें से कुछ श्रावक तो वहां से चले गए।

अब ऋषि गुलाबजी से स्वामीजी ने पूछा—"सम्यक्-दृष्टि के पाप का बन्ध होता है या नहीं ?"

तब उन्होंने उत्तर दिया—"नहीं होता।"

तब स्वामीजी ने पूछा—"यदि सम्यग्दृष्टि स्त्री का सेवन करे तो ?"

तब वह बोला—"पाप नहीं लगता।"

"तुम अपने आपको सम्यक्‌दृष्टि मानते हो; यदि तुम स्त्री का सेवन करो ?"

तब बोले—"पाप तो नहीं लगता, पर साधु के वेष में यह बात शोभा नहीं देती।"

तब स्वामीजी बोले—"सिर पर वस्त्र लपेट कर यदि स्त्री का सेवन करो तो ?" इत्यादि अनेक प्रश्न पूछे।

तब वे उत्तर देने में असमर्थ रहे। बहुत उलझ गए। तब क्रोध में आकर बोले—"आप हमसे चर्चा कर रहे हैं; यदि गोगुन्दा के भाइयों से चर्चा करें, तो आपको पता चले। गोगुन्दा के भाई 'तुंगिया नगरी के श्रावक' हैं। वहां के श्रावक 'अकबरी मोहर' हैं।"

---

१. मोक्ष के उद्देश्य-रहित मरण।

तब स्वामीजी बोले—"इससे भी ज्यादा तेज क्षेत्र हो तो बता दो।"

ऋषि गुलाबजी आगमों की बत्तीसी को कंधों पर उठाए घूमते थे। परन्तु मान्यता सही नहीं थी। स्वामीजी ने उनसे पांच महाव्रतों के द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के बारे प्रश्न किए।

तब बोले—"ये सब पन्ने में लिखे हैं।"

स्वामीजी बोले—"पन्ना फट जाएगा तो? साधुपन तुम पालते हो, या पन्ना पालता है?" इत्यादि प्रश्नों से वे बहुत उलझन में फंस गए।

० ये हमारे पहले के गुरु हैं

कालान्तर में स्वामीजी गोगुन्दा पधारे। वहां के भाइयों से चर्चा कर उन्हें तेरापंथ का अनुयायी बना लिया। यह सुन कर ऋषि गुलाबजी वहां आए और स्वामीजी से चर्चा करने लगे। तब भाई बोले—"महाराज! इनसे तो चर्चा हम करेंगे। ये हमारे पहले के गुरु हैं।" फिर भाइयों ने ऋषि गुलाबजी से चर्चा कर उन्हें निरुत्तर कर दिया।

तब वे क्रोध में आकर बोले—गोगुंदा के भाई ठीकरी के रुपए हैं।" बहुत खिन्न होकर चले गए।

गोगुन्दा के श्रावकों ने १८२२ पन्नों के भगवती सूत्र का दान दिया और प्रज्ञापना सूत्र का भी।

९१. एक भीखन बाकी बचा

पाली का प्रसंग है। संवेगी साधु खंतिविजयजी ने आचार्य रुघनाथजी से चर्चा की—"किसी गृहस्थ ने साधुओं को भिक्षा में मिश्री के बदले नमक दे दिया तो क्या किया जाय?"

खंतिविजयजी बोले—"वह साधु के पात्र में आ गया इसलिए उसे खा लेना चाहिए।"

आचार्य रुघनाथजी ने कहा—"या तो वह नमक देने वालों को वापस कर दिया जाए या उसका व्युत्सर्ग कर दिया जाए।"

उन्होंने एक ब्राह्मण को मध्यस्थ बनाया था। उसने कहा—"वह खाना चाहिए।"

फिर आचार्य रुघनाथजी ने आचारांग की प्रति निकाली। उस समय खंतिविजयजी ने आचार्य रुघनाथजी के हाथ से पन्ना छीन, उसे फाड़ डाला। बहुत लोगों के बीच उन्होंने आचार्य रुघनाथजी की अवमानना की। तब खंतिविजयजी के पक्ष की बहिनें गाने लगीं—

"ज्ञानी गुरु जीत गए, जीत गए। सूत्र के प्रताप से हमारे ज्ञानी गुरु जीत गए।"

तब आचार्य रुघनाथजी बहुत उदास हो गए। फिर उन्होंने अपने श्रावकों से कहा—"इन खंतिविजयजी को जीत सके वैसा तो भीखण ही है। हम 'बाईस टोले' सच्चे हैं, उन्हें भी वह असत्य ठहरा देता है, तो यह तो साक्षात् तांबे का रुपया है, इसे हटाना तो बहुत सरल है।

तब आचार्य रुघनाथजी के श्रावक स्वामीजी के श्रावकों से कहने लगे—"तुम्हारे गुरु मेवाड़ में हैं सो प्रार्थना कर उन्हें यहां बुलाओ।"

कुछ दिनों बाद स्वामीजी मेवाड़ से मारवाड़ पधारे। पाली में आचार्य रुघनाथजी के श्रावक स्वामीजी से कहने लगे—"पूज्यजी ने कहा है, 'आप खंतिविजयजी से चर्चा कर उन्हे निरुत्तर करें। वे उल्टी-सुल्टी बातें बहुत करते हैं—मैंने ढूंढियों के मुंह में अंगुली डाल कर देख लिया है, पर मुझे कहीं भी दांत नहीं मिला। एक सांवरे रंग वाला भीखन बाकी बचा है।' इस प्रकार वह अवांछनीय शब्दों का प्रयोग करता है।"

० निक्षेपों की चर्चा

कुछ दिनों बाद स्वामीजी विहार करते-करते काफरला गांव (मारवाड़) में पधारे। खंतिविजयजी भी पीपाड़ के अनेक श्रावकों के साथ मंदिर की प्रतिष्ठा के लिए वहां आए।

उन्हें अनेक लोगों ने कहा—"आप भीखणजी से चर्चा करें।" एक दिन कुम्हारों के मोहल्ले में स्वामीजी जा रहे थे। सामने वे भी आ गए। उन्होंने स्वामीजी से पूछा—"तुम्हारा नाम क्या ?"

स्वामीजी बोले—"मेरा नाम भीखण।"

खंतिविजयजी बोले—"जो तेरापंथी भीखणजी हैं, वे तुम ही हो ?"

तब स्वामीजी बोले—"हां, मैं वही हूं।"

तब खंतिविजयजी बोले—"तुमसे निक्षेपों की चर्चा करनी है।"

स्वामीजी बोले—"निक्षेप कितने हैं ?"

वे बोले—"निक्षेप चार हैं—नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव।"

स्वामीजी ने पूछा—"इनमें से वंदना-भक्ति किन निक्षेपों की करनी चाहिए है"

खंतिविजयजी बोले—'चारों ही निक्षेपों की वंदना-भक्ति करनी चाहिए।"

स्वामीजी बोले—"एक भाव निक्षेप की हम भी वंदना-पूजा करते हैं। शेष तीन निक्षेपों की चर्चा रही। इनमें पहला नाम निक्षेप है। किसी कुम्हार का नाम भगवान रख दिया। उसे तुम वंदना करते हो या नहीं ?"

तब खंतिबिजयजी बोले—"उसको क्या वंदना करें ? उसमें प्रभु के गुण नहीं है।"

स्वामीजी बोले—"गुण वाले को तो हम भी वंदना करते हैं।"

इसका उत्तर देने में वे सकपका गए।

फिर स्वामीजी ने स्थापना निक्षेप के विषय में चर्चा शुरू की—

"रत्नों की प्रतिमा हो तो उसको वंदना करते हो या नहीं ?"

वे बोले—"वंदना करते हैं।"

फिर पूछा—"सोने की प्रतिमा हो तो ?"

वे बोले—"वंदना करते हैं।"

"चांदी की प्रतिमा हो तो ?"

"वंदना करते हैं।"

"सर्वधातु की प्रतिमा हो तो ?"

"वंदना करते हैं।"

"पाषाण की प्रतिमा हो तो ?"

"वंदना करते हैं।"

"गोबर की प्रतिमा हो, तो वंदना करते हैं या नहीं ?"

तब खंतिविजयजी क्रोध में आकर बोले—"तुमसे निक्षेपों की चर्चा नहीं करेंगे।

"तुम तो प्रभु की आशातना करते हो, वह हमें अच्छी नहीं लगती" यह कह कर वह वहां से चले गए। स्वामीजी भी अपने स्थान पर आ गए।

० हाथ क्यों कांप रहा है ?

फिर खंतिविजयजी से लोगों ने कहा—"आप भीखणजी से चर्चा करें।" इस प्रकार लोगों द्वारा बार-बार कहने पर खंतिविजयजी बहुत लोगों के साथ बाजार में आए और स्वामीजी जहां ठहरे हुए थे, वहां से दस दुकानों की दूरी पर बैठ गए।

फिर लोगों ने स्वामीजी से कहा—"खंतिविजयजी चर्चा करने आये हैं सो आप वहां चलें।"

तब स्वामीजी बोले—"मेरा तो यहीं रहने का भाव है। खंतिविजयजी इतनी दूर आए हैं। यदि चर्चा करने का मन होगा, तो इतनी-सी दूर और आ जाएंगे।"

तब लोगों ने खंतिविजयजी से जाकर कहा—"आप चलें।" इस प्रकार उन पर दबाब डाल एक दुकान के अन्तर पर ला बिठा दिया। वे बोले—"यहां से तो एक पग भी आगे नहीं सरकूंगा।"

फिर लोगों ने आकर स्वामीजी से कहा—"अब तो आप भी पधारें।" तब स्वामी जी और भारीमालजी स्वामी पधारे। अब चर्चा प्रारम्भ हुई।

स्वामीजी बोले—"चर्चा सूत्रों से सम्बन्धित करनी है और आचारांग आदि ग्यारह अंगों से सम्बन्धित चर्चा करनी है। आचारांग सम्बन्धी चर्चा करने लगे। तब स्वामीजी बोले—"आचारांग सूत्र में ऐसा कहा है—

"धर्म के निमित्त जीवों को मारने में दोष नहीं है, यह अनार्य वचन है।" यह पाठ स्वामीजी ने दिखाया।

तब खंतिविजयजी बोले—"यह पाठ अशुद्ध है। रे शिष्य ! अपनी प्रति ला।"

उस पोथी मंगा कर देखी तो उसमें भी वैसा ही पाठ निकला। तब स्वामीजी ने कहा "पढ़ो। तब उन्होंने परिषद् के बीच पढ़ने से आनाकानी की। उनके हाथ कांपने लगे।"

तब स्वामीजी बोले—"तुम्हारा हाथ क्यों कांप रहा है ?" चार कारणों से हाथ कांपते हैं—

एक तो कंपन वायु से हाथ कांपते हैं,

अथवा क्रोध के कारण हाथ कांपते हैं,

अथवा चर्चा में हार जाने पर हाथ कांपते हैं,

अथवा मैथुन के आवेश से हाथ कांपते हैं।

तब वे क्रोध के आवेश में बोले—"साले का सिर काट डालूं।"

तब स्वामीजी बोले—"जगत् की सभी स्त्रियां मेरे मां और बहिन के समान हैं। और यदि तुम्हारे घर में कोई स्त्री हो, तो वह मेरी बहिन होगी। यदि इस दृष्टि से साला कहा हो, तो ठीक है। और यदि तुम्हारे घर में स्त्री न हो और मुझे साला कहते हो, तो तुम्हें झूठ लगता है। और तुमने साधुपन स्वीकार किया, तुमने छह काय के जीवों को मारने का त्याग किया था। तुम मुझे साधु भले ही मत मानो, पर कम से कम मैं त्रसकाय में तो हूं। मेरा सिर काटने को कहा, तो क्या साधुपन स्वीकार करते समय मुझे मारने की छूट रखी थी?" यह सुन वे निरुत्तर हो गए।

फिर मोतीरामजी चौधरी ने कहा—"यहां से उठो! हमें लज्जित कर रहे हो? ये तो क्षमाशील साधु हैं और तुम अंट-संट बोल रहे हो।" ऐसा कह हाथ पकड़ उन्हें वहां से ले गए।

० फिर चर्चा नहीं की

कुछ दिनों बाद स्वामीजी और खंतिविजयजी पीपाड़ आए। तब लोगों ने सोचा, अब इनमें परस्पर चर्चा होगी। स्वामीजी जहां गोचरी जाते हैं, वहां आचार्य रुघनाथजी के श्रावक कहते हैं—"पूज्यजी ने कहा है—खंतिविजयजी से चर्चा कर उन्हें निष्प्रभाव करो।"

तब स्वामीजी बोले—"वे करेंगे तो उनसे चर्चा करने का भाव है।"

फिर सरूपजी मेहता ने खंतिविजयजी के पास जाकर कहा—भीखणजी चर्चा करने को तैयार है, इसलिए तुम उनके साथ चर्चा करो।" पर वे स्वामीजी से चर्चा करने को तैयार नहीं हुए। स्वामीजी ने पूरे एक मास तक वहां रह कर प्रस्थान कर दिया। स्वामीजी विहार कर जा रहे थे, खंतिविजयजी के उपाश्रय के पास खड़े रहे, फिर भी खंतिविजयजी ने कोई चर्चा नहीं की।

० गुड़ के बदले अफीम

उसके बाद पाली में एक दिन खंतिविजयजी से चर्चा हुई। खंतिविजयजी ने कहा—मिश्री के बदले नमक आ जाए, तो वह पात्र में गिर गया, इसलिए खा लेना चाहिए।"

तब स्वामीजी ने कहा—"किसी ने गुड़ के बदले अफीम दे दिया और मिश्री के बदले सोमल क्षार दे दिया। वह भी तुम्हारे अनुसार खा लेना चाहिए, क्योंकि वह भी पात्र में आ गिरा है।"

तब वे हतप्रभ हो गए। सही उत्तर देने में अपने आपको समर्थ नहीं पाया।

६२. खाई मिश्री, जाना जहर

पीपाड़ निवासी चोथजी बोहरा ने पाली में दुकान शुरू की। चतुर्मास पूर्ण होने पर स्वामीजी उसकी दूकान पर वस्त्र-याचना करने गए। उसने दो वासती का दान देकर पूछा—"मैं तुम्हें असाधु मानता हूं। तुम्हें वासती का दान दिया, उसमें मुझे क्या हुआ?"

तब स्वामीजी बोले—"किसी ने मिश्री खाई और जानता है कि मैंने जहर खा लिया है, तो वह मरता है या नहीं ?"

तब वह बोला—"नहीं मरता, क्योंकि उसका गुण मारने का नहीं है।"

स्वामीजी बोले—"वैसे ही हम साधु हैं और तुमने हमें असाधु जान कर दान दे दिया, तो वह तुम्हारे ज्ञान की खामी है; किन्तु साधु को दान देने में धर्म ही होता है।"

९३. नकल करने का पाठ किससे पढ़ा

स्वामीजी अमरसिंहजी के स्थानक में गए। उसके भीतर खेजड़ी का पेड़ देख कर स्वामीजी बोले—"रात के समय यहां प्रस्रवण डालते होंगे ? तब इस पेड़ की दया कैसे पलेगी ?"

तब उनका साधु स्वामीजी के शब्दों की नकल करते हुए बोला।

तब स्वामीजी बोले—"यह नकल करने का पाठ अपने मन से ही पढ़ा या गुरुजी के पास पढ़ा ?"

तब अमरसिंहजी ने अपने शिष्य को रोका और स्वामीजी से कहा—"आप कुछ मन में मत लाना।"

९४. तुम्हारी कौन-सी सामर्थ्य ?

गुमानजी का शिष्य रतनजी बोला—'मैं भीखणजी से चर्चा करना चाहता हूं।"

तब गुमानजी बोले—"हम भी भीखणजी से चर्चा करने में सकुचाते हैं, तब तुम्हारी कौन-सी सामर्थ्य ?"

तब रतनजी ने पूछा—"आप क्यों सकुचाते हैं।"

तब गुमानजी बोले—"भीखणजी से कोई चर्चा करता है, तब वे किसी उत्तर को पकड़, उस विषय पर गीतिका बना देते हैं। फिर गृहस्थों को सिखा देते हैं। इससे चर्चा करने वाले की गांव-गांव में अपकीर्ति होती है। इस दृष्टि से हम भीखणजी से चर्चा करते सकुचाते हैं।

९५. हम ऐसा अन्याय नहीं करेंगे

स्वामीजी ने पाली में चातुर्मास किया। उस समय बावेचाजी ने दूकान के मालिक से कहा—"तुम्हें दुगुना किराया देंगे, तुम यह दूकान हमें दे दो।" तब दूकान के मालिक ने कहा—अभी तो वहां स्वामीजी ठहरे हुए हैं, यदि तुम पूरी दूकान को रुपयों से पाट दो तो भी मैं वह तुम्हें नहीं दूंगा। स्वामीजी के विहार कर जाने के बाद भले तुम ले लेना। फिर बावेचाजी ने हाकिम जेठमलजी के पास जा अपने-अपने घर की चाभियां उनके सामने डाल दीं और कहा—या तो यहां भीखणजी रहेंगे या हम रहेंगे।

तब हाकिम बोले—'ऐसा अन्याय तो हम नहीं करेंगे। बस्ती में वेश्या और कसाई रहते हैं, उन्हें भी हम नहीं निकालते तो फिर भीखणजी को हम कैसे निकालेंगे।'

हाकिम ने दृष्टांत दिया—विजयसिंहजी के राज्य में मोती नाम का बनजारा था। उसके लाख बैल थे, इसलिए वह 'लक्खी बनजारा' कहलाता था। वह नमक लेने के लिए

मारवाड़ में आता था। वह लोगों के खेतों को उजाड़ देता। तब जाटों ने राजा विजय सिंहजी के सामने पुकार की--मोती बनजारा हमारे खेतों को उजाड़ देता है। तब राजाजी ने मोती बनजारे से कहा—'जाटों के खेतों को मत उजाड़ो।'

तब मोती बोला—'मैं तो आऊंगा तब ऐसे ही होगा।'

राजाजी ने कहा—"ऐसे ही होगा तो फिर हमारे देश में मत आना। यदि हमारे पास नमक है तो दूसरे बहुत बनजारे आएंगे। हम किसी को अन्याय नहीं करने देंगे।"

इस दृष्टांत के आधार पर जेठमलजी ने कहा—तुम चले जाओगे तो दूसरे व्यापारियों को लाकर बसा देंगे किन्तु साधुओं को निकालने का अन्याय हम नहीं करेंगे।

तब बावेचाजी अपनी-अपनी चाभियां ले अपने-अपने घर चले गए।

० अब हम तुम्हें दान नहीं देंगे

कुछ समय बाद बावेचा लोगों ने ब्राह्मणों से कहा—हम तुम्हें दान देते हैं, उसमें भीखणजी पाप बतलाते हैं, इसलिए अब हम तुम्हें दान नहीं देंगे।

तब ब्राह्मण स्वामीजी के पास आकर बोले—हमें दान देने में आप पाप बतलाते हैं, इसलिए बावेचा हमें दान नहीं देते हैं।

तब स्वामीजी ने कहा—तुम्हें बावेचा लोग पांच रुपये दें तो भी मुझे मनाही करने का त्याग है।

तब ब्राह्मणों ने बावेचा लोगों से कहा—बापजी ने प्रत्येक ब्राह्मण को पांच-पांच रुपये देने का आदेश दिया है।

यह सुन बावेचा लोग बहुत लज्जित हुए।

० परीषह सहने में कितना दृढ़

स्वामीजी रात्री में व्याख्यान देते थे। उस समय बावेचा लोग ढोलक बजाते, गाते और व्याख्यान में विघ्न डालते। तब भाइयों ने कहा—महाराज! आप दूसरी जगह ठहरें।

तब स्वामीजी बोले—खेतसीजी नवदीक्षित है। हम देखना चाहते हैं कि यह परिषह सहने में कितना दृढ़ है। कुछ दिनों तक विघ्न डाला, फिर बावेचा लोग थक कर मौन हो गये।

० झगड़ा मत करो

पर्युषण के दिनों में बावेचा लोगों ने इन्द्रध्वज की यात्रा निकाली। उन्होंने स्वामीजी के सामने बहुत समय तक खड़े रहकर गाया, बजाया और तानें मिलाई। तब कुछ श्रावक बावेचा लोगों से झगड़ा करने लगे। तब स्वामीजी ने कहा—झगड़ा मत करो। इन्हें रोको मत कारण कि ये प्रतिमा को भगवान् मानते हैं। ये या तो भगवान् के पास गाना-बजाना करते हैं या भगवान् के साधुओं के पास।

तब बावेचा लोग बोले—भीखणजी हर बात को सम्यग्दृष्टि से ग्रहण कर लेते हैं। ऐसा कहते हुए वे आगे बढ़ गए।

९६. यह शोभाचंद सेवक निष्पक्ष

नाडोलाई में शोभाचंद नाम का सेवक था। उसे पाली में बुला कर बावेचाजी ने कहा—'भीखणजी खेरवे गांव में हैं। तुम उनके विषय में निन्दात्मक कविता लिखो। सतरह प्रकार की पूजा रची जा रही है। उसमें से तुम्हें दस-बीस रुपये देंगे।'

तब शोभाचंद बोला—भीखणजी से बात करने के बाद उनके बारे में निन्दात्मक कविता लिखूंगा। यह कह कर वह खेरवे में आया। स्वामीजी को वंदना की स्वामीजी बोले—तुम्हारा नाम शोभाचंद ?

तब वह बोला—हां महाराज !

फिर स्वामीजी ने पूछा—तूं रोडीदास सेवक का बेटा है ?

तब वह बोला—हां, महाराज !

फिर शोभाचंद बोला—आप भगवान् की उत्थापना करते हैं, यह बात आपने अच्छी नहीं की।

तब स्वामीजी बोले—हम तो भगवान् के वचनों के आधार पर घर छोड़ साधु बने हैं, फिर हम भगवान् की कैसे उत्थापना कर सकते हैं ?

फिर शोभाचंद बोला—आप देवालय की उत्थापना करते हैं ?

तब स्वामीजी बोले—देवालय में हजारों मन पत्थर होता है। हम तो सेर दो सेर पत्थर की भी उत्थापना कहां करते हैं—कहां उठाते हैं।

तब वह बोला—आप प्रतिमा की उत्थापना करते हैं, प्रतिमा को पत्थर कहते हैं।

तब स्वामीजी बोले—हम प्रतिमा की उत्थापना कहां करते हैं ? हमें झूठ बोलने का त्याग है। इसलिए हम सोने की प्रतिमा को सोने की प्रतिमा, चांदी की प्रतिमा को चांदी की प्रतिमा, सर्वधातु की प्रतिमा को सर्वधातु की प्रतिमा और पाषाण की प्रतिमा को पाषाण की प्रतिमा कहते हैं।

यह सुनकर शोभाचंद बहुत हर्षित हुआ। ऐसे पुरुषों का अवगुण मैं कैसे बोलूं ? ऐसे पुरुषों का तो मुझे गुणानुवाद करना चाहिए—यह सोचकर उसने स्वामीजी की स्तुति में दो छंद लिखें। स्वामीजी को सुना, उन्हें वंदना कर, वह पाली आ गया।

बावेचा लोगों ने पूछा—क्या तुमने छंद बनाए ?

शोभाचंद बोला—हां, बनाए।

बस, यह सुनकर शोभाचंद को साथ ले स्वामीजी के श्रावकों के पास आकर बोले—यह शोभाचंद सेवक निष्पक्ष आदमी है। भीखणजी को यह जैसा जानता है वैसा ही कहेगा। कहो भाई ! भीखणजी कैसे हैं ?

तब शोभाचंद बोला—'क्यों कहलाते हो ? उनकी मान्यता उनके पास है और अपनी मान्यता अपने पास।'

फिर भी बावेचा बंधु माने नहीं। वे बोले—तुम कहो।

फिर शोभाचंद बोला—मुझे भीखणजी में गुण या अवगुण जो भी दिखता है वैसा कहूंगा। तब बावेचा लोग बोले—'तुम्हें जैसा लगे वैसा कहो।'

तब शोभाचंद ने जो छन्द बनाए उन्हें सुनाने लगा—

छन्द

अनभय कथनी रहिणी करणी अति आठूंइ कर्म जिपै अधिकारी।
गुणवंत अनंत सिद्धंत कला गुण प्राकम पोंहोच विद्या पुण भारी।
शास्तर सार बत्तीस जाणै सहु केवल ज्ञानो का गुण, उपकारी।
पंचइंद्री कूं जीत न मानत पाखंड साध मुनिंद्र बड़ा सतधारी।
साधवा मुक्ति का वास बन्दा सहु भिक्खम स्वाम सिद्धंत है भारी।
स्वामी परभव के साधन साचहै वाचहै सूत्र कला विस्तारी।
तेरा हो पंथ साचा त्रिऊं लोक में नाग सुरेन्द्र नमैं नरनारी।
सुणि बात है साच सिद्धंत सुज्ञान की बोहत गुणी करणी बलिहारी।
पृथ्वी के तारक पंचमें आर में भीखण स्वामी का मारग भारी ॥१॥

इन छंदों को सुन बावेचा लोग वहां से चुपचाप सरक गए। स्वामीजी के श्रावक बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने खुशी में झूमते हुए शोभाचंद को लगभग २०-२५ रुपयों का पुरस्कार दिया।

९७. फूलों के दृष्टांत की तुलना नहीं हो सकती

स्वामीजी के पास देहरावासी लोग आकर बोले—'तुम्हें नदी पार करने में यदि धर्म है तो मूर्ति के सामने हम फूल चढ़ाते हैं, उसमें भी धर्म होगा।'

तब स्वामीजी बोले—एक ओर नदी का जल कटि तक है, दूसरी ओर उसका जल घुटनों तक है और तीसरी ओर वह सूखी है तो हम उस सूखी नदी से जाने को प्राथमिकता देंगे। अधिक जल वाली नदी को दो-चार कोस का चक्कर लेकर भी टालने का प्रयत्न करते हैं। और तुम जो फूल चढ़ाते हो, वहां एक ओर सूखे फूल पड़े हैं, दूसरी ओर दो-तीन दिन के कुम्हलाए फूल पड़े हैं और तीसरी ओर कच्ची कलियां हैं। तुम कौन से चढ़ाओगे ?

तब वे बोले—'हम तो कच्ची कलियों को नखों से तोड़-तोड़ कर चढ़ायेंगे।'

तब स्वामीजी बोले—तुम्हारा परिणाम (भाव) तो जीव-हिंसा के अभिमुख है और हमारा परिणाम दया की ओर अभिमुख है। इस न्याय से साधु द्वारा नदी पार करने के साथ फूलों के दृष्टांत की तुलना नहीं हो सकती।

९८. साधु ही कहलाता है

किसी ने पूछा—भीखणजी ! तुम अन्य संप्रदायों के साधुओं को साधु नहीं मानते तो उन्हें ये अमुक संप्रदाय के साधु, ये अमुक संप्रदाय के साधु—ऐसा क्यों कहते हो ?

तब स्वामीजी बोले—किसी के घर मृत्युभोज होने पर गांव में निमंत्रण दिया जाता है—अमुक को निमंत्रण है खेमाशाह के घर का, अमुक को निमंत्रण है पेमाशाह के घर का, और यदि उन्होंने दिवाला निकाल दिया हो तो भी वे 'शाह' ही कहलाते हैं।

इसी प्रकार कोई साधुपन नहीं पालता और साधु का नाम धराता है तो वह द्रव्य-निक्षेप की दृष्टि से साधु ही कहलाता है।

९९. मूल्यांकन तुम कर लेना

किसी ने पूछा—इतने संप्रदाय हैं उनमें साधु कौन और असाधु कौन ?

तब स्वामीजी बोले—किसी को आंखों से दिखाई नहीं देता। उसने वैद्य से पूछा—शहर में नंगे कितने हैं और वस्त्र-पहने कितने हैं ?

तब वैद्य बोला—आंखों में दवा डाल कर तुम्हारी दृष्टि मैं लौटा दूंगा, फिर तुम्हीं देख लेना कितने नंगे हैं और कितने वस्त्र-पहने हैं।

इसी प्रकार पहचान तो हम बतला देते हैं, फिर साधु कौन और असाधु कौन इसका निर्णय तुम स्वयं कर लेना।

किसी का भी नाम लेकर असाधु कहने से वह झगड़ा करने लग जाता है। इसे ध्यान में रख कर साधु-असाधु के लक्षण तो हम दे देंगे, उनका मूल्यांकन तुम कर लेना।

१००. साधु कौन ? असाधु कौन

एक बार फिर किसी ने पूछा—इन (अमुक-अमुक संप्रदायों) में साधु कौन और असाधु कौन ?

तब स्वामीजी बोले—किसी ने पूछा, शहर में साहूकार कौन और दिवालिया कौन ? एक समझदार आदमी ने उत्तर दिया—ऋण लेकर लौटा देता है, वह साहूकार और ऋण को नहीं लौटाता तथा मांगने पर झगड़ा करता है, वह दिवालिया।

इसी प्रकार पांच महाव्रतों को स्वीकार कर उनकी सम्यक् पालना करता है वह साधु और जो उनकी सम्यक् पालना नहीं करता वह असाधु है।

१०१. मेरे तो प्राण जा रहे हैं

कोई बोला—अनुकंपा ला कच्चा जल पिलाने से पुण्य होता है, क्योंकि उसका परिणाम (भाव) अच्छा है, जीव को बचाने का है, किन्तु जल के जीवों की हिंसा करने का नहीं है।

तब स्वामीजी बोले—एक आदमी दूसरे को कटारी से मारने लगा।

तब वह बोला—मुझे मत मार।

तब मारने वाला बोला—मेरा तुझे मारने का भाव नहीं है। मैं तो कटारी का मूल्यांकन कर रहा हूं—इस कटारी में कितनी मारक क्षमता है।

तब वह बोला—समुद्र में डूब जाए तुम्हारा मूल्यांकन मेरे तो प्राण जा रहे हैं।

इसी प्रकार जीवों को खिलाने-पिलाने में जो पुण्य कहते हैं उनकी मान्यता सही नहीं है।

१०२. वह अवसर तो उसी समय था

स्वामीजी ने अन्य संप्रदाय के साधुओं के स्थान पर पूछा—तुम कितनी मूर्तियां हो ?

तब उन्होंने कहा—हम इतनी मूर्तियां हैं।

स्वामीजी अपने स्थान पर आ गए।

पीछे से किसी व्यक्ति ने उन साधुओं से कहा—तुम्हें तो भीखणजी ने 'भगत'

(संन्यासी) बना दिया। तब उस अन्य संप्रदाय के साधु ने स्वामीजी के पास आकर पूछा—आप कितनी मूर्तियां हैं ?

तब स्वामीजी बोले—वह अवसर तो उसी समय था। हम तो इतने साधु हैं।

१०३. भीखणजी ! तुम भी लोटे को मांजो

स्वामीजी के गृहस्थ जीवन की घटना है। एक दिन वे शौच के लिये जंगल जा रहे थे तब सोजत का महाजन साथ में हो गया। वापस लौटे तब सोजत का महाजन लोटे को बार-बार मांजता है और सजीव जल से बार-बार धोता है। उसने कहा—भीखणजी ! तुम भी लोटे को मांजो। तब स्वामीजी बोले—मैं तो लोटे में जंगल नहीं गया था। मैं तो लोटे से दूर जंगल गया था।

तब वह बोला—मैं कौन-सा लोटे में गया था ?

तब स्वामीजी बोले—तब लोटे को इतना क्यों मांजते हो ?

वह बोला—लोटा पास में था।

स्वामीजी बोले—तुम्हारा मुंह और सिर भी पास में था। इन्हें मांजते हो या नहीं ?

१०४. हमने तो थाली के दो टुकड़े नहीं किए

अन्य सम्प्रदाय के साधुओं ने कहा—भीखणजी जब घर में थे और अपने भाई से अलग हुए तब बटवारे के लिए एक थाली को ऊंखल में डाल उसके दो टुकड़े कर डाले।

हेमजी स्वामी ने स्वामीजी से यह बात पूछी—जब आप घर में थे तब आपने थाली के दो टुकड़े किए यह बात सच है या झूठ ?

तब स्वामीजी बोले—हम तो ऐसे भोले नहीं थे कि पहले ही रुपये का पौन रुपया कर डालें। हमने तो ऐसा नहीं किया। पर अमुक आचार्य के गुरु, जब घर में थे तब ऊंट को मार डाला। वे किसी दूसरे गांव से वस्त्र की गांठें ला रहे थे। रास्ते में डकैत मिल गए। तब उन्होंने सोचा—ये डाकू कपड़ा छीन लेंगे और ऊंट को भी ले जायेंगे। यह सोच कर उन्होंने तलवार से ऊंट की टांगे काट कर उसे मार डाला। गृहस्थावस्था की क्या बात ? (वहां कुछ घटनाएं हो भी सकती हैं।) फिर भी हमने तो घर में रहते हुए थाली के दो टुकड़े नहीं किए।

१०५. जब स्त्रियां गाने लगीं

स्वामीजी घर में थे तब भोजन करने के लिए ससुराल में गए। स्त्रियां 'गालियां' गाने लगीं—'यह कौन है काला और चितकबरा।'

तब स्वामीजी बोले—तुम लंगड़े और अंधे को तो अच्छा बतलाती हो और मेरे विषय में उल्टा गा रही हो।

स्वामीजी का साला लंगड़ा था। इस दृष्टि से स्वामीजी ने कहा—तुम कुडौल को सुडौल और सुडौल को कुडौल बता रही हो।

यह कहते हुए स्वामीजी भोजन किए बिना भूखे ही उठ गए।

गृहस्थावस्था में भी उन्हें झूठ से चिढ़ थी। उन्हें झूठ अच्छा नहीं लगता था।

१०६. गहना कहां से आएगा ?

स्वामीजी घर में थे तब उनके गांव कंटालिया में कोई चोर किसी का गहना चुराकर ले गया। तब बोरनदी गांव से एक अंधे कुम्हार को बुलाया। उसके शरीर में देवता आता है, ऐसा कहा जाता था, इस दृष्टि से उसे चोरी गए गहने का पता लगाने के लिए बुलाया।

उस कुम्हार ने स्वामीजी से पूछा—भीखणजी ! यहां किस पर बहम किया जाता है।

तब स्वामीजी ने उसकी ठगाई को प्रगट करने के लिए कहा—बहम तो मजनूं पर किया जा रहा है।

रात का समय हुआ। अंधे कुम्हार ने अपने शरीर में देवता का प्रवेश कराया। बहुत लोगों के सामने वह जोर-जोर से चिल्लाने लगा—डाल दे रे, डाल दे।

लोग बोले—चोर का नाम बताओ।

तब वह बोला—ओ ! ओ ! मजनूं रे मजनूं। गहना मजनूं ने लिया है।

वहां एक अतीत (संन्यासी) बैठा था। वह अपना घोटा लेकर उठा और बोला—मजनूं तो मेरे बकरे का नाम है। उस पर तुम चोरी का आरोप लगाते हो ?

तब लोगों ने जान लिया, यह ठगी है।

स्वामीजी ने लोगों से कहा—तुम आंख वालों ने तो गहना खोया और अंधे से निकलवाना चाहते हो, तब वह गहना कहां से आएगा ?

१०७. तभी तो उससे मुक्ति मिलेगी

भीखणजी स्वामी घर में थे तब उनके मन में वैराग्य उत्पन्न हुआ। तब उन्होंने कैर का ओसामन तांबे के लोटे में डाल एक-दूसरे पर रखे हुए बर्तनों की पंक्ति में रखा। बहुत समय बाद उसे पीया तो बहुत कष्ट हुआ। तब उन्होंने सोचा, साधुपन बहुत कठिन है ! फिर सोचा, ऐसा कठिन है तभी तो उससे मुक्ति मिलेगी। नई दीक्षा स्वीकारने के बाद सं. १८४९ के लगभग स्वामीजी ने हेमजी स्वामी से कहा हमने कष्ट की बात जानकर साधुपन स्वीकार किया था, पर वैसा (कैर का ओसामन) जल पीने का काम कभी नहीं पड़ा।

तब हेमजी स्वामी ने कहा—ऐसे वैराग्य से आपने घर छोड़ा तब आप अमुक संप्रदाय में कैसे रहते ?

१०८. दो घड़ी सांस रोका जा सकता है

स्वामीजी आचार्य रुघनाथजी के संप्रदाय से अलग हुए तब उन्होंने कहा—भीखणजी अभी पांचवां अर है। कोई दो घड़ी भी शुद्ध साधुपन पालता है तो वह केवली हो जाता है।

तब स्वामीजी बोले—यदि ऐसे ही केवलज्ञान उत्पन्न होता हो तो दो घड़ी तो नाक को बन्द करके भी बैठे रह सकते हैं। और प्रभवस्वामी आदि पांचवें अर में हुए। क्या उन्होंने शुद्ध साधुपन नहीं पाला ?

१०९. मेरी मां ने अधिक आंसू बहाए थे

स्वामीजी आचार्य रुघनाथजी के संप्रदाय से अलग हुए तब आचार्यजी की आंखों में आंसू छलक पड़े। तब स्वामीजी ने सोचा—इनकी अपेक्षा घर छोड़ते समय मेरी मा ने अधिक आंसू बहाए थे। ऐसा सोच उन्होंने अभिनिष्क्रमण कर दिया।

११०. ढंढण के अंतराय था

संवत् १८५९ की घटना है। देवगढ़ में चौदह साधु और चौदह साध्वियों के साथ स्वामीजी विराज रहे थे। वहां तीन वेशधारी साधु आकर बोले—भीखणजी! हम तीन साधु हैं, उन्हें भी पूरा आहार-पानी नहीं मिलता तो आप इतनी संख्या में हैं तो आपको आहार-पानी कैसे मिलता है?

तब स्वामीजी बोले—द्वारका में हजारों साधुओं को आहार-पानी मिलता था, पर ढंढण मुनि के अंतराय था, इसलिए उन अकेले को आहार-पानी मिलना कठिन हो रहा था।

१११. तंबाकू अच्छी तो है नहीं

स्वामीजी गृहस्थावस्था में थे तब उपहार आदि लेकर निमंत्रण देने के लिए राजपूत के साथ किसी दूसरे गांव जा रहे थे।

तब राजपूत बोला—भीखणजी! तंबाकू के बिना अब मैं आगे नहीं चल सकता।

तब स्वामीजी बोले—ठाकर साहब! आगे चलें, सूर्य अस्त होने वाला है।

राजपूत बोला—तंबाकू के बिना अब तो नहीं चला जा सकता।

तब स्वामीजी ने कुछ पीछे रह, जंगली कंडे को महीन पीस उसकी पुड़िया बना ली और कहा—ठाकर साहब! अच्छी तंबाकू तो है नहीं, ऐसी-वैसी है।

तब राजपूत ने एक चिऊंटी भर कर उसे सूंघा और कहा—ठीक ही है, काम चल जाएगा।

तब स्वामीजी ने वह पुड़िया राजपूत को सौंप दी। इस चातुर्य से वे कुशल-क्षेम के साथ अपने स्थान पर पहुंच गए।

११२. वह बुद्धि किस काम की

स्वामीजी ने सिरियारी में चतुर्मास किया। जोधपुर नरेश विजयसिंहजी नाथद्वारा जा रहे थे। वर्षा के कारण सिरियारी में ठहरे। उनके कुछ उच्च अधिकारी वहां स्वामीजी के दर्शन करने आए और प्रश्न पूछने लगे। पहले मुर्गी हुई या अंडा? पहले घन या अहरन? पहले बाप हुआ या बेटा? इत्यादि अनेक प्रश्नों के युक्तिसंगत उत्तर स्वामीजी ने दिए। तब वे अधिकारी प्रसन्न होकर बोले—ये प्रश्न हमने बहुत स्थानों पर पूछे, पर ऐसे उत्तर किसी ने नहीं दिए। आपकी बुद्धि तो ऐसी है कि आप किसी राजा के मंत्री होते तो अनेक देशों का राज्य उस राजा के अधीन कर देते।

तब स्वामीजी बोले—मर कर वह कहां जाता है?

अधिकारी बोले—जाता तो नरक में ही।

तब स्वामीजी बोले—वही बुद्धि अच्छी है जो जिनधर्म का सेवन करती है। वह

बुद्धि किस काम की जिससे मनुष्य कर्म का बंध करता है।

जिस बुद्धि के विस्तार से मनुष्य नरक में जाए वह बुद्धि किस काम की। तब वे अधिकारी बहुत प्रसन्न हुए।

११३. वे ठंडे पड़ गए

स्वामीजी जोधपुर पधारे। तब वेषधारी साधु इकट्ठे होकर चर्चा करने आए। वे उल्टी-सीधी चर्चा करने लगे—जीव बचाने से क्या होता है? विजयसिंहजी ने 'अमारी' की घोषणा कराई, उससे उनको क्या हुआ? इत्यादि प्रश्नों को वे राजद्वार तक ले जाने लगे।

तब स्वामीजी बोले—शास्त्रों में राजा की नरक गति बतलाई गई है इत्यादि सारी चर्चा शास्त्र खोल कर राजाजी के सामने करो।

यह सुन वे ठंडे पड़ गए।

११४. सम्यगदृष्टि या मिथ्यादृष्टि?

आचार्य रुघनाथजी ने स्वामीजी से पूछा—विजयसिंहजी ने अपने राज्य में 'अमारी' की घोषणा कराई, जलाशयों पर पानी छानने के लिए गलने रखवाए, दीओं पर ढक्कन डलवाए, बूढ़े बैलों पर भार लादना बंद करवाया और बूढे माता-पिता की सेवा करने का निर्देश दिया। इन सब कामों में राजाजी को क्या फल हुआ?

तब स्वामीजी बोले—राजाजी सम्यग्दृष्टि हैं या मिथ्यादृष्टि?

ऐसा पूछने पर उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया।

११५. सब एक हो जाओ

किसी ने कहा—भीखणजी! तुम और अमुक-अमुक संप्रदाय वाले एक हो जाओ।

तब स्वामीजी बोले—तुम महाजन, कुम्हार, जाट, गूजर ये सब एक हो सकते हो या नहीं?

तब वह बोला—हम तो एक नहीं होंगे क्योंकि उनकी जाति ही भिन्न है।

तब स्वामीजी बोले—वे भी मूलतः मिथ्यादृष्टि हैं, गाजीखां और मुल्लाखां के साथी हैं।

उसने पूछा—गाजीखां मुल्लाखां कौन थे?

तब स्वामीजी बोले—एक ब्राह्मण और एक ब्राह्मणी दोनों परदेश गए। वहां ब्राह्मण ने बहुत धन कमाया। कुछ समय बाद ब्राह्मण मर गया। तब ब्राह्मणी एक पठान के घर में चली गई। उसके दो पुत्र हुए। एक का नाम रखा गाजीखां और दूसरे का नाम मुल्लाखां। कुछ समय बाद वह पठान भी मर गया। तब ब्राह्मणी धन और पुत्रों को ले अपने देश लौट आई। उसके धन को देखकर बहुत सगे-संबंधी इकट्ठे हुए। कोई उसको बुआ कहता है, कोई चाची कहता है।

अब ब्राह्मणी ने कहा—इन बच्चों को यज्ञोपवीत दो। उसने उसके उपलक्ष में भोज किया और बहुत ब्राह्मणों को भोजन करवाया। यज्ञोपवीत दिलाने के लिए पुत्रों

को पुकारा—आओ रे बेटे गाजीखां ! आओ रे बेटे मुल्लाखां !

ये नाम सुन ब्राह्मण कुपित होकर बोले—हे पापीनी ! ये क्या नाम ? ब्राह्मणों के नाम तो श्रीकृष्ण, रामकृष्ण, हरिकृष्ण, हरिलाल अथवा रामलाल, श्रीधर—इत्यादि होते हैं । गाजीखां, मुल्लाखां तो मुसलमानों के नाम हैं । वे कटार निकाल कर बोले—सच बता, ये किसके पुत्र हैं ? यदि सच नहीं बताया तो तुम्हें मारेंगे और हम भी मरेंगे ।

तब वह बोली—मारो मत । मैं सच-सच बता देती हूं । तब उसने सारी बात उन्हें बता दी और कहा—ये पठान से उत्पन्न पुत्र हैं ।

तब ब्राह्मण बोले—हे पापीनी ? तुमने हमें भ्रष्ट कर दिया । अब हम गंगाजी में नहा, उसकी मिट्टी का लेप कर शुद्ध होंगे ।

तब वह बोली—भाई ! इन दोनों बच्चों को भी साथ ले जाओ और शुद्ध कर दो, लौटने पर मैं तुम सबको ब्रह्मभोज दूंगी ।

तब ब्राह्मण बोले—ये तो पठान से उत्पन्न होने के कारण मूलतः अशुद्ध हैं । ये शुद्ध कैसे होंगे ? हम तो मूलतः शुद्ध हैं । तुम्हारा अन्न खाया इसीलिए तीर्थयात्रा कर शुद्ध होंगे । पर वे मूलतः अशुद्ध हैं, फिर वे शुद्ध कैसे होंगे ।

भीखणजी स्वामी ने कहा—किसी साधु को दोष लगता है तो वह प्रायश्चित्त कर शुद्ध हो जाता है । पर वे (अमुक-अमुक संप्रदाय वाले) मूल से ही मिथ्यादृष्टि हैं, उनकी श्रद्धा विपरीत है, गाजीखां और मुल्लाखां के साथी हैं, वे शुद्ध कैसे होंगे ? सम्यग्दृष्टि आए और उनका नई दीक्षा रूप जन्म हो तब वे शुद्ध हो सकते हैं ।[1]

११६. बनी बनाई ब्राह्मणी

किसी ने पूछा—भीखणजी ! ये भी धोवन का पानी और गर्म पानी पीते हैं' साधु का वेश रखते हैं, लोच कराते हैं, फिर ये साधु क्यों नहीं ?

तब स्वामीजी बोले—ये बनी बनाई ब्राह्मणी के साथी हैं ।

वह बनी बनाई ब्राह्मणी कैसे ?

स्वामीजी बोले—एक मेर जाति के लोगों का गांव था । वहां कोई उच्च जाति का घर नहीं था । जो भी महाजन आता है वह दुःख पाता है । उन महाजनों ने 'मेरों' से कहा—यहां कोई उच्च जाति का घर नहीं है, इसलिए हम तुम्हें ऋण देते हैं । उच्च जाति के घर के बिना भोजन-पानी की कठिनाई होती है ।

तब 'मेर' लोगों ने शहर में जा महाजनों से कहा—आप हमारे गांव में बस जाएं । हम आपका सम्मान रखेंगे, सुरक्षा करेंगे । पर वहां कोई आया नहीं ।

उस समय एक ढेढ जाति के लोगों का गुरु मर गया था । उसकी पत्नी को मेरों ने ब्राह्मणी बनाया । उसे ब्राह्मणी जैसे कपड़े पहना दिए । उसके लिए स्थान बनाया और तुलसी का पोधा रोपा । स्थान की चूने से पुताई की । मेरणियों ने उस घर को

१. आचार्य भिक्षु ने तात्कालिक जातीय मान्यताओं के आधार पर प्रचलित उस कहानी की वस्तुस्थिति को स्पष्ट करने के लिए केवल उल्लेख किया है । यह उनकी अपनी मान्यता नहीं है ।

ब्राह्मणी के घर जैसा बना दिया। उसके घर में दो रुपये के गेहूं, अठन्नी के मूंग और एक रुपये का घी रख दिया। उसे कहा—जो महाजन आए, उससे पैसे ले, रोटियां बना, उसे खिलाया कर।

अब उस गांव में कोई महाजन आता है तो मेर लोग उसे उस ब्राह्मणी का घर बतला देते। एक बार चार व्यापारी बहुत दूर से चलते, थके-मांदे वहां आए। उन्होंने मेरों से कहा—कोई उच्च जाति का घर हो तो बताओ तब उन्होंने ब्राह्मणी का घर बता दिया।

व्यापारी आकर बोले—बहिन ! रोटियां बना, हमें परोस।

तब उसने गेहूं की मोटी-मोटी रोटियां बना, गाय के घी से चुपड़ा। दाल बनाई, उसमें काचरी डाली। वे व्यापारी खाते समय भोजन की प्रशंसा करने लगे – हमने अमुक गांव की रसोई पकाने वाली स्त्री देखी, अमुक शहर की रसोई पकाने वाली स्त्री भी देखी। बड़े-बड़े शहरों और अनेक गांवों की रसोई पकाने वाली स्त्रियां देखीं, पर ऐसी चतुराई कहीं भी नहीं देखी। दाल कैसी स्वादिष्ट बनी है। उसमें काचरी डालने से वह कैसी स्वादिष्ट बनी है।

तब वह ब्राह्मणी बोली—भाई ! काचरी के स्वाद का तो 'तीखण' मिलता तब पता चलता।

उन्होंने पूछा—यह 'तीखण' क्या है ?

तब वह बोली—काचरी को छीलने की छुरी।

तब वे बोले—छुरी नहीं थी तो काचरी को किससे छीला ?

तब वह बोली—दांतों से छील-छील कर वह दाल में डाली है।

तब वे बोले—रे पापीनी ! तुमने हमको भ्रष्ट कर दिया। वे थाली को ऊपर से गिराने लगे।

तब वह बोली—रे भाई ! थाली को तोड़ मत देना। मैं उसे अमुक 'डोम' से मांग कर लाई हूं।

व्यापारी बोले—तुम किस जाति की हो ?

तब वह बोली—मैं बनी बनाई ब्राह्मणी हूं। मैं जाति से तो ढेढ हूं। 'मेर' लोगों ने मुझे ब्राह्मणी बनाया। उसने आदि से अंत तक सारी बात सुनाई।

भीखणजी स्वामी बोले—इसी प्रकार ये धोवन, पानी और गरम पानी पीते हैं, पर सम्यक्त्व और चारित्र से रहित हैं इसलिए ये बनी बनाई ब्राह्मणी के साथी हैं।

११७. ऐसे हैं भीखणजी कला-कुशल

अमरसिंहजी के जीतमलजी ने हेमजी स्वामी से कहा—हेमजी ! भीखणजी स्वामी ने सोजत में चतुर्मास किया था। वहां उनके पास ही अमरसिंहजी के साधुओं ने चतुर्मास किया था। चतुर्मास के प्रारंभ में भीखणजी स्वामी मिश्र धर्म की मान्यता वालों का खंडन करते थे। उन्होंने ऐसा दृष्टांत दिया था—अमरसिंहजी के पुरखे आचार्य रुघनाथ जी, आचार्य जयमलजी के पुरखों को गुजरात से मारवाड़ में लाए थे। तब उनके परस्पर बहुत प्रेम था। दो-तीन पीढ़ी तक वह प्रेम बना रहा। फिर रुघनाथजी,

जयमलजी और कोहलोजी, जो भूधरजी के शिष्य थे, ने अमरसिंहजी के क्षेत्रों—जोधपुर आदि को अपना बना लिया। तब प्रेम टूट गया।

जैसे एक साहूकार जलपोत में बैठ समुद्र के उस पार व्यापार करने गया। वह वहां से लौट रहा था तब कपड़े की सन्दूक में एक गर्भवती चूहिया आ गई। उसका प्रसव हुआ।

साहूकार ने देख कर कहा—इसे समुद्र में नहीं डालना है। वह उसकी सार-सम्हाल करने लगा। फिर साहूकार अपने घर आ गया। फिर कुछ दिनों में चूहिया का परिवार बढ़ा।

तब चूहिया बोली—यह साहूकार उपकारी है। इसलिए हमें इसको नुकसान नहीं पहुंचाना है।

साहूकार भी चूहे और चूहिया को कष्ट नहीं देता। एक-दो पीढ़ी तक तो चूहे और चूहिया ने साहूकार को नुकसान नहीं पहुंचाया। फिर वे नुकसान करने लगे। वे साहूकार के कपड़ों और करंडियों को कुरेदने लगे।

इसी प्रकार दो-तीन पीढ़ियों तक अमरसिंहजी के साधुओं से प्रेम रखा। उसके बाद वे अमरसिंहजी के क्षेत्र पर अपना अधिकार जमाने लगे, श्रावक-श्राविकाओं को अपने पक्ष में करने लगे।

चतुर्मास के प्रारंभ में यह दृष्टांत दिया और मिश्र-धर्म की मान्यता वालों को समझाना शुरू किया। उससे अमरसिंहजी के पक्ष के लोग प्रसन्न रहे।

फिर चतुर्मास की समाप्ति के समय फतेहचंदजी गोटावत बोला—भीखणजी ने मिश्र धर्म की मान्यता वालों का ही खंडन किया, किन्तु ये पुण्य की मान्यता वाले निकट बैठे हैं, इनका खंडन क्यों नहीं किया ?

तब स्वामीजी बोले—एक जाटनी ने खेती की। ज्वार की बहुत पैदावार हुई। चार चोरों ने भूट्टे तोड़े और उनकी गांठें बांधी। जाट ने उन्हें देखा, अपनी सहज बुद्धि से विचार कर उनके पास आकर बोला—तुम्हारी जाति क्या है ?

एक व्यक्ति बोला—मैं राजपूत हूं।

दूसरा व्यक्ति बोला—मैं महाजन हूं।

तीसरा व्यक्ति बोला—मैं ब्राह्मण हूं।

चौथा व्यक्ति बोला—मैं जाट हूं।

तब जाट बोला राजपूत से—आप मालिक हैं, आपने भुट्टे लिए हैं, यह उचित बात है। महाजन व्यापारी है—ऋण देने वाला है. इसने भुट्टे लिए यह भी उचित है। ब्राह्मण पुण्य का दान लेता है, वह भी ठीक है। परन्तु जाट किस हिसाब से लेता है ? इसे मैं मेरी मां के पास ले जाकर उपालंभ दिलाऊंगा। यह कहकर उसकी गांठ को नीचे डाल, ज्वार के खेत में दूर ले जा, उसे उसी की पगड़ी से बबूल के तने से बांध दिया।

फिर वह जाट वापस आकर बोला—मेरी मां ने कहा है, राजपूत तो मालिक है, वह लेता है तो उचित है। बनिया ऋण देने वाला है, वह लेता है तो भी उचित है।

पर ब्राह्मण किस हिसाब से लेता है ? वह दिया हुआ लेता है। बिना दिया कैसे लेता है ? चलो, मेरी मां के पास—यह कहकर उसे भी पकड़ कर ले गया और बबूल के तने से बांध दिया।

फिर लौट कर वह जाट बोला—राजपूत लेता है तो वह उचित है, परन्तु बनिए ! तुम किस हिसाब से लेते हो ? तुमने किस दिन मुझे बीज दिए थे ? और कब तुम मेरे ऋणदाता बने थे ? यह कहकर उसे भी ले जा बबूल के तने से बांध दिया।

चौथी बार आकर बोला - ठाकुर साहब ! मालिक सुरक्षा करने के लिए है या चोरी करने के लिए ? यह कह कर उसे भी पकड़ ले गया और बबूल के तने से बांध दिया। फिर वह रावले में गया और उन चारों को बंदी बनवा दिया।

उस किसान ने अपनी बुद्धि से चारों को बंदी बना अपना माल रख लिया। यदि वह एक-साथ चारों से लड़ता-झगड़ता तो वह उनसे कैसे निपट पाता ?

इसी प्रकार मिश्रधर्म की मान्यता वालों में से कुछ लोगों को तो पहले समझा दिया, अब पुण्य की मान्यता वालों को समझाने की वारी है। बाद में पुण्य की मान्यता वालों का भी खंडन करना शुरू कर दिया।

ऐसे हैं भीखणजी कला-कुशल।

११८. त्याग किसलिए

किसी ने कहा—मुझे असंयती को दान देने का त्याग कराओ।

तब स्वामीजी बोले—तुमने मेरे वचनों पर श्रद्धा, प्रतीत और रुचि की है इसलिए त्याग कर रहे हो या मुझे बदनाम करने के लिए त्याग कर रहे हो ?

ऐसा कहने पर वह मौन हो गया।

११९. क्या दागा हुआ वापिस लिया जा सकता है ?

पीपाड़ में एक व्यक्ति ने स्वामीजी को गुरु बनाया। उसके घर वालों ने उसे धमकाया और कहा—वापस जाकर गुरु-मंत्र दे आओ।

वह वहां जाकर बोला—तुम्हारा गुरु-मंत्र वापस लो। जो त्याग कराए, वे भी वापस ले लो।

तब स्वामीजी बोले—क्या दागा हुआ वापिस लिया जा सकता है ?

१२०. प्रकंपन के बिना निर्जरा नहीं

पुर से विहार कर भीलवाड़ा आते समय मार्ग में हेमजी स्वामी को बहुत कष्ट हुआ। उन्होंने चन्द्रभानजी चौधरी से कहा आज तो हमें बहुत कष्ट हुआ। तब चन्द्रभान जी चौधरी ने कहा भीखणजी स्वामी कहते थे कि आत्म-प्रदेशों में प्रकंपन हुए बिना निर्जरा नहीं होती।

१२१. जब अनाज मिट्टी जैसा लगने लगे

रिणीही गांव में जीवोजी मेहता ने नगजी भलकट से कहा—भाइजी ! भीखणजी स्वामी कहते थे, जब अनाज मिट्टी जैसा लगे तब अनशन करना चाहिए। क्योंकि उससे पता चलता है कि आयु बहुत कम शेष रहा है। आज वैसा बीत रहा है, पर मैं

तो अनशन कर नहीं सकता। वह ऐसी बात कर रहा था और उसी रात्रि में उसका देहावसान हो गया।

१२२. साधु के बीमारी क्यों?

किसी ने पूछा—महाराज! साधुओं के बीमारी क्यों होती है?

स्वामीजी बोले—किसी आदमी ने पत्थर को आकाश की ओर उछाला, शिर उसके नीचे कर दिया, भविष्य में पत्थर उछालने का परित्याग किया, किन्तु पहले जो पत्थर उछाला है उसकी चोट तो लगेगी ही। फिर पत्थर नहीं उछालेगा तो चोट नहीं लगेगी। ऐसे ही पाप-कर्म का बन्धन किया उसको तो भुगतना ही पड़ेगा, पीछे पाप का त्याग कर लिया तो उसे दुःख नहीं भुगतना पड़ेगा।

१२३. चर्चा कैसे करें?

सीहवा गांव के वासी दामोजी ने पाली में अन्य संप्रदाय के साधुओं के स्थानक में जा उनसे चर्चा की। उसने कुछ प्रश्नों के उत्तर दिए और वह कुछ प्रश्नों के उत्तर नहीं दे सका फिर उसने स्वामीजी से कहा—मैंने चर्चा की पर उनके प्रश्नों का पूरा उत्तर नहीं दे सका।

तब स्वामीजी बोले—दामाशाह! जीर्ण-शीर्ण धनुष्य और दो-तीन बाण लेकर युद्ध शुरू करने वाला कैसे जीतेगा? तीरों से भरा तरकश पीठ पर बन्धा हो तभी युद्ध में कोई जीत सकता है। इसी प्रकार अन्य संप्रदाय वालों से चर्चा करनी हो तो पूरे उत्तर देना सीख कर ही करनी चाहिए। यदि वैसा न हो तो नहीं करनी चाहिए।

१२४. उसके हाथ में क्या आया?

किसी ने पूछा—भीखणजी! कोई बालक पत्थर से चींटियां मार रहा था। उसके हाथ से पत्थर छीन लिया, उसे क्या हुआ?

तब स्वामीजी बोले—उसके हाथ में क्या आया?

तब वह बोला—उसके हाथ में तो पत्थर आया।

तब स्वामीजी बोले—अब तुम ही सोच लो।

१२५. आपका नाम क्या है?

स्वामीजी पुर और भीलवाड़ा के बीच में थे। वहां ढंढाड से आया हुआ एक आदमी मिला। उसने पूछा—आपका नाम क्या है?

तब स्वामीजी बोले—मेरा नाम भीखण है।

तब वह बोला—भीखणजी की महिमा तो बहुत सुनी है। फिर आप अकेले ही वृक्ष के नीचे कैसे बैठे हैं? हमने तो जान रखा था कि आपके साथ बहुत आडंबर होगा, घोड़े, हाथी, रथ, पालकी आदि बहुत ठाठ बाट होगा।

तब स्वामीजी बोले—हम ऐसा आडम्बर नहीं रखते तभी हमारी महिमा है। साधु का मार्ग यही है।

यह सुनकर वह बहुत प्रसन्न हुआ।

१२६. मिश्र धर्म की मान्यता

जो सजीव पानी पिलाने में पुण्य मानते हैं, वे पुण्य की मान्यता वाले बोले—भीखणजी ! मिश्र धर्म की मान्यता बहुत खराब है ।

तब स्वामीजी बोले—किसी की एक आंख फूटी और किसी की दोनों ही फूट गई । इसी प्रकार उनकी एक आंखफूटी है और तुम्हारी दोनों ही आंखें फूट गई हैं ।

१२७. हिंसा होने वाली है

आचार्य रुघनाथजी के लोग बोले—भीखणजी ! देखो, जोधपुर में जयमलजी वालों के स्थानक आधाकर्मी हैं । उसमें हिंसा बहुत हुई है ।

तब स्वामीजी बोले— उनके तो हिंसा हुई है और दूसरों के हिंसा होने वाली है । लगता है कच्चे मकान पक्के बनेंगे ।

१२८. मरने वाला डूबता है या मारने वाला

किसी ने पूछा—भीखणजी ! किसी मनुष्य ने मरते हुए बकरे को बचाया, उसमें क्या हुआ ?

तब स्वामीजी बोले—ज्ञान से समझा-बुझा कर हिंसक को हिंसा से बचाने में धर्म होता है । स्वामीजी ने दो अंगुलियों को ऊपर कर कहा—कल्पना करो यह एक अंगुली राजपूत और दूसरी अंगुली बकरा । इन दोनों में कौन डूबता है ? मरने वाला डूबता हैं या मारने वाला ? नरक-निगोद में कौन गोता लगाएगा ?

तब वह बोला—मारने वाला डूबेगा ।

तब स्वामीजी बोले—साधु डूबने वाले को तारते हैं, राजपूत को समझाते हैं—बकरे को मारने से तुझे संसार समुद्र में गोता लगना पड़ेगा । इस प्रकार उसे ज्ञान से समझा-बुझाकर हिंसा से बचाना मोक्ष का मार्ग है । परन्तु साधु बकरे के जीने की इच्छा नहीं करता ।

जैसे एक साहूकार के दो लड़के हैं । एक लड़का अधिक ब्याज लेने वाले से ऋण लेता है और दूसरा लड़का उसके ऋण को चुकाता है, पिता किसे वर्जेगा ? ऋण लेने वाले को बर्जेगा, उतराने वाले को नहीं वर्जेगा । इसी प्रकार साधु पिता के समान है । राजपूत और बकरा—ये दोनों पुत्र के समान हैं । इन दोनों में कर्म रूपी ऋण को कौन सिर पर चढ़ाता है ? और कर्म रूपी ऋण को कौन चुकाता है ! राजपूत तो कर्म रूपी ऋण सिर पर चढ़ाता है और बकरा अपने किए हुए कर्मों को भोग अपना ऋण चुकाता है । साधु राजपूत को बर्जते हैं—तुम कर्म रूपी ऋण को सिर पर मत चढ़ाओ । कर्म का बंध करने पर तुम्हें संसार-समुद्र में बहुत गोता लगाना पड़ेगा । इस प्रकार राजपूत को समझा-बुझाकर उसे हिंसा से बचाते हैं ।

१२९. उपकार : संसार का या मोक्ष का

संसार के उपकार और मोक्ष के उपकार पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—किसी को सर्प काट गया । गारुडिक ने झाडा देकर उसे बचा लिया । तब वह चरणों में सिर झुका कर बोला— इतने दिन तो जीवन माता-पिता का दिया हुआ था और आज से

जीवन आपका दिया हुआ है। माता-पिता बोले—तुमने हमें पुत्र दिया है। बहिनों ने कहा—तुमने हमें भाई दिया है। स्त्री प्रसन्न होकर बोली—मेरी चूड़ियां और चुनरी अमर रहेगी, यह तुम्हारा ही प्रताप है। सगे-संबंधी भी राजी होकर बोले—तुमने बहुत अच्छा काम किया। लाख रूपये देने से भी यह उपकार बड़ा है।

किन्तु यह उपकार संसार का है।

अब मोक्ष का उपकार बताया जाता है—

किसी को जंगल में सर्प काट गया। वहां साधु आ पहुंचे। वह बोला—मुझे सर्प काट गया इसलिए आप झाड़ा दें। तब साधु बोले—हम झाड़ा देना जानते तो हैं पर दे नहीं सकते। तब वह बोला—मुझे दवा बताओ।

साधु बोले—हम दवा जानते तो हैं पर बता नहीं सकते।

तब वह बोला—तुम ऐसे ही मुंह बांध कर फिरते हो या तुम्हारे में कुछ करामात भी है?

तब साधु बोले—हमारे में ऐसी करामात है कि तुम यदि हमारी बात मानो तो तुम्हें किसी भी जन्म में सांप नहीं काटेगा।

तब वह बोला—वह क्या है मुझे बताओ।

तब साधु बोले—तुम विकल्प सहित अनशन कर दो—इस उपसर्ग से बच जाऊंगा तो भोजन करूंगा अन्यथा अन्न और जल का त्याग करूंगा। इस प्रकार उसे सविकल्प अनशन कराया, नमस्कार मंत्र सिखाया, अर्हत्-सिद्ध-साधु और धर्म इन चारों शरणों से उसे सनाथ बनाया, उसकी भाव धारा को पवित्र बनाया। वह वहां से मर कर देवता हो गया, मोक्षगामी बन गया। यह मोक्ष का उपकार है।

१३०. साधु किसे सराहेंगे?

संसार और मोक्ष के मार्ग पर स्वामीजी ने एक और दृष्टांत दिया—एक साहूकार के दो स्त्रियां थीं। एक ने रोने का त्याग कर दिया। वह धर्म के रहस्य को जानती थी। दूसरी धर्म के मर्म को नहीं समझती थी। कुछ समय बाद उसका पति परदेश में काल कर गया। जो स्त्री धर्म के मर्म को नहीं समझती थी, वह पति के देहावसान का समाचार सुन कर रोती है, विलपती है और जो स्त्री धर्म के मर्म को समझती है वह आंसू नहीं बहाती किंतु समता धार कर बैठी है। बहुत स्त्री-पुरुष इकट्ठे हुए। वे सब रोने वाली की प्रशंसा करते हैं—यह धन्य है, पतिव्रता है। और जो नहीं रोती उसकी निन्दा करते हैं—यह पापिनी तो चाहती थी कि पति मर जाए। इसकी आंखों में आंसू भी नहीं हैं।

१३१. पगड़ी कहां से आई?

कुछ लोग कहते हैं—भगवान् की आज्ञा के बाहर भी धर्म होता है।

तब स्वामीजी बोले—आज्ञा में धर्म है—यह तो भगवान् के द्वारा प्रतिपादित है। आज्ञा के बाहर धर्म है—यह किसके द्वारा प्रतिपादित है?

जैसे किसी ने पूछा—तुम्हारे सिर पर पगड़ी है, वह कहां से आई? तब जो साहूकार होता है वह तो उसकी उत्पत्ति का मूल स्रोत बता देता है। वह साक्षी

करा देता है—अमुक वजाज से खरीदी, अमुक रंगरेज के पास मैंने रंगाई। जो व्यक्ति पगड़ी चुरा कर लाया हो, वह उसका मूल स्रोत नहीं बता पाता। वह थोड़े में अटक जाता है।

इसी प्रकार जो आज्ञा के बाहर धर्म बतलाता है तथा अव्रत का सेवन कराने पर धर्म बतलाता है, वह स्थान-स्थान पर अटक जाता है। वह मूल स्रोत तक उसे नहीं ले जा पाता।

१३२. चर्चा घर के मालिक की तरह करो

कोई स्वामीजी के पास चर्चा करने आया। दान-दया और व्रत-अव्रत के विषय में चर्चा करते हुए वह स्थान-स्थान पर अटकता है, अट-संट बोलता है। न्याय-संगत एक चर्चा को छोड़ बीच में ही दूसरी शुरू कर देता है, दूसरी छोड़, बीच में तीसरी शुरू कर देता है, किन्तु प्रथम न्यायसंगत चर्चा का निर्वाह नहीं करता।

तब स्वामीजी बोले—घर का मालिक फसल को काटता है तो वह व्यवस्थित रूप में क्रमबद्ध काट लेता है। और यदि खेत में चोर घुस जाता है तो वह फसल को अस्त-व्यस्त रूप में काटता है—एक पौधा कहीं से तोड़ता है तथा दूसरा पौधा कहीं से तोड़ता है। इसी प्रकार तुम लोग चोर की भांति मत करो। घर मालिक की भांति न्याय की एक चर्चा को पार तक पहुंचा कर फिर दूसरी शुरू करो।

१३३. वे न्याय के अर्थी नहीं हैं

अन्य संप्रदाय के साधु आचार और सैद्धान्तिक मान्यता की न्यायसंगत चर्चा को छोड़ बीच में जीव बचाने की बात को ला विग्रह खड़ा कर देते हैं।

तब स्वामीजी बोले—कुटिल चोर चोरी करके जाते समय लाय लगा देता है। लोग लाय को बुझाने में लग जाते हैं और वह माल लेकर चंपत हो जाता है। इसी प्रकार आचार तो शुद्ध पाल नहीं सकते, अतः आचार और सैद्धान्तिक मान्यता की न्यायसंगत चर्चा को छोड़ लोगों को उकसाने वाली बातें करते हैं—ये जीव बचाने में पाप बतलाते हैं! इन्होंने दान-दया को उठा दिया है! भगवान् को चूका हुआ बतलाते हैं। इस प्रकार लोगों को उकसाते हैं पर वे न्याय के अर्थी नहीं हैं।

१३४. भगवान् का मार्ग राजपथ जैसा है

स्वामीजी ने कुमार्ग और सुमार्ग पर दृष्टांत दिया—भगवान् के मार्ग और पाषंडियों के मार्ग की पहचान कैसे करें।

भगवान् का मार्ग तो राजपथ जैसा है। वह कहीं भी बीच में नहीं रुकता। पाषंडियों का मार्ग पशुओं की पगडंडी जैसा है—थोड़ी दूर पगडंडी दिखाई देती है और आगे झाडी-झंकाड आ जाते हैं। इसी प्रकार वे थोड़ा-सा दान-शील आदि बतलाते हैं, फिर हिंसा में धर्म बतला देते हैं।

१३५. जो वर्तमान में होता है वही सत्य है

कुछ पाषंडी ऐसा कहते हैं—भीखणजी की ऐसी मान्यता है कि किसी ने मरते बकरे को बचाया और वह बाद में अनेक प्रकार की हिंसा करेगा, उसकी अनुमोदना

का पाप जितना ज्ञानी पुरुषों ने देखा है, उसे उसी समय लग गया। तुम लोग किसी को तपस्या का धारणा (उसके पहले दिन भोजन) कराते हो और भविष्य में वह तपस्या करेगा, उसका फल मुझे भी मिलेगा, यह सोच कर धारणा कराते हो, तब तुम्हारे हिसाब से मरते हुए असंयती को बचा लेने पर वह भविष्य में जो भी हिंसा करेगा उसका पाप तुम्हें लगेगा, यह तुम्हारी मान्यता से फलित होता है। इसका कारण यह है कि भविष्य में तपस्या करेगा उसका लाभ तुम्हें मिलता है तो जिसे बचाया, वह भविष्य में हिंसा करेगा, उसका पापांश भी तुम्हें लगेगा। ज्ञानी पुरुषों ने तो ऐसा कहा है—मरते हुए असंयती को किसी ने बचाया उसे जितना पाप ज्ञानी पुरुषों ने देखा उतना उसी समय लग चुका। भविष्य में वह जो करेगा उसका पुण्य-पाप उसे नहीं मिलेगा।

१३६. पाप उसी को लगेगा

किसी ने पूछा—तुम किसी को त्याग कराते हो और वह त्याग को तोड़ देता है तो तुम्हें पाप लगता है।

तब स्वामीजी बोले—किसी साहूकार ने सौ रुपयों का कपड़ा बेचा। उसे काफी लाभ हुआ। खरीददार ने एक-एक रुपये के दो-दो रुपये कमाये। किन्तु उसका लाभ उस बेचने वाले साहूकार को नहीं मिलता। और कपड़ा खरीदने वाला आगे चल कर सारा कपड़ा जला देता है तो उसका नुकसान उसी को भुगतना होता है, पर साहूकार के घर में वह नुकसान नहीं होता। इसी प्रकार हमने किसी को त्याग दिलाए, उसका लाभ हमें मिल चुका। त्याग लेने वाला यदि अपने लिए हुए त्याग को ठीक ढंग से पालेगा तो लाभ उसी को मिलेगा और यदि वह अपने त्याग को तोड़ेगा तो उसका पाप उसी को लगेगा, वह हमें नहीं लगेगा।

१३७. जैसा भाव वैसा लाभ

स्वामीजी ने एक और दृष्टांत दिया—किसी दाता ने साधु को घी का दान दिया। साधु ने असावधानी बरती। उस घी से अनेक चींटियां मरीं तो उनका पाप साधु को लगा किन्तु वह दाता को नहीं लगा। और उस साधु ने वह घी सहर्ष किसी तपस्वी साधु को दिया, स्वयं नहीं खाया। उसके तीर्थंकर गोत्रकर्म का बंध हुआ। उसका लाभ साधु को हुआ। अपने-अपने भाव के अनुसार लाभ होता है।

१३८. दुश्मन का सहयोग करने वाला भी दुश्मन

किसी ने पूछा—असंयती जीव के पोषण में पाप बतलाते हो, इसका न्याय क्या है?

तब स्वामीजी बोले—किसी साहूकार के रुपयों की नौली कमर में बंधी हुई थी। उसे देख चोर ने उसका पीछा किया। आगे साहूकार और उसके पीछे चोर दौड़ रहा है। इस प्रकार दौड़ते-दौड़ते चोर लड़खड़ा कर नीचे गिर गया। तब किसी ने चोर को अफीम खिला, पानी, पिला कर तैयार कर दिया। उस अफीम खिलाने वाले को साहूकार का दुश्मन मानना चाहिए क्योंकि उसने दुश्मन का सहयोग किया है।

इसी प्रकार छह काय जीवों को मारने वाले का पोषण करता है उसे भी छह काय के जीवों का दुश्मन मानना चाहिए क्योंकि उसने दुश्मन का सहयोग किया है इसलिए।

१३९. धर्म कहां से होगा ?

किसी ने खेत बोया। फसल पकने को आई इतने में उसके मालिक के नेहरुआ निकल आया। तब किसी ने दवा देकर उसे स्वस्थ बना लिया। वह स्वस्थ हुआ तब उसने फसल काटी। साहाय्य करने वाले को भी हिंसा का पाप लगा। इसी प्रकार हिंसा करने वाले का साहाय्य करने पर धर्म कहां से होगा ?

१४०. मोक्ष का उपकार करने वाला महान् होता है

किसी राजा ने दस चोर पकड़े। उन्हें मारने का आदेश दिया। तब एक साहूकार ने प्रार्थना की—महाराज ! यदि आप चोरों को मुक्त कर दें तो मैं प्रत्येक चोर के बदले में पांच सौ-पांच सौ रुपये दूंगा।

राजा ने कहा—चोर बहुत दुष्ट हैं। वे छोड़ने के योग्य नहीं हैं।

साहूकार ने फिर कहा—यदि आप सबको मुक्त न करें तो नौ चोरों को तो छोड़ दें।

राजा ने उसकी बात नहीं मानी। इसी प्रकार साहूकार ने बहुत प्रार्थना की। तब पांचसौ रुपये लेकर एक चोर को छोड़ दिया। नगरी के लोग साहूकार को धन्य-धन्य कहने लगे। उसका गुणानुवाद किया—इसने चोर को छुड़ा कर बहुत उपकार किया है। चोर भी बहुत प्रसन्न हुआ। उसने सोचा—साहूकार ने मेरे पर बहुत उपकार किया है।

अब चोर ने अपने घर जाकर चोरों के सगे-संबंधियों को सारे समाचार सुनाए। वे सारी बातें सुन बहुत रुष्ट हुए। वह चोर उन्हें साथ ले आया। शहर के दरवाजे पर एक पत्र टांग दिया। उसमें लिखा था—नौ चोरों को मारा गया है, उनका प्रतिशोध लेने के लिए नौ के ग्यारह गुना—९९ व्यक्तियों को मारने के बाद समझौता कर लूंगा। साहूकार को नहीं मारूंगा। साहूकार के बेटे, पोते और सगे-संबंधियों को भी नहीं मारूंगा। इस सूचना के बाद वह मनुष्यों को मारने लगा। किसी के बेटे को मारा, किसी के भाई को मारा, किसी के पिता को मारा। नगर में हाहाकार हो गया। नगरी के लोग साहूकार की निन्दा करने लगे। उसके घर जाकर रोने लगे। रे पापी ! यदि तुम्हारे घर में धन अधिक था तो उसे तुमने कूए में क्यों नहीं डाला ? तुमने चोर को छुड़ा हमारे परिवार के लोगों को मरवा दिया। साहूकार उद्विग्न हो गया। वह शहर को छोड़ दूसरे गांव में जाकर बस गया। बहुत दुःखी हुआ। जो लोग उसके गुण गाते थे वे ही उसके अवगुण गाने लगे।

संसार का उपकार ऐसा है। मोक्ष का उपकार करने वाला महान् होता है। उसमें कोई खतरा नहीं है।

१४१. भार नीचे ले जाता है

सिरियारी की घटना है। वोरा खिवेसरा ने पूछा—नरक में जीव जाता है, उसे नीचे कौन खींचता है ?

स्वामीजी बोले—कोई कूए में पत्थर डालता है उसे नीचे कौन खींचता है ? वह स्वयं के भार से अपने आप नीचे तल तक चला जाता है। इसी प्रकार कर्म के भार से भारी बना हुआ जीव अपने आप नरक में चला जाता है।

१४२. हल्कापन ऊपर लाता है

वोरा खिवेसरा ने एक और प्रश्न पूछा—जीव देवलोक में जाता है, उसे ऊपर कौन ले जाता है ?

तब स्वामीजी बोले—काठ को पानी के अंदर डालने पर वह ऊपर आ जाता है। उसे कोई ऊपर नहीं लाता। पर वह अपने हल्केपन के कारण ऊपर आकर तैरने लग जाता है। इसी प्रकार जीव भी कर्मों से हल्का होने पर अपने आप ऊपर देवगति में चला जाता है।

१४३. जीव भारहीन कैसे होता है ?

किसी ने पूछा—जीव हल्का कैसे होता है ?

तब स्वामीजी बोले—पैसा पानी में डालने पर डूब जाता है और उसी पैसे को तपा, कूट-पीट कर उसकी कटोरी बना लेने पर वह तैरने लग जाती है। उस कटोरी में रखा हुआ पैसा भी तैरने लग जाता है। इसी प्रकार जीव तप, संयम आदि के द्वारा हल्का हो जाता है। और हल्का होने के कारण वह तर जाता है।

१४४. निन्दा करता है पर प्रगट नहीं होने देता

कोई साधुओं की निन्दा करता है और अपनी चालाकी के कारण लोगों के सामने अपने आप को प्रगट नहीं होने देता। उस पर स्वामीजी ने दृष्टांत किया—किसी गांव में एक चुगलखोर रहता था। एक बार उस गांव में फोजो आए। उसने उन्हें लोगों के धन-धान्य की जानकारी दे दी। कुछ फोजी चले गए और कुछ फोजी वहीं ठहर गए। गांव के लोग बाहर भाग गए। कुछ लोग वापस आ गये। लोगों ने सुना कि चुगलखोर ने फोजियों को धन-धान्य के बारे में जानकारी दी। उन्होंने चुगलखोर को उलाहना दिया—अरे, तूने ऐसा काम किया ?

तब वह फोजियों को सुना कर बोला—यदि मैं फोजियों को जानकारी देता तो अमुक का धन वहां गड़ा हुआ है, अमुक का धन वहां गड़ा हुआ है और अमुक का धन वहां गड़ा हुआ है, यह सब बता देता। इस प्रकार चालाकी से उसने जो बाकी थे उनके धन की भी जानकारी दे दी।

इसी प्रकार जो निन्दक चालाक होता है वह निन्दा करता हुआ भी झूठ बोल कर अपने आपको निन्दा से अलग रख लेता है—निन्दक के रूप में प्रगट नहीं होने देता।

१४५. उस समय तो हम थे ही नहीं

कुछ लोग स्वामीजी को कहने लगे—ऐसी मान्यता तो कहीं भी नहीं सुनी। तुमने

दान-दया का लोप कर दिया।

तब स्वामीजी बोले--पर्युषण में कोई याचक को अनाज नहीं देता, आटा नहीं देता। पर्युषण धर्म के दिन हैं। यदि अन्न दान को धर्म मानें तो उन दिनों में दान देना बंद क्यों किया? यह बात तो बहुत पुरानी है। उस समय तो हम थे ही नहीं। फिर यह स्थापना किसने की?

१४६. तुम दुःखी क्यों होते हो?

कुछ लोग बोले--भीखणजी तुम्हारे श्रावक किसी को दान नहीं देते। ऐसी तुम्हारी मान्यता है।

तब स्वामीजी बोले—किसी शहर में वस्त्र की चार दुकाने थीं। उसमें से तीन व्यापारी किसी शादी में चले गये। पीछे से कपड़ा खरीदने वाले ग्राहक आए। तब जो एक व्यापारी शेष था वह राजी होता है या नाराज?

तब वे बोले—राजी होता है।

तब स्वामीजी बोले—तुम कहते हो भीखणजी के श्रावक दान नहीं देते तो जो दान लेने वाले हैं वे सब तुम्हारे ही पास आएंगे। तुम कहते हो वह धर्म तुम्हीं को होगा। फिर तुम दुःखी क्यों होते हो और निंदा क्यों करते हो? ऐसा कह उन्हें हतप्रभ कर दिया। वे वापस उत्तर नहीं दे सके।

१४७. संलेखना करनी पड़ेगी

स्वामीजी के नई दीक्षा लेने के कुछ वर्षों बाद तीन स्त्रियां दीक्षा लेने को तैयार हुई। तब स्वामीजी बोले--तुम तीनों साथ में दीक्षा लेती हो और कदाचित् एक का वियोग हो जाए तो फिर तुम दो कैसे रह पाओगी, क्योंकि मात्र दो साध्वियों का रहना सम्मत नहीं है। इसलिए तुम्हें संलेखना (समाधि-मरण की तैयारी के लिए की जाने वाली तपस्या) करनी पड़ेगी। तुम्हारा मन हो तो दीक्षा लेना। इस प्रकार उन्हें यह स्वीकार करा कर उन तीनों को साथ में दीक्षा दी। बाद में अनेक साध्वियां हो गईं। पर इस विषय में प्रारम्भ से ही स्वामीजी की नीति बहुत उदात्त और विशुद्ध थी।

१४८. मूल-मूल और प्रासंगिक-प्रासंगिक

दया के विषय में स्वामीजी ने तीन दृष्टांत दिए—चोर, हिंसक और व्यभिचारी-- इन तीनों को साधुओं ने समझाया। ये पापमय प्रवृत्ति कर रहे थे, उन्हें निष्पाप बना दिया। यह जिन धर्म की दया का रहस्य है। हे भव्य जीवो! तुम जिनधर्म को पहचानो।

(१) किसी माहेश्वरी की दूकान में साधु ठहरे। रात के समय वहां चोर आए। उन्होंने दूकान के दरवाजे खोल दिए। साधु बोले—तुम कौन हो? तब वे बोले—हम चोर हैं। साहूकार ने हजार रुपयों की थैली भीतर रखी है। उसे हम ले जाएंगे।

तब साधुओं ने उपदेश दिया—चोरी का फल बहुत बुरा होता है। भविष्य में नरक और निगोद का दुःख भुगतना पड़ेगा। इस प्रकार बुराई का विश्लेषण कर उसे समझाया—इस धन का उपयोग सब करेंगे और इसका परिणाम तुम्हें भुगतना पड़ेगा।

इस प्रकार उन्हें समझा-बुझा चोरी के त्याग करवाए। चोर साधुओं का गुणग्राम कर रहे थे। उस समय प्रभात हो गया। इतने में दुकान का मालिक आ गया। दुकान को नमस्कार कर थोड़ा-सा साधुओं के चरणों में भी झुका। चोरों को देखकर पूछा—तुम कौन हो ? वे बोले—हम चोर हैं। तुमने हुंडी भुगता कर हजार रुपयों की थैली भीतर रखी, उसे हम देख रहे थे। और रात में आ उसे लेने लगे। साधुओं ने हमें देखा और हमें समझा-बुझा कर चोरी का त्याग करवा दिया। भला हो इन साधुओं का। इन्होंने हमें बचा दिया, जो हम डूब रहे थे।

माहेश्वरी यह बात सुन साधुओं के चरणों में लुट गया और उनका गुण गाने लगा—मेरी दुकान में आप ठहरे, यह बहुत अच्छा हुआ। आपने मेरी थैली बचा ली।

यह धन यदि चोर ले जाते तो मेरे चार बेटे कुंआरे रह जाते। अब उन चारों को ब्याह दूंगा। यह आपका उपकार है।

माहेश्वरी ने ऐसा कहा पर साधुओं ने उसका धन बचाने के लिए चोरों को उपदेश नहीं दिया। उन्होंने चोरों का कल्याण करने के लिए उपदेश दिया था।

(२) बकरों को मारने वाला कसाई हाथ में छुरी लिए हुए साधुओं के पास आकर खड़ा हो गया। साधुओं ने पूछा—तुम कौन हो ?

तब वह बोला—मैं कसाई हूं।

तब साधुओं ने पूछा—तुम्हारा क्या धन्धा है ?

तब वह बोला—घर में बीस बकरे बंधे हुये हैं। उनके गले पर छुरी चला कर बेचूंगा।

तब साधुओं ने उसे उपदेश दिया—सेर भर अनाज के लिए ऐसा पाप करते हो ?

तब कसाई बोला—मुझे भगवान् ने कसाई के घर जन्म दिया है, इसलिए यह मेरा दोष नहीं।

तब साधु बोले भगवान् क्यों भेजेगा ? पहले ही तुमने बुरे कर्म किए इसलिए तुम कसाई के घर में जन्मे और फिर ऐसा कर्म करोगे तो तुम्हारे लिए नरक तैयार है। इस प्रकार विभिन्न रूपों में साधुओं ने उसे समझाया और बकरों को मारने का यावज्जीवन प्रत्याख्यान करा दिया।

कसाई बोला—मेरे घर पर बीस बकरे बंधे हुए हैं। आप कहें तो उन्हें हरी घास खाने को डालूं और ठंडा पानी पिलाऊं ? आप कहें तो उन्हें भेड़ों और बकरियों के समूह में चराने को भेजूं ? आप कहें तो उनके कान में कड़ी डालकर बाजार में छोड़ दूं ? और आप कहें तो आपको लाकर सौंप दूं ? आप उन्हें धोवन या गरम पानी पिलाना, सूखा चारा खिलाना। आप अपने बकरियों के समूह को अलग से चराने भेजना।

तब साधु बोले—तुम अपने प्रत्याख्यान की सुरक्षा करना, उसे अच्छे ढंग से पालना। इस प्रकार साधु उसे त्याग पालने का निर्देश देते हैं, पर बकरों की संभाल का निर्देश नहीं देते।

कसाई साधुओं का गुण गाता है—मेरी हिंसा छुड़ा दी। मुझे तार दिया। बकरे

जीवित रहे, इसलिए वे भी हर्षित हुए।

(३) एक पुरुष था परस्त्री का लंपट। उसने साधुओं के पास परस्त्री गमन से होने वाले पाप को सुना और उसे त्याग दिया। वह बहुत प्रसन्न हुआ और उसने साधुओं का गुणानुवाद किया—मैं संसार समुद्र में डूब रहा था, आपने मुझे तार दिया। आपने मुझे नरक में जाते हुये को बचा लिया।

उस स्त्री ने सुना कि मेरे प्रेमी ने शीलव्रत स्वीकार कर लिया है, तब वह उसके पास आकर बोली—मैं तो तुम्हारे साथ इकतारी किए हुये बैठी थी। सो या तो मेरा कहना मानो, मेरे साथ गृहवास करो अन्यथा मैं कुएं में गिर जाऊंगी।

तब उसने कहा—मुझे साधुओं ने परस्त्री गमन का बहुत पाप बतलाया, इसलिए मैंने उसका त्याग कर दिया। अब मुझे तुमसे कोई काम नहीं है। तब वह स्त्री क्रोध के आवेश में आ कुएं में गिर गई।

तात्पर्य की भाषा में चोर प्रतिबुद्ध हुये और दूकानदार का धन बच गया; कसाई प्रतिबुद्ध हुआ और बकरे बच गए, व्यभिचारी पुरुष ने शील स्वीकार किया, स्त्री कुएं में गिर गई। साधुओं ने चोर, कसाई और व्यभिचारी—तीनों को पाप से बचाने के लिए उपदेश दिया। उन तीनों को साधुओं ने तार दिया। वे तीनों तर गए। उसका साधुओं को धर्मलाभ हुआ। दूकानदार का धन बचा, बकरों का जीवन बचा—उसका धर्म और स्त्री कूएं में गिर गई उसका पाप साधुओं को नहीं लगता।

कुछ अज्ञानी कहते हैं—जीव बचे और धन बचा उससे उसे धर्म होता है तो उसकी मान्यता के अनुसार स्त्री मर गयी उसका पाप भी उसे लगेगा।

१४६. यत्न दया का या चींटी का?

किसी ने कहा—जीव बचा वह भी धर्म है।

तब स्वामीजी बोले—कोई चींटी को चींटी जानता है वह ज्ञान है या चींटी ज्ञान है?

तब वह बोला—कोई चींटी को चींटी जानता है वह ज्ञान है।

फिर स्वामीजी ने पूछा—चींटी को चींटी मानता है वह सम्यक्त्व है या चींटी सम्यक्त्व है?

तब वह बोला—चींटी को चींटी मानता है वह सम्यक्त्व है।

फिर स्वामीजी ने पूछा—चींटी को मारने का त्याग किया वह दया है या चींटी बची वह दया है?

तब वह बोला—चींटी बची वह दया है।

तब स्वामीजी बोले—चींटी हवा से उड़ गई तो क्या उसकी दया भी उड़ गई?

तब वह विमर्शपूर्वक विचार कर बोला—चींटी मारने का त्याग किया वह दया, चींटी बची वह दया नहीं।

तब स्वामीजी बोले—यत्न दया का करना चाहिये या चींटी का करना चाहिए?

तब वह बोला—यत्न दया का करना चाहिए।

१५०. वह ठीक ही है

किसी ने कहा—सूत्रों में कहा है साधु को जीव बचाना चाहिये।

तब स्वामीजी बोले—वह ठीक ही है। जीवों को वैसे ही रखना चाहिए जैसे वे हैं, किसी को दुःख नहीं देना चाहिए।

१५१. ऐसे होते हैं अज्ञानी

अन्य सम्प्रदाय के श्रावकों को पूरी पहचान नहीं, उस पर स्वामीजी ने दृष्टान्त दिया—कोई बहुरूपिया साधु का रूप बना कर आया। उसे पूछा—तुम किस सम्प्रदाय के हो?

तब वह बोला—मैं डूंगरनाथजी के सम्प्रदाय का हूं।

तुम्हारा नाम क्या है?

उसने कहा—मेरा नाम पत्थरनाथ है।

तुम क्या पढ़े हो?

तब वह बोला—पढ़ा कुछ भी नहीं हूं, पर यह जानता हूं कि बाईस टोले अच्छे हैं और तेरापन्थी बुरे।

'तब तुम महापुरुष हो' यह कह कर उन्होंने तीन प्रदक्षिणा से विधिपूर्वक उसे वन्दना की।

ऐसे अज्ञानी हैं। वे न्याय और निर्णय करना नहीं जानते।

१५२. भगवती कौन सा अधम्मो मंगल है?

स्वामीजी भगवती का वाचन कर रहे थे। एक व्यक्ति ने आकर कहा—स्वामीजी! 'धम्मो मंगल' कहो।

तब स्वामीजी बोले—भगवती सुनो।

वह फिर बोले—स्वामीजी धम्मो मंगल सुनाओ।

तब स्वामीजी बोले—भगवती कौनसा 'अधम्मो मंगल है' यह 'धम्मो मंगल' ही है। गांव जाते समय शकुन लिया जाता है, गधे और तीतर को बुलवाया जाता है। वैसे ही 'धम्मो मंगल' सुनना चाहते हो तो बात अलग है और निर्जरा के लिए सुनना चाहते हो, वह दूसरी बात है।

१५३. गधे की बात क्यों करते हैं?

किसी ने पूछा—जंगल में कोई साधु थक गया। सहज-भाव से कोई बैलगाड़ी आ रही थी। उस बैलगाड़ी पर साधु को बिठा कर गांव में लाया गया, उससे क्या हुआ?

तब स्वामीजी बोले—बैलगाड़ी नहीं, किंतु सवारी के गधे आ रहे थे। उन पर बिठा कर साधु को गांव में लाया गया, तब उसको क्या हुआ?

तब वह बोला—गधे की बात क्यों करते हैं?

तब स्वामीजी बोले—तुम बैलगाड़ी में बिठा कर लाने में धर्म कहते हो तो गधे

पर बिठा कर लाने में भी धर्म होगा। साधु तो उन दोनों की ही सवारी नहीं कर सकता।

१५४. पांचों का एक साथ पृथक्करण

चंडावल की घटना है। फत्तूजी आदि पांच साध्वियों से स्वामीजी ने कहा—तुम्हें जो वस्त्र चाहिए वह ले लो। उन्होंने जो मांगा वह उन्हें दिया। मन में शंका उत्पन्न हुई कि वस्त्र प्रमाण से अधिक होना चाहिए। तब स्वामीजी ने मुनि अखेरामजी को वहां भेजा और साध्वियों के स्थान से उनके वस्त्र मंगवा कर उनका नाप किया। तब वस्त्र प्रमाण से अधिक निकले। तब स्वामीजी ने उन्हें बहुत उलाहना दिया। वे भविष्य में वस्त्र आदि की मर्यादा रख सकेंगी—ऐसा विश्वस पैदा नहीं हुआ, इसलिए स्वामीजी ने उन पांचों साध्वियों का एक साथ संघ से सम्बन्ध-विच्छेद कर दिया।

१५५. सामायिक नहीं तो संवर कर

ढूंढाड प्रदेश में एक भाई था। उसे वीरभाणजी ने शंकाशील बना दिया। वह स्वामीजी के पास आया। स्वामीजी ने उसे सामायिक करने को कहा।

तब वह बोला—सामायिक तो नहीं करूंगा। (मैं अब आपको साधु नहीं मानता) सभव है सामायिक में आपके लिये मेरे मुंह से 'स्वामी महाराज' यह शब्द निकल जाए। ऐसा कहने से मुझे सामायिक में दोष लगेगा।

तब स्वामीजी बोले—तू एक मुहूर्त्त का संवर कर। संवर की प्रेरणा दे उसे संवर करा दिया। फिर उससे चर्चा की, भिन्न-भिन्न प्रकार से तत्त्व को समझा, उसकी शंका मेट दी। वह स्वामीजी के चरणों में प्रणत हो गया।

१५६. कहीं सूत्र में आया होगा

स्वामीजी नाथद्वारा में विराज रहे थे। नैणसिंहजी का दामाद उदयपुर से वहां आया। नैणसिंहजी ने कहा—महाराज ! आप इनको समझाएं।

तब स्वामीजी उसे समझाने लगे। उसने कहा—साधु को आधाकर्मी (साधु के निमित्त बनाए हुए) स्थानक में नहीं रहना चाहिये।

तब वह बोला—ठीक है, नहीं रहना चाहिये।

स्वामीजी ने आगे कहा—कुछ व्यक्ति साधु कहलाते हैं और आधाकर्मी स्थानक में रहते हैं।

तब वह बोला—यदि रहते हैं तो कहीं सूत्र में आया होगा।

फिर स्वामीजी बोले—साधु को किंवाड़ बन्द नहीं करना चाहिये, एक घर से प्रतिदिन आहार नहीं लेना चाहिये।

तब वह बोला—यह बात आपने बिल्कुल ठीक कही। किंवाड बन्द कर साधु को किसकी सुरक्षा करनी है ? किंवाड़ बन्द करने वाला साधु ही नहीं होता।

तब स्वामीजी ने कहा—कुछ साधु किंवाड़ बन्द करते हैं, प्रतिदिन एक घर का आहार लेते हैं।

तब वह बोला—हां महाराज ! किंवाड बन्द करते हैं, प्रतिदिन एक घर का

आहार लेते हैं तो कहीं सूत्र में आया होगा।

तब स्वामीजी ने जान लिया कि यह समझने वाला नहीं है क्योंकि इसकी बुद्धि प्रखर नहीं है।

१५७. गेहूं की दाल नहीं होती

स्वामीजी किसी से चर्चा कर रहे थे, तब उन्होंने देखा कि इसकी बुद्धि बिल्कुल कमजोर है। लोगों ने कहा—स्वामीजी ! आप इसे समझाएं।

तब स्वामीजी बोले—मूंग, मोठ और चने की दाल हो सकती है, पर गेहूं की दाल नहीं हो सकती। इसी प्रकार जिसके कर्म का लेप कम होता है और जो बुद्धिमान होता है वह समझ सकता है, किन्तु बुद्धि से हीन आदमी नहीं समझ सकता।

१५८. उतने कारीगर नहीं

किसी ने कहा—आप उद्यम करें तो चारों तरफ ऐसे सुलभबोधि जीव हैं जो समझ सकते हैं।

तब स्वामीजी बोले—मकराणा के पत्थर में प्रतिमा होने की क्षमता तो है, पर हर पत्थर को प्रतिमा बनाने के लिए जितने चाहिए उतने कारीगर नहीं हैं। इसी प्रकार समझ सकने वाले तो बहुत हैं पर उतने समझाने वाले नहीं हैं।

१५९. केवली श्रुत-व्यतिरिक्त ही होते हैं

वेणीरामजी स्वामी ने स्वामीजी से कहा—हेमजी को अस्खलित और व्यवस्थित रूप से व्याख्यान कंठस्थ नहीं हैं। वे रचना करते जाते हैं और व्याख्यान देते जाते हैं।

तब स्वामीजी बोले—केवली श्रुत-व्यतिरिक्त ही होते हैं। उनके श्रुत से कोई प्रयोजन नहीं होता।

१६०. कौनसा खपरेल लाओगे

वेणीरामजी स्वामी अभी छोटी अवस्था में ही थे। तब उन्होंने स्वामीजी से कहा—हिंगुल से पात्र नहीं रंगने चाहिए।

तब स्वामीजी बोले—मेरे तो पात्र रंगे हुए ही हैं, तुम्हें शंका हो तो तुम मत रंगना।

तब वेणीरामजी स्वामी बोले—मेरा तो खपरेल से रंगने का भाव है।

तब स्वामीजी बोले—तुम खपरेल लेने जाओगे, तब इधर पास में पीला और कच्चे रंग का खपरेल पड़ा है और आगे लाल और पक्के रंग का खपरेल पड़ा है। तुम्हारे अनुसार पहले पास में जो दिखाई दिया वही लेना चाहिए। और यदि अच्छा खपरेल खोजा जाए तो ध्यान तो अच्छे रंग का ही हुआ। यह कह कर स्वामीजी ने उन्हें समझाया। और वे समझ गए।

१६१. दुरंगे क्यों रंगते हो ?

कोई कहता है—पात्रों को दो रंग में (लाल और काला) क्यों रंगते हैं ?

तब स्वामीजी बोले—उनमें कुंथुओं (सूक्ष्म जीवों) का अच्छी तरह से पता लग जाता है। वे एक रंग से दूसरे रग पर आते हैं तब सरलता से दिख जाते हैं। कोरा

हिंगुल बोझिल भी होता है। काला रंग हल्का होता है। उस पर से चिकनाहट उतारना आसान होता है। इत्यादि अनेक कारणों से पात्रों को कई रंगों से रंगा जाता है। सूत्र में अनेक रंगों से रंगने का निषेध नहीं है।

१६२. खामियां बताते रहते

वेणीरामजी स्वामी छोटी अवस्था में थे तब वे खामियां बताते रहते—स्वामीजी ! आपने बिना देखे और बिना प्रमार्जन किए पैर पसार दिए।

एक दिन वेणीरामजी स्वामी कुछ दूर बैठे थे। स्वामीजी ने गुप्तरूप से प्रमार्जन कर पैर पसारे और साधुओं से कहा—देखो, वह बेणा दूर बैठा देख रहा है।

इतने में वेणीरामजी स्वामी बोल उठे—वह देखो, स्वामीजी ने बिना देखे पैर पसार दिए।

तब स्वामीजी और पास बैठे दूसरे साधु मुस्कराने लगे। साधुओं ने कहा—स्वामीजी ने प्रमार्जन कर पैर पसारे हैं।

तब वेणीरामजी शर्माये हुए स्वामीजी के पास आ पैरों में पड़ गए।

१६३. ऐसे थे विनम्र वेणीरामजी

पींपाड़ की घटना है वेणीरामजी स्वामी दूसरी दूकान में बैठे थे। स्वामीजी ने उन्हें—ओ वेणीराम ! ओ वेणीराम !—इस प्रकार दो-तीन बार पुकारा। पर वे वापस बोले नहीं।

तब स्वामीजी ने गुमानजी लुणावत से कहा—लगता है बेणां संघ से अलग होगा।

तब गुमानजी वेणीरामजी स्वामी के पास जाकर बोले—आपको स्वामीजी ने पुकारा, आप बोले नहीं, इस पर स्वामीजी ने कहा—लगता है बेणा संघ से अलग होगा।

यह सुनकर वेणीरामजी स्वामी भयभीत हो गए और स्वामीजी के पास आ उनके चरणों में गिर पड़े।

तब स्वामीजी बोले—रे मूर्ख ! पुकारने पर वापस बोलता नहीं है ?

तब वेणीरामजी स्वामी विनम्रता के साथ बोले—महाराज ! मैंने सुना नहीं। उन्होंने बहुत विनम्रता की।

ऐसे थे विनीत वेणीरामजी स्वामी और ऐसे थे शक्तिशाली स्वामीजी।

१६४. ऐसे थे स्वामीजी अवसरज्ञ

वेणीरामजी स्वामी ने कहा—मैं थली प्रदेश में जाऊं और चन्द्रभानजी से चर्चा करूं।

तब स्वामीजी बोले—तुम्हें उनसे चर्चा करने का त्याग है। ऐसा ही अवसर देखा, इसलिए वह त्याग करा दिया। ऐसे थे स्वामीजी अवसरज्ञ।

१६५. संभव है आंखें गवां बैठें

मेंणाजी साध्वी और वेणीरामजी को लक्ष्य कर स्वामीजी ने कहा—ये आंखों में

दवा ज्यादा डालते हैं। संभव है कहीं आंख गवां बैठे। फिर भी उन्होंने दवा डालना नहीं छोड़ा। कुछ समय बाद उनकी आंखें बहुत कमजोर हो गई। आंखों में दवा अधिक डाली, इसलिए आंखों को क्षति पहुंची।

१६६. वह वापस लेने योग्य नहीं

नाथद्वारा की घटना है। गुजरात से एक अन्य सम्प्रदाय का साधु सिंघजी आया और स्वामीजी के पास उसने दीक्षा ली। कुछ दिन वह ठीक रहा, फिर अयोग्य समझ सिरियारी में उसे संघ से अलग कर दिया। वह मांढा गांव चला गया।

फिर खेतसीजी स्वामी बोले—सिंघजी को प्रायश्चित्त देकर उसे संघ में वापस लें। मैं जाकर उसे ले आता हूं।

तब स्वामीजी बोले—वह लेने योग्य नहीं। फिर भी खेतसीजी स्वामी कमर कस कर उसे लाने के लिए तैयार हो गए।

तब स्वामीजी बोले—उसके साथ तुमने यदि आहार कर लिया तो तुम्हारे साथ हमें आहार करने का त्याग है, यह सुनकर खेतसीजी स्वामी सिंघजी को लाने नहीं गए।

ऐसे थे शक्तिशाली भीखणजी स्वामी।

बाद में सिंघजी का समाचार सुना कि वह (किसी गृहस्थ के घर में) गुदड़ी ओढ चक्की के पास सो रहा है।

१६७. भूमि को नाप आओ

दो साधु परस्पर आग्रह करने लगे। वे दोनों स्वामीजी के पास आए। इसके तुंबे में से पानी की बूंदें गिर रही थीं। एक कहने लगा—इतनी दूर बूंदें गिरीं। दूसरे ने कहा—इतने कदमों तक बूंदें गिरीं। इस प्रकार परस्पर विवाद करने लगे। समझाने पर भी नहीं समझ पाए।

तब स्वामीजी ने कहा—तुम दोनों रस्सी लेकर जाओ और उस स्थान को नाप आओ। तब वे दोनों आग्रह छोड़ सीधे सरल हो गए।

१६८. लोलुप वह होगा

दो साधु परस्पर आग्रह करने लगे। एक कहता है—तुम लोलुप हो। दूसरा कहता है—तुम लोलुप है। इस प्रकार विवाद करते-करते वे स्वामीजी के पास पहुंचे। फिर भी उन्होंने विवाद नहीं छोड़ा।

तब स्वामीजी बोले—तुम दोनों 'विगय' (दूध दही, घी आदि) खाने का त्याग करो, आज्ञा की छूट रखो। जो पहले विगय खाने की आज्ञा मांगेगा, वह लोलुप होगा। एक साधु ने लगभग चार महीनों तक विगय नहीं खाई, फिर उसने आज्ञा मांगी, तब दूसरे साधु के अपने आप विगय खाने की छूट हो गई। इस प्रयोग से वे अपने आप समझ गए।

१६९. अवगुण किसका देख रहे हो ?

सं० १८५६ की घटना है। स्वामीजी वायु की बीमारी के कारण नाथद्वारा में लगभग तेरह मास रहे। वहां मुनि हेमराजजी गोचरी गए। वे चने की और मूंग की

दाल इकट्ठी ले आए।

स्वामीजी ने उसे देख पूछा—यह चने की और मूंग की दाल किसने इकट्ठी की ?

तब हेमजी स्वामी बोले—मैं मिलाकर लाया हूं।

तब स्वामीजी बोले—बीमार साधुओं के लिए चेष्टा पूर्वक मांग अलग-अलग लानी तो कहीं रही, पर जो अलग-अलग थीं उन्हें तुमने इकट्ठा क्यों किया।

तब हेमजी स्वामी बोले—अनजान में ये इकट्ठी हो गई।

तब स्वामीजी ने उन्हें बहुत उलाहना दिया। तब वे एकांत स्थान में जाकर लेट गए। उदास हो गए। बाद में स्वामीजी ने आहार कर उनके पास आकर कहा—अवगुण अपनी आत्मा का देख रहा है या मेरा ?

तब हेमजी स्वामी बोले—महाराज ! अवगुण तो अपना ही देख रहा हूं।

तब स्वामीजी बोले—ठीक है। आज के बाद सावधान रहना। उठो, जाओ, आहार कर लो। यह कह कर उन्हें आहार करा दिया।

१७०. वे किसी को माफ नहीं करेंगे

काफरला गांव में खेतसीजी स्वामी और हेमजी स्वामी गोचरी गए। वहां कई प्रकार का धोवन-पानी था। उनका स्वाद चखे बिना उन्हें इकट्ठा कर दिया। तब खेतसीजी स्वामी ने कहा—हेमजी ! आज चखे बिना धोवक-पानी को इकट्ठा कर दिया है। यदि वह ठीक नहीं निकला तो स्वामीजी इतना उलाहना देंगे कि कुछ कहा नहीं जा सकता। वे किसी की लिहाज नहीं रखेंगे। उसके बाद काफरला के मंदिर में उस धोवक-पानी को चख कर देखा। वह अच्छा निकला। तब उनका मन प्रसन्न हो गया।

१७१. बीमार के लिए ऐसी व्यवस्था करते

स्वामीजी बीमार साधुओं के लिए दाल मंगाते तब उन्हें दो तरफ रखते—कुछ तीखी होती, कुछ कडवी होती, किसी में नमक ज्यादा होता, किसी में नमक कम होता। बीमार को कोनसी रुचती है, कौनसी नहीं रुचती। इसलिए वे उन्हें अलग-अलग रखते। बीमार के लिए ऐसी व्यवस्था करते।

१७२. तुम्हे यह शंका क्यों हुई ?

सं० १८५५ की घटना है। स्वामीजी कांकरोली में 'सहलोतां की पोल' में ठहरे हुए थे। रात के समय पोल की खिड़की खोल कर स्वामीजी देहचिन्ता से निवृत्त होने के लिए बाहर गए।

तब हेमजी स्वामी ने पूछा—महाराज ! क्या खिड़की खोलने में कोई आपत्ति नहीं है।

तब स्वामीजी बोले—यह पाली का चोथजी संकलेचा दर्शन करने आया हुआ है। यह बहुत शंकाशील है। पर इस बात की शंका तो इसके भी नहीं हुई। तुम्हें यह शंका क्यों हुई ?

तब हेमजी स्वामी ने कहा—मेरे मन में शंका किसलिए हो ? मैं तो ऐसे ही पूछ रहा हूं।

तब स्वामीजी बोले—तू पूछता है इसमें कोई आपत्ति नहीं है। इस खिड़की को खोलने में कोई आपत्ति होगी तो हम क्यों खोलेंगे?

१७३. अंधे ही खाने वाले और अंधे ही परोसने वाले

जिनका आचार त्रुटिपूर्ण है और मान्यता भी त्रुटिपूर्ण है, ऐसे ही सम्यक्दृष्टि हीन गुरु और ऐसे ही श्रद्धाभ्रष्ट और सम्यक्दृष्टि हीन श्रावक। वे कहते हैं—हमें भीखणजी साधु और श्रावक नहीं मानते।

तब स्वामीजी बोले—कोयलों की 'राब' बनाई। उसे काले बर्तन में पकाया। अमावस की रात। अंधे ही खाने वाले और अन्धे परोसने वाले। वे खाते हैं और एक-दूसरे को सावधान करने के लिए खंखारते हुए कहते हैं—खबरदार कोई काली चीज खाने में न आ जाए। पर कौन क्या टाले? सब कुछ काला ही काला इकट्ठा हो रहा है।

इसी प्रकार जिनकी मान्यता और आचार का कोई ठिकाना नहीं है, वे साधु और श्रावक कैसे होंगे?

१७४. डंडे भी नहीं दिख रहे हैं

अन्य सम्प्रदाय के कुछ श्रावक बोले—भीखणजी! इस बात का तार (निष्कर्ष) निकालें।

तब स्वामीजी बोले—तार क्या निकालें, डंडे भी दिखाई नहीं दे रहे हैं। जैसे आधाकर्म (साधु-निमित्त बने हुए) आदि बड़े दोष भी दिखाई नहीं दे रहे हैं तो छोटे दोषों की खबर कैसे पड़ेगी?

१७५. उतना बचा जो ढक्कन में समा गया

जिधर हवा का वेग था उधर एक बुढ़िया ने चक्की चलाना शुरू किया। वह जैसे पीसती है वैसे ही आटा उड़ता जाता है। उसने रात भर पीसा और उतना ही बचा जो ढक्कन में समा गया।

इसी प्रकार जो साधुपन और श्रावकपन को स्वीकार कर, जान-जान कर दोष लगाते हैं और उसका प्रायश्चित्त करते नहीं, उनके शेष कुछ बचता नहीं।

१७६. दंड तो गांव ही दे रहा है

साध्वियों ने स्वामीजी के निर्देश के बिना धामली गांव में चतुर्मास किया। वहां आहार-पानी मिलने में बहुत कठिनाई रही।

किसी ने स्वामीजी से पूछा—साध्वियों ने आपके निर्देश के बिना धामली में चतुर्मास किया है उन्हें आप क्या दंड देंगे?

तब स्वामीजी बोले—प्रथम तो उन्हें वह गांव दंड दे ही रहा है। (बचा-खुचा दंड वे आएंगी तब देंगे।) चतुर्मास के बाद जब वे साध्वियां आईं तब उन्हें प्रायश्चित्त देकर शुद्ध कर दिया।

१७७. सामने बोलने वाली है

धन्नाजी की कठोर प्रकृति को देख स्वामीजी ने सोचा, इसे निभाना भारमलजी

के लिए कठिन होगा। यह सामने बोलने वाली है। ऐसा सोच उसे संघ से अलग करने का उपाय खोजा और बड़ी चतुराई के साथ परोक्ष में ही संघ से अलग कर दिया।

१७८. यह सच्चा है या झूठा ?

'भगवान महावीर में जब छहों लेश्याएं थीं और आठों ही कर्म थे, तब उस छद्मस्थ अवस्था में भगवान् ने लब्धि का प्रयोग किया। इस प्रमाद को मूर्ख व्यक्ति धर्म बतलाते हैं।

स्वामीजी ने जब इस गाथा की रचना की भारमलजी स्वामी ने कहा—'छद्मस्थ चूका तिण समे'- इस पद को आप बदल दें। इस पद को लेकर लोग झगड़ा कर सकते हैं।

तब स्वामीजी बोले—यह पद सच्चा है या झूठा ?

तब भारमलजी स्वामी बोले—है तो सच्चा।

तब स्वामीजी बोले यदि यह सच्चा है तो फिर लोगों की क्या चिन्ता ! न्याय-मार्ग पर चलने में कोई आपत्ति नहीं है।

१७९. बीच में बोलने की जरूरत ही क्या ?

संवत् १८५३ की घटना है। स्वामीजी ने सोजत में चतुर्मास किया। उसके बाद विहार करते-करते मांढा में पधारे।

हेमजी स्वामी तब गृहस्थावस्था में थे। स्वामीजी के दर्शन करने सिरियारी से मांढा गांव में आए। पोल के चबूतरे पर स्वामीजी सो रहे थे और नीचे खाट डाल कर हेमजी स्वामी सो गए। उस समय स्वामीजी और साधु परस्पर साधु-साध्वियों को विभिन्न क्षेत्रों में भेजने की बात कर रहे थे—अमुक साधु को अमुक गांव भेजना और अमुक साधु को अमुक गांव भेजना। परंतु सिरियारी में किसी साधु या साध्वी को भेजने की बात नहीं की।

तब हेमजी स्वामी बोले—स्वामीनाथ ! सिरियारी में किसी साधु-साध्वी को भेजने की बात ही नहीं की ?

तब स्वामीजी ने उन्हें कठोर शब्दों में उलाहना दिया। आपने साधुओं से कहा—गृहस्थों के सुनते हुए ऐसी बात ही नहीं करनी चाहिए। हेमजी स्वामी की ओर अभिमुख होकर कहा—तुम्हें साधुओं की बातचीत के बीच में बोलने की जरूरत ही क्या ? यह बात हेमजी स्वामी को बहुत कड़ी लगी। वे मौन साध कर सोते रहे।

० मेरे जीते जी साधु बनेगा या........?

प्रभात हुआ। हेमजी स्वामी दर्शन कर सिरियारी की ओर जाने वाले नीमली के मार्ग से चले और स्वामीजी ने मांढा से कुशलपुर की ओर विहार किया। आगे जाते समय स्वामीजी को अपशकुन हुए। तब वे वापस मुड़ नीमली की ओर चल पड़े। हेमजी स्वामी तो धीमे-धीमे चल रहे थे और स्वामीजी की रफ्तार तेज थी। वे हेमजी स्वामी के निकट पहुंच गए। पीछे से उन्होंने पुकारा—हेमड़ा ! हम भी आ रहे हैं यह सुन हेमजी स्वामी खड़े रहे और उन्होंने स्वामीजी को वंदना की।

तब स्वामीजी बोले—आज तो हम तुम पर ही आए हैं।

तब हेमजी स्वामी बोले—भले पधारे।

स्वामीजी बोले—साधुपन लूंगा-लूंगा—इस प्रकार ललचाते हुए तुझे लगभग तीन वर्ष हो गए। अब तू पक्की बात कर।

तब हेमजी स्वामी बोले—स्वामीनाथ! साधुपन स्वीकार करने का विचार पक्का है।

स्वामीजी बोले—मेरे जीते जी लेगा या मरने के बाद?

यह बात सुनी, उन्हें बहुत अप्रिय लगी। स्वामीनाथ! आप ऐसी बात करते हैं। यदि आपको शंका हो तो मुझे नौ वर्ष के बाद अब्रह्मचर्य सेवन का त्याग करा दें।

स्वामीजी बोले—तुझे त्याग है, इस प्रकार तत्काल त्याग करा दिए। त्याग करा कर बोले—तुमने ब्याह करने के लिए नौ वर्ष रखे हैं न?

हां, स्वामीनाथ!

तब स्वामीजी बोले—एक वर्ष तो ब्याह करने में लग जाएगा। शेष आठ वर्ष बचे। उसमें भी स्त्री एक वर्ष तक अपने पीहर में रहेगी। शेष बचे सात वर्ष। उसमें भी दिन में अब्रह्मचर्य सेवन का त्याग है। शेष बचे साढ़े तीन वर्ष। पांचों तिथियों में अब्रह्मचर्य सेवन का तुझे त्याग है। शेष बचे लगभग दो वर्ष चार महीने। इस प्रकार काल को समेटते-समेटते पहरों और घड़ियों के हिसाब में आए। तब अब्रह्मचर्य सेवन का काल बचा लगभग छह मास।

स्वामीजी ने एक बात और कही—ब्याह के बाद एक या दो पुत्र और पुत्री को जन्म देकर पत्नी मर जाती है तब सारी आपदा स्वयं के गले पर आ जाती है, दुःखी हो जाता है। फिर साधुपन स्वीकार करना कठिन हो जाता है। यह कहकर स्वामीजी ने हेमजी स्वामी को फिर उपदेश दिया—तू यावज्जीवन ब्रह्मचर्य को स्वीकार कर। हाथ जोड़।

यह बात चल रही थी इतने में खेतसीजी स्वामी बोले—जोड़, जोड़, हाथ जोड़, स्वामीजी कह रहे हैं। तब हेमजी स्वामी ने हाथ जोड़ लिए।

तब स्वामीजी ने पूछा—क्या तुम्हें ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार करा दूं? स्वामीजी ने इसे दोहराया।

तब हेमजी स्वामी बोले—स्वीकार करा दें।

तब स्वामीजी ने पंच पद की साक्षी से यावज्जीवन अब्रह्मचर्य सेवन का त्याग करा दिया।

हेमजी स्वामी बोले—अब आप सिरियारी में जल्दी पधारना।

तब स्वामीजी बोले—अभी हम वहां साध्वी हीरांजी को भेज रहे हैं सो साधु का प्रतिक्रमण तू सीख लेना। यह कह स्वामीजी नीमली में आ गए।

पीछे की सारी बात उन्होंने मार्ग में खड़े-खड़े की थी।

हेमजी स्वामी के पास मिठाई थी। स्वामीजी ने, उनके अनुरोध पर, उसे स्वीकार किया।

० आपने भारी काम किया

नीमली की घटना है। स्वामीजी ने भारमलजी से कहा—अब तुम्हारे लिए

निश्चिन्तता हो गई है। पहले तो हम थे, अब अन्य मतावलंबियों से चर्चा करने के लिए तुम्हारे पास हेमजी है ही। इस चर्चा के बाद हेमजी स्वामी बोले— मैंने ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार किया है इसकी चर्चा लोगों में न करें।

तब स्वामीजी बोले—मैं नहीं करूंगा।

हेमजी स्वामी सिरियारी चले गए और स्वामीजी चेलावास पधारे। वहां स्वामी जी ने वेणीरामजी स्वामी से कहा—हेमजी ने ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार कर लिया, पर उसने कहा है अभी इस बात को लोगों में प्रसिद्ध न किया जाए। हेमजी के ब्रह्मचर्य की बात सुनकर वेणीरामजी स्वामी बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने स्वामीजी की बहुत प्रशंसा की—आपने भारी काम किया। उन्होंने कहा —मैंने बहुत प्रयत्न किया था पर कोई सफलता नहीं मिली। आपने अच्छा काम किया और उन्होंने जो ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार किया है उसे प्रगट करना है, छुपाकर नहीं रखना है। आप भले ही मत कहें।

वेणीरामजी स्वामी ने वह बात प्रसिद्ध कर दी। चेलावास के भाई बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा—हम तो पहले ही जानते थे कि हेमजी दीक्षा लेंगे।

० कुआंरे लड़के बहुत हैं

स्वामीजी सिरियारी पधारे। हेमजी स्वामी की शोभायात्रा निकाली जा रही थी और उन्हें भोज दिए जा रहे थे। दीक्षा का मुहूर्त्त निश्चित हुआ—माघ शुक्ला त्रयोदशी, शनिवार। उनके बड़े बाप के बेटे ने रावले में जाकर शिकायत की। तब ठकुरानी ने अपने कर्मचारियों के साथ स्वामीजी से कहलाया —आप हमारे गांव में न रहें।

तब गांव के पंच इकट्ठे हो, हेमजी स्वामी को साथ ले रावले में गए। ठकुरानी हेमजी स्वामी को कपड़ों और गहनों से अलंकृत देख बोली—मैं तुम्हें इसी वेष में कपड़ों और गहनों सहित ब्याह दूंगी। मेरे पुत्र दौलतसिंह की सौगंध खाकर यह कह रही हूं।

तब हेमजी स्वामी ने ठकुरानी को उत्तर दिया—यदि आप किसी का ब्याह करना चाहती हैं तो गांव में कुआंरे लड़के बहुत हैं। मुझे तो शादी करने का त्याग है यह कह कर वे स्वामीजी के पास आ गए। स्वामीजी के गांव में रहने की स्वीकृति लेकर पंच भी वापस आ गए।

० अब तेरह साधु हो गए

हेमजी स्वामी के माघ शुक्ला पूर्णिमा के बाद छह काय के जीवों की हिंसा करने का त्याग किया हुआ था। उनके ज्ञातिजनों ने कहा - फाल्गुन कृष्णा द्वितीया के दिन तुम्हारी बहिन की शादी का मुहूर्त्त है। उस दिन बहिन को ब्याह कर फिर तुम दीक्षा लेना। हेमजी स्वामी ने उनका कहा मान लिया।

हेमजी स्वामी ने स्वामीजी से आकर पूछा—क्या मैं ऐसा करूं ?

तब स्वामीजी ने उलाहना की भाषा में कहा—हे भोले आदमी ! तू अनर्थ कर रहा है। तुझे एक दिन का भी अतिक्रमण नहीं करना है।

हेमजी स्वामी अपने घर आए। फाल्गुन कृष्णा द्वितीया के दिन बहिन की शादी के बाद दीक्षा लेना है, ऐसा पत्र जो उनसे लिखवाया गया था, उसे फाड़ डाला।

उन्होंने घर वालों से कहा—आप लोग मेरे साथ ऐसा धोखा करते हैं मेरे त्याग का भंग करवा रहे हैं।

तब लोगों ने कहा—लगता है इन्हें भीखणजी का बोधपाठ मिल गया है। इक्कीस दिन तक शोभा यात्रा और भोज का कार्य संपन्न कर संवत् १८५३, माघ शुक्ला त्रयोदशी के दिन गांव के बाहर, वट वृक्ष के नीचे, हजारों मनुष्यों की उपस्थिति में बड़े उत्सव के साथ स्वामीजी के हाथों उनकी दीक्षा संपन्न हुई।

इससे पूर्व स्वामीजी के संघ में बारह साधु थे, अब तेरह हो गए—हेमजी स्वामी तेरहवें साधु बने। उसके बाद संघ बढ़ता गया—संघ में वृद्धि होती गई।

'बंकचूलिका' नामक प्रकीर्णक में कहा गया है कि सम्वत् १८५३ के बाद धर्म का बहुत-उद्योत होगा। वह बात हेमजी स्वामी की दीक्षा के साथ चरितार्थ हो गई। उन्हें दीक्षित कर स्वामीजी ने वहां से विहार कर दिया। उनकी दीक्षा के पश्चात् बहुत उपकार हुआ।

१८०. एक मात्र भीखणजी स्वामी ही हैं

टीकम डोसी कच्छ देश से पाली में आया। उसके अनेक विषयों में सन्देह उत्पन्न हो गया था उसे मिटाने के लिए।

तब अन्य सम्प्रदाय के श्रावकों ने कहा—टोडरमलजी तुम्हारे सन्देहों का निवारण कर देंगे। तुम स्थानक में चलो। यह कहकर उसे स्थानक में ले गए। उसने टोडरमलजी से चर्चा की। उसे अपने प्रश्नों के सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिले।

तब टीकम डोसी बोला—मेरे प्रश्नों का उत्तर देने वाले एक मात्र भीखणजी स्वामी ही हैं, कोई दूसरा मुझे दिखाई नहीं देता, यह कहकर वह अपने स्थान पर आ गया।

कुछ दिनों बाद स्वामीजी मेवाड़ से मारवाड़ पधारे। पहले सिरियारी आए। वहां से प्रस्थान कर सम्वत् १८५९ का चातुर्मास प्रवास पाली में किया। टीकम डोसी ने स्वामीजी से अनेक प्रश्न पूछे। स्वामीजी ने उनके उत्तर दिए। टीकम डोसी बोला—बंकचूलिका में कहा गया है, सम्वत् १८५३ के बाद धर्म का उद्योत होगा। इस वचन के अनुसार सम्वत् १८५३ से पूर्व साधु नहीं, ऐसी संभावना होती है।

तब स्वामीजी ने कहा—संवत् १८५३ से पूर्व साधु नहीं होंगे, ऐसा वहां नहीं कहा गया। यह कहा गया है कि धर्म का बहुत उपगार होगा। इस दृष्टि से धर्म के उद्योत की बात कही गई है। सं० १८५३ से पहले उद्योत अल्प हुआ। उसके बाद उद्योत अधिक होगा। इस युक्ति से उसे समझा दिया।

१८१. खामी बताए तो तेले का प्रायश्चित्त

भारमलजी स्वामी बाल-मुनि थे, तब स्वामीजी ने कहा—"कोई गृहस्थ खामी बतलाए, ऐसा काम तुझे नहीं करना चाहिए।" गृहस्थ खामी बतलाए वैसा काम यदि तू करेगा, तो तुझे एक तेले का प्रायश्चित्त करना होगा।

तब भारमलजी स्वामी बोले—' यदि कोई झूठ-मूठ खामी बतला दे, तो ?"

तब स्वामीजी ने कहा—"कोई झूठ-मूठ खामी बतलाए, तो समझ लेना पहले

किए हुए पाप उदय में आए हैं।"

भारमलजी स्वामी बड़े विनीत थे। उन्होंने स्वामीजी का वचन शिरोधार्य कर लिया। ऐसे विनीत और उत्तम पुरुष होते हैं, वे किसी को खामी बताने का अवसर ही कैसे देंगे?

१८२. नींद में गिर जाऊं तो

स्वामीजी ने बाल-मुनि भारमलजी को यह आज्ञा दी—"तुम खड़े-खड़े (कण्ठस्थ) समग्र उत्तराध्ययन सूत्र का पुनरावर्त्तन किया करो।"

तब भारमलजी स्वामी बोले—स्वामीनाथ! कदाचित् नींद में नीचे गिर जाऊं, तो?

तब स्वामीजी ने वापस कहा—"कोने का प्रमार्जन कर, उसके सहारे खड़े रहो।"

इस प्रकार भारमलजी स्वामी ने अनेक बार समग्र उत्तराध्ययन सूत्र का स्वाध्याय किया। ऐसे थे वे वैरागी पुरुष!

१८३. आदत बदलने का उपाय

साधुओं और साध्वियों की कठोर प्रकृति को देखते तो उनकी स्खलना और खामी को मिटाने के लिए स्वामीजी इस प्रकार दृष्टान्त देते थे—"कषाय करना मानो अग्नि को प्रज्वलित करना है; कषायी मनुष्य सांप की भांति फुफकारता है।" यह कहकर प्रकृति को सुधारने का प्रयत्न करते।

१८४. अन्त में 'मोरियो मारू' गाते हैं

अन्य सम्प्रदाय के साधु व्याख्यान देते हैं, सूत्र-सिद्धान्त का वाचन करते हैं और अन्त में जीवों की हिंसा करने में पुण्य और मिश्र धर्म की प्ररूपणा करते हैं और सावद्य अनुकम्पा में धर्म बतलाते हैं, इस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"बहिने रात्री जागरण में लौकिक दृष्टि से अच्छे-अच्छे गीत गाती हैं और अन्त में "मोरियो मारू"[1] का गीत गाती हैं। इसी प्रकार अन्य सम्प्रदाय के साधु व्याख्यान के प्रारम्भ में तो अनेक बातें कहते हैं, किन्तु अन्त में सावद्य दान और दया में पुण्य और मिश्र की प्ररूपणा करते हैं।

१८५. ऐसे हैं ये दृढधर्मी

आसकरण दांती ने विजयचंदजी पटवा से कहा—"विजयचंदजी! तुम्हारे गुरु भीखणजी किवाड़ खोल मेड़ी में ठहरे।"

यह सुनकर विजयचंदजी बोले—"मेरे गुरु इस प्रकार नहीं ठहरते।"

तब आसकरणजी ने कहा—"भाई विजयचन्द! मेरा विश्वास तो कर।"

तब विजयचंदजी बोले—तुम्हारा पूरा विश्वास है तुम सदा झूठ बोलते हो।" ऐसा कहकर उसे पराभूत कर दिया। साधुओं के पास जाकर उन्हें पूछा तक नहीं।

यह बात स्वामीजी के कानों तक पहुंची, तब स्वामीजी बोले—"ऐसा लगता है,

---

१. लड़की की विदाई में गाए जाने वाला गीत।

मानो विजयचन्दजी पटवा क्षायक सम्यक्त्व के धनी हैं। कुछ लोग साधुओं में अनेक दोष बतलाते हैं, इन्हें सुनाते हैं, पर वे उन दोषों के बारे में साधुओं को पूछते तक नहीं। ऐसे हैं वे दृढधर्मी।

१८६. मुझे पता नहीं चला

एक दिन सांझ के समय विजयचन्दजी स्वामीजी के पास सामायिक और प्रतिक्रमण करने आए। आकाश में बादल छाए हुए थे, इसलिए कितना दिन शेष है इसका पता नहीं चल रहा था। तब उन्होंने स्वामीजी से प्रार्थना की—"महाराज! आप पानी पी, उसे चुकता कर दें।"

तब स्वामीजी ने पानी पी उसे चुकता कर दिया। बाद में धूप निकली। दिन काफी शेष था। तब स्वामीजी बोले—"साधुओं को रात्रि में पानी नहीं पीना है। गृहस्थ के रात्रि में पानी पीने का त्याग नहीं होता। इसलिए वे रात को पानी पी लेते हैं।"

यह सुनकर विजयचन्दजी स्वामीजी के चरणों में गिर पड़े और बोले—"हे महा-पुरुष! आप अवसर के जानकार हैं, पर मुझे उसका पता नहीं चला।"

ऐसे थे वे साधुओं के विनीत। उन्होंने स्वामीजी के सामने बहुत विनम्रता की।

१८७. जहां उपकार हो, वहां कष्ट क्या ?

नानजी स्वामी ने हेमजी स्वामी से कहा—हेमजी! भीखणजी स्वामी हम साधुओं को दुकान में बिठाते और गाने में स्वर मिलाने वाले भाई हमारे इधर-उधर बैठ जाते। पसीना बहुत आ जाता।

स्वामीजी कहते—जहां उपकार हो, वहां कष्टों की कोई चिन्ता नहीं।

गर्मी के दिनों में और चतुर्मास में सिरियारी की पक्की हाटों में स्वामीजी व्याख्यान देते थे। भीखणजी स्वामी और भारमलजी स्वामी आगे साथ-साथ बैठते और उनके पार्श्व में गाने में स्वर मिलाने वाले भाई बैठते। दूसरे साधु हाट के भीतर बैठते। गर्मी का बहुत कष्ट था। इस प्रकार कष्ट सहकर उपकार किया।

१८८. जितना पचा सके उतना दो

सम्वत् १८५६ की घटना है। स्वामीजी ने पांच साधुओं के साथ नाथद्वारा में चतुर्मास किया। भारमलजी स्वामी, खेतसीजी स्वामी और हेमराजजी स्वामी—तीनों एकान्तर (एक दिन उपवास और एक दिन आहार) करते थे। स्वामीजी अष्टमी और चतुर्दशी को उपवास करते थे। उदैरामजी स्वामी बेले-बेले की तपस्या करते और पारणा में आयंबिल (केवल एक अन्न और जल) करते।

खेतसीजी स्वामी उदैरामजी को आहार अधिक देते, तब स्वामीजी ने उन्हें बरजा और कहा—"उदैरामजी के दो दिन के उपवास का पारणा है। ये जितना आहार पचा सकें, उतना ही दो।" स्वामीजी के कहने पर भी खेतसीजी स्वामी उदैरामजी को अधिक आहार देने की चेष्टा करते। यह देख स्वामीजी ने कहा—"खेतसीजी! उदैरामजी की मृत्यु तुम्हारे हाथों होगी, ऐसा लगता है।"

० स्वामीजी का वचन मिल गया

स्वामीजी स्वर्गवासी हो गए। सं० १८६१ की घटना है। उदैरामजी मारवाड़ में विहार करते हुए "आयंबिल वर्धमान तप" कर रहे थे। उसकी ४१ पंक्तियां सम्पन्न हो गईं। उसके बाद एक अठाई (आठ दिन के उपवास) की। इसका पारणा खारचियां गांव (मारवाड़ जंक्शन के पास) में किया। उनके शरीर में कोई आकस्मिक वेदना हो गई। वे भारमलजी स्वामी के पास चेलावास जा रहे थे। किन्तु वे कराड़ी गांव पहुंचते-पहुंचते थक गए। तब तपस्वी भोपजी चेलावास गए और उन्होंने भारमलजी स्वामी को सारे समाचार बताये। तब खेतसीजी स्वामी, हेमजी स्वामी और तपस्वी भोपजी आदि गए और उन्हें कंधे पर बिठा कर चेलावास ले आए। घास का बिछौना कर उस पर सुला दिया।

साध्वी हीरांजी ने हेमजी स्वामी के पास आकर कहा—"आप लेखन क्या कर रहे हैं ? यह ग्रन्थ की प्रतिलिपि क्या कर रहे हैं ? तपस्वी उदैरामजी को पानी पिलाएं।" तब खेतसीजी स्वामी और हेमजी स्वामी दोनों आए। खेतसीजी स्वामी ने उदैरामजी को पीछे से हाथों का सहारा दे बिठाया। इतने में उनकी आंखें खिंच गईं। भारमलजी स्वामी ने कहा—"यदि तुम भीतर से जागृत हो और स्वीकारते हो तो तुम्हें चारों आहार का त्याग है।" वे खेतसीजी स्वामी के हाथों में ही चल बसे। तब खेतसीजी स्वामी ने कहा—"मुझे स्वामीजी ने कहा था—उदैरामजी की मौत तुम्हारे हाथों होगी। सो उनकी मौत मेरे हाथों में ही हुई। स्वामीजी का वचन मिल गया।"

१८९. यह रीत पुरानी है

सोजत के बाजार में एक छतरी थी, वहां स्वामीजी ठहरे। बरजूजी, नाथांजी आदि ७ साध्वियां किसी दूसरे गांव से वहां आईं। स्वामीजी को वंदना कर उन्होंने कहा—ठहरने के लिए स्थान चाहिए।

तब स्वामीजी स्वयं उठे। पास में ही एक उपाश्रय था, उसका दरवाजा बन्द था, साध्वियों को साथ ले वहां आए और बोले—"यहां कोई भाई है, इस उपाश्रय में रहने की स्वीकृति देने वाला ?

तब एक भाई बोला—"मेरी स्वीकृति है।" उसने दूसरे स्थान से कुञ्ची ला, ताला खोल, किंवाड़ खोल दिए। उस उपाश्रय में साध्वियों को ठहरा कर स्वामीजी अपने स्थान में आ गए।

यह घटना नाथांजी के मुख से सुनी, वैसे ही लिखी है। 'साध्वियों को किंवाड़ खोल कर नहीं ठहरना चाहिए'—ऐसी प्ररूपणा करने वाले अनजान हैं। साध्वियां किंवाड़ खुलवा कर रह सकती हैं, यह रीत ठेट स्वामीजी से चली आ रही है।

१९०. तुम्हारी स्वीकृति की जरूरत नहीं

खेरवा वासी भगजी दीक्षा के लिए तैयार हुए। तब उनके चचेरे भाइयों ने बहुत विग्रह खड़ा कर दिया। वे ऐसा कहने लगे, "इस दीक्षा में हमारी स्वीकृति नहीं है।"

तब स्वामीजी ने कहा—"तुम्हारी स्वीकृति की जरूरत भी नहीं है।"

फिर भगजी ने बड़ी बहिन की स्वीकृति लेकर दीक्षा ग्रहण की। इस पर उन चचेरे भाइयों ने बहुत विग्रह खड़ा कर दिया। स्वामीजी के सम्मुख बहुत दिनों तक वे झगड़ा करते रहे, पर स्वामीजी ने उसकी कोई परवाह नहीं की।

एक दिन स्वामीजी ने भगजी से पूछा—"तुझे वे जबरदस्ती वापस घर में ले जाए तो तू क्या करेगा ?

तब भगजी बोले—"यदि वे मुझे घर में ले जाए तो मुझे चारों आहार करने का त्याग है।

सं० १८६० का चतुर्मास स्वामीजी ने सिरियारी में किया। उस चतुर्मास में भगजी के चचेरे भाइयों ने फिर बहुत विग्रह खड़ा किया। पर स्वामीजी न्याय-मार्ग पर थे, इसलिए उन्होंने किसी की परवाह नहीं की।

१९१. मर्यादा का निर्माण

देसूरी से दीक्षित साधु नाथूजी खाने के बहुत लोलुप थे। उसे ध्यान में रख कर स्वामीजी ने साधुओं के लिए घृत, दूध, दही, चीनी और "कडाई विगय" (मिठाई तथा तली हुई चीजें), खाने की मर्यादा की। यह घटना सम्वत् १८५९ की है।

१९२. संघीय सम्बन्ध नहीं रहेगा

स्वामीजी ने वीरभाणजी से कहा—"तुम्हें पन्ना को दीक्षा देने की आज्ञा नहीं है। यदि तुमने उसे दीक्षा दी तो अपने परस्पर संघीय सम्बन्ध नहीं रहेगा। इस पर भी वीरभाणजी ने पन्ना को दीक्षा दी। तब स्वामीजी ने वीरभाणजी का संघ से सम्बन्ध-विच्छेद कर दिया। तब वीरभाणजी ने "इंद्रियां सावद्य है"—इस विपरीत मान्यता का प्रतिपादन शुरू कर दिया।

१९३. देख-देख दीक्षा देना

स्वामीजी ने ओटा सुनार और वीरां कुम्हारी को दीक्षित किया। उनकी प्रवृत्तियां मुनि-जीवन के अनुकूल नहीं रहीं। इसलिये महाजन के सिवाय दूसरों को दीक्षित करने की स्वामीजी के मन में रुचि नहीं रही।

१९४. शंका का समाधान

टीकम डोसी अनेक विषयों में संदिग्ध हो गए। वह लगभग उनतीस पन्ने लिख कर लाया। वह चर्चा करने लगा। बहुत बोलता था। तब स्वामीजी ने उसके पन्ने पढ उत्तर लिख दिये और वे उसे पढा दिए। लगभग २६ पन्नों में जो जिज्ञासाएं लिखी हुई थीं, उनका तो समाधान कर दिया। तब उसकी आंखों में आंसू की धार बहने लगी। वह गद्-गद् स्वर में बोला—'स्वामीजी ! यदि आप नहीं होते, तो मेरी क्या गति होती ? आप तीर्थंकर, केवली समान हैं।' उसने इस प्रकार बहुत गुणानुवाद किया। स्वामीजी की रचनाओं को सुन वह बहुत प्रसन्न हुआ। वह बोला—'ये रचनाएं क्या हैं ! ये तो सूत्रों की निर्युक्तियां हैं।' वह लंबे समय तक उपासना कर वापस अपने प्रदेश कच्छ चला गया।

कच्छ में जाने के बाद फिर उसके मन में सन्देह के बादल उमड़ आए। तब उसने आजीवन चतुर्विध आहार का प्रत्याख्यान कर अनशन कर दिया। उसने कहा—'अब

मेरे सन्देहों का समाधान सीमंधर स्वामी करेंगे। पन्द्रह दिन के अनशन के पश्चात् उसका देहावसान हो गया।

१९५. स्वच्छंदचारी होना श्रेय नहीं

चंद्रभाणजी संघ से अलग होने लगे, तब स्वामीजी ने कहा—'संलेखना और अनशन करना श्रेय है, परन्तु साधु-संघ को छोड़ स्वच्छंदचारी होना श्रेय नहीं।

तब वे बोले—'मैं और भारीमाल दोनों संलेखना शुरू करें।'

तब स्वामीजी बोले—'अपन दोनों करें।

तब चंद्रभाणजी बोले—'आपके साथ तो नहीं करूंगा। भारमलजी के साथ कर सकता हूं।'

स्वामीजी ने फिर अपना संकल्प दोहराया—'अपन दोनों करें।'

फिर चंद्रभाणजी और तिलोकचंदजी दोनों मान-अहंकार के वशीभूत हो संघ से अलग हो गए। उसका विस्तार स्वामीजी कृत 'रास' से जान लेना चाहिए। वे जाते समय बोले—'लोगों में साख तो हमारी ही घटेगी पर आपके श्रावकों को तो शीतदाह से जले हुये आक के समान करूं, तो समझना मेरा नाम चंद्रभाण है।

तब चतरोजी श्रावक बोला—"तुम थोड़ी दूर जाओ, मैं सन्देश-वाहक भेज कर गांव-गांव में सन्देश पहुंचा दूंगा। कोई भी तुम्हें अन्तःकरण से नहीं चाहेगा—कोई तुम्हारा साथ नहीं देगा। फिर शीतदाह से जले हुये आक जैसे तुम ही बनोगे।"

बाद में वे वहां से चल पड़े। कुछ दूर जाने पर उन्हें आचार्य रुघनाथजी मिले। उन्होंने कहा—'तुम हमारे साथ आ जाओ। हम तुम्हारी रीति को मान्यता देंगे।' उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया।

० भीखणजी तो विद्यमान हैं ?

फिर किसी ने रोयट के श्रावकों से कहा—"चंद्रभाण और तिलोकचंद दोनों पढे-लिखे साधु भीखणजी के संघ से अलग हो गए हैं।"

तब श्रावक बोले—'भीखणजी तो विद्यमान हैं ?'

"वे तो हैं।"

तब वे श्रावक बोले—"भीखणजी हैं, तो पढे-लिखे साधु और बहुत हो जाएंगे। वे निकल गए, उससे किञ्चित् भी अन्तर आने वाला नहीं है।"

० आपने भारी निर्णय किया।

स्वामीजी ने अनुभव किया—ये लोगों में निंदा करेंगे, आस्था उतारने का प्रयत्न करेंगे। यह संघ के हित में नहीं होगा। इस दृष्टि से स्वामीजी ने उनकी पीछे-पीछे विहार किया। फलतः स्वामीजी को एक वर्ष में सातसौ कोस (लगभग २२४० किलो मीटर) चलना पड़ा। ठेट चूरू तक पधारे। श्रद्धालु क्षेत्रों में कहीं भी उनके पैर जमे नहीं। उन दोनों ने अपने विहार के दौरान अनेक प्रवंचनाएं कीं—जिस गांव में जाना होता उस गांव का मार्ग नहीं पूछते और दूसरे गांव का मार्ग पूछते और ऐसा इसलिए करते कि हम जिन गांवों में जाएं, उन गांवों में भीखणजी स्वामी न आए। पीछे से स्वामीजी पधारते और लोगों को पूछते—'वे कौन से गांव गए हैं ?'

तब लोग कहते—'वे अमुक गांव का मार्ग पूछते थे।' फिर स्वामीजी अपनी बुद्धि से विचार कर देखते, अमुक गांव का मार्ग पूछा, पर वे गए अमुक गांव में हैं। तब स्वामीजी कहते—'हम अमुक गांव में चलें।'

तब साधु कहते—'उन्होंने तो अमुक गांव का मार्ग पूछा था, ऐसा लोग बतलाते थे। और आप अमुक गांव में क्यों पधार रहे हैं ?'

तब स्वामीजी ने कहा—'मैं उनकी चालबाजी को जानता हूं। जिस गांव का मार्ग पूछा, वहां नहीं गए हैं, किंतु जहां हम जाना चाहते हैं, वहीं गए हैं, ऐसा लगता है।' आगे जाकर देखते, तो वे उसी गांव में आगे बैठे मिलते और कभी-कभी गोचरी करते हुए मिलते। साधु उन्हें देखकर आश्चर्य करते। वे कहते—'आपने भारी निर्णय किया।"

वे स्थान-स्थान पर लोगों को शंकित बनाते और स्वामीजी पीछे से उनकी शंका को मिटा देते। फिर से श्रावक-श्राविकाओं को निर्मल बना देते। उनकी पहिचान करा देते। इस प्रकार उस महान् पुरुष ने बड़ा उद्यम किया और जिन-मार्ग की बड़ी प्रभावना की।

० वन्दना तो करेंगे ही

स्वामीजी चूरू की ओर पधारे, तब चंद्रभाणजी और तिलोकचंदजी ने पहले ही शिवरामदासजी ओर संतोषचंदजी को अपने पक्ष में कर अपने साथ मिला लिया। बाद में स्वामीजी पधारे, तब शिवरामदासजी और सन्तोषचन्दजी स्वामीजी को आते देख 'मत्थएण वंदामि' कहकर खड़े हो गए।

तब चंद्रभाणजी ने कहा—'अपना और इनका संघीय-सम्बन्ध एक नहीं है, फिर तुमने इन्हें वंदना क्यों की ?'

तब शिवरामदासजी और संतोषचंदजी बोले—'ये अपने गुरु हैं। इन्हें वंदना तो करेंगे ही।' बाद में स्वामीजी ने उन दोनों से बात कर उन्हें समझा लिया। उन्हें चंद्रभाणजी के चरित्र की पहिचान करा दी।

स्वामीजी वापस मारवार पधार गए। पीछे से उन्होंने चंद्रभाणजी और तिलोकचंदजी से अपना सम्बंध-विच्छेद कर दिया। उनके चरित्र को पहिचान भी लिया। वे बोले—'इन्हें स्वामीजी जैसे छलना करने वाले बतलाते थे, वे वैसे ही निकले।' बाद में शिवरामदासजी और संतोषचंदजी दोनों संघ के अनुकूल रहे। चंद्रभाणजी और तिलोकचंदजी विमुख रहे। फिर भी स्वामीजी ने उनकी परवाह नहीं की। ऐसे थे वे साहसिक पुरुष। वे थे एकांततः न्याय के पक्षधर।

१९६. सामजी और रामजी

बूंदी निवासी सामजी और रामजी दोनों भाई सरावगी थे और जाति से बैद। वे दोनों एक साथ जन्मे हुए थे। उनकी आकृति और सूरत एक जैसी थी। वे केलवा में स्वामीजी के पास दीक्षा लेने आए। शामजी ने वहां दीक्षा ले ली। यह संवत् १८३८ की बात है।

कुछ दिनों बाद नाथद्वारा में बहुत वैराग्य और बड़े उत्सव के साथ खेतसीजी

स्वामी और रंगुजी ने एक साथ दीक्षा ली। जिन-मार्ग का बहुत उद्योत हुआ।

फिर कुछ दिनों बाद रामजी स्वामी ने दीक्षा ली। शामजी खेतसीजी स्वामी से दीक्षा-पर्याय में बड़े थे और रामजी छोटे थे। कुछ समय बाद सामजी और रामजी का सिंघाड़ा बनाया। वे अलग विहार कर स्वामीजी के दर्शन करने आए। तब खेतसीजी स्वामी ने सामजी के बदले रामजी को वंदना की, क्योंकि वे दोनों ही एक जैसे लग रहे थे। तब रामजी ने कहा—'मैं रामजी हूं, सामजी तो वे हैं।' यह घटना बहुत बार घट जाती।

तब स्वामीजी ने अपनी निर्मल मति से कहा—'रामजी ! तुम पहले खेतसीजी को वंदना किया करो। तब खेतसीजी अपने आप जान लेगा कि जो ये खड़े हैं, वे सामजी हैं। ऐसी थी निर्मल प्रज्ञा स्वामीजी की।

१९७. जो ठंठी रोटी छोड़े, वह लड्डू भी छोड़े

कोटा वाले आचार्य दौलतरामजी के सम्प्रदाय के चार साधु वर्धमानजी, बड़ो रूपजी, छोटो रूपजी सूरतोजी स्वामीजी के संघ में दीक्षित हो गए। छोटा रूपजी बोला—'मुझे ठन्डी रोटी नहीं रुचती।

तब स्वामीजी ने आहार का संविभाग किया और प्रत्येक ठंडी रोटी पर एक-एक लड्डू रख दिया और कहा—''जो ठंडी रोटी छोड़े, वह लड्डू भी छोड़ दे। जो गर्म रोटी लेगा, वह लड्डू नहीं ले पाएगा।' तब सबने दीक्षा-पर्याय के क्रम से अपना-अपना विभाग ले लिया। किसी ने ठंडी या गरम की चर्चा ही नहीं की।

१९८. तड़क कर क्यों बोलते हो ?

जाढण गांव में छह साधुओं के साथ स्वामीजी पधारे। उस गांव में एक राजपूत के घर मृत्युभोज था। वहां किसी सम्प्रदाय के दो साधु आए और मृत्यु-भोज वाले घर से लपसी ले आए। स्वामीजी के साधुओं से भी लोगों ने कहा—'दूसरे साधु मृत्यु-भोज वाले घर से लपसी लाए हैं, तुम भी वहां से ले आओ।''

तब साधुओं ने कहा—''हम मृत्यु-भोज वाले घर से भिक्षा नहीं ला सकते।'' साधुओं ने स्थान पर आकर स्वामीजी से सारी बात कही। तब स्वामीजी ने सोचा—'हम पाली जा रहे हैं, कोई व्यक्ति व्यर्थ ही हमारा नाम इस घटना के साथ जोड़ेगा।' यह सोचकर स्वामीजी ने उन साधुओं के पास जाकर पूछा—'तुम मृत्युभोज वाले घर से लपसी लाए या नहीं ?'

तब वे बोले—'तुम क्यों पूछते हो ? क्या तुम्हारे और हमारे भोजन-पानी का सम्बन्ध है ?'

स्वामीजी बोले—'तुम भी पाली जा रहे हो और हम भी पाली जा रहे हैं। सो लपसी लाए तो तुम और कोई नाम लेगा हमारा, इसलिए हम पूछते हैं। हमारे पात्र तुम देख लो और तुम्हारे पात्र हमें दिखला दो।

तब वे तड़क कर बोले....'लाए, लाए और फिर लाए।'

तब स्वामीजी बोले....'तड़क कर क्यों बोलते हो ? यही कहो कि हमारे लाने की रीति है, इसलिए हम लाए हैं।' इस प्रकार अपनी बुद्धि से यथार्थ कहलवा कर अपने

स्थान पर आ गए।

१९९. गुड़ कौन लाया ?

स्वामीजी जब स्थानकवासी संप्रदाय में थे, तब एक दरजी के घर गोचरी गए। तब वह दरजी बोला—'तुम्हारा चेला कल गुड़ ले गया था, इसलिए आज तुम भिक्षा कैसे लोगे ?'

तब स्वामीजी ने स्थान पर आकर सब साधुओं से पूछा—'कल अमुक दरजी के घर से गुड़ कौन लाया ?'

पर सब साधुओं ने इनकार कर दिया। बाद में स्वामीजी सब साधुओं को साथ लेकर दरजी के घर आए। उस दरजी से पूछा—'कल जो गुड़ ले गया था, वह इनमें से कौन सा है, तुम पहिचान कर बताओ।'

तब दरजी ने उस साधु की ओर इंगित किया, जो अवस्था में छोटा था, नाम था रायचंद और अमुक आचार्य का शिष्य था।

'तब स्वामीजी ने जान लिया कि यही है जो गुड़ ले गया था, किंतु इसने स्वीकार नहीं किया।'

इस प्रकार स्वामीजी ने ठगी और झूठ को अनावृत कर दिया।

२००. पत्र लिखना मत

पीपाड़ की घटना है। अन्य सम्प्रदाय का श्रावक मालजी स्वामीजी से चर्चा कर रहा था।

स्वामीजी ने पूछा—'मालजी ! छह काय के जीवों को खाने से क्या होता है ?'

तब उसने कहा—'पाप होता है।'

फिर स्वामीजी ने पूछा—'छह काय के जीवों को खिलाने से क्या होता है ?'

उसने कहा—'पाप होता है।'

तब स्वामीजी बोले—भारमलजी ! स्याही तैयार कर लिख लो—मालजी पानी पिलाने में पाप कहता है।'

तब मालजी तेज स्वर में बोलने लगा—'मैंने पानी पिलाने में पाप कब कहा ?'

तब स्वामीजी बोले—'पानी छह काय के भीतर है या बाहर ?''

तब वह बोला—'है, है और है। पर मत लिखना, मत लिखना।'

इस प्रकार वह हतप्रभ होकर वहां से चला गया।

२०१. अपने प्रश्न को देखो

स्वामीजी भीलवाड़ा में विराज रहे थे। वहां अन्य संप्रदाय के एक श्रावक ने स्वामीजी से पूछा—'भीखणजी ! किसी श्रावक ने सर्व पापों का त्याग कर दिया, उसे आहार-पानी देने में क्या होगा ?'

तब स्वामीजी बोले—'धर्म होगा ?'

तब उसने कहा—'श्रावक को देने में आप तो पाप मानते हैं, फिर आपने धर्म कैसे कहा ?'

तब स्वामीजी बोले—'तुमने जो प्रश्न पूछा, उसे देखो, श्रावक ने सर्व पाप का त्याग कर दिया, तब वह साधु हो गया और साधु को देने में धर्म ही होता है।'

२०२. तीनों घर बधाइयां

स्वामीजी स्थानकवासी संप्रदाय से अलग होकर नई दीक्षा लेने को तैयार हुए। तब अपने पास के साधुओं की प्रकृति की ओर ध्यान दिया। भारमलजी स्वामी के पिता किसनोजी थे, उनकी प्रकृति बहुत उग्र थी। वे आहार ज्यादा मंगवाते और वह अधिक मंगाई हुई रोटी साधारण होती, तो उसे नहीं लेते। अच्छी रोटी नहीं दी जाती, तो कलह करने लग जाते। तब बिलाड़ा में स्वामीजी ने भारमलजी स्वामी से कहा—'तुम्हारा पिता तो साधुपन के योग्य नहीं है। उसे हम अलग कर देंगे। बोलो! तुम्हारा क्या मन है?

तब भारमलजी स्वामी ने कहा—'मुझे तो आपसे काम है।' आपकी जैसी इच्छा हो वैसे करें।

स्वामीजी ने किसनोजी से कहा—अब तुम्हारा और हमारा पारस्परिक संबंध नहीं है।

यह सुन किसनोजी बोले—मैं अपने पुत्र को साथ ले जाऊंगा।

तब स्वामीजी बोले—वह हमारे साथ न आए तो उसकी इच्छा।

तब किसनोजी जबरदस्ती से भारमलजी स्वामी को साथ ले दूसरी दूकान में चले गए। उन्होंने आहार पानी ला भारमलजी से आहार करने को कहा।

तब भारमलजी स्वामी ने कहा—मैं तो आहार पानी नहीं करूंगा।

वे प्रतिदिन मनुहार करते हैं पर भारमलजी स्वामी आहार नहीं करते। तीसरा दिन आया। तब मनुहार की।

तब भारमलजी स्वामी ने कहा—आपके हाथ से आहार करने का यावज्जीवन त्याग है।

तब किसनोजी ने भारमलजी स्वामी को स्वामीजी को सौंप दिया। बोले—यह आपसे ही राजी है। इसे आप अपने पास रखें। आपने नई दीक्षा नहीं ली तब तक मेरी भी कोई व्यवस्था कर दें।

तब स्वामीजी ने उन्हें आचार्य जयमलजी को सौंप दिया। तब जयमलजी बोले—'भीखणजी की बुद्धि को देखो। किसनोजी को हमें सौंपा, इससे तीनों घर बधाइयां बटीं। हमने जाना, हमें एक चेला मिला। किसनोजी ने देखा, उन्हें स्थान मिल गया और भीखणजी ने देखा, उनकी आपदा टल गई।'

कुछ समय बाद किसनोजी आदि दो साधु मृत्यु-भोज से लपसी ला उसे खा, विहार कर गए। मार्ग में प्यास बहुत लगी। लपसी खाई हुई थी, गरमी के दिन थे। उन्होंने प्यास को सहा, पर सजीव जल नहीं पिया। आखिर किसनोजी काल कर गए।

मृत्युभोज से लपसी लाए, यह तो उनके संप्रदाय की रीति है। पर वे नियम में दृढ़ रहे, काल कर गए, पर सजीव जल नहीं पिया।

२०३. इसलिए बरजते हैं

स्वामीजी के पास अथवा उनके साधुओं के पास लोग व्याख्यान सुनने आते, उन्हें अमुक संप्रदाय के साधु बरजते। तब स्वामीजी ने एक दृष्टांत दिया—रयणादेवी ने जिनऋषि और जिनपाल को तीन दिशाओं के बगीचों में जाने की मनाही नहीं की, केवल दक्षिण दिशा के बाग में जाने की मनाही की। वह झूठ बोली, उसने भय दिखलाया वहां जाने पर सांप काट खाएगा। उसने सोचा, 'यदि ये दक्षिण के बगीचे में जायेंगे तो मेरी क्रूरता को जान लेंगे, मेरी ठगाई प्रगट हो जाएगी।' यह सोच उसने दक्षिण के बगीचे में जाने की मनाही की। इस प्रकार अमुक संप्रदाय के साधु बाईस टोलों, चौरासी गच्छों तथा ३६३ पाषण्डियों के पास जाने की प्रायः मनाही नहीं करते, किंतु शुद्ध साधुओं के पास जाने की मनाही करते हैं। कारण कि भीखणजी के पास जाने पर वे हमें अशुद्ध मान लेंगे और भीखणजी हमारे श्रावकों को अपने पक्ष में कर लेंगे, इसलिए ये अपने श्रावकों को बरजते हैं।

२०४. स्वामीजी बोले

अमुक सम्प्रदाय के साधु लोगों में साधुओं के प्रति विरोध-भाव पैदा करते थे।

तब स्वामीजी बोले—"अतीत में भृगु पुरोहित ने अपने पुत्रों को बहकाया और कहा साधुओं का विश्वास मत करना।" उसके कहने से उसके पुत्रों ने भी साधुओं को बुरा मान लिया। बाद में वे साधुओं से मिले, तब वे अपने पिता को मिथ्याभाषी जान कर मुनि बन गए।

इसी प्रकार अमुक-अमुक संप्रदाय के साधु साधुओं को बुरा बतलाते हैं, परन्तु जो उत्तम मनुष्य होते हैं, वे साधुओं के संपर्क में आ, उनकी वास्तविकता को पहिचान ठीक स्थान पर आ जाते हैं।

२०५. 'ठाने' नहीं, खाने के लिए

अमुक संप्रदाय के अच्छे-अच्छे स्थान देखकर 'ठाने' बैठ जाते थे—स्थिरवास कर लेते थे। तब स्वामीजी ने कहा—"ये 'ठाने' नहीं बैठते हैं, खाने बैठते हैं।"

असली स्थिरवास तो अमीचंदजी का है। सं० १८४७ में मारवाड़ में महामारी फैली। तब दूसरे स्थिरवास वाले चतुर्मास में पदयात्रा कर विहार कर गए और अमीचंद जी चतुर्मास में और पर्युषणों में भाद्र कृष्णा चतुर्दशी के दिन रात के समय बाजरी से भरी हुई गाड़ी के ऊपर बैठ कर गए। मार्ग में प्यास लगी तब अनछना सजीव जल जाट के हाथ से पिया। इस दृष्टि से असली स्थिरवास तो अमीचंदजी का था सो वे पैरों से नहीं चले।

२०६. सब एक हो जाएं

किसी ने स्वामीजी से कहा—"आप और अन्य संप्रदाय के साधु एक हो जाएं।"

तब स्वामीजी ने पूछा—"तुम महाजन हो, सो महाजन और गैर महाजन एक हो सकते हो या नहीं?"

तब वह बोला—"नहीं हो सकते।"

तब स्वामीजी बोले—"इसी प्रकार साधु और केवल वेषधारी साधु एक नहीं हो सकते। इतर जाति महाजन कुल में जन्म लेने से ही महाजन हो सकती है। इसी प्रकार 'केवल वेषधारी' साधुओं का सम्यक्त्व और चारित्र में जन्म हो जाने अर्थात् सम्यक्त्व और चारित्र आ जाने पर ही हम एक हो सकते हैं।

२०७. यह चर्चा बहुत सूक्ष्म है

वेषधारियों के श्रावक बोले—"प्रतिमाधारी श्रावक को शुद्ध दान देने से क्या होता है?"

तब स्वामीजी बोले—"कोई किसी को सजीव जल पिलाता है और कंद-मूल खिलाता है, उसमें तुम क्या मानते हो?"

तब वे बोले—"हमें तो प्रतिमाधारी श्रावक के बारे में ही बताओ, दूसरी बात में तो हम नहीं समझते।"

तब स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—कोई बोला, मुझे चींटी और कुंथुआ दिखाओ। तब उसने पूछा—तुम्हें हाथी दिखाई देता है या नहीं? तब वह बोला—'हाथी तो मुझे दिखाई नहीं देता। तब उसने कहा—'हाथी भी तुम्हें दिखाई नहीं देता, तो चींटी और कुंथुआ कैसे दिखाई देगा?"

"इसी प्रकार किसी को जीव खिलाने में पाप होता है, उसे भी तुम नहीं जानते, तो फिर 'प्रतिमाधारी को अव्रत सेवन कराने में पाप होता है', यह मान्यता तुम्हारे हृदय में कैसे पैठ पाएगी? यह चर्चा तो बहुत सूक्ष्म है।"

२०८. पुस्तक और ज्ञान

कुछ लोग कहते हैं—"पुस्तक को जमीन पर नहीं रखना चाहिए और उसकी ओर पीठ कर नहीं बैठना चाहिए। क्योंकि पुस्तक-पन्ने तो ज्ञान है। उसकी आसातना (अविनय) नहीं करनी चाहिए।

तब स्वामीजी बोले—"पुस्तक पन्नों को तुम ज्ञान कहते हो, तो पुस्तक-पन्ने फट गए, तो क्या ज्ञान फट गया? पुस्तक-पन्ने जीर्ण हो गए, तो क्या ज्ञान भी जीर्ण हो गया? पन्ने उड़ गए, तो क्या ज्ञान भी उड़ गया? पन्ने जल गए, तो क्या ज्ञान भी जल गया? पन्ने चुरा लिए गए, तो क्या ज्ञान भी चुरा लिया गया? पन्ने तो अजीव हैं और ज्ञान जीव है। अक्षरों का आकार तो पहिचानने के लिए है; जो पन्ने में लिखा हुआ है, उसका बोध ज्ञान होता है, वह आत्मा है और वह अपने पास ही है। पन्ने भिन्न हैं—आत्मा से अन्य हैं।

२०९. पुण्य या मिश्र

अमुक संप्रदाय के साधु गृहस्थों से कहते थे—"भिखारी आदि को अन्न आदि देने में पुण्य होता है अथवा मिश्र होता है।"

तब गृहस्थ बोले—"यदि तुम्हारे आहार अधिक आ जाए, तो तुम भिखारी आदि को देते हो या नहीं?"

तब उन्होंने कहा—"हम तो नहीं देते। ऐसा करना हमारी मर्यादा में नहीं है।

यदि हम दें, तो हमारे साधुपन में दोष लगता है। और तुम भिखारी आदि को देते हो, उसमें तुम्हें पुण्य होता है अथवा मिश्र होता है।"

इस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"जिस बवंडर से हाथी उड़ जाता है, उससे रूई की पूनी क्यों नहीं उड़ेगी ? अवश्य ही उड़ेगी।"

"इसी प्रकार साधु से अन्य भिखारी आदि को दान देने से साधु का व्रत टूट जाता है, तो फिर गृहस्थ को पाप क्यों नहीं लगेगा ? लगेगा ही।"

२१०. हिंसा के बिना धर्म नहीं होता तो ?

हिंसा धर्मी कहते हैं—हिंसा के बिना धर्म नहीं होता। वे दृष्टांत देकर कहते हैं—दो श्रावक थे। उनमें से एक ने अग्नि के आरंभ का त्याग किया और दूसरे ने नहीं किया। दोनों ने एक-एक पैसे के चने लिए। जिसे अग्नि के आरंभ का त्याग नहीं था, उसने चनों को भुन कर भूंगड़े बना लिए और जिसने अग्नि के आरंभ का त्याग किया था, वह कोरे चने चबा रहा था। इतने में एक मास के उपवास के पारणे के लिए मुनिराज उसके घर पधारे। जिसे त्याग नहीं था, उसने भूंगड़े देकर तीर्थंकर गोत्र बंध कर लिया और जिसे त्याग था वह टुगर-टुगर देखता रहा। वह क्या दान देगा ?

'इस प्रकार हिंसा से धर्म होता है, हिंसा के बिना धर्म नहीं होता' जो इस प्रकार कहते थे, उस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"दो श्रावक थे। उनमें से एक ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार किया और दूसरे ने अब्रह्मचर्य का त्याग नहीं किया। शादी की। बाद में उसके पांच पुत्र पैदा हुए। उन्होंने धर्म का तत्त्व समझा। उनमें दो वैरागी बने। पिता ने उन दोनों को हर्षोल्लास के साथ दीक्षा की स्वीकृति दी। बहुत हर्षोल्लास आया उससे उसने तीर्थंकर गोत्र का बंध कर लिया।

तुम हिंसा में धर्म कहते हो तो तुम्हारे मतानुसार अब्रह्मचर्य में भी धर्म होगा। तुम्हारे मतानुसार हिंसा के बिना धर्म नहीं होता, तो अब्रह्मचर्य के बिना भी धर्म नहीं होता।

इस प्रकार उत्तर सुन कर वह हतप्रभ और वापस उत्तर देने में असमर्थ हो गया।

२११. क्या कोई है रे बैरी ?

'किसी को बैरी नहीं बनाना चाहिए।' इस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"क्या कोई है रे बैरी ? लोक-भाषा में कहा जाता है, 'किसी को ऋण देकर देखो।' (ऋण चुकाना नहीं चाहता, इसलिए अपने आप बैरी बन जाता है।)

क्या कोई है रे बैरी ? धर्म की भाषा में कहा जाता, 'किसी से कड़े प्रश्न पूछ कर देखो।' उसे कड़े प्रश्न का उत्तर नहीं आता है, तो वह अपने आप बैरी बन जाता है।

"क्या कोई है रे बैरी ?" तब कहा जाता है, किसी की खामी बताकर देखो। खामी बताने पर उसे अप्रिय लगता है, तब वह अपने आप बैरी बन जाता है।"

२१२. लेटे-लेटे करेंगे

किसी ने भीखणजी स्वामी से कहा—"आप वृद्ध हैं। आपकी आयु बहुत अधिक है। इसलिए आप प्रतिक्रमण बैठे-बैठे करें। आप खड़े होने का इतना कष्ट क्यों करते हैं ?"

तब स्वामीजी बोले—"यदि हम बैठे-बैठे प्रतिक्रमण करेंगे, पीछे होने वाले लेटे-लेटे करेंगे, यह संभव है।

२१३. महात्मा-धर्म

पुर की घटना है। स्वामीजी ने कहा—"दश प्रकार का श्रमण-धर्म है।"

तब जैचंद वीराणी बोला —"महाराज ! दश प्रकार का यति-धर्म।"

तब स्वामीजी ने कहा—"भले ही दश प्रकार का महात्मा-धर्म कहो न !"

२१४. जैसी नीति वैसा फल

कोई साधु बार-बार असावधानी करता है, पर उसकी नीति में अन्तर नहीं।' उस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"अनाज का कण पड़ा हुआ देख कर किसी साधु से गुरु ने कहा —'यह अनाज का कण पड़ा है, इस पर पैर मत रखना।'

तब वह बोला—'स्वामीनाथ ! पैर नहीं रखूंगा।'

थोड़ी देर बाद इधर-उधर घूमता हुआ आया और उस अनाज के कण पर पैर रख दिया।

तब गुरु बोले—'तुम्हें इस पर पैर रखना बरजा था न ?

तब वह साधु बोला—'स्वामीनाथ ! मेरा ध्यान नहीं रहा।'

तब गुरु बोले—'अब इस पर पैर रख दिया, तो कल सबेरे तुम्हें 'विगय' खाने का त्याग है।'

थोड़ी देर बाद फिर इधर-उधर घूमता हुआ आया और उस पर पैर रख दिया।

इस प्रकार असावधानी के कारण उसने बार-बार उस पर पैर रखा, किन्तु वह उस अनाज के कण पर पैर रखना और विगय-वर्जन करना चाहता नहीं है। उसकी सावधानी में कमी है। दोष की स्थापना नहीं हैं, इसलिए उसकी नीति शुद्ध है। यदि नीति शुद्ध हो, पर कर्मों के उदय से असावधानी हो जाए, तो उससे कोई असाधु नहीं बनता। और मोह के उदय से जान-बूझ कर दोषों का सेवन करता है, उनकी स्थापना करता है और उनका प्रायश्चित्त भी नहीं करता, उससे वह असाधु होता है।

२१५. एक अक्षर का अन्तर

किसी ने पूछा—"तुममें और अमुक संप्रदाय वालों में क्या अन्तर है ?

तब स्वामीजी बोले—"एक अक्षर का अन्तर है—एक अकार का अन्तर है। साधु और असाधु में 'अकार' का अन्तर होता है, वही हम में और इनमें अन्तर है।

२१६ .परिग्रह किसका ?

कोई स्थानक के लिए रुपए देने की घोषणा करता है। तब स्वामीजी बोले—"ये

रुपए, जो स्थानक में रहते हैं, उन्हीं के मानने चाहिए।" इस विषय को समझाने के लिए स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—

"अमुक गढ में इतना खजाना है; वह खजाना गढपति का ही होता है।"

"इसी प्रकार स्थानक के निमित्त जो रुपये हैं, वह परिग्रह स्थानक में रहने वालों का ही मानना चाहिए।"

२१७. पंक्तियां टेढी-मेढी क्यों ?

हेमजी स्वामी प्रतिलिपि करते थे। उन्होंने स्वामीजी को अपना लिखा हुआ पन्ना दिखलाया। पंक्तियों को टेढा-मेढा देख स्वामीजी बोले—"किसान हल जोतता है, वह भी हल की रेखा को सीधा बनाता है। तूने पंक्तियां टेढी-मेढी क्यों लिखी ? पंक्तियां सीधी होनी चाहिए।

तब हेमजी स्वामी बोले—"ठीक है, स्वामीनाथ !"

२१८. क्या आपने व्याकरण पढा है ?

स्वामीजी के पास एक ब्राह्मण आया और उसने पूछा—"साधुजी ! आपने व्याकरण पढा है ?"

स्वामीजी बोले—"हमने व्याकरण नहीं पढा।"

तब ब्राह्मण बोला—"व्याकरण पढे बिना शास्त्र का अर्थ नहीं समझा जा सकता।"

तब स्वामीजी बोले—"तुम तो व्याकरण पढे हो ?"

तब वह बोला—"मैं तो व्याकरण पढा हूं।"

"तुम तो शास्त्र का अर्थ समझ लेते हो ?"

तब वह बोला—"मैं तो शास्त्र का अर्थ समझ लेता हूं।"

तब स्वामीजी ने कहा—"कयरे मग्ग मक्खाया—इस पाठ का अर्थ करो।"

तब वह ब्राह्मण बोला—"कयरे" का अर्थ है—कैर, "मग्ग" का अर्थ है—मूंग और 'अक्खाया' का अर्थ है—उन्हें 'आखा'—अक्षत रूप में अर्थात् बिना तोड़े नहीं खाना चाहिए।"

तब स्वामीजी बोले—यह अर्थ तो सही नहीं है।"

तब वह बोला—"इसका अर्थ क्या है ?"

तब स्वामीजी बोले—"कयरे" का अर्थ है—कितने, 'मग्ग' का अर्थ है—मोक्ष-मार्ग, और अक्खाया का अर्थ है—तीर्थंकरों द्वारा आख्यात—कहे गए हैं। इस पाठ का अर्थ यह है।"

२१९. केवली राज्य कैसे भोगेगा ?

संवत् १८५४ की घटना है। स्वामीजी ने चार साधुओं के साथ खैरवा में चौमासा किया। वहां पर्युषण के दिनों में कुछ श्रावक गच्छवासियों (यतियों) के पास व्याख्यान सुन वापस स्वामीजी के पास आए और कहने लगे—"स्वामीनाथ ! आज हमने उपाश्रय में व्याख्यान सुना, उसमें ऐसी बात कही गई—कूर्मापुत्र ने केवली होने के बाद छह मास

तक राज्य किया था। उस अवधि में कुछ साधु उनके पास आकर खड़े हो गए, पर उन्होंने वंदना नहीं की।

तब कूर्मापुत्र बोले—'मुझे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ है, फिर तुम वंदना नहीं करते हो, इसका क्या कारण ?

तब साधु बोले—'आप केवली हैं, परंतु आप गृहस्थ के वेष में हैं, इसलिए हमने वंदना नहीं की।'

तब कूर्मापुत्र बोला—'तुमने ठीक कहा। अब मैं इस बात को समझ गया हूं।'

"यह बात हमने उपाश्रय में सुनी है। क्या यह सच है ?"

तब स्वामीजी बोले—"इस बात को जो सच मानता है, वह सम्यग्दृष्टि नहीं। जो राज्य भोगता है, वह मोहकर्म का उदय है और केवली मोह-कर्म को क्षीण करके होता है; सो केवली होने के बाद राज्य को कैसे भोगेगा ? इस बात का वाचन करने वाले में सम्यग्दृष्टि नहीं है, ऐसा प्रत्यक्ष दिखाई देता है। और तुम जैसे श्रोताओं का मन भी संशय से भर जाता है। इस प्रकार कह कर स्वामीजी ने उन्हें समझा दिया।

२२०. बुद्धि के बिना सम्यग्दृष्टि कैसे होगा ?

केलवा में नगजी नाम का एक श्रावक था, वह अचक्षु था। वह ज्यादा बुद्धिमान भी नहीं था। वीरभाणजी ने कहा—"हमने नगजी को सम्यग्दृष्टि वाला बना दिया है।"

तब स्वामीजी बोले—"सम्यग्दृष्टि आए, ऐसी तो उसकी बुद्धि ही नहीं लगती। फिर उसे सम्यग्दृष्टि वाला कैसे बनाया और उसे क्या सिखाया ?"

तब वीरभाणजी बोले—"ओलखणा दोरी भवजीवां"—यह गीतिका उसे सिखाई। और एक 'नन्दण मनिहारे का व्याख्यान' सिखाया।"

कुछ दिनों बाद स्वामीजी केलवा पधारे। स्वामीजी ने नगजी से पूछा—"तुमने 'नन्दण मनिहारे का व्याख्यान' सीखा है, सो वह 'मणिया' (मनका) लकड़ी का है या सोने का है या रुद्राक्ष की माला है ?"

तब नगजी बोला—"वह मनका शास्त्रों में आया है, इसलिए वह सोने का होगा, लकड़ी का या रुद्राक्ष की माला का कैसे होगा ?"

तब स्वामीजी ने पूछा—"रे नगजी ! 'साधवीयां नै जड़णो चाल्यो'—सो यह 'धविया' (धौंकनी) गाडिए लुहारों की छोटी 'धवियां' है या दूसरे लुहारों की बड़ी 'धवियां'—धौंकनिया हैं ?"

तब नगजी बोला—"वे छोटी क्यों होंगी ? शास्त्रों में कहा है, तो वे बड़ी ही होंगी।"

स्वामीजी ने मन में जान लिया—जिसमें बुद्धि नहीं, वह सम्यग्दृष्टि वाला कैसे होगा ? वीरभाणजी ने कहा—नगजी को सम्यग्दृष्टि वाला बना दिया, यह बात कमजोर निकली।

२२१. यह भी धर्म होगा

अमुक सम्प्रदाय के साधु कहते हैं—"किसी को रुपया देने से उन रुपयों पर होने वाली ममता मिट जाती है, वह धर्म है।"

तब स्वामीजी बोले—"किसी किसान ने बीस हलों या बीस बीघों की खेती की। उसने दस हलों या दस बीघों की खेती किसी ब्राह्मण को दे दी। तो उन साधुओं के अनुसार उस किसान की उस खेती पर से ममता मिट गई। उनके अनुसार यह भी धर्म होगा।"

२२२. आपके भी गले उतर गई

पाली की घटना है। स्वामीजी शौचार्थ जंगल में गए तब हीरजी यति उनके साथ-साथ गए। अंट-संट प्रश्न पूछे। उनकी मान्यता थी—(१) हिंसा में धर्म होता है। (२) सम्यक् दृष्टि को पाप नहीं लगता। (३) सब जगत् के सब जीवों को मार देने पर भी संसार-भ्रमण का एक क्षण भी नहीं बढता। (४) सब जीवों की दया करने पर भी संसार-भ्रमण का एक क्षण भी नहीं घटता। (५) जैसी नियति होती है, वैसा ही होता है—क्रिया करने की आवश्यकता नहीं, केवली ने देखा है, उस समय मोक्ष में चला जाएगा। इत्यादि विरुद्ध मान्यताएं उन्होंने स्वामीजी के सामने रखी। तब स्वामीजी ने उनका उत्तर नहीं दिया। रास्ते चलते साधु बोल नहीं सकते; इसलिए स्वामीजी मौन रहे।

तब हीरजी बोले—"मैंने जो कहा, वे मान्यताएं, आपके भी गले उतर गईं, ऐसा लगता है, इसीलिए आपने मेरे प्रश्नों का उत्तर नहीं दिया।"

तब स्वामीजी बोले—"कोई सूअर मैला खा रहा था। कोई साहूकार शौच से निवृत्त हो रहा था। सहज ही उसकी दृष्टि उस सूअर पर पड़ी। तब वह सूअर बोला—लगता है साहजी का मन भी मैला खाने के लिए ललचा गया है।"

"इसी प्रकार तुम भी कहते हो। किन्तु हम तुम्हारी इस अशुद्ध मान्यता को मैले के समान मानते हैं; इसीलिए उसकी मन से भी बांछा नहीं करते।"

२२३. अशुद्ध बर्तन में घी कौन डाले ?

एक दिन हीरजी ने स्वामीजी से विपरीत प्रश्न पूछे और बोले—"मुझे इनका उत्तर दें।"

तब स्वामीजी बोले—"कोई मल से भरा हुआ बर्तन ले आया और बोला—'इसमें मुझे घी तोल दो।' पर अशुद्ध बर्तन में घी कौन डालेगा ?

"इसी प्रकार जो अशुद्ध, बुरा और विपरीत हो, उसे शुद्ध उत्तर देने में भी कोई गुण नहीं होता। इसलिए अभी हम तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर नहीं देंगे।"

२२४. दूसरे पर रंग तब चढ़ता है

"बैरागी की वाणी सुनने से वैराग्य उत्पन्न होता है'—इस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"कसूंबा स्वयं गलता है, तब वह वस्त्रों को रंग सकता है। कसूंबा की गांठ बांध देने पर भी उसका वस्त्र पर रंग नहीं चढ़ता, क्योंकि वह स्वयं घुला हुआ

नहीं है ।

"इसी प्रकार शुद्ध मान्यता और आचार वाला वैरागी साधु, जो स्वयं वैराग्य में लीन है, दूसरों पर वैराग्य का रंग चढा देता है।"

२२५. मान्यता एक, स्पर्शना भिन्न-भिन्न

कुछ लोग कहते हैं—"साधु का धर्म भिन्न है और गृहस्थ का धर्म भिन्न है।"

तब स्वामीजी बोले—"चौथे गुणस्थान की और तेरहवें गुणस्थान की तत्त्व विषयक मान्यता तो एक है, किन्तु उनकी स्पर्शना भिन्न-भिन्न है—चौथे का स्पर्श सम्यग्दृष्टि करता है और तेरहवें का स्पर्श केवली करता है। सचित्त जल में असंख्य जलीय जीव होते हैं और फफूंदी में अनन्त जीव होते हैं, इसकी मान्यता एवं प्ररूपणा चौथे, पांचवे, छट्ठे और तेरहवें गुणस्थान वाले सभी करते हैं। किन्तु स्पर्शना में अन्तर है—चौथे और पांचवे गुणस्थान वाले जल के जीवों की हिंसा करते हैं, और साधु के उन जीवों की हिंसा करने का त्याग होता है। यह स्पर्शना चौथे और पांचवे गुणस्थान से भिन्न है।

"हिंसा में पाप होता है—उसकी मान्यता और प्ररूपणा चौथे, पांचवें, छठे और तेरहवें गुणस्थान वाले सभी करते हैं, इस दृष्टि से मान्यता तो एक है। किन्तु चौथे और पांचवें वाले हिंसा करते हैं और साधु के हिंसा का त्याग होता है; इस दृष्टि से उनकी स्पर्शना भिन्न-भिन्न हैं, पर मान्यता भिन्न नहीं।"

चौथे और तेरहवें गुणस्थान वालों की मान्यता एक है। यदि चौथे गुणस्थान वालों की मान्यता तेहरवें गुणस्थान की मान्यता से भिन्न हो जाए, तो वह पहले गुणस्थान में चला जाए—मिथ्यादृष्टि हो जाए।"

२२६. वचन नहीं, वक्ता प्यारा होता है

रोयट में स्वामीजी ने शालिभद्र का व्याख्यान दिया; सो भाई उसे सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। वे बोले—स्वामीनाथ! पहले भी शालीभद्र का व्याख्यान बहुत बार सुना है, पर इस बार जैसा सुना वैसा कभी नहीं सुना।"

तब स्वामीजी बोले—"व्याख्यान तो वही है, पर कहने वाले के मुंह का अन्तर है।"

२२७. जगह तो परिग्रह है

किसी ने स्वामीजी से पूछा—"पौषध करने वाले को स्थान दिया, उसको क्या हुआ?

तब स्वामीजी बोले—"उसने कहा—'मेरी जगह में पौषध करो, यह कहने वाले को धर्म होता है।"

तब फिर पूछा—"जगह दी, उसमें क्या हुआ?"

तब स्वामीजी बोले—"क्या उसने जगह सदा के लिए दे दी? उसने अपनी जगह में पौषध करने की स्वीकृति दी, वह धर्म है। जगह तो परिग्रह है, उसके सेवन करने और कराने से धर्म नहीं होता। सामायिक और पौषध की स्वीकृति देता है, वह धर्म है।"

२२८. सामायिक की सुरक्षा

कोई कहता है—"सामायिक में शरीर का प्रमार्जन कर खुजलाना धर्म है और शरीर का प्रमार्जन किए बिना उसे खुजलाता है, तो उसे पाप लगता है।"

तब स्वामीजी बोले—"चींटी और मच्छर सामायिक में काट खाए, तो शरीर को काटा या सामायिक को।"

तब वह बोला—"शरीर को काटा।"

तब स्वामीजी बोले—"शरीर का प्रमार्जन करके खुजलाता है, तो वह सुरक्षा सामायिक की करता है, या शरीर की?"

तब वह विपरीत मान्यता के आधार पर बोला—"सुरक्षा सामायिक की करता है।"

तब स्वामीजी बोले—"वह नहीं खुजलाता, तो सामायिक की सुरक्षा तो और ज्यादा होती। जो बिना प्रमार्जन किए खुजलाने का त्याग है। सामायिक में प्रमार्जन किए बिना शरीर को नहीं खुजला सकता। यदि शरीर को न खुजलाता, मच्छर आदि के काटने को सहन करता, तो निर्जरा अधिक होती। उससे सामायिक और अधिक पुष्ट होता। इस दृष्टि से जो शरीर का प्रमार्जन करता है, वह सामायिक की सुरक्षा के लिए नहीं करता। मच्छर ने शरीर को काटा, सामायिक को नहीं काटा, ये तो वे भी कहते हैं। शरीर की सुरक्षा के लिए उसका प्रमार्जन करते हैं और उसे खुजलाते हैं, किन्तु सामायिक की सुरक्षा के लिए प्रमार्जन नहीं करते। ढाई द्वीप (मनुष्य-क्षेत्र) के बाहर समुद्रों में रहने वाले तिर्यंच श्रावक सामायिक और पौषध व्रत का अभ्यास करते हैं, वे कौन-सी प्रमार्जनी रखते हैं? सामायिक की सुरक्षा वे भी बहुत सावधानी से करते हैं। अयतना (असंयम) न करना ही सामायिक की सुरक्षा है।

२२९. पौषध में प्रतिलेखन क्यों?

पौषध में कोई श्रावक वस्त्र अधिक रखता है, कोई कम रखता है। जो अधिक रखता है, उसके अधिक अव्रत; जो कम रखता है, उसके कम अव्रत। तब कोई प्रश्न करता है—"यदि कोई पौषध में प्रतिलेखन न करे, तो उसे प्रायश्चित्त क्यों दिया जाए?"

तब स्वामीजी बोले—"पौषध में अप्रतिलेखित[1] वस्त्रों को भोगने का त्याग होता है। उसने प्रतिलेखना नहीं की और उन्हें काम में लेता है, इसलिए उसके त्याग का भंग होता है। उसका प्रायश्चित्त प्राप्त होता है। पौषध में भी शरीर अव्रत में है। उस शरीर की सुख-सुविधा के लिए वस्त्रों को इधर-उधर करता है, उनका प्रमार्जन करता है, वह सावद्य है।

"पौषध के समय जो वस्त्र अपने पास रखे, उनका न तो प्रतिलेखन करता है और न उन्हें काम में लेता है, तो उससे विशेष कठिनाई को सहनी होती है। उससे पौषध और अधिक पुष्ट होता है। कष्ट सहने की सामर्थ्य नहीं है, इसलिए वस्त्रों का प्रतिलेखन कर उनको काम में लेता है।

---

१. जिन वस्त्रों की प्रतिलेखना न की हो।

"जैसे किसी व्यक्ति को अनछना जल पीने का त्याग है। वह जल को छानता है, पीने के लिए छानता है, दया के लिए नहीं छानता है। यदि वह नहीं छानता है, तो दया और अधिक पुष्ट होती है।"

"वह कैसे ?"

"यदि वह नहीं छानता है, तो पी नहीं सकता, क्योंकि उसे अनछना जल पीने का त्याग है। अनछने जल पीने का त्याग है, इसलिए यदि वह जल नहीं छानेगा, तो जल पी नहीं सकेगा। इस दृष्टि से वह जल को छानता है, वह अपनी अव्रत (छूट) का उपभोग करने के लिए छानता है। उसमें धर्म नहीं है।

२३०. तो संयम और असंयम दोनों सूखेंगे

कुछ कहते हैं—"श्रावक के असंयम का सिंचन करने से संयम बढता है।" उस पर वे कुहेतु का प्रयोग करते हैं—नीम के पेड़ में आम का पेड़ पैदा हो गया। नीम की जड़ में पानी सींचने से नीम और आम दोनों ही प्रफुल्लित हो जाते हैं। इसी प्रकार श्रावक के असंयम का सिंचन करने से दोनों बढते हैं।"

तब स्वामीजी बोले—"इस प्रकार असंयम का सिंचन करने से संयम बढता है, तो उनके अनुसार श्रावक यदि अब्रह्मचर्य का सेवन करता है, वह असंयम का सेवन करता है, उससे संयम भी पुष्ट होना चाहिए। और नीम की जड़ में अग्नि डालने से नीम और आम दोनों जल जाते हैं, जैसे किसी ने आजीवन ब्रह्मचर्य स्वीकार किया, उसने असंयम को जला डाला; प्रश्नकर्त्ता के अनुसार उसके असंयम और संयम दोनों ही जल जाने चाहिए।"

"गृहस्थ को पारणा कराने में असंयम का सिंचन हुआ, उससे संयम बढता है, ऐसा जो कहते हैं, उनके अनुसार उपवास कराने पर असंयम सूखता है, तो संयम भी सूखना चाहिए।"

"इसी प्रकार हिंसा, असत्य, चोरी, अब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का सेवन कराने से असंयम का सिंचन होता है, तो प्रश्नकर्त्ता के अनुसार 'संयम बढता है' वह भी कहना चाहिए। और हिंसा, असत्य, चोरी, अब्रह्मचर्य और परिग्रह का त्याग करने-कराने से यदि असंयम सूखता है, तो उनके अनुसार 'व्रत सूखता है' यह भी कहना होगा।"

२३१. मौन की भाषा

कुछ कहते हैं—"सावद्य दान के विषय में 'पुण्य, पाप और मिश्र होता है,' यह नहीं करना चाहिए; इसलिए हम उसके विषय में मौन रखते हैं।"

तब स्वामीजी ने मौनी बाबा का दृष्टांत दिया—"कोई मौनी बाबा एक गांव में आया। उसके साथ बहुत सारे चेले थे। वे आटा, घी, गुड़ इत्यादि मुख से बोल कर नहीं मांगते, किन्तु संकेत जता कर मांगते हैं। अंगुलियों को ऊंचा कर संकेत करते हैं—इतना किलो आटा, इतना किलो घी, इतनी दाल और इतना गुड़।"

"तब गांव के चौधरी और पटवारी कम देना चाहते हैं, तब वह अपने चेलों को 'हूंकार' से संकेत कर घरों और दुकानों के खपरेल से बने छप्पर तुड़वा देता है।"

तब लोग बोले—"यह मौनी बाबा मौन के संकेत की भाषा बोलता है और

'हूंकार' से ही छह काया के जीवों को मरा देता है। यह अनबोला रहकर ही ऊधम मचा देता है, तो बोलता तो न जाने क्या कर डालता ?"

स्वामीजी बोले—"जैसा उस मौनी बाबा का मौन था, वैसा ही इनका सावद्य दान के विषय में मौन है। ये मुख से तो 'मौन' कहते जाते हैं और श्रावक-श्राविकाओं को भोजन कराने में पुण्य और मिश्र की आम्नाय—मान्यता बतलाते हैं। लड्डू खिलाकर दया पालने की प्ररूपणा करते हैं।"

२३२. खोल कर देने पर नहीं लेते

अमुक संप्रदाय के साधु स्वयं किवाड़ बंद करते हैं और खोलते हैं, किन्तु गृहस्थ किवाड़ खोल कर आहार देते हैं, तो वे नहीं लेते, इस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—

जैसे कोई आदमी पर-गांव जा रहा था। उसे कोई भंगी छू गया।

उससे पूछा—"तुम कौन हो ?"

तब उसने कहा—"मैं भंगी हूं।"

तब उस आदमी ने कहा—"तुमने मेरा भोजन छू लिया।"

इस प्रकार वे परस्पर गाली-गलौज करने लगे और गुत्थंगुत्था हो गए। वह आदमी भंगी को नीचे गिरा ऊपर बैठ गया।

भंगी ने कहा—'तू मुझे छोड़।'

तब वह बोला—'मैं तुझे नहीं छोड़ूंगा।'

तब भंगी ने कहा—'तूं जैसे कहेगा, वैसे करूंगा। तूं मुझे छोड़ दे।'

तब वह बोला—'तुम्हारी पत्नी अपने हाथ से लीप-पोत कर 'चोका' बनाए, कोरे घड़े में पानी ला, महाजन की दुकान से आटा ला, जैसी मेरी रोटी है, वैसी-की-वैसी रोटी बना कर दे, तो मैं तुझे छोड़ सकता हूं।'

तब भंगी ने उसकी सारी शर्तें स्वीकार कर लीं। जैसा उसने कहा, उसी रीति से भंगी ने अपनी स्त्री से रोटी बनवा दी।

जो समझदार होगा, वह उस आदमी को मूर्ख मानेगा, जिसने भंगी द्वारा छुई हुई रोटी तो नहीं खाई, किन्तु उसके द्वारा बनाई हुई रोटी खा ली। इससे उसे लोग विवेक-शून्य मानेंगे।

"इसी प्रकार गृहस्थ किवाड़ खोल कर आहार देते हैं, वह तो नहीं लेते और अंधेरी रात में स्वयं किवाड़ बंद करते हैं और खोलते हैं, उसकी मन में शंका भी पैदा नहीं होती।

२३३. दोनों लोक बिगड़ जाते हैं

कुछ कहते हैं—"रोग आदि कारण की स्थिति में साधु को अशुद्ध आहार ले लेना चाहिए और उस स्थिति में आहार देने वाले श्रावक को पाप अल्प होता है, निर्जरा ज्यादा होती है।"

तब स्वामीजी बोले—"राजपूत का बेटा संग्राम करते-करते भाग जाता है तो उसे शूर कैसे कहा जाए ? उसे राजा जागिरदारी कैसे भोगने देगा ? लौकिक वातावरण में उसकी प्रतिष्ठा कैसे सुरक्षित रहेगी ?"

इसी प्रकार जो भगवान् के साधु कहलाते हैं और विशेष कारण की स्थिति में अशुद्ध आहार देने पर अल्प पाप और बहुत निर्जरा बतलाते हैं, अशुद्ध आहार देने की स्थापना करते हैं, वे इहलोक और परलोक में बुरे दिखते हैं।"

२३४. फिर मार्ग क्या पहिचाना ?

अल्प कर्म वाले जीव झूठे गुरु को छोड़ सच्चे गुरु को स्वीकार करते हैं, तब अन्य संप्रदाय के साधु और उनके श्रावक कहते हैं—"पाली में विजयचंद पटवा लोगों को रुपए देकर श्रावक बनाता है।"

तब स्वामीजी बोले—"तुम्हारे श्रावक रुपयों के बल पर अपना धर्म बदल लेते हैं, तब उन्होंने तुम्हारा मार्ग क्या पहिचाना ? तुम कहते हो कि वे रुपयों के बल पर दूसरे धर्म में चले जाते हैं तो शेष लोग भी रुपयों के बल पर दूसरे धर्म में चले जाएंगे। इससे लगता है, तुम्हारे श्रावकों ने तुम्हारे मार्ग को नहीं पहिचाना।

२३५. वर्तमान काल में मौन

"कोई सावद्य दान देता है, लेता है, उस समय उस विषय में साधु को उसके लाभा-लाभ के बारे में पूछने पर उसे वर्तमान काल में मौन रहना चाहिए।"—इस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"कुश के दोनों छोर आग से गरम हो उठते हैं और वह बीच में ठंडा रहता है। इधर से पकड़ने पर हाथ जलते हैं और दूसरे छोर पर पकड़ने पर भी हाथ जलते हैं, पर उसे बीच में से पकड़ने पर हाथ नहीं जलते हैं।

इसी प्रकार वर्तमान काल में सावद्य दान के विषय में पुण्य कहने से छह काय के जीवों की हिंसा लगती है और पाप कहने से दान देने वालों के अंतराय होता है, इसलिए वर्तमान काल में मौन रखना चाहिए।"

२३६. हरियाली खाने के लिए बनाई है

कोई कहता है—भगवान् ने हरियाली खाने के लिए बनाई है।

तब स्वामीजी बोले—"तुम्हारे कथनानुसार तुम बाघ के आने पर क्यों भाग जाते हो ? तुझे भी तो भगवान् ने बाघ का भक्ष्य बनाया है ? तुम्हारे मतानुसार तुझे बाघ के खाने के लिए बनाया है।"

तब वह बोला—"मेरा जीव छटपटाता है और दुःख पाता है।"

"सब जीवों के बारे में तू ऐसे ही सोच। वे भी मारे जाने पर दुःख का अनुभव करते हैं।"

२३७. काचरी के बिना कौन-सा विवाह रुकेगा ?

हेमजी स्वामी दीक्षा लेने तैयार हुए, तब किसी गृहस्थ ने स्वामीजी से कहा—"हेमजी दीक्षा लेने को तैयार हुए हैं, पर उनमें तम्बाकू का व्यसन है।"

तब स्वामीजी बोले—"काचरों के बिना कौन-सा विवाह रुक जाएगा ?"

२३८. जन्म व्यर्थ ही गया

पुर की घटना है। छाजू खाबिया स्वामीजी के पास आकर "आबूगढ तीरथ

ताजा" यह गीतिका गाने लगा। उसमें एक गाथा है—"जिसमें आबूगढ तीर्थ में जा उसकी वंदना नहीं की, उसने अपना जन्म व्यर्थ ही गमा दिया।"

तब स्वामीजी बोले—"तुमने आबूगढ जा उसकी वंदना की या नहीं ?"

तब छाजूजी बोला—"महाराज! मैंने तो आबूगढ की वंदना नहीं की।"

तब स्वामीजी बोले—' इस हिसाब से तुम्हारा जन्म तो व्यर्थ ही गया ?"

तब छाजूजी बोला—"आपने उल्टी फांसी मेरे गले में ही डाल दी।"

२३९. ऐसी है तुम्हारी दया !

पुर की घटना है। भानो खाबिया स्वामीजी के पास आकर बोला—' महाराज! भीलवाड़ा में 'दया पाली गई', उसमें सात रुपयों के पक्वान्न, भुजिया आदी थे। उसमें से अधिकांश सामग्री को सोलह आदमी खा गए। कुछ कलाकंद बचा, उसे भी सांझ के समय दही में डाल स्वाद ले-ले कर खा गए।"

तब स्वामीजी ने कहा—"तू कहने में भी इतनी लोलुपता दरसा रहा है, तो खाते समय न जाने तुमने कैसा अनर्थ किया होगा ?"

तब भानो खाबिया बोला—"हमारे साथ एक पांच वर्ष का बच्चा भी था; उसे हाथ पकड़ कर उठा दिया। यह कल क्या उपवास करेगा ? यह कह कर उसे उठा दिया।"

तब स्वामीजी बोले—"तुमने तो ऐसा आहार किया है, जिससे अब्रह्मचर्य का सेवन कर सकते हो, पर बच्चा तो ऐसा काम नहीं करता। तुझे तो भोजन कराया और उस बच्चे को उठा दिया। ऐसा है तुम्हारा धर्म और ऐसी है तुम्हारी दया।"

२४०. कटार कोई पूनी नहीं है !

भीखणजी स्वामी आचार्य रुघनाथजी के पास दीक्षा लेने को तैयार हुए। तब स्वामीजी की बूआ बोली—"यदि तुमने दीक्षा ली, तो मैं कटार भोंक कर मर जाऊंगी।"

तब स्वामीजी बोले—"कटार कोई पूनी नहीं है, जो पेट में भोंकी जाए। कटार को भोंकना बड़ा कठिन काम है। तुम ऐसी बात क्यों करती हो ?"

२४१. तब एक हो जाते हैं

वेषधारी साधु कहते हैं—"अमुक-अमुक संप्रदाय वाले हम सभी एक हैं, भीखणजी हमसे न्यारे हैं।"

तब किसी ने कहा—"तुम लोगों के परस्पर अनबन चली है और भीखणजी से जब चर्चा करनी होती है, तब तुम एक कैसे हो जाते हो ?"

तब वे बोले—"राजपूत लोगों में भाइयों के परस्पर अनबन चलती है पर चोर को निकालने के लिए सब एक हो जाते हैं।"

यह बात स्वामीजी ने सुनी, तब उन्होंने दृष्टांत दिया—"अलग-अलग मोहल्लों के कुत्ते परस्पर लड़ते हैं। इस मोहल्ले के कुत्ते उस मोहल्ले के कुत्ते को अपने यहां नहीं आने देते और उस मोहल्ले के कुत्ते इस मोहल्ले के कुत्तों को अपने यहां नहीं आने देते। वे परस्पर लड़ते ही रहते हैं। और जब उधर से हाथी गुजरता है, तब सब एक साथ

उसे भौंकने लग जाते हैं। उन कुत्तों के परस्पर कब एका था ? पर जब हाथी आता है, तब सब एक हो जाते हैं।"

ऐसा है कुत्तों का स्वभाव।

इसी प्रकार अमुक-अमुक संप्रदाय के साधु परस्पर 'क' 'ख' की मान्यता को गलत बतलाता है और 'ख' 'क' की मान्यता को गलत बतलाता है। उनके परस्पर अनेक मान्यताओं का अन्तर है। वे परस्पर एक-दूसरे को साधु भी नहीं मानते और जब साधुओं से चर्चा करने का काम पड़ता है, तब वे एक हो जाते हैं।

२४२. बासी रोटी सजीव या अजीव ?

अमुक-अमुक संप्रदाय वालों में कुछ तो बासी रोटी, जिसे तोड़ने पर लार जैसी निकलती है, में द्वीन्द्रिय जीव बतलाते हैं। वे ऐसा कहते हैं—"जैसे पैर से नहेरूवा निकलता है, वैसे ही रोटी में लार निकलती है।" और उनमें से कुछेक भिक्षा में बासी रोटी प्राप्त कर खा लेते हैं। इस विषय पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया "कोई मुट्ठी भरकर चने और गेहूं खाता है, उसे साधु कहा जाए या असाधु ?"

तब वे बोले—"गेहूं खाने वाला असाधु कहलाएगा ?"

तब स्वामीजी बोले—"यदि गेहूं खाने वाला असाधु कहलाएगा, तो कृमियों को खाने वाला साधु कैसे कहलाएगा ? जो बासी रोटी में जीव बतलाते हैं, उनके मतानुसार बासी रोटी खाने वाला कृमि खाने वाला होता है। कृमि खाने वाले को साधु कैसे कहा जाए ? इस न्याय से बासी रोटी में जीव बताने वालों के मतानुसार बासी रोटी खाने वाले असाधु ठहरे।"

"और जो बासी रोटी खाते हैं, उनसे पूछा जाए—जो झूठ बोलता है, वह साधु या असाधु ?"

तब वे कहेंगे—"असाधु।"

तब स्वामीजी बोले—"तुम तो बासी रोटी को अजीव बतलाते हो; और वे बासी रोटी में द्वीन्द्रिय जीव बतलाते हैं। इस प्रकार तुम्हारे ही मतानुसार वे असत्यभाषी कहलाएंगे। फिर उन्हें साधु कैसे कहा जाए ?"

"तथा तुम तो बासी रोटी को अजीव बतलाते हो और वे बासी रोटी में जीव बतलाते हैं। और अजीव को जीव मानता है, उसे मिथ्यात्वी कहा जाता है। तुम्हारे मतानुसार बासी रोटी में जीव मानने वाले मिथ्यात्वी कहलाएंगे।"

"इस प्रकार 'क' के मतानुसार 'ख' असाधु हैं और 'ख' के मतानुसार 'क' असाधु हैं। और वे कहते हैं—'हम परस्पर एक-दूसरे को साधु मानते हैं"। ऐसा मिथ्यात्व रूपी अन्धकार उनके घर में है।

२४३. जोड़ने वाला अच्छा या तोड़ने वाला ?

किसी ने कहा—"भीखणजी ! तुम जोड़ें (रचनाएं) बहुत करते हो।"

तब स्वामीजी बोले—"एक साहूकार के दो पुत्र थे। एक जोड़ता है, और दूसरा तोड़ता है, गमाता है। जो जोड़ता है वह अच्छा या तोड़ता है, गमाता है वह अच्छा ? संसार की दृष्टि में जो जोड़ता है, वह अच्छा कहलाता है; जो तोड़ता है, गमाता है वह अच्छा नहीं कहलाता।" यह सुनकर वह अवाक् रह गया।

२४४. रचना इस प्रकार करते हैं

आगरिया की घटना है। प्रतापजी कोठारी बोला—"आप रचनाएं किस तरह करते हैं?"

स्वामीजी के पास एक टोपसी[1] थी। उसमें सफेदा घुला हुआ था। इतने में हवा चली। इस वातावरण को देख आप एक पद की रचना करते हुए बोले—"यह छोटी-सी टोपसी है। इसमें सफेदा घुला हुआ है। यत्न करके रखना, अन्यथा इसमें बालू गिर जाएगी। इस पद की रचना करते हुए बोले—रचना इस प्रकार करते हैं।" यह सुनकर प्रतापजी बहुत प्रसन्न हुए।

२४५. मुझे भोजन कराएं

संवत् १८५६ की घटना है। नाथद्वारा में स्वामीजी के पास एक दादूपंथी साधु आया। स्वामीजी का व्याख्यान सुन बहुत प्रसन्न हुआ। वह प्रतिदिन व्याख्यान सुनने लगा। एक दिन उसने स्वामीजी से कहा—"आप श्रावकों से कहें कि वे मुझे भोजन कराएं।"

तब स्वामीजी बोले—"चाहे श्रावकों से कह कर तुम्हें भोजन कराएं और चाहें अपने पात्र में से निकाल कर रोटी दें। कोई फर्क नहीं पड़ेगा। यदि गृहस्थ को भोजन कराने के लिए कहना हो तो रोटियां अधिक लाकर तुम्हें दे दें।"

तब दादूपंथी बोला—"इसका अर्थ यह हुआ कि आपकी मान्यता दान देते हुए लोगों को बरजने और मनाही करने की है।"

तब स्वामीजी बोले—"देने वाले को मनाही करो या तुम्हारे पास से छीन लो, एक ही बात है।"

यह सुनकर दादूपंथी चला गया।

२४६. तुम धन्य हो

अपनी महिमा बढाने के लिए जो छल-कपट पूर्वक बोलते हैं, उनकी पहिचान के लिए स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"किसी ने बेला किया। वह अपने बेले की महिमा बढाने के लिए उपवास करने वाले का गुणानुवाद करता है—तू धन्य है! सो इस भयंकर गर्मी की मौसम में तूने उपवास किया है।

तब उपवास करने वाला बोला—"मैंने तो उपवास ही किया है, पर तुमने बेला किया है, तुम धन्य हो।"

इस प्रकार छलनापूर्ण वचन के द्वारा अपने बेले की महिमा बढाना चाहता है, उसे अभिमानी और अहंकारी जानना चाहिए।

२४७. दर्शन देने कहां जाऊं?

आचार्य रुघनाथजी की मां भी घर छोड़कर साध्वी बनी थी। उसके शरीर में कोई बीमारी हो गई। तब रुघनाथजी ने कहा—"भीखणजी! मेरी संसार पक्षीया माता को दर्शन दे आओ।"

---

१. रंग घोलने की छोटी दवात।

तब स्वामीजी दर्शन देने गए। स्थानक में जाकर साध्वियों से उनके बारे में पूछा।

तब साध्वियों ने बताया—"वे तो गोचरी गई हुई हैं।" तब स्वामीजी वापस आए।

तब आचार्य रुघनाथजी ने कहा—"दर्शन दे आए?"

तब स्वामीजी बोले—"मुझे कैसे पता चले वे किस 'मेड़ी'[1] पर गोचरी कर रही हैं? मैं कहां दर्शन देने जाऊं?" यह बात तब की है, जब स्वामीजी रुघनाथजी के संप्रदाय में थे।

२४८. धर्म हुआ या पाप?

कुछ हिंसाधर्मी कहते हैं—एकेन्द्रिय जीवों की अपेक्षा पंचेन्द्रिय जीव पुण्यवान् होते हैं। इसलिए एकेन्द्रिय जीव को मार कर पंचेन्द्रिय जीव की रक्षा करने में बहुत धर्म होता है।

तब स्वामीजी बोले—"एकेन्द्रिय की अपेक्षा द्वीन्द्रिय के पुण्य अनंत गुना होता है। द्वीन्द्रिय की अपेक्षा त्रीन्द्रिय का पुण्य अनंत गुना होता है। त्रीन्द्रिय की अपेक्षा चतुरिन्द्रिय का पुण्य अनंत गुना होती है। चतुरिन्द्रिय की अपेक्षा पंचेन्द्रिय का पुण्य अनंत गुना होता है। कोई पंचेन्द्रिय जीव मर रहा हो, उसे पैसा भर कृमि खिला कर कोई बचा ले तो उस बचाने वाले को धर्म हुआ या पाप?"

इस प्रकार पूछने पर वह उत्तर देने में असमर्थ हो गया।

स्वामीजी बोले—"जैसे द्वीन्द्रिय जीवों को मार कर पंचेन्द्रिय को बचाने में धर्म नहीं है, वैसे ही एकेन्द्रिय को मार कर पंचेन्द्रिय को बचाने में धर्म नहीं है।"

२४९. मैं तो ऐसा काम नहीं करूंगा?

हिंसाधर्मी ने इस प्रकार कहा—"कोई आचार्य या उपाध्याय जैसा बड़ा साधु था। वह विषय-वासना के वश में होकर गृहस्थ होने लगा। तब किसी श्रावक ने अपनी बहिन-बेटी द्वारा उसकी वासना-पूर्ति करा कर उसे वापस साधुपन में स्थिर कर दिया। उससे उसे बड़ा लाभ हुआ।"

तब स्वामीजी बोले—"तुम्हारा गुरु भ्रष्ट हो रहा हो, तो तुम अपनी बहिन-बेटी के द्वारा उसकी वासना-पूर्ति कराओगे या नहीं।"

तब वह बोला—"मैं तो ऐसा काम नहीं करूंगा।"

तब स्वामीजी बोले—"तुम इसमें धर्म बतलाते हो, तो फिर ऐसा काम क्यों नहीं करते? तुम यदि ऐसा काम नहीं करते हो, तो दूसरे के किसके बहिन-बेटियां फालतू पड़ी हैं?"

"ऐसी औंधी प्ररूपणा तो कुशील और कुपात्र होते हैं, वे करते हैं।"

---

१. मकान की ऊपर की मंजिल, माला या महल।

२५०. जितना हाथ लगे, उतना ही अच्छा

ढाई सौ बेला आदि तप की संपन्नता पर अपने-अपने समाज में लड्डू बंटवाते हैं। तब स्वामीजी बोले—"ये अपने मतलब से लड्डू बंटवाते हैं। मन में जानते हैं, इनमें से हमें भी मिलेगा।"

तब किसी ने कहा—"स्वामीनाथ ! ये सभी लड्डू तो नहीं लेते ?"

तब स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"एक साहूकार की बेटी का ब्याह हो रहा था। उस समय विवाह-मंडप में ब्राह्मण ने वेदपाठ करते हुए अपनी लड़की के द्वारा घी चुरवाने के लिए एक धुन शुरू की—

"घी चुरा, घी चुरा।
घी चुरा, घी चुरा।"

तब ब्राह्मण-पुत्री बोली—

"किसमें चुराऊं, किसमें चुराऊं।
किसमें चुराऊं, किसमें चुराऊं।।"

तब ब्राह्मण बोला—

"नया छोटा घड़ा, नया छोटा घड़ा।
नया छोटा घड़ा, नया छोटा घड़ा।।"

तब ब्राह्मण-पुत्री बोली—

"सुस जाएगा, सुस जाएगा।
सुस जाएगा, सुस जाएगा।"

तब ब्राह्मण बोला—

"तुम्हारे बाप का क्या जाएगा, तुम्हारे बाप का क्या जाएगा।
तुम्हारे बाप का क्या जाएगा, तुम्हारे बाप का क्या जाएगा।।"

उस समय गीत गाने वाली महिलाओं में एक जाटनी बैठी थी। वह घी चुराने की धुन का अर्थ समझ गई। तब वह जाटनी अपने गीत में गाने लगी—

"दुलहन के पिता, सुनो ! तुम्हारा घी चुराया जा रहा है।"

तब ब्राह्मण ने धुन की लय में जाटनी से कहा—

"तुम इस बात को मत फैलाओ, आधा तेरा और आधा मेरा।।"

स्वामीजी बोले—"जैसे उस ब्राह्मण ने नए शिकोरे में घी चुराया, वह जानता था कि कुछ सुस जाएगा, फिर भी उसने सोचा, 'जितना हाथ लगे उतना ही अच्छा है।' जाटनी को आधा घी देना भी स्वीकार कर लिया। इसी प्रकार अमुक संप्रदाय के साधु अपने समाज में लड्डू बंटवाते हैं वे सब उन्हें भिक्षा में नहीं देते। उनमें से कुछ बच्चे-बच्चियां खा जाते हैं। फिर भी सोचते हैं। जितना मिला, उतना ही अच्छा।" इस प्रकार अपने स्वार्थ पूर्ति की पद्धति चलाई है।

२५१. अन्याय का प्रतिकार

जो न्याय की सीख नहीं मानता, कुटिल व्यवहार और अन्याय करता है, उसे पाठ पढाने के लिए स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"एक साहूकार की हवेली के सामने

रावल (खेल करने वाली टोली) ने खेल तमाशा शुरु किया।"

तब साहूकार ने उन्हें बरजा—इस स्थान पर तुम तमाशा मत करो। तुम अश्लील बोलते हो। हमारे घर की बहु-बेटियां सुनती हैं। इसलिए तुम हमारी हवेली के सामने तमाशा मत करो। इस प्रकार सेठ ने उन्हें समझाया, पर उन्होंने सेठ को बात नहीं मानी। तमाशा शुरु कर दिया। बहुत लोग इकट्ठे हुए। रावल तान बजा रहे थे।

तब साहूकार ने अपनी हवेली पर नगाड़ों की जोड़ी चढाई और बच्चों से कहा—'नगाड़े बजाओ।' तब बच्चे नगाड़े बजाने लगे। खेल में भंग हो गया। लोग बिखर गए। रावलों को दान भी नहीं मिला। उनकी भद्दी भी लगी।

"इसी प्रकार कोई न्याय की सीख न माने, अन्याय करे, तब बुद्धिमान अपनी बुद्धि के द्वारा उसे हतप्रभ कर देता है, कला और चातुर्य के द्वारा उसे पाठ पढा देता है।"

२५२. मैं भी मनुष्यों को इकट्ठा करूं

साधु व्याख्यान देते हैं, वहां बड़ी परिषद् और बड़े उपकार को देखकर अमुक संप्रदाय के साधु और उनके श्रावक साधुओं की निंदा कर लोगों को इकट्ठा कर लेते हैं। उस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—

"किसी साहूकार की दुकान पर बहुत ग्राहकों और भीड़ को देखता है, वह उस दिवालिए पड़ोसी को अच्छा नहीं लगता। उसने सोचा—'इसकी दुकान पर इतनी भीड़ है, तो मैं भी मनुष्यों को इकट्ठा करूं।' यह सोच कपड़ों को डाल, नंगा हो नाचने लगा। तमाशा देखने के लिए बहुत लोग इकट्ठे हो गए। तब वह मन में राजी हुआ।"

इसी प्रकार साधुओं के पास बड़ी परिषद् देखते हैं, वह अमुक संप्रदाय के साधु और श्रावकों को अच्छा नहीं लगता। तब वे भी कदाग्रह—वाद-विवाद खड़ा कर मनुष्यों को इकट्ठा कर लेते हैं।

२५३. तू भगवान का स्मरण कर

सं० १८५५ की घटना है। पाली चतुर्मास में खेतसीजी स्वामी के रात के समय दस्त और वमन का प्रकोप हो गया। तब स्वामीजी ने हेमजी स्वामी को जगाया और खेतसीजी स्वामी रास्ते में मूर्च्छित होकर गिर गए थे, उन्हें दोनों हाथ पकड़ कर ले आए।

स्वामीजी बोले—"संसार की माया विचित्र है। खेतसीजी जैसा (मजबूत आदमी) ऐसे हो गया।"

खेतसीजी स्वामी को सुला दिया और सिरहाने में से नई चादर निकाल उन्हें ओढा दी। थोड़ी देर बाद वे सचेत हो गए, बोलने लगे। उन्होंने कहा—"आप रूपांजी को अच्छी तरह पढाना।"

तब स्वामीजी बोले—"तू तो भगवान् का स्मरण कर। रूपांजी की चिंता क्यों करता है?"

शिक्षा-पद

२५४. पांच रुपयों का कहीं पता ही नहीं चलता

सुपात्रदान की कला सिखाने के लिए स्वामीजी ने शिक्षा-वचन कहा—"किसी गांव में साधुओं ने चतुर्मास किया। एक दिन के अन्तराल से साधु गृहस्थ के घर भिक्षा के लिए जाए तो चार मास में दो मास जाना होता है। भिक्षा के दिन प्रति बार कोई पाव-पाव घी का दान दे, तो चतुर्मास में लगभग पन्द्रह सेर घी होता है। उसकी कीमत चार-पांच रुपए[1] होती है। उस दान में उत्कृष्ट रसानुभव होता है, तो उत्कृष्टतः तीर्थंकर-गोत्र-कर्म का बन्ध होता है। कोई व्यक्ति अनेक संसार भ्रमण के अनेक भवों को कम कर देता है। और छह काय की प्रतिपालना करने वाले मुनि की शारीरिक आवश्यकता-पूर्ति होती है। गृहस्थ के मृत्यु भोज, विवाह आदि प्रसंगों में अनेक रुपए लगते हैं, उनमें पांच रुपयों का तो कहीं पता ही नहीं चलता।" श्रावकों को तारने के लिए स्वामीजी ने यह शिक्षा दी।

२५५. बेचारे का जन्म बिगड़ जाता है

किसी साहूकार ने मृत्यु-भोज किया। उसने अनेक गांवों को न्योता दिया। लोगों के भोजन करते समय कुछ सामग्री कम हो गई। दूसरे गांवों से जो आए थे, उन्होंने थोड़ी देर भोजन नहीं किया और कहा—"बड़े मृत्यु-भोजों में ऐसे ही होता आया है। कभी घट जाता है, कभी बढ जाता है।" उन्होंने फिर कहा—"घड़ी-दो घड़ी बाद भोजन कर लेंगे, कोई खास बात नहीं।"

एक आदमी उस साहूकार का विरोधी था। वह बाजार में आ, गद्दे पर लेट गया और कहने लगा—"मृत्यु-भोज बिगड़ गया रे, बिगड़ गया।"

तब किसी ने पूछा—"इस भोज की प्रारम्भिक सामग्री जुटाने में तो तुम भी साथ रहे होंगे? फिर वह सामग्री घटी क्यों?"

तब वह बोला—"नहीं साह! मुझे पूछा भी कब था? यदि मुझे पूछा होता, तो सामग्री कम ही क्यों होती और भोज बिगड़ता ही क्यों?"

फिर उससे पूछा गया—"तुमने भोजन किया या नहीं?

तब बोला—"मैंने तो खूब डट कर खाया है। मैं तो पहले ही जानता था कि इसके सामग्री कम हो जाएगी।"

अब स्वामीजी बोले—"ऐसे कुपात्र पुरुषों का पोषण करने से भोज क्या बिगड़ता है, बेचारे भोज करने वाले का जन्म भी बिगड़ जाता है।

२५६. और भी बहुत विषय है

आमेट में पुर के भाई-बहिन वंदना के लिए आए। परस्पर की चर्चा में पूछा गया छह पर्याप्तियां और दस प्राण जीव हैं या अजीव?

तब किसी ने कहा—"जीव हैं", किसी ने कहा "अजीव हैं।" इस प्रकार परस्पर बहुत खींचातान करने लगे। बाद में स्वामीजी के पास आकर पृच्छा की—"महाराज!

---

१ उस समय का मूल्य है।

छह पर्याप्तियां और दस प्राण जीव हैं या अजीव ?"

तब स्वामीजी बोले—"जिस विषय की चर्चा करने से भ्रम पैदा हो, वैसी चर्चा करनी ही नहीं चाहिए। और भी बहुत विषय हैं चर्चा करने के लिए।" यह कह कर उन्हें समझा दिया, उनकी खींचातान को समाप्त कर दिया।

२५७. सांसारिक मोह की पहिचान

सांसारिक मोह की पहिचान के लिए स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"कोई व्यक्ति ब्याह करने के बाद छोटी अवस्था में ही मर गया।" तब लोगों में बहुत भयंकर स्थिति बन गई। हाय-हाय करते हुए लोग बोले—'बेचारी लड़की का क्या हाल होगा? बेचारी बारह वर्ष की अवस्था में ही विधवा हो गई! यह किस प्रकार दिन काटेगी?" इस प्रकार लोग विलाप करने लगे।

स्वामीजी बोले—"लोग सोचते हैं कि ऐसा करने वाला उसकी दया कर रहा है, पर वास्तव में वह उस लड़की के काम-भोग की बांछा कर रहा है। वे जानते हैं कि यदि वह लड़का जीवित रहा होता तो इसके दो-चार बच्चे-बच्चियां हो जाते। यह लड़की सुख का भोग करती, तो अच्छा रहता—वे इस प्रकार की बांछा करते हैं। पर वे यह नहीं सोचते कि यह बहुत काम-भोग का सेवन करती, तो अधोगति में जाती। इसकी उन्हें कोई चिन्ता नहीं और वह लड़का किस गति में गया, उसकी भी उन्हें कोई चिन्ता नहीं। जो ज्ञानी पुरुष होते हैं वे जीवन या मरण का हर्ष या शोक नहीं करते।

२५८. संतोष हो गया

हेमजी स्वामी जब घर में थे, तब की घटना है। उनकी बहिन को मामा अपने घर ले गया। हेमजी स्वामी चिन्ता करने लगे। उन्होंने भीखणजी स्वामी के पास आकर कहा—"आज तो मेरा मन बहुत उदास है। बहिन की याद बहुत सता रही है। मन में ऐसी आ रही है कि घुड़सवार को भेजकर उसे वापस बुला लूं।"

तब स्वामीजी बोले—"सांसारिक सुख ऐसे ही क्षणिक होते हैं। संयोग का वियोग हो जाता है। शारीरिक और मानसिक दुःख पैदा हो जाता है। इसीलिए भगवान् ने मोक्ष के सुखों को शाश्वत और स्थिर कहा है। वहां सुखों का कभी विरह नहीं होता।" स्वामीजी का यह वचन सुन हेमजी स्वामी के मन में संतोष हो गया।

२५९. यह भावना मन में तो आई थी

पाली की घटना है। एक साध्वी ने बेला किया। बाद में पारणा की आज्ञा ले मृत्यु-भोज वाले घर से लपसी ले आई। वह स्वामीजी को दिखाई। स्वामीजी ने मन में विचारा और उसे पूछा—"क्या तुमने यह बेला इस लपसी के लिए ही तो नहीं किया है? सच बताओ।"

तब साध्वी ने कहा—"स्वामीनाथ! उसकी भावना मन में आई तो थी।"

तब स्वामीजी ने सब साधु-साध्वियों के लिए नियम बना दिया कि मृत्यु-भोज वाले घर में दूसरे दिन भी गोचरी के लिए न जाए। आचार्य के पास साधु-साध्वियां हों उनके लिए यह नियम लागू नहीं किया गया।

२६०. गृहस्थ के भरोसे न रहें

सम्वत् १८५७ की घटना है। स्वामीजी ने पुर में चतुर्मास किया। यह पता चला कि यहां फौजें आ रही हैं।[1] तब स्वामीजी ने वहां से विहार करने की बात सोची।

तब भाई बोले—"आप विहार क्यों कर रहे हैं ?"

तब स्वामीजी बोले—"पहले यहां अमुक सम्प्रदाय के साधुओं ने चतुर्मास किया था, उस समय फौज के आने से गांव के कुछ लोग वहां से चले गए। तब उन साधुओं ने कहा—'हम तो चतुर्मास में विहार नहीं करेंगे।' इस आग्रह से उन्होंने विहार नहीं किया। बाद में फौज आई। वे साधु "नागोर्‌यां री गवाड़" में चले गए। फौजियों ने उन्हें पकड़ कर कहा—"धन कहां है, बताओ ?" वे बोले नहीं, तब उनके नाक में मिर्चों का धुआं दिया और उनके मुंह पर मिर्चों का थेला बांध दिया। इस प्रकार बहुत कष्ट दिया। इस घटना को ध्यान में रख कर यहां से विहार करने का भाव है। यहां रहने का भाव नहीं है।"

तब भाई बोले—"आप विहार न करें। (यदि ऐसी ही स्थिति बनी और हमें जाना पड़ा तो) हम आपको अच्छी तरह ले जाएंगे, हम आपको यहा छोड़कर नहीं जाएंगे।"

तब स्वामीजी वहां ठहर गए।

बाद में फौज की हलचल बढी। तब भाई तो रातोंरात इधर-उधर भाग गए। सवेरे स्वामीजी भी विहार कर गुरला गांव पधार गए। कुछ भाई भी वहां आए। स्वामीजी ने उनसे कहा—"तुम कहते थे, हम साथ में चलेंगे। पर तुम तो रातोंरात पहले ही भाग कर आ गए।"

तब भाई बोले—"हम पहाड़ी पर खड़े देख रहे थे। वे स्वामीजी पधार रहे हैं, वे स्वामीजी पधार रहे हैं।"

तब स्वामीजी बोले—"दूर खड़े होकर देखने से क्या होता ? तुम कहते थे 'हम साथ रहेंगे।' सो साथ में तो रहे नहीं। गृहस्थ का क्या भरोसा ?

"गृहस्थ के भरोसे नहीं रहना चाहिए।"

२६१. मैं मार्ग जानता हूं

स्वामीजी नींमली से विहार कर चेलावास पधार रहे थे, तब वे मार्ग पूछने लगे। तब जैचन्दजी श्रावक बोला—"स्वामीनाथ ! मार्ग मैं जानता हूं। आप सुखे-सुखे पधारें।" आगे वह स्वामीजी को हरियाली में ले गया। मार्ग बन्द हो गया। तब स्वामीजी ने जैचन्दजी को बहुत उलाहना दिया—"तू कहता था कि मैं मार्ग जानता हूं।"

---

१. उस समय में फौजें—छोटी-छोटी टुकड़ियां लूट-खसोट के लिए गांवों में घूमा करती थीं। छोटे-छोटे राज्यों में परस्पर संघर्ष चलता रहता था। एक-दूसरे के प्रदेश में वे घुस जाते और लूट-खसोट करते।

तब जैचन्दजी बोला—"मैं तो मार्ग भूल गया।"

तब स्वामीजी ने कहा—"गृहस्थ के भरोसे नहीं रहना चाहिए।"

२६२. ऐसे होते हैं बुद्धिहीन !

दूसरा कोई उत्तर देता है, उसे नहीं समझ पाता और स्वयं क्या कह रहा है, वह भी नहीं जानता, ऐसे व्यक्ति के विषय में स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"एक सहेली बोली—'मेरा पति ऐसे अक्षर लिखता है, जिन्हें कोई दूसरा पढ नहीं सकता।"

'तब दूसरी बोली—मेरा पति ऐसा लिखता है, जो स्वयं लिखा हुआ स्वयं ही नहीं पढ़ सकता।'

"जगत् में ऐसे बुद्धिहीन होते हैं, ऐसे ही कुछ लोग होते हैं—स्वयं की भाषा से स्वयं अनभिज्ञ। ऐसे लोग केवलीभाषित धर्म को कैसे पहिचान सकते हैं ?"

२६३. कोई पत्थर डाल दे तो ?

एक साधु गोचरी से आया और जितना आहार मंगाया था उससे अधिक ले आया।

तब स्वामीजी ने पूछा—आहार अधिक क्यों लाया ?

तब वह बोला—"जबरदस्ती डाल दिया।"

तब स्वामीजी बोले—"जबरदस्ती से कोई पत्थर डाल दे, तो लोगे या नहीं ?

२६४. एकेन्द्रिय ने कब कहा ?

किसी ने कहा—"एकेंद्रिय जीव को मार कर पंचेन्द्रिय का पोषण करने से लाभ होता है।"

तब स्वामीजी बोले—"किसी ने तुम्हारा अंगोछा[1] छीन कर ब्राह्मण को दे दिया। उसमें लाभ है या नहीं ? अथवा एक आदमी ने किसी के गेहूं के कोठे पर कब्जा कर उसे लुटा दिया, उसमें लाभ होगा या नहीं ?"

तब वह बोला—"इसमें तो लाभ नहीं, मालिक के मन के बिना दिया इसलिए।"

तब स्वामीजी बोले—एकेंद्रिय ने कब कहा—'मेरे प्राण लूट कर दूसरों का पोषण करना।' इस न्याय से एकेंद्रिय को मारने वाला उसके प्राणों की चोरी करता है, इसलिए उसमें लाभ नहीं।

२६५. विलाप करने से क्या होगा ?

दु:ख आने पर लोग विलाप करते हैं, इस विषय पर स्वामीजी ने दृष्टान्त दिया—किसी साहूकार ने गेहूं के कोठे भरे। ऊपर से उन पर ठप्पा मार, लिपाई पुताई कर उन्हें मजबूत बना दिया। उसके एक पड़ोसी ने भी कोठे में धूल, खाद और कचरा डाल, उसके ऊपर ठप्पा मार, लिपाई कर उसे साफ कर दिया। गेहूं के भाव तेज हो गए—दुगुने हो गए।

साहूकार अपने कोठे को खोल गेहूं बेचने लगा। पड़ोसी ने भी ग्राहकों से गेहूं

१. अंग पोंछने का वस्त्र

बेचने की साई (अग्रिम राशि) ली, उन्हें साथ लाया और कोठा खोला। उसके भीतर खाद निकली। तब वह रोने लगा। उसके देखादेखी लोग भी रोने लगे। 'देखो! बेचारे के गेहूं निकलना था, और खाद निकली'—यह कहकर वे रोने लगे।

'तब किसी समझदार ने पूछा—अरे! तू ने इस कोठे के भीतर डाला क्या था?'

तब वह रोता हुआ बोला—'मैंने डाली तो खाद ही थी।'

तब वह बोला—'तूने खाद डाली थी, तो गेहूं कहां से निकलेगा?

इसी प्रकार जीव ने जैसे पुण्य-पाप का बन्ध किया है वैसा ही उदय में आएगा। विलाप करने से क्या होगा?

२६६. दान-दया का लोप कर दिया

चेलावास के ठाकुर का नाम था जुंझारसिंहजी। आचार्य रुघनाथजी उनके पास जाकर बोले—"भीखण, जो मेरा चेला है, वह बकरों को बचाने में पाप बतलाता है। उसने दान और दया का लोप कर दिया।

तब स्वामीजी ने आकर उनसे कहा—"ठाकर साहब! कलाल के घर का पानी साधु को लेना चाहिए या नहीं?"

तब ठाकुर बोले—"कलाल के घर का पानी तो साधु को नहीं लेना चाहिए।"

तब स्वामीजी बोले—"इनको पूछें, ये लेते हैं या नहीं?"

तब आचार्य रुघनाथजी वहां से उठकर चले गए।

२६७. ऐसा अर्थ क्यों लिखा जाए?

गूंदोच की घटना है। आचार्य रुघनाथजी स्वामीजी से चर्चा कर रहे थे। उन्होंने आवश्यक सूत्र की पुस्तक खोल कर स्वामीजी को बताया—"यह देखो! इसमें लिखा है—कायोत्सर्ग का भंग करके भी बिल्ली से चूहे को बचाना चाहिए।"

तब स्वामीजी ने जब वे उनके सम्प्रदाय में थे, तब सम्वत् १८११ में लिखी हुई आवश्यक की प्रति निकाल कर उन्हें बताई और उन्होंने कहा—"यह प्रति मैंने आपकी प्रति को देखकर लिखी है। इसमें तो वह अर्थ लिखा हुआ नहीं है।"

तब आचार्य रुघनाथजी बोले—हमने तो दूसरों की प्रति को देखकर यह अर्थ लिखा है।"

तब स्वामीजी बोले—"ऐसा झूठा अर्थ क्यों लिखना चाहिए?"

तब "पोतियाबन्ध" साध्वियां बोलीं—"हमारे पात्र से गर्म जल लो और उन पन्नों को जल में भिगो कर गला दो।" तब आचार्य रुघनाथजी मौन रहे। जिन-मार्ग का उद्योत हुआ। बहुत लोगों ने तत्त्व को समझा।

२६८. मूल तत्त्व तो समझ में आ गया

कोई आदमी स्वामीजी से चर्चा कर रहा था। मूल तत्त्व तो उसकी समझ में आ गया, फिर भी वह बोला—"आप कहते हैं वह बात तो ठीक है, पर कुछ विषय पूरी तरह से समझ में नहीं आते।"

तब स्वामीजी ने दृष्टान्त दिया—दस सेर चावलों का चरु चुल्हे पर चढाया। ऊपर के चावलों को सीझा हुआ देख कर सयाना आदमी जान लेता है कि भीतर के चावल भी सीझ गए हैं और मूर्ख आदमी सोचता है—ऊपर के चावल तो सीझ गए पर भीतर के चावल अभी सीझे नहीं हैं—यह सोचकर भीतर हाथ डालता है, तो उसका हाथ जल जाता है।

इसी प्रकार चतुर आदमी मूल तत्त्व को समझ लेने पर जान लेता है कि दूसरे तत्त्व भी सही हैं।

२६९. सुनने मात्र से रोग नहीं चला जाता

स्वामीजी से चर्चा करते समय न्याय-निर्णय की बात बताने पर भी किसी ने बात नहीं मानी, तब स्वामीजी बोले—"किसी रोगी को वैद्य औषध पिलाने लगा। उसने कहा—"यह औषध पी लो, तुम्हारा रोग चला जाएगा।"

तब रोगी बोला—मुंह में तो डालूंगा नहीं, मेरी पीठ पर उंडेल दो। यदि औषध अच्छा है, तो मेरी पीठ पर उंडेलने से ही रोग चला जाएगा।

तब वैद्य बोला—पीए बिना तो रोग नहीं जाएगा।

इसी प्रकार सूत्र और साधु का वचन मानने से मिथ्यात्वरूपी रोग जा सकता है पर उसे माने बिना, केवल सुनने मात्र से वह रोग नहीं चला जाता।

२७०. यह वही है

सम्वत् १८५४ की घटना है। स्वामीजी ने चन्दू और वीरां—इन दोनों साध्वियों को संघ से पृथक् कर दिया।

पीपाड़ में ऐसा प्रसंग बना—वे दोनों साध्वियां जहां हेमजी स्वामी विराज रहे थे, उस दुकान पर आकर बहुत सारे अन्य सम्प्रदाय के श्रावकों के सुनते हुए संघ के साधुओं और साध्वियों का अवर्णवाद बोलने लगीं। तब लोग बोले—"देखो! ये भीखणजी के संघ में थीं और अब ये उनके संघ के अवर्णवाद बोल रही हैं।

तब स्वामीजी सामने की दुकान में विराज रहे थे, वहां से उठ कर आए और कहा—"यह चन्दू जो कहती है, उसे तुम सच मानते हो, तो जानते हो यह पहले आचार्य रुघनाथजी के सम्प्रदाय में फत्तुजी की चेली थी। उस समय फत्तुजी के सिर पर कोई दोष का आरोप आया। तब यह चन्दू इस प्रकार कहती थी—'यदि सूर्य में कोई कलंक हो, तो मेरी गुरुणी में कोई दोष होगा।' और बाद में इसी चन्दू ने किसी बहिन की ओढनी मांग कर ली और अपनी गुरुणी को उसे ओढा कर नई दीक्षा दिलाई। यह वही है।"

स्वामीजी का यह वचन सुन कर लोग चारों ओर बिखर गए। चन्दूजी भी चलती बनी। उसके पिता विजयचन्द लूनावत तथा अन्य ज्ञातियों ने भी उसे अयोग्य समझ लिया।

२७१. परिचित स्थान छूटता नहीं

कुछ लोगों के स्वामीजी का सिद्धान्त समझ में आ गया, फिर भी वे अमुक सम्प्रदाय का संग नहीं छोड़ रहे थे। इस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—बैलगाड़ी के

दो पहियों के आने-जाने की लीक के बीच में किसी खरगोश ने अपना घर बसाया। बैल-गाड़ियों के आते-जाते समय उस खरगोश के सिर पर गाड़ी के नीचे बान्धी हुई रस्सी की चोट लगती। फिर भी वह उस स्थान को नहीं छोड़ता था।

इतने में दूसरे खरगोश ने कहा—"यहां तुम्हारे सिर पर चोट लगती है, इसलिए इस स्थान को तुम छोड़ दो।"

वहां रहने वाला खरगोश बोला—परिचित स्थान छूटता नहीं है।

इसी प्रकार सच्चे सिद्धांत का रहस्य समझ में आ गया, फिर भी पूर्व परिचित कुगुरु का संग छूट नहीं पाता।

२७२. वह हिंसा का कामी हो चुका

सम्वत् १८५५ की घटना है। पाली में हेमजी स्वामी टीकमजी से चर्चा कर रहे थे, तब एक महेश्वरी बोला—"सपेरे को चार पैसा देकर उससे किसी सर्प को मुक्त कराया, उसमें क्या हुआ?"

तब टीकमजी बोला—"अच्छा धर्म हुआ।"

तब वह महेश्वरी बोला—"वह सर्प सीधा चूहों के बिल में गया।"

तब टीकमजी बोला—"बिल में चूहा यदि नहीं होगा तो?"

यह बात हेमजी स्वामी ने स्वामीजी के पास आकर कही।

तब स्वामीजी बोले—"किसी ने कौए पर गोली चलाई। कौआ उड़ गया। कौए का आयुष्य शेष था, पर गोली चलाने वाले को तो पाप लग चुका।

इसी प्रकार सांप को मुक्त कराया और वह चूहों के बिल में गया। यदि बिल में चूहा नहीं है तो वह उसका भाग्य है, पर सर्प को मुक्त कराने वाला तो हिंसा का कामी हो चुका।"

भीखणजी स्वामी ने हेमजी स्वामी को कहा—"तुम्हें इस प्रकार का उत्तर देना था।"

२७३. व्याख्यान कण्ठस्थ कर

हेमजी स्वामी ने दीक्षा लेकर दशवैकालिक कंठस्थ किया; उसके बाद उत्तराध्ययन सूत्र कंठस्थ करने लगे। तब स्वामीजी बोले—"तू अच्छा गा सकता है; इसलिए व्याख्यान कंठस्थ कर। वास्तव में उपकार तो व्याख्यान से होता है।"

ऐसी थी उस महापुरुष की उपकार की नीत।

२७४. हमारे पास व्याख्यान कम थे

भारमलजी स्वामी ने हेमजी से कहा—"हम बाईस टोला से अलग हुए, तब कुछ वर्षों तक चतुर्मास में अंजना और देवकी का व्याख्यान तीन-तीर बार वांचते, क्योंकि उस समय हमारे पास व्याख्यान बहुत कम थे।"

२७५. नदी के दो तटों पर

सम्वत् १८२४ की घटना है। भीखणजी स्वामी ने चतुर्मास कंटालिया में किया और भारमलजी स्वामी का चतुर्मास बगड़ी में कराया। दोनों के बीच में नदी

बहती थी। स्वामीजी द्वारा पहले ही कहा हुआ था, नदी के इस तट पर स्वामीजी पधार जाते और उस तट पर भारमलजी स्वामी जाते। परस्पर बातें कर, हेतु, युक्ति, सीख और सुमति का शिक्षण और भली भांति दर्शन दे कर स्वामीजी वापस कंटालिया पधार जाते तथा भारीमालजी स्वामी बगड़ी पधार जाते। यह बात भारमलजी स्वामी सुनाते थे।

२७६. हम ऐसा नहीं जानते

भीखणजी स्वामी ने हेमजी स्वामी से कहा—"हमने उन्हें (अपने पूर्व गुरु को) छोड़ा, तब पांच वर्ष तक हमें पूरा आहार भी नहीं मिला। घी और चिकनाई की तो बात ही कहां? वस्त्र के रूप में कभी-कभी "वासती" मिलता; उसके थान की कीमत सवा रुपया थी। भारमल कहता—'आप इसका उत्तरीय (पछेवड़ी या चादर) करें।' तब मैं कहता—'एक चोलपट्टा (अधोवस्त्र) तुम करो और एक मेरे लिए करो।'

"हम सब साधु गोचरी में आहार पानी-लाकर जंगल में चले जाते। आहार-पानी को वृक्षों की छांह में रख कर हम सूर्य का आतप लेते। शाम को गांव में लौट आते।"

इस प्रकार हम कष्ट सहते थे। कर्म-बन्धन को तोड़ते थे।

हम ऐसा नहीं जानते थे कि हमारा मार्ग जमेगा और हमारे संघ में इस प्रकार स्त्री-पुरुष दीक्षा लेंगे और इस प्रकार श्रावक-श्राविका होंगे।

हमने सोचा था आत्मा का कार्य सिद्ध करेंगे, अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए प्राण न्योछावर कर देंगे। यह सोचकर हम तपस्या करते थे।

बाद में कोई-कोई व्यक्ति हमारे सिद्धान्तों में विश्वास करने लगा, तत्त्व को समझने लगा।

तब थिरपाल, फतैचन्द आदि हमारे साथ वाले साधुओं ने कहा—लगता है लोग तत्त्व को समझेंगे फिर आप इतनी कठोर तपस्या क्यों करते हैं? तपस्या करने के लिए तो हम हैं ही। आप बुद्धिमान हैं, आप धर्म का उद्योत करें, लोगों को तत्त्व समझायें। उसके बाद हम विशेष पुरुषार्थ करने लगे। हमने आचार और अनुकंपा की चौपइयां रची, व्रत अव्रत की चौपई रची। बहुत लोगों को तत्त्व समझाया फिर व्याख्यानों की रचना की।

२७७. तुम्हारी लेखनी बनाने का त्याग है

बचपन की बात है, भारमलजी स्वामी प्रतिलिपि करते थे, तब बार-बार लेखनी बनवाते[1] रहते थे।

एक दिन भीखणजी स्वामी बोले—"तुम्हारी लेखनी बनाने का त्याग है।"

तब वे अपने आप बनाने लगे। ऐसा करते-करते वे लेखनी बनाने की कला में प्रवीण हो गए।

---

१. बरू की लेखनी चाकू से छील कर तैयार की जाती है उसका मुंह घिसता है, तब उसे बार-बार छील कर बनाना होता है।

२७८. चलो, झंझट मिटा

किसी के बिमारी होती है, तब वह हाय ! त्राहि करने लग जाता है। तब स्वामीजी बोले—"ऐसा नहीं करना चाहिए। बीमारी होने पर दृढ़ रहना चाहिए।"

"जैसे किसी के सिर पर ऋण था। वह ऋण चुकाना नहीं चाहता था, किन्तु ऋणदाता ने शक्ति-प्रयोग से अपनी पूंजी वापस ले ली। तब मूर्ख आदमी तो विलाप करता है और समझदार होता है, वह सोचता है—'चलो, मेरा ऋण चुका। बाद में ही देना पड़ता, तो पहले ही झंझट मिटा; सिर का ऋण उतर गया।'

इसी प्रकार बिमारी होने पर जो सयाना होता है, वह सोचता है—'बंधे हुए कर्म भोग लिए; चलो झंझट समाप्त हुआ।' यह सोच वह विलाप नहीं करता।

२७९. यह सम्यग्दृष्टि देवता का युग है

स्वामीनाथ व्याख्यान में भैरव और शीतला को मानने का निषेध करते थे; तब हेमजी स्वामी बोले— "आप देवता को मानने का निषेध करते हैं, तो वे उपद्रव खड़ा कर देंगे।

तब स्वामीजी बोले—"यह सम्यग्दृष्टि देवता का युग है। सो कोई उपद्रव करता है, तो सम्यग्दृष्टि इन्द्र उस पर वज्र प्रहार कर देता है। इसलिए वे डरते हुए साधुओं को कष्ट नहीं देते।

२८०. ऐसा है साधु का मार्ग

स्वामीजी बोले—"यदि मृत मनुष्य किसी के काम आए तो साधु सांसारिक दृष्टि से किसी गृहस्थ के काम आए। साधु के पास कोई व्यक्ति आया। वह वहां पांच रुपये भूल गया। कोई दूसरा उन्हें उठा ले गया। साधु जानता है—'वे रुपए 'क' के हैं और 'ख' उन्हें ले गया। 'क' आकर पूछता है—'यहीं मेरे रुपए रह गए; उन्हें कौन ले गया ?' साधु उसे नहीं बताता कि 'ख' ले गया। क्योंकि उनकी केवल धर्म सुनाने की ही साझेदारी है। बाकी सावद्य कार्यों की दृष्टि से साधु गृहस्थ के कोई काम नहीं आता। ऐसा है साधु का मार्ग !"

२८१. इसमें कोई दोष नहीं

भीखणजी स्वामी गृहस्थ के घर से कुछ समय के लिए मांग कर लाई हुई सूई, कैंची, छूरी को एक रात या अनेक रात तक अपनी निश्रा में रखते थे।

तब अन्य संप्रदाय के साधु बोले—"साधुओं को रात्रि के समय सूई नहीं रखनी चाहिए। छूरी और कैंची भी रात्रि को नहीं रखनी चाहिए।

तब स्वामीजी बोले—"पट्ट में लोहे की कीलें रहती हैं तथा शंख, पत्थर और दवा, चंदन आदि घिसने के पत्थर या खरल—ये सब मांग कर लाई हुई वस्तुएं रात को रखी जाती हैं। इसी प्रकार लोहे का हमामदस्ता आदि गृहस्थ के घर से कुछ समय के लिए मांग कर लाई हुई वस्तुएं भी रात को रखी जाती हैं; इसमें कोई दोष नहीं है तो फिर सूई, कैंची, छूरी भी गृहस्थ के घर से कुछ समय के लिए मांग कर लाई हुई यदि रात्रि को रखी जाती है, तो उसमें कुछ दोष नहीं है।

२८२. तो फिर अनशन करना होगा

अमुक संप्रदाय के साधु बोले—"सूई टूट जाने पर साधु को तेले का प्रायश्चित्त आता है।"

तब स्वामीजी बोले—तुम्हारे अनुसार बाजोट टूट जाए तो फिर अनशन करना होगा।

२८३. मृत्यु के गीत

अमुक संप्रदाय के साधु बोले—"भीखणजी आचार की गीतिकाएं गाते हैं, तब लगता है कि वे मृत्यु के गीत गाते हैं।"

तब स्वामीजी बोले—"मृत्यु के गीत बिगड़े हुए लोगों के गाए जाते हैं; जो शुद्ध रीति के अनुसार चलते हैं, उनके·········नहीं गाए जाते।"

२८४. घर लूट लिया और ऊपर से दंड

पीपाड़ की घटना है। स्वामीजी ने एक गाथा गाई—"अचित्त वस्तु को जो खरीदवा कर लेते हैं, उनकी समिति और गुप्ति खण्डित हो जाती है। पांचों ही महाव्रत भग्न हो जाते हैं और चातुर्मासिक प्रायश्चित्त प्राप्त होता है। ऐसा आचरण करने वाले को साधु मत जानो।"

यह गाथा सुन मौजीरामजी बोरा बोला—"ओ जशु ! यहां आ देख, घर तो लूट लिया और फिर ऊपर से दंड और थोप दिया। इसी प्रकार भीखणजी पांचों महाव्रतों का भंग हो गया ऐसा कहते हैं तथा ऊपर से चातुर्मासिक प्रायश्चित्त और थोपते हैं।"

तब स्वामीजी बोले—"पांच महाव्रत का भंग हो जाने के बाद चातुर्मासिक प्रायश्चित्त नहीं बतलाया गया है, किन्तु यहां यह बतलाया गया है कि पांच महाव्रतों का उतना भंग होता है, जितने भंग की शुद्धि के लिए चातुर्मासिक प्रायश्चित्त प्राप्त होता है।" यह कह कर उन्हें समझा दिया।

२८५ केवल वर्तमान में मौन

कुछ कहते हैं—"सावद्य दान के विषय में भगवान ने मौन रखने को कहा है। इसलिए केवल वर्तमान काल में ही नहीं, सदैव मौन रखना चाहिए, पुण्य या पाप नहीं कहना चाहिए।" उस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"तीन जनों की ऐसी मान्यता थी—एक व्यक्ति सावद्य दान देने में पुण्य मानता था; दूसरा उसमें मिश्र धर्म मानता था और तीसरा उसमें पाप मानता था। इन तीनों ने एक संकल्प किया—'यह सन्देह मिट जाए, तो घर में रहने का त्याग है।" अब इस सन्देह को दूर करने के लिए वे राज्य-दरबार में तो नहीं जाएंगे। इसे दूर करने के लिए तो साधुओं के पास ही आएंगे। साधुओं को पूछने पर कहेंगे—'हमारे तो मौन है।' फिर उनका संदेह कैसे मिटेगा? इस दृष्टि से मौन वर्तमान काल में (सावद्य दान देने के प्रसंग में ही) रखना चाहिए। सूत्रकृतांग (१।११; २।५) के अर्थ में ऐसे प्रसंग में मौन रखने को कहा है। और उपदेश-काल के संदर्भ में भगवती सूत्र (८।६) में भगवान ने गौतम से कहा—'तथारूप असंयती

को सजीव, अजीव; शुद्ध, अशुद्ध, दान देने में एकांत पाप है।' इस न्याय से उपदेश काल में 'जैसा फल होता है, वैसा' बताकर, उन्हें समझा (उनके संकल्पानुसार) दीक्षा दे देनी चाहिए।

२८६. सामायिक को धक्का देकर थोड़े ही 'पराते' (गिराते) हैं?

कुछ कहते हैं—"साधु सामायिक को 'पराते' नहीं—समाप्त नहीं कराते, तो उसे पूरा कराने का पाठ क्यों सिखलाते हैं?"

तब स्वामीजी बोले—"साधु सामायिक को 'पराते' नहीं, सो क्या उसे धक्का देकर थोड़ा ही गिराते (पराते) हैं? एक मुहूर्त्त के लिए सामायिक किया और एक मुहूर्त्त का काल पूरा होने पर सामायिक अपने आप पूरा हो गया। उसे 'पारता' (समाप्त करता) है, वह तो दोषों और अतिचारों की आलोचना करता है। वह आलोचना भगवान की आज्ञा में हैं। इसलिए 'पारने' का पाठ सिखलाते हैं; किन्तु वर्तमान काल में उसे 'पराते' नहीं हैं; क्योंकि सामायिक पूरा करने पर वह उठकर चला जाएगा। इस दृष्टि से उसे पूरा नहीं कराते। परन्तु दोष की आलोचना कराने और उसका पाठ सिखाने में कोई आपत्ति नहीं है।

२८७. यही भाव से भक्ति करेगा

एक व्यक्ति स्वामीजी से चर्चा करते समय अंट-संट बोलता था। तब स्वामीजी से किसी ने कहा—"महाराज! यह अंट-संट बोलता है, उससे आप क्या चर्चा करते हैं?"

स्वामीजी बोले—"छोटा बच्चा जब तक नहीं समझता है, तब तक वह अपने पिता की मूंछ को खींचता है और उसकी पगड़ी को भी उतार फेंकता है। किन्तु समझ आने के बाद वही अपने पिता की सेवा-चाकरी करता है। इसी प्रकार यह जब तक साधुओं के गुणों को नहीं पहिचानता है, तब तक अंट-संट बोलता है। गुण की पहिचान होने के बाद यही भाव से भक्ति करेगा।

२८८. अभी पंचांग का भाव तेज हैं

हम रात्री को व्याख्यान देते और अमुक संप्रदाय के साधु भी रात्री को व्याख्यान देते। हम बाजार में ठहरते; और देखा-देखी वे भी बाजार में ठहरते। इस प्रकार देखा-देखी काम करते हैं, पर शुद्ध मान्यता और आचार के बिना काम सिद्ध नहीं होता। इस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"एक साहूकार था। वह स्वयं समझदार नहीं था। वह पड़ोसी की देखा-देखी व्यापार करता था। पड़ोसी जो वस्तु खरीदता, उसे वह भी खरीद लेता। जब पड़ोसी ने सोचा—'यह मेरी देखा-देखी कर रहा है या इसमें स्वयं की समझ है?' तब पड़ोसी ने अपने बेटे से कहा—'अभी पंचांगों के भावों में तेजी है; इसलिए परदेशों से पंचांग हमें खरीद लेने हैं। थोड़े दिनों में दुगुने दाम उठ जाएंगे।'

साहूकार ने यह बात सुनी और वह परदेश में जा, नए और पुराने पंचांगों को खरीद लाया। उसकी पूंजी नष्ट हो गई।

इसी प्रकार अमुक संप्रदाय के साधु भी साधुओं की देखा-देखी काम करते हैं

पर शुद्ध मान्यता और आचार के बिना कोई काम सिद्ध नहीं होता।

२८९. यह दिवाला कैसे पूरा होगा ?

किसी ने कहा—वेषधारी साधु भी एक मासिक उपवास आदि तपस्या करते हैं; लोच कराते हैं, धोवन और गरम पानी पीते हैं। क्या उनके यह क्रिया व्यर्थ ही जाएगी ?

तब स्वामीजी बोले—"किसी ने लाख रुपया का दिवाला निकाला। उसके बाद एक पैसे का तेल खरीद कर लिया और उसका पैसा चुका दिया। वह 'एक पैसे' का साहूकार होगा। एक रुपए का गेहूं लाया और रुपया चुका दिया; वह 'एक रुपए' का साहूकार होगा। इस प्रकार पैसे व रुपए का साहूकार हुआ, पर लाख रुपए का दिवाला निकाला, उस दृष्टि से वह साहूकार नहीं।"

इसी प्रकार पांच महाव्रतों को स्वीकार कर जो निरन्तर साधु के निमित्त बने हुए स्थान में रहते हैं, इस प्रकार के और भी अनेक दोषों का सेवन करते हैं, उनका प्रायश्चित्त नहीं करते, यह बड़ा दिवाला है। यह लोच और तपस्या के द्वारा कहां पूरा होगा ?

एक मासिक उपवास की तपस्या की जाती है और उसकी भलीभांति पालना की जाती है। उस तपस्या की दृष्टि से वह साहूकार है, पर पांच महाव्रतों में जो दोष लगाया गया, वह दिवाला उस तपस्या से कैसे पूरा होगा ?

२९०. दान मुख्यतः कायिक प्रयोग है

किसी ने कहा—"कोई मुख पर वस्त्र आदि दिए बिना बोलकर साधु को दान देता है, तो वह लेता है। और दाता का अनाज के एक दाने पर पैर टिक जाता है, तो उसके हाथ से साधु दान नहीं लेता और उसके घर से उस दिन के लिए भिक्षा अग्राह्य हो जाती है।"

तब स्वामीजी बोले—"साधु को कोई दान देता है, उसमें मुख्यतः कायिक प्रयोग होता है। चलते, उठते, बैठते, कायिक प्रयोग द्वारा अयतना (हिंसा) करके कोई साधु को दान देता है, दान देते समय कोई फूंक मार देता है और साधु ने उसके हाथ से भिक्षा लेनी स्वीकार कर ली है, तो उसके घर से उस दिन के लिए भिक्षा अग्राह्य हो जाती है। और यदि साधु ने उसके हाथ से भिक्षा लेना स्वीकार न किया हो और उठते समय उसने अयतना (हिंसा) की हो, तो उसी के हाथ से भिक्षा अग्राह्य होती है।

मुंह पर वस्त्र आदि दिए बिना बोलना वाचिक प्रयोग है। इस प्रकार बोलने से अयतना (हिंसा) होती है, पर उससे उस घर की तथा उस दाता के हाथ से भिक्षा लेना अग्राह्य नहीं है। औपपातिक सूत्र में एक प्रकार का अभिग्रह है कि कोई दाता निंदा करता हुआ भिक्षा दे, तभी वह उसके हाथ से ली जा सकती है। तो जो निन्दा करता है, गाली बकता है, वह कौनसी यतना करेगा ? इस दृष्टि से वाचिक अयतना के कारण दाता के हाथ से भिक्षा अग्राह्य नहीं होती। इसलिए उसके हाथ से भिक्षा लेने में कोई दोष नहीं हैं।

२९१. घी सहित घाट वापस ले ली

संवत् १८५५ आषाढ़ मास की घटना है। स्वामीजी बहुत साधुओं और साध्वियों के साथ विराज रहे थे। साध्वी अजबूजी गोचरी के लिए गई। किसी ने घी का दान दिया। दूसरे घर में एक बहिन ने 'घाट' (दलिया) का दान देकर पूछा—"तुम किस टोले की साध्वी हो?"

तब साध्वी अजबूजी ने कहा—"हम भीखणजी स्वामी के टोले की हैं।"

तब वह बहिन देती हुई बोली—"पिछली बार भी तुम मेरे घर से रोटी ले गई थी। (आज फिर आ गई) मेरी 'घाट' मुझे वापस दे दो।" यह कहकर वह घाट वापस लेने लगी, तब तक एक व्रजवासिनी ने उसे बरजा—"हे कीकी! 'अतीत' (साधु) को दिया हुआ दान वापस मत ले।

तब वह बोली—कुत्तों को खिला दूंगी, पर इनके पास से तो वापस ले लूंगी। यह कहकर उसने जबरदस्ती वह घाट घी-सहित वापस ले ली।

अजबूजी ने स्वामीजी के पास आकर यह सारी घटना सुनाई।

तब स्वामीजी बहुत विमर्श कर बोले—"यह कलिकाल है। इसमें ऐसा हो सकता है। कुछ लोग दान नहीं देते, कुछ लोग देने से इन्कार कर देते हैं और कुछ लोग जानबूझ कर अशुद्ध (जिसके हाथ से भिक्षा ग्राह्य नहीं होता वैसा) हो जाते हैं। परन्तु दान देने के बाद वापस लेने की बात पहले नहीं सुनी। यह तो कोई नई बात हुई है।"

व्रजवासिनी ने इस बात को गांव में फैला दिया।

उस (कीकी) के पति को लोग कहने लगे—"दूकान पर तो तुम कमाते हो, और घर में तुम्हारी स्त्री कमा रही है।" यह सुनकर वह भी मन में लज्जित होता है। कुछ दिनों बाद 'रक्षा-पूर्णिमा' के दिन अकस्मात् उसका पुत्र चल बसा। और कुछ दिनों बाद 'कीकी' का पति भी मर गया। तब शोभजी श्रावक ने एक तुक्का रचा—

"तू बादरशाह की पुत्री है। कीकी तेरा नाम है।
तूने घी सहित घाट वापस ले ली, पात्र को खाली कर दिया।"

पछतावा

कुछ समय बाद उसी बहिन (कीकी) के घर साधु गोचरी गए। वह साधुओं को दान देने लगी। साधुओं ने पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है?"

तब वह बोली—"मैं वही पापिनी कीकी हूं, जिसने साध्वियों के पात्र से घाट वापस ली थी। कोई तो पाप का फल परभव में देखता है। मैंने तो वह इसी जन्म में देख लिया।" यह कहकर वह पछताने लगी।

२९२. सब घरों में गोचरी क्यों नहीं जाते?

संवत् १८५६ नाथद्वारा की घटना है। हेमजी स्वामी ने स्वामीजी से कहा—अपन श्रावकों के घर गोचरी के लिए जाते हैं। अनुक्रम से जो घर आते हैं, वहां गोचरी के लिए नहीं जाते (सामुदायिक गोचरी नहीं करते) इसका क्या कारण है?

तब स्वामीजी बोले—"यहां लोगों में द्वेष भावना बहुत है। इसलिए क्रम वार

गोचरी नहीं करते।"

तब हेमजी स्वामी बोले—"आप आज्ञा दें, तो मैं जाऊं।"

तब स्वामीजी बोले—"भले ही जाओ।"

तब हेमजी स्वामी मोहनगढ में गोचरी करते-करते किसी एक घर में गोचरी के लिए गए और पूछा—"क्या आहार-पानी बना हुआ है ?

तब बहिन बोली--"रोटी नमक पर पड़ी है।"

तब हेमजी स्वामी दूसरे माले पर गोचरी के लिए गए। उस घर की बहिन अंट-संट बोली, बहुत झगड़ा किया। आखिर रोटी दे दी। इसमें काफी समय लग गया। तब नीचे के घर वाली बहिन ने सोचा—ये साधु हमारे ही सम्प्रदाय के लगते हैं। हेमजी स्वामी वापस नीचे आए, तब वह बहिन बोली—"आप पधारें और आहार का दान लें। यह कहकर उसने दान देने के लिए रोटी हाथ में ली।"

तब हेमजी स्वामी ने कहा—"बहिन ! तू कहती थी, रोटी नमक पर पड़ी है।"

तब वह बोली—"मैंने आपको तेरापन्थी साधु जाना था; इसलिए वह बात कही।"

तब हेमजी बोले—"हम हैं तो तेरापन्थी ही। तुम्हारा मन हो तो दो।"

तब वह बड़ी मुश्किल से बिना मन बोली—"लो।"

इसके बाद हेमजी स्वामी अगले घर में गए। आहार-पानी के बारे में पूछा। तब वह बोली—"मुझे तो तेरापन्थी को रोटी देने का त्याग है।

तब हेमजी स्वामी बोले—"रोटी देने का त्याग है। तो पानी हो तो पानी का दान दे दो। तब उसने उठकर पानी का दान दिया।

हेमजी स्वामी ने स्थान पर आकर सारे समाचार स्वामीजी को सुनाए। स्वामीजी सुन कर बहुत प्रसन्न हुए।

२९३. जैसा गुरु वैसा देव और धर्म

गुरु का मूल्य कितना होता है, इस पर स्वामीजी ने तराजू की दण्डी का दृष्टांत दिया—"जैसे तराजू की दण्डी के तीन छिद्र होते हैं, बीच के छिद्र में यदि फर्क होता है तो तराजू का सन्तुलन बिगड़ जाता है, और बीच का सन्तुलन ठीक होता है तो उसका सन्तुलन ठीक हो जाता है। वैसे ही देव, गुरु और धर्म—इन तीनों के बीच में गुरु हैं। यदि गुरु अच्छे होते हैं, तो देव भी अच्छे होते हैं और वे अच्छे धर्म को बताते हैं। और यदि गुरु खराब होते हैं तो देव में भी अन्तर ला देते हैं और धर्म में भी अन्तर लाते हैं—अपनी-अपनी दृष्टि का अन्तर आ जाता है।

यदि गुरु ब्राह्मण होता है तो शिव को देव बताता है और धर्म बताता है—ब्रह्मभोज।

यदि गुरु भोपा होता है तो धर्मराज को देव बताता है और धर्म बताता है—भोपों को भोजन कराओ और दक्षिणा दो।

यदि गुरु 'कामडिया' होता है तो रामदेवजी को देव बताता है और धर्म बताता

है—जम्मे की रात जगाओ और कामड़ी को भोजन कराओ।

यदि गुरु 'मुल्ला' होता है, तो वह 'अल्लाह' को देव बताता है और धर्म बताता है—हलाल करना।

यदि गुरु निर्ग्रन्थ मिलता है, तो वह असली अर्हत् को देव बताता है और धर्म बताता है—भगवान् की आज्ञा में।

इस दृष्टान्त के अनुसार जैसा गुरु मिलता है, वैसे ही देव और धर्म को वह बतलाता है।

२९४. हमें क्रिया से क्या मतलब

कोई अज्ञानी कहता है—"हम तो रजोहरण और मुखवस्त्रिका को वंदना करते हैं, हमें क्रिया से क्या मतलब ?"

इस पर स्वामीजी बोले—यदि रजोहरण को वंदना करने से कोई तरता है, तो रजोहरण तो ऊन से बनता है और ऊन भेड़ से पैदा होती है। यदि रजोहरण को वंदना करने से कोई तरता है, तो उसे भेड़ के पैर पकड़ना चाहिए—हे माता! तू धन्य है, तुमसे रजोहरण बनता है।

और यदि मुखवस्त्रिका को वन्दना करने से कोई तरता है, तो मुखवस्त्रिका होती है कपास से और कपास 'बनी' से बनता है। यदि मुखवस्त्रिका को वंदना करने से कोई तरता है, तो उसे 'बनी' को वंदना करनी चाहिए—तू धन्य है, तुमसे मुखवस्त्रिका होती है।

२९५. भीतर तांबा, ऊपर चांदी का झोल

कोई कहता है—"ये वेषधारी साधु दोष का सेवन करते हैं, फिर भी गृहस्थ की अपेक्षा तो अच्छे हैं।" उस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"एक साहूकार की दुकान में सवेरे कोई पैसा ले कर आया और कहा—शाहजी! पैसे का गुड़ है?' तब दुकानदार ने उस पैसे को नमस्कार कर उसे ले लिया। उसने सोचा—'सवेरे-सवेरे तांबे के सिक्के से व्यवसाय का प्रारम्भ हुआ है।'

दूसरे दिन वह रुपया लेकर आया और कहा—शाहजी! रुपये की रेजगी है?" तब दुकानदार ने रुपये को नमस्कार कर उसे ले लिया। रेजगी गिन उसे दे दी। मन में प्रसन्न हुआ—"आज चांदी के सिक्के का दर्शन हुआ।"

तीसरे दिन वह खोटा रुपया लेकर आया और बोला—'शाहजी! रुपये की रेजगी है?' तब वह दुकानदार प्रसन्न होकर बोला—'मेरी दुकान पर कल वाला ही ग्राहक आया है। उसने रुपया हाथ में लेकर देखा, तो वह खोटा था। भीतर तांबा और ऊपर चांदी। वह उस रुपये को फेंक कर बोला—'सवेरे-सवेरे नकली रुपये का दर्शन हुआ।'

तब वह बोला—'शाहजी! आप नाराज क्यों हुए? परसों मैं पैसा लाया था, तब तुमने तांबे के सिक्के को नमस्कार किया था; कल मैं रुपया लाया था, तब तुमने चांदी के सिक्के को नमस्कार किया था; और इसमें तो तांबा और चांदी दोनों हैं, इसलिए इसे तुम दो बार नमस्कार करो।'

तब वह बोला—'रे मूर्ख ! परसों तो अकेला तांबा था, वह ठीक है। कल अकेली चांदी थी, वह और अधिक ठीक है। वे दोनों अलग-अलग थे। इसलिए नकली नहीं थे। पर इसमें भीतर तांबा और ऊपर चांदी का झोल है; इसलिए यह खोटा है। यह किसी काम का नहीं।

इस दृष्टांत के अनुसार पैसे के समान गृहस्थ श्रावक होता है, रुपये के समान साधु होता है और नकली रुपये के समान वेषधारी होता है, जिसका बाहरी वेष तो साधु का और भीतरी लक्षण गृहस्थ का। वह खोटे सिक्के जैसा होता है—वह न गृहस्थ में और न साधु में, किन्तु 'वघेरा' जैसा होता है। वह वंदना के योग्य नहीं होता। श्रावक प्रशंसा के योग्य और आराधक होता है। साधु भी प्रशंसा के योग्य और आराधक होता है। पर खोटे सिक्के के साथी वेषधारी आराधक नहीं हैं।

२९६. आप 'जी' क्यों कहते हो ?

किसी ने कहा—टोले वालों को वंदना करने पर वे वंदना की स्वीकृति में कहते हैं—'दया पालो और कुछ क्षमा-याचना करते हैं। तथा आप 'जी' कहते हैं, इसका कारण क्या है ?

तब स्वामीजी बोले—"नाथों को नमस्कार करते समय 'आदेश' कहा जाता है, तब स्वीकृति में वे कहते हैं 'आदि पुरुष को' वे स्वयं आदेश को नहीं झेलते; स्वयं में गुण नहीं है इसलिए जो 'आदेश' कहा, उसे 'आदि पुरुष' के प्रति समर्पित कर दिया।

गुसांइयों को नमस्कार करते समय 'नमो नारायण' कहा जाता है, तब वे स्वीकृति में कहते हैं 'नारायण'। इसका कारण यह है कि वे कहते हैं 'हममें कोई करामात नहीं है, नमस्कार नारायण को करो।'

वैष्णवों को नमस्कार करते समय कहा जाता है, 'राम राम' तब वे स्वीकृति में कहते हैं 'रामजी', उन्होंने भी नमस्कार को राम के प्रति समर्पित कर दिया, स्वयं नहीं झेला।

फकीरों को वंदना करते समय कहा जाता है—"सांई साहब", तब वे स्वीकृति में कहते हैं 'साहब', उसने भी नमस्कार 'साहिब' को समर्पित कर दिया।

यतियों को नमस्कार करते समय कहा जाता है, 'गुरांजी ! वंदना ! वे वंदना की स्वीकृति में कहते हैं 'धर्म लाभ'—'धर्म करोगे तो लाभ होगा; हमारे भरोसे मत रहना।'

टोले वाले को वंदना करते समय कहा जाता है—'क्षमा-याचना करता हूं स्वामी ! वंदना करता हूं स्वामी !' वे स्वीकृति में कहते हैं, 'दया पालो'—दया पालोगे तो निहाल हो जाओगे, पर हमें वंदना करने मात्र से तुम नहीं तरोगे। इसका तात्पर्य यह है, वे वंदना को स्वीकार नहीं करते। घर में माल नहीं है तो हुण्डी को कैसे स्वीकारेंगे ?

साधुओं को वंदना की जाती है, तब वे कहते हैं, 'जी ! तुम्हारी वंदना का हम अनुमोदन करते हैं; तुम्हें धर्म हो चुका।

कोई पूछता है—'जी कहना कहां से आया ?'

इसका उत्तर—'राजप्रश्नीय सूत्र का प्रसंग है। सूर्याभ देव ने भगवान महावीर को

वंदना की, तब भगवान ने छह वाक्य कहे—उसमें एक वाक्य है—'जीयमेयं सूरियाभा' इसका अर्थ है—'तुम वंदना करते हो, यह तुम्हारा 'जीत'—कल्प या आचार है।'

'कोई पूछता है—"जीय" शब्द सूत्र में हैं; आप फिर 'जी' एक ही अक्षर कैसे कहते हैं ?'

"इसका उत्तर—'जी' यह एक अक्षर 'जीय' शब्द का एक देश (अंश) है। देश के कहने में कोई दोष नहीं है। सूत्रों में 'वचन' के लिए कहीं तो पाठ 'वयण' आता है, और कहीं 'वय' आता है। यह भी वचन शब्द का वाची है। धर्मास्तिकाय के लिए कहीं तो 'धम्मत्थिकाय' पाठ आता है और कहीं 'धम्माधम्मे आगासे' अर्थात् केवल 'धम्म' शब्द का प्रयोग होता है। यह भी धर्मास्तिकाय का एक देश है। इसी प्रकार 'जिय' इस पाठ का 'जी' एक देश है। इसके प्रयोग में कोई दोष नहीं है।

२६७. सपूत और कपूत बेटे

स्वामीनाथ ने कहा—"धर्म तो दया में है।"

तब कुछ हिंसाधर्मी बोले—"दया-दया क्या पुकारते हो ? दया 'रांड' घूरे में पड़ी लौट रही है।"

तब स्वामीजी ने कहा—"दया तो 'माता' कही गई है। उत्तराध्ययन सूत्र (अ० २४) में आठ प्रवचन माताएं कही गई हैं। उनमें दया समाविष्ट है। जैसे किसी साहूकार ने आयुष्य पूरा किया। पीछे उसकी पत्नी रही। जो सपूत होता है, वह अपनी माता का यत्न करता है और कपूत होता है, वह अपनी माता के लिए अंट-संट बोलता है, माता को 'रंड्कार' की गाली बकता है।

इस प्रकार दया के पति तो भगवान थे; वे मुक्ति चले गए। पीछे जो साधु और श्रावक सपूत हैं, वे दया माता का यत्न करते हैं और जो तुम्हारे जैसे कपूत प्रगटे हैं वे उसके लिए रंड्कार की गाली का प्रयोग करते हैं।"

२६८. 'चौधराहट में तो खींचातान बहुत है'

साधुपन स्वीकार कर उसे नहीं पालते और साधु का नाम धराते हैं, इस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—'एक खरगोश के पीछे दो बघेरे दौड़े। खरगोश भाग कर अपनी खोह में घुस गया। आगे वहां लोमड़ी बैठी थी। उसने पूछा—तेरा सांस धोंकनी बन रहा है, तूं दौड़े-दौड़े क्यों आया ?

खरगोश चालाक था। वह बोला—'जंगल में जानवर इकट्ठे होकर मुझे चौधराहट दे रहे थे। पर मैं उसे स्वीकार नहीं करना चाहता था; इसलिए भाग कर यहां आ गया हूं।'

तब लोमड़ी बोली—'चौधराहट में तो बड़ा स्वाद है।'

तब खरगोश बोला—'तेरा मन हो तो तू उसे स्वीकार कर ले। मुझे तो नहीं चाहिए।'

तब लोमड़ी चौधराहट लेने बाहर निकली। बाहर दोनों बघेरे खड़े थे। उन्होंने उसके दोनों कान खींच लिए। तब लहूलुहान होकर वापस भीतर आई।

तब खरगोश ने पूछा—वापस क्यों आई ?

तब लोमड़ी बोली—'चौधराहट में खींचातान बहुत है। दोनों कान चले गए इसलिए वापस आई हूं।'

इसी प्रकार साधुपन स्वीकार कर उसे अच्छी तरह नहीं पालते, दोष लगाते हैं, प्रायश्चित्त नहीं करते और साधु का नाम धराते हैं, लोगों में पूजाते हैं, वे इहलोक और परलोक में लोमड़ी की भांति खराब होते हैं, नरक और निगोद में गोता लगाते हैं।

२९९. दिल दहल उठते हैं

किसी ने कहा—भीखणजी! जहां तुम जाते हो, वहां लोगों के दिल दहल जाते हैं।

तब स्वामीजी बोले—"गांव में मंत्रवादी आता है। वह कहता है—'सवेरे डायनों को गीले कांटों में जलाऊंगा।' तब डायनों के दिल दहल उठते हैं और उनके ज्ञातिजनों में भी आतंक छा जाता है, पर दूसरे लोग तो राजी होते हैं।

इसी प्रकार साधु जब गांव में आते हैं, तब जो वेषधारी और शिथिलाचारी होते हैं, उनके दिल दहल जाते हैं अथवा उनके श्रावक कांप उठते हैं। किन्तु जो धर्म प्रेमी होते हैं, वे तो बहुत राजी होते हैं। वे सोचते हैं—'व्याख्यान सुनेंगे, सुपात्र दान देंगे, ज्ञान सीखेंगे, साधुओं की सेवा करेंगे'—इस प्रकार वे प्रसन्न होते हैं।"

३००. पीला ही पीला दिखाई देता है

स्वामीजी से चर्चा करते समय कोई अंट-संट बोला—तुम्हारी श्रद्धा कपटपूर्ण है। आचार में बहुत प्रपंच है।

तब स्वामीजी बोले—हमारी मान्यता और आचार तो अच्छा है, पर तुम्हें ऐसा ही दिखाई देता है। अपनी आंखों में पीलिया होता है तब सब मनुष्य उसे पीले-पीले दिखाई देते हैं। वह लोगों से कहता है—आजकल गांव में पीलापन बहुत हो गया है। सब मनुष्य पीले ही पीले दिखाई देते हैं।

तब लोग बोले—मनुष्य तो सब अच्छे हैं, सुन्दर हैं। तुम्हारी आंख में पीलिया का रोग है, इसलिए तुम्हें सब पीले दिखाई देते हैं।

इस प्रकार मान्यता तो कपटपूर्ण अपनी है और गुरु स्वयं के अयोग्य हैं। यह बात दिखाई नहीं देती और साधुओं को अयोग्य बतलाता है और उनकी मान्यता को कपटपूर्ण कहता है।

३०१. तीन नौकाएं

अच्छे और बुरे गुरु पर स्वामीजी ने नौका का दृष्टांत दिया—तीन नौकाएं हैं—एक तो काष्ठ की अखंड नौका है। दूसरी काष्ठ की फूटी हुई नौका है और तीसरी पत्थर की नौका है।

अखंड नौका के समान साधु होता है जो स्वयं तरता है और दूसरों को तारता है। फूटी हुई नौका के समान वेषधारी होता है, जो स्वयं डूबता है और दूसरों को डुबोता है। पत्थर की नौका के समान तीन सौ तिरेसठ पाषंडी होते हैं। वे प्रत्यक्ष विरुद्ध दिखाई देते हैं।

समझदार आदमी प्रथमतः तो उन्हें मानता नहीं और कदाचित् गुरु किए हुए हों

तो भी उनको छोड़ना उसके लिए सरल है। फूटी नौका के समान वेषधारी होते हैं उन्हें छोड़ना कठिन होता है। कोई चतुर बुद्धिमान होता है वही उन्हें छोड़ सकता है।

३०२. वह क्या साधुपन पालेगा ?

भूखे मरते हुए रोटी के लिए साधु का वेश पहन लेते हैं। उन्हें कहा जाए कि साधुपन अच्छा पालना। इस विषय पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—पति के मरने पर उसकी स्त्री को रथी के बांध कर जलाते हैं और कहते हैं—सतीमाता! तेजरा (हर तीसरे दिन आने वाला ज्वर) दूर कर देना। वह क्या 'तेजरा' तोड़ेगी ? जो भूखे मरते हुए रोटी के लिए साधु का वेश पहनता है वह क्या साधुपन पालेगा ?

३०३. पकवान कड़वे बनाए

कुगुरु के पक्षपाती को साधु अच्छे नहीं लगते। इस विषय को समझाने के लिए स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—एक ज्वरग्रस्त आदमी किसी जीमनवार में भोजन करने गया। वह दूसरे लोगों से कहने लगा—पकवान बहुत कड़वे बनाए। तब लोग बोले—हमें तो अच्छे लगते हैं। तुझे कड़वे लगते हैं तो पता चलता है कि तुम्हारे शरीर में ज्वर है।

इसी प्रकार जिसमें मिथ्यात्वरूपी रोग होता है उसे साधु अच्छे नहीं लगते।

३०४. हम कार्तिक के ज्योतिषी हैं

किसी ने कहा—भीखणजी! तुमने अपनी रची हुई गीतिकाओं में वेशधारी साधुओं के चारित्र की पहचान दी है, सो तुम्हें उसका कैसे पता चला ?

तब स्वामीजी बोले—हम आषाढ़ महीने के ज्योतिषी नहीं हैं। हम कार्तिक महीने के ज्योतिषी हैं। जैसे आषाढ़ महीने का ज्योतिषी होता है, वह आगे कार्तिक में होने वाले अनाज का भाव बतलाता है।

इसी प्रकार हमने भविष्य की दृष्टि से नहीं कहा है।

कार्तिक महीने का ज्योतिषी जो भाव चलता है वही बताता है।

इसी प्रकार हमने जो वर्तमान का आचरण देखा, वही बतलाया है।

३०५. जो मिथ्यात्व रोग को मिटाना चाहता है

जो मिथ्यात्वरूपी रोग को मिटाना चाहता है, उसे तत्त्वज्ञान और आचार संबंधी गीतिकाएं अच्छी लगती हैं। इस विषय पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—जैसे कोई वैद्य कहता है, 'तेजरा' मिटाने के लिए गोली लो। जो कोई तेजरा मिटाना चाहता है उसे वह गोली बहुत अच्छी लगती है।

इसी प्रकार तत्त्वज्ञान और आचार संबंधी गीतिकाएं साधु और श्रावकों को तो प्रिय लगती ही हैं, किन्तु उसे विशेष प्रिय लगती है जो मिथ्यात्वरूपी रोग को नष्ट करना चाहता है।

३०६. निशाने पर चोट लगती है

मिथ्यात्व को मिटाने के लिए स्वामीजी हेतु, युक्ति और दृष्टांत देते हैं। तब किसी ने पूछा—आप इतने हेतु, युक्ति और दृष्टांत का प्रयोग क्यों करते हैं ?

तब स्वामीजी बोले— निशाने पर चोट लगती है। उसके बिना चोट कहां की जाए ?

इसी प्रकार मिथ्यात्व को नष्ट करने के लिए हम हेतु, युक्ति और दृष्टांत का प्रयोग करते हैं।

३०७. यह मार्ग कब तक चलेगा ?

किसी ने पूछा—"आपका ऐसा संकरा मार्ग कितने वर्षों तक चलेगा ?"

तब स्वामीजी बोले—"सिद्धांत और आचार में जब तक दृढता रहेगी, वस्त्र-पात्र आदि उपकरणों की मर्यादा का अतिक्रमण नहीं होगा; साधुओं के लिए (आधाकर्मी) स्थानक नहीं बनेंगे; तब तक मार्ग भली-भांति चलेगा।

साधु के निमित्त स्थानक बनने, वस्त्र और पात्र की मर्यादा का अतिक्रमण करने, विहार-कल्प का उल्लंघन कर एक स्थान पर रहने से शिथिलता आती है। जब तक मर्यादा के अनुसार चलते हैं; तब तक शिथिलता नहीं आती है।

३०८. केवल नाम का अन्तर है

आधाकर्मी स्थानक में रहते हैं और अपने आपको गृहत्यागी कहते हैं, इस पर स्वामीजी ने दृष्टांत दिया—"जिस प्रकार यति के उपाश्रय, मथेरन (महात्मा) के पोशाल (पाठशाला) फकीर के तकीया, भक्तों के अस्थल, फुटकर भक्तों के मढी, कनफड़ों के आसन, संन्यासी के मठ, रामस्नेहियों के रामद्वारा, जिसे कहीं-कहीं राम-मोहल्ला कहा जाता है, गृहस्थ के घर, सेठ के हवेली, गांव के ठाकुर के 'कोटड़ी' या 'रावला', राजा के महल या दरबार, साधुओं के स्थानक—इन सब में नाम का अन्तर हैं, वास्तव में तो सब के सब घर हैं।

"कहीं 'कस्सी' चली है, कहीं कुदाल चली है; किन्तु छह काय के जीवों की हिंसा तो वैसी की वैसी हुई है।"

३०९. वे बहुत खपते हैं

अमरसिंहजी के पूर्वज बोहतजी से किसी ने पूछा—'शीतलजी के साधुओं में क्या साधुपन है ?'

तब बोहतजी बोले—'उनमें कहां से आएगा, मैं अपने में भी नहीं मानता ?'

तब फिर पूछा—'क्या भीखणजी में साधुपन है ?'

तब बोहतजी ने कहा—'उनमें तो होना सम्भव है, क्योंकि वे बहुत खपते हैं।'

३१०. भीखणजी अच्छे साधु हैं

आचार्य जयमलजी पुर में व्याख्यान दे रहे थे। बहुत परिषद् के बीच किसी गृहस्थ ने पूछा— परिषद् के बीच मिश्र भाषा बोलने से महामोहनीय कर्म बंधता है, आप साफ-साफ बताएं, भीखणजी साधु हैं या असाधु ?

तब आचार्य जयमलजी बोले—'भीखणजी अच्छे साधु हैं, पर वे हमें 'वेषधारी' कहते हैं, इसलिए हम उन्हें निह्नव कहते हैं।'

३११. सराहना क्यों करते हैं ?

जेतारण में धीरो पोकरणा था। टोडरमलजी ने उससे कहा—'भीखणजी कहते हैं कि थोड़े दोष से साधुपन टूट जाता है। यदि इस प्रकार साधुपन टूट जाये, तो पार्श्वनाथ की दो सौ छह साध्वियां हाथ-पैर धोती थीं, आंखों में अंजन आंजती थीं, बच्चे-बच्चियों को खिलाती थीं, वे भी मर कर इन्द्र की इन्द्राणियां हुई और एकावतारी (एक जन्म के बाद मोक्ष जाने वाली) हुईं।

तब धीरजी पोकरणा ने कहा—'पूज्यजी ! अपनी साध्वियों की आंखों में अंजन अंजाओ, हाथ-पैर धुलाओ, और बच्चों-बच्चियों को खिलाने की अनुमति दो, जिससे वे भी एकावतारी हो जाएं।'

तब टोडरमलजी ने कहा—'रे मूर्ख ! हम ऐसा काम क्यों करेंगे ?'

तब धीरजी बोला—'यदि आप ऐसा काम नहीं करते हैं, तो उनकी सराहना क्यों करते हैं ?'

३१२. स्थापना क्यों करते हैं ?

एक बार टोडरमलजी ने धीरजी पोकरणा से कहा—'भीखणजी ने सूत्र के पाठ को उलट दिया। भगवती में कहा है कि साधु को अशुद्ध आहार देने से 'अल्प पाप और बहुत निर्जरा' होती है।'

तब धीरजी ने कहा—'पूज्यजी ! आप मेरे घर गोचरी आएं, मेरे कटोरदान में लड्डू हैं, वह कटोरदान गेहूं के ढेर में रखा हुआ है। उसे बाहर निकाल कर आपको लड्डू का दान दूंगा। मुझे भी 'अल्प पाप और बहुत निर्जरा' होगी।'

तब टोडरमलजी ने कहा—'रे मूर्ख ! हम क्यों लेंगे ?'

तब धीरजी ने कहा—'आप नहीं लेते हैं, तो फिर उसकी स्थापना क्यों करते हैं ?'

उपसंहार

इनमें से कुछ दृष्टांत स्वामीजी के मुख से सुने, कुछ दूसरों के पास सुने। उनके अनुसार ये हमने लिखाए। कुछ संक्षिप्त थे, उन्हें अनुमान और युक्ति के आधार पर विस्तृत किया और कुछ विस्तृत थे, उन्हें संक्षिप्त किया।, इस संकलन कार्य में कोई विरुद्ध बात कही गई हो तथा असत्य का प्रयोग हुआ हो, आगे-पीछे या कोई विपरीत कही गई हो, तो उसके लिये मैं अपने दुष्कृत की आलोचना करता हूं।

दूहा

१. संवत् १९०३, कार्तिक मास, शुक्ल पक्ष, त्रयोदशी और रविवार के दिन।
२. हेम, जीत आदि बारह साधु नाथद्वारा में चातुर्मासिक प्रवास कर रहे थे।
३. हेमराजजी स्वामी ने ये दृष्टांत लिखाए और युवाचार्य जीतमल ने ये लिखे। ये भिक्षु के दृष्टांत या संस्मरण आकर्षक और रस से परिपूर्ण हैं।
४. आचार्य भिक्षु औत्पत्तिकी बुद्धि (प्रतिभा) के धनी और गुणों के भंडार थे। उनके ये दृष्टांत हितकर हैं और श्रोता को सुख देने वाले हैं।

परिशिष्ट

१

हेम संस्मरण

हेम दृष्टांत

[हेमजी स्वामी घर में थका चरचा कीधी। जाब दीधा ते पोते मूंहढा सूं लिखाया, ते लिखिये छै—]

१. इतरी चरचा इ मौनै न आवै कांई ?

भेषधार्‌यां सूं पहिला बोलवा रा त्याग जद अमरसिंहजी रा थानक मैं जाय ऊभा। साधां पूछ्यौ—थे कठा रा ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—सरीयारी रा। इम कही त्यांनै चरचा पूछी—सामायक जीव के अजीव ?

जद ते साध बोल्यौ—भीखणजी रा श्रावकां सूं चरचा करवा री म्हारा गुरां री आज्ञा नहीं।

बिच मैं दूजी बात करनै थोड़ी वेला सूं हेम पूछ्यौ—थांरौ ओघौ जीव कै अजीव ?

जद ऊ बोल्यौ—ओघौ अजीव है। इतरी चरचा इ मोनै न आवै कांई ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—थे कहिता था भीखणजी रा श्रावकां सूं चरचा करवा री म्हारा गुरां री आज्ञा नहीं, तौ अबै आ ओघा री चरचा क्यूं बताई ? कै सोरी चरचा तौ बताय दीधी नै दोहरी चरचा न आवै जरै कहै—म्हारा गुरां री आज्ञा नहीं, इम कहि कष्ट करीनै उरहा आया।

२. नरक पिण अजीव जासी

सरीयारी मै टीकमजी नै पूछ्यौ—जीव मारै ते धर्म कै पाप ?

जद टीकमजी बोल्या—पाप।

वले पूछ्यौ—झूठ बोलै जिको धर्म कै पाप ?

जद टीकमजी बोल्या—पाप।

चोरी करै जिकौ धर्म कै पाप ?

फेर टीकमजी कह्यौ—पाप।

वले पूछ्यौ—मैथुन, परिग्रह सेवै जाव १८ पाप सेवै ते धर्म कै पाप ?

टीकमजी बोल्या—पाप।

जद वले हेमजी स्वामी पूछ्यौ—पाप जीव कै अजीव ?

टीकमजी कह्यौ—पाप तौ अजीव है।

जद हेमजी स्वामी कह्यौ—थांरै लेख अजीव जीव नै मारै, अजीव झूठ बोलै, अजीव चोरी करै, अजीव स्त्री सेवै, अजीव परिग्रह जाव १८ पाप सेवै, तौ नरक पिण अजीव जासी ?

जद टीकमजी बोल्या—भीखणजी यूं कहै नै म्हे यूं कहां। इम कहिता हुवा काम चलायौ।

३. म्हासूं चरचा कांई करौ

भारीमालजी स्वामी रै बावा रौ बेटौ भाई डूंगरसी नाम। ते पिण अमरसिंघजी रा टोळा मैं घर छोड्यौ। ते सरीयारी आयौ। आकार शरीर भारमलजी स्वामी रै उणियारै दीसै। हेमजी स्वामी चरचा पूछवा लागा। जद ते बोल्यौ—हूं तौ भारमलजी रौ भाई छूं। म्हांसूं चरचा कांई करौ।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—ठीक है था सूं न करां। उत्तम पुरुषां रा नाम सूं, सरणा सूं कष्ट न कीधौ।

४. कांई जाण नै बतायौ ?

पाली मै टीकमजी कनै चरचा करवा गया। थानक मै मकोड़ौ हालतौ देखी त्यांरौ साध 'सवाई' नामे ते बोल्यौ—हेमजी ! मकोड़ो-मकोड़ो·······

जद टीकमजी बोल्यौ—थांने मकोड़ौ बतायौ, इणनै कांई थयौ ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—म्हारौ पाप टळावा नै बतायौ कै मकोड़ा री मोहनी रे अर्थ बतायौ ?

जद टीकमजी बोल्यौ—थांरौ पाप टळावा नै रखे हेमजी नै पाप लागैला यूं जाणनै बतायौ।

जद हेमजी स्वामी सवाई नै पूछ्यौ—थे कांई जाणनै बतायौ। मकोड़ौ बापरौ मर जासी यूं जाण नै बतायौ है कै ?

जद सवाई बोल्यौ—"म्है तौ बापरौ मकोड़ौ मर जासी" यूं जाण नै बतायौ।

जद हेमजी स्वामी टीकमजी नै कह्यौ—थे पेला रे बदलै झूठ क्यूं बोलौ ? औ तौ कहै—मांका रे वास्ते, थे कहौ—थांरौ पाप टळावा बतायौ, इण लेखै ओ झूठ थे क्यूं बोलौ ? इम कष्ट कर ठिकाणै आया।

५. हेमजी चरचा करसौ ?

हेमजी स्वामी दीक्षा लीधा पछै चरचा कीधी ते लिखिये छै—सं० १८५५ वर्ष भिक्षु १ भारीमाल ३ खेतसीजी ३ हेमजी स्वामी ४, च्यार साधां पाली चौमासौ कीधौ। पछै श्रावण महीने केलवा रा चपलोत उदैरांमजी पाली

आय दीक्षा लीधी, जद ५ ठाणा थया। हेमजी स्वामी नै उदयरांमजी, लोढ़ा रा वास मैं गोचरी उठ्या।

मुकनै दांती कह्यौ—गुरां नै कहौ सो टीकमजी सूं चरचा करै।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—टीकमजी रौ मन हुवै तौ म्हासूं ई करौ।

पछै मुकनैं दांती कह्यौ—टीकमजी सूं चरचा थे करसौ? जद हेमजी स्वामी बोल्या—करवा रा भाव है।

पछै टीकमजी घणा लोकां सूं वास रै मूंहढ़ै ऊभा त्यां गोचरी करनै आंवता हेमजी स्वामी आया जद टीकमजी पूछ्यौ—हेमजी चरचा करसौ? जद हेमजी स्वामी बोल्या—थांरौ मन हुवै तौ करवा रा भाव है। इम कही नै हेमजी स्वामी चरचा पूछता हुवा—कहौ नव पदार्थ मैं सावद्य कितरा, निरवद्य कितरा? सावद्य निरवद्य नहीं कितरा?

जद टीकमजी बोल्या—जीव नै आश्रव सावद्य निरवद्य दोनूं, अजीव, पुण्य, पाप, बंध सावद्य इ नहीं निरवद्य इ नहीं, संवर, निर्जरा मोक्ष, निरवद्य। ए टीकमजी री श्रद्धा तौ नहीं पिण त्यांनै तेरह द्वार मूंहढै आवै तिण सूं आप रो पल्लो छोडायवा आ चरचा कही।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—आश्रव जीव कै अजीव?

जद त्यां कह्यौ—आश्रव अजीव। जद हेमजी स्वामी बोल्या—थे आश्रव ने अजीव कहौ तौ आश्रव नै सावद्य निरवद्य दोनूं कह्या अनै अजीव नै सावद्य निरवद्य एक ही न कह्यौ, ते लेखे आश्रव अजीव न ठहरचौ। इम कह्यां कष्ट हुवौ। शुद्ध जाब देवा असमर्थ। पिण मूंहढ़ा बोल्यौ, हूं कहूं ज्यूं ही सूत्र मैं है, भगवती मैं है, जद नायकविजै जती उपाश्रा मांहि थी भगवती आण सूंपी। जद टीकमजी 'बारमा शतक'[1] रै पांचवा उद्देशक मैं, 'क्रोध मैं, आशा मैं, तृष्णा मैं, रुद्र मैं, चंड मैं, वर्णादिक १६ बोल पावै' कह्या, ते पाठ काढ्या।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—थे पहिला कह्यौ ज्य बतावौ। आश्रव, सावद्य, निरवद्य दोनूं अनै आश्रव अजीव इम कहिता था सो तौ पाठ नीकल्यौ नहीं।

६. दूजो चरचा करौ

पछै नायकविजै उपाश्रा मांहे ले गयौ। हेमजी स्वामी पूर्व दिश लेई बैठा टीकमजी पश्चिम दिशे बैठौ। लोक बोल्या—इण चरचा मैं तौ म्हांनै समझ न पड़ै। दूजी चरचा करौ। टीकमजी पिण बोल्या—चरचा दूजी करौ।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—आगली चरचा रौ इज जाब देवौ। इम घणी बार आंहमा सांहमा कैहणौ पड़चौ।

१. भगवई १२।१०३-१०७।

पछै टीकमजी बोल्यौ—भगवान् गोशाला नै बचायौ जिण रौ कांई हुवौ ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—सूत्र मै कह्यौ हुवै सो खरौ।

जद टीकमजी भगवती रौ पाठ काढ्यौ। अनुकंपा रे अर्थे गोशाला नै बचायौ तिण रौ अर्थ टीकमजी बाचै नहीं।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—ए अर्थ बाचौ क्यूं नहीं ?

तौ पिण टीकमजी बाचै नहीं।

जद नायकविजैजी बोल्या—उरहा ल्यावौ, हूं बाचूं। इम कही पाना लेई वाचवा लागौ—"गोशाला नौ संरक्षण भगवान कीयो ते सरागपणा थी। दया ना एकरसपणा थी। जे भणी सर्वानुभूति सुनक्षत्र-मुनि नौ संरक्षण न करस्ये ते वीतरागपणा थी लब्धि ना अनुपजीविकपणा थी" ए अर्थ बाच्यौ।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—इहां तौ गोशाला नै बचायौ ते सरागपणा थी कह्यौ छै।

जद जती पिण कह्यौ—इहां तौ सरागपणौ कह्यौ छै।

जद टीकमजी बोल्या—भगवान तपस्या कीधी जिका ई सरागपणा मै करी।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—तपसा सरागपणौ कठे है, तपस्या तौ क्षयोपशमभाव है। वीतरागपणा माहिली वानगी है। जद टीकमजी कष्ट हुवौ। शुद्ध जाब देवा असमर्थ।

७. म्हे क्यांनै जावां

किण ही भीखणजी स्वामी नै कह्यौ—लोढां रा उपाश्रा मै हेमजी टीकमजी स्यूं चरचा करै है, लोक घणा भेळा हुवा, सो आप पधारौ। जद स्वामीजी बोल्या—म्हे क्यांनै जावां, जीत हुसी तौ ठीक इज है। अनै हार जासी तौ दूजी वार करतौ रहेला। इतले जेतसी इंदोजी बालक था सो दौड़ नै स्वामीजी नै आय कह्यौ—सो चरचा मै आपांरी जीत हुई नै उठै उपाश्रा मै टीकमजी कष्ट हुवा, जाब दै नहीं।

८. भीखणजी उपगार मानै है

कस्तूरमल जालोरी प्रश्न पूछ्यौ—मूंगां री कोठी भरी जीव मोकळा पड्या, अबै कांई करणौ ?

जद टीकमजी बोल्यौ—जीव शाळा मै अळायदा मेल देणा।

हेमजी स्वामी नै पूछ्यौ—आप कांई कहौ ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—म्हे तौ कहां छां—कोठी रे हाथ न

लगावणो। मूंगा रो संघट्टो इ न करणो। इम कही नै "द्रव्य लाय लागी, भावे लाय लागी" अनुकंपा चौपाई/इण ढाळ री मोकळी गाथा कही, तिण मै कह्यो—"कूआ वारै—लाय बारै काढ़ै, सो ओ तौ उपगार कीयो इण भव रौ" ओ पद आयां लोक बोल्या—भीखणजी उपगार मांनै है ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—ओ उपगार मांनै है। जद लोक घणा राजी हुवा। इतरै चतराशाह आय बोल्या—चरचा आछी हुई माहो मांही हेत रह्यो। अबै पधारो। जद ठिकाणै पधार्‌या। स्वामीजी नै आय समाचार कह्या। स्वामीजी सुणनै घणा राजी हुवा। स्वामीजी ए चरचा पाना मै उतार लीधी।

९. थांरी श्रद्धा थां कनै, म्हांरी म्हां कनै

पाली रै बारे दिशा गया जद टीकमजी बोल्या—थांरे अनुकंपा कोई नहीं, थे जीव बचावौ नहीं।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—म्हांरै अनुकंपा घणी तीखी है। भगवान कह्यो जिण रीते हिंसा छोड़ाय देवां। अनै थे कहो—म्हे जबरी सूं बचावां, तौ औ नीलौ ऊगो है, तिहां गाय आय खावा लागी, थे देखौ तौ छोड़ावौ कै नहीं ? जद जाब अटक गयौ। मुळक नै बोल्या—थांरी श्रद्धा थां कनै, म्हांरी श्रद्धा म्हां कनै, इम कही चालता रह्या।

१०. किण रा टोळा रो ?

जोधपुर मे भेखधारणियां नै हेमजी स्वामी पूछ्यौ—थे किंणरा टोळा री ?

जद ते रीस करनै बोली—थांरा गुरां रौ माथौ मूंड्यौ त्यांरा टोळा री। जद हेमजी स्वामी बोल्या—म्हांरा गुणां रौ माथौ तौ सघला पेली नाई मूंड्यौ तौ थे नाई रा टोळा री हो। जद खीसाणी पड़नै चालती रही।

११. थे तो जीवता बैठा हो ?

नाथद्वारा मै सं० १८७८ रे रुघनाथजी रा साध बोल्या—थे थानक रौ दोष कहो तौ भारमलजी चल्या, मांडी करी, ११ सो रुपीया लगाया, ओ थानै पाप कितरौ लागौ ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—उणांनै तौ चल्यां पछै मांडी मै बेसांण्या, तिण सूं साधां नै पाप लागै नहीं, ज्यूं थानै पिण मूंवां पछै थानक मै वेसाणै तौ थांनै ई पाप न लागै पिण थे तो जीवता थानक मै बैठा हो तिण सूं थांनै पाप लागै, जद सुणनै खख-खख हंसवा लाग गया।

१२. हिंसा सूं धर्म ऊठ गयौ

वीलावास मैं एक देवरापंथी बोल्यौ—हिंसा बिना धर्म हुवै इज नहीं हिंसा बिना धर्म हुवै तौ बतावौ ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—थे अठै बैठा हौ अनै जावजीव नीलोती रा त्याग वैराग सूं कीधा ओ धर्म थयौ कै नहीं ?

जद ओ बोल्यौ—ओ तौ धर्म थयो।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—अठे कांई हिंसा हुई ? तथा थे वैराग सूं अठै बैठा इज शील आदर्‍यौ औ धर्म तौ थयौ, अनै अठे कांइ हुई ? इम हिंसा विना धर्म हुवै। अनै हिंसा मै धर्म होणौ तौ जिहां इ रह्यौ, हिंसा सूं धर्म ऊठे छै। किहां इ साध पधार्‍या देखनै गृहस्थ राजी हुवौ। असणादिक वहिरावा उठ्यौ। हर्ष सूं आंवतां एक दाणा पर पग लागौ, तौ साध वहिरै नहीं।

इतरी हिंसा सूं इ धर्म ऊठ गयौ।

१३. इतरौ फेर क्यूं ?

पाली मैं संवेगियां रा श्रावक बोल्या—"तीर्थंकर होणहार नै वंदना करणी।"

जद हेमजी स्वामी बोल्या—थे प्रतिमा करावा पाषाण आण्यौ, ते पाषाण री प्रतिमा होणहार छै, ते पाषाण नै वांदौ कै नहीं ? जद जाब देवा असमर्थ थया।

बलि त्यांनै कह्यौ—प्रतिमा थई पिण-प्रतिष्ठी नहीं, तौ पिण तेहनै न वांदौ। अनै प्रतिष्ठ्यां पछै वंदौ, तौ प्रतिष्ठ्यां पहिला तौ कांई गुण न हुंतौ ? अनै प्रतिष्ठ्यां पछै कांई गुण बध्यौ ? तीर्थंकर नौ जीव तौ नरकादिक मै पड्या तथा गर्भ मै छै, त्यांने पिण वांदौ अनै जे पाषाण आण्यौ तेहनी प्रतिमा कीधी पिण प्रतिष्ठी नहीं, तौ पिण न वांदौ, थारे लेखै इतरौ अन्तर क्यूं ? जिन प्रतिमा जिन सारखी, गिणौ तौ इतरौ फेर क्यूं ?

१४. म्हांनै असूझतौ लेणौ नहीं

हेमजी स्वामी गोचरी पधार्‍या। एक घर वहिरतां दूजा घरवाळी किंवाड़ खोल दीयौ उणनै पूछ्यां ते कहै म्हे कोई खोल्यौ नहीं। किंवाड़ री सांकळी हालती देखनै बोल्या—थे अबारूं किंवाड़ खोल्यौ दीसै है, तिण सूं सांकळी हालै है, जद उवा बोली—थे तौ यूं घणा करौ, बीजा तौ यूं करै नहीं।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—म्हांनै असूझतौ लेणौ नहीं।

१५. पुण्यां तौ कतणीया मैं मोकळी दीसे है

हेमजी स्वामी गोचरी पधार्‌या। एक बाई किंवाड़ खोल दीयौ। तिणनै पूछ्यौ—थे किंवाड़ क्यूं खोल्यौ ?

जद ते बाई बोली—हूं तौ कातती थी, सो पुण्यां रै वासतै खोल्यौ आपरै वासतै खोल्यौ नहीं।

जद हेमजी स्वामी तिण रौ कातण रौ कतणीयौ देख्यौ। मांहै मोकळी पुण्यां देखनै कह्यौ बाई तूं कहिती थी पुण्यां ल्यावा खोल्यौ सो पुण्यां तौ कतणीया मैं मोकळी दीसै है, इम कह्यां दबकीज गई।

१६. कांई सूंस करूं ?

सीहवा में माना खेतावत नै कह्यौ--रात्री रा खावा रौ सूंस करौ।

जद मानजी बोल्यौ—रात्रि रौ सूंस कीया चन्द्रमा वेराजी हुवै। दिन रा सूंस कीयां सूर्य बेराजी हुवै। अबै कांई सूंस करूं ? जद हेमजी स्वामी बोल्या—अमावस नी रात्रि नौ सूंस करौ। जद बोल्यौ—ठीक है, कराय देवौ।

१७. ओ मनोरथ तौ फळतौ दीसै नहीं

चेलावास मै हीरजी जती ऊंधी-ऊंधी चरचा करै। जद हेमजी स्वामी बोल्या—हीरजी थांने राजाजी हुकम देवै "थारौ मन हुवै ज्यूं करो" तौ थे कांई करो ?

जद हीरजी बोल्या—ढूंढिया तौ एक न राखूं, सर्व नै म्हारा हाथ सूं मारूं।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—म्हांसूं तौ टाळो कीजे, आंपांरै तौ हेत है।

जद हीरजी बोल्यौ—सघळा पहिला तोनै मारूं।

जद हेमजी स्वामी बोल्यौ—ओ तौ थांरो मन रौ मनोरथ कोई फळतौ दीसै नहीं। खोटी भावना क्यूं भावौ।

१८. कांई श्रद्धौ ?

जोधपुर मैं किण ही पूछ्यौ—विजैसिंग जी अमारी पड़हौ फैरायौ, तिण रौ कांई ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या – ए मानसिंगजी जलंधरनाथजी री पूजा करै, तिणरौ थे कांई श्रद्धौ ? जब पाछौ शुद्ध जाब देवा असमर्थ।

१९. अव्रत डावी कानी कै जीमणी कानी ?

सरीयारी मैं भेषधारी पूछ्यौ—भीखणजी जोड़ कीधी है—
"साध नै श्रावक रतनां री माळा, एक मोटी दूजी दूजी नान्ही रे।
गुण गूंथ्या च्यारूं तीर्थ ना, अव्रत रह गई कानी रे।
चतुर विचार करीनै देखो।"
सो आ अव्रत डावी कानी रही कै जीमणी कानी रही ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—असंख्याता प्रदेशां मैं इ अव्रत छै, असंख्याता प्रदेशां मैं इ व्रत छै, गुण जूवौ जूवौ छै, व्रत सूं अव्रत न्यारी है, इण लेखै कानी कही।

२०. तीन मिच्छामि दुक्कडं

पाली मैं सं० १८७५ हेमजी स्वामी गोचरी पधारतां रूपविजैजी संवेगी उपाश्रा नी बारी रै मूंहढै हेलौ पाड़यौ—हेमऋष ! आवौ, हेमऋष ! आवौ, चरचा करां।

जद हेमजी स्वामी बैठा। संवेगियां री श्रद्धा रा लोक भेळा घणा थया। रूपविजै बोल्यौ—मूंहढो स्यानै अर्थे बांध्यौ ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—दया नै अर्थे।

जद रूपविजै बोल्यौ—दया स्या नीं ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—दया वायुकाय नी।

रूप०—वायुकाय ना जीवां रा शरीर चोफर्शी कै अठफर्शी ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—अठफर्शी।

रूप०—भाषा ना पुद्गल चौफर्शी कै अठ फर्शी ?

जद हेमजी स्वामी कह्यौ—भाषा ना पुद्गल चौफर्शी।

जद रूपविजै बोल्यो—चौफर्शी थी अठफर्शी किम हणावै ? जिम पूणी पड़या पाडी किम मरै।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—पूणी पड़यां पाडी न मरै, अनै सो मण नीं शिला पड़या तौ पाडी मरै। ज्यूं भाषा बोलतां अठफर्शी नवौ अचित्त वायरौ ऊठे तिण अठफर्शी नवा वायरा सूं वायु काय रा जीव हणाय। इम कह्यां रूपविजै नै जाब न आयो।

जद फेर बोल्यो—यूं जीव मरै तौ तीन जागां बांधौ। हेठे १ मूंहढे ३ नाक ३।

हेम—छींक करै जठे पिण आड़ौ हाथ देणौ कह्यो ? छीए, जंभाइए, वायनिसग्गेणं ए तसुत्तरी मैं पाठ कह्या छै कै नहीं ?

जद रूपविजै बोल्यो—कह्या तौ छै। इण चरचा मैं पिण कष्ट थयौ।

जद रूपविजै फेर बोल्यौ—जीव तौ मारचौ मरे नहीं, बाल्यौ बळै

नहीं, काटीयो कटै नहीं, बाढ़ीयो बढ़ै नहीं, इम जीव न मरै जद हिंसा किम लागै ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—भगवती मै कह्यौ—"आधाकर्मी भोगव्यां छ काय रौ घाती कहीजै अने निर्दोष भोगव्यां छ काय नौ दयावान कहीजै।"

जो जीव मार्‍यौ न मरै, तौ आधाकर्मी भोगव्यां छ काय नौ घाती क्यूं कह्यौ ? अठे पिण रूपविजै कष्ट थयौ।

वली हेमजी स्वामी बोल्या—जो उघाड़े मुख बोल्यां वायुकाय रा जीव मूवा न सरधौ थे, तौ मूंहढा आडी मुखपती क्यूं राखौ ?

जद रूपविजै बोल्यो—अम्हे तौ वचन शुद्धि ने अर्थे मुहपती राखां छां।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—तौ वचन शुद्धि अधूरी क्यूं ? किणहिक वेलां तौ मुहपत्ती मुंहडा आडी रहे नै किणहिक वेला पूरी जैणा रहै नहीं, उघाड़े मुख बोलौ, सो वचन शुद्धि पिण पूरी नहीं, इहां पिण रूपविजै कष्ट थयौ।

वली हेमजी स्वामी बोल्या—गोतम पूछ्यौ "इन्द्र भाषा बोलै ते सावद्य कै निरवद्य ?

जद भगवान बोल्या—"इन्द्र उघाडे. मुख बोलै ते तौ सावद्य अनै मुख आडौ हाथ तथा वस्त्र देई बोलै ते निरवद्य।" भगवती (शतक १६। सू० ३८, ३९) मै आ बात कही छै कै नहीं ?

जद रूपविजै बोल्यौ—कही तौ छै। इहां पिण रूपविजै घणौ कष्ट थयौ।

वली हेमजी स्वामी प्रश्न पूछ्यौ—नव पदार्थ मै सावद्य केता ? निरवद्य केता ? सावद्य निरवद्य नहीं केता ? नव पदार्थ मै जीव केता ? अजीव केता ? नव तत्त्व किण नै कहीजै नै नव पदार्थ किणनै कहीजै ?

जद रूपविजै बोल्यौ—एहनो स्यूं धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय एतौ पुद्‌गल छै।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—द्यो मिच्छामि दुक्कडं। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय पुद्‌गल कठै है।

पुद्‌गल तौ रूपी अनै ए अरूपी है।

वली रूपविजै बोल्यौ—काळ जीव अजीव दोनूं छै।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—दूजौ मिच्छामि दुक्कडं फेर दो।

काल जीव अजीव दोनूं कठै है ? जीव अजीव ऊपर वर्त्तै है, पिण काल तो अजीव छै।

जद रूपविजै क्रोध मै आयौ। हाथ धूजवा लाग गया।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—थांरा हाथ क्यूं धूजै ? हाथ तौ च्यार प्रकारे धूजै। कै तौ कंपण वाय सूं १, कै क्रोध रे वश २, कै चरचा मै हार्‍यां हाथ धूजै ३, कै मिथुन रे वश ४। जद विशेष रोस मै आयौ। लोक भेळा घणा

हुवा । इतरै अठी रा श्रावक पिण आया ।

माईदासजी खेरवा वाळौ बोल्यौ—अबे आप उठौ । जद ऊठवा लागा । जब रूपविजै पल्लौ पकड़ लीयौ । कहै—चरचा करां ।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—आगला मिच्छामि दुक्कडं दौ, पछै फेर चरचा करां ।

जद रूपविजै बोल्यो—पछे देसूं ।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—थे जाणौ हूं पंडित छूं. पिण चवदै पूर्वधारी पिण वचन मैं खलाय जावै, सो इण बात रौ कारण नहीं, तिण सूं मिच्छामि दुक्कडं दे घालो ।

जद बोल्यौ—आंपै साथै देसां ।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—चूकै वचन मै जिणनै मिच्छामि दुक्कडं आवै । न चूके जिणनै न आवै । थे तौ वचन में चूका, तिण सूं थांनै तौ मिच्छामि दुक्कडं आवै अनै हूं नहीं चूकसूं, तौ मोंनै किण लेखे-आसी ? इण लेखै थे तौ मिच्छामि दुक्कडं दे घालौ । तौ पिण मिच्छामि दुक्कडं देवै नहीं ।

फेर लोक बोल्या—अबे उठौ । फेर उठवा लागा ।

जद रूपविजै ओघौ पकड़ लीयौ । जद हेमजी स्वामी बोल्या थांने तौ खिम्यावान सुण्या है, थे यूं कांई करौ ?

जद ते बोल्यौ—तुमे जाओ मती चरचा करौ ।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—आगला मिच्छामि दुक्कडं दीयां वले चरचा हुवै । जद घणौ खिसाणौ पड़्यौ । कायौ होय गयौ ।

लोक बोल्या—अबे उठो ।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—थे कहौ, तौ अबै म्हे जावां ।

जद रूपविजै बोल्यौ—तुम्हे असंजती नै अम्हे जावा रो स्यानें कहिशां ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—म्हांनै असंजती जाणौ, जावा रौ न कहिणौ तौ आवा रौ क्यूं कह्यौ ? आवौ हेम ऋष ! आवौ हेम ऋष ! इम बोलाया । इण लेखै तीजौ मिच्छामि दुक्कडं थारे लेखै फेर आवै । इम कहि रूपविजै नै कष्ट कर ठिकांणै आया । जिन मारग रौ उद्योत घणौ थयौ ।

२१. कांई चरचा करण रौ मन है ?

सं० १८४९ रे वर्ष हेमजी स्वामी (घर मै छतां) अनै भीमजी कांठेड दोनूं भीलौड़ा मै शीतलदासजी रा टोळा रा हीरजी कनै जाय ऊभा ।

जद हीरजी पूछ्यौ—थे किसा गांम रा ।

जद भीमजी बोल्यौ—म्हे सरीयारी नां ।

त्यां पूछ्यौ—थांरै गुरु कुंण ?

जद भीमजी बोल्यौ—भीखणजी रा साध उठे है, त्यां कनै पिण जावा हां। अने उठे जैमलजी री आर्य्यां है, त्यां कनै पिण जावां हां।

पछे हेमजी स्वामी नै पूछ्यौ—थांरे गुरु कुंण ?

जद हेमजी स्वामी तीखा बोल्या—म्हांरै गुरु है पूजश्री भीखणजी स्वामी।

जद हीरजी बोल्यौ—इसा तीखा बोलौ हौ कांई चरचा करण रौ मन है ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—थांरौ मन हुवै तौ भलां ई करौ।

जद हीरजी पूछ्यौ—गायां घर मैं बळती थी तिण रा घर रौ किंवाड़ खोल्यौ, तिण नै कांई थयौ ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—थे किंवाड़ खोलौ कै नहीं ?

जद हीरजी बोल्यौ—म्हे तौ किंवाड़ खोल देवां।

जद हेमजी स्वामी बोल्या---म्हे तौ कहां आ भावना इ खोटी "कद गायां वळै नै हूं वारे काढूं," इसी भावना इ आछी नहीं। इसी भावना तौ भावणी—"साधु आवे तौ हूं बखांण सुणूं, आहार पांणी वहिरावूं, सामायक पोषा करूं," ए भावना तौ चोखी अने गायां बळवा री तौ भावना इ खोटी। जद हीरजी कष्ट हुवौ या चरचा छोड़नै दूजी चरचा करवा लागौ। भीखणजी कहै—"थोड़ा दोष सूं साधपणौ भागै" सो ए बात मिलै नहीं। जिम एक साहूकार रे प्रदेशां थी माल री जिहाजां आई सो अड़तालीस ओर्‌यां भरी इतले एक जाचक आयौ साहूकार नी विरदावळियां बोली। जद साहूकार राजी हुवौ। अड़तालीस ओर्‌यां नी कूंच्यां मूंहढा आगे मेल दीधी। कहे एक कूंची उठाय लै। जिण ओरी मैं माल निकळै सो थारो। जद एक कूंची उठाय नै ओरी खोली देखै तौ सींदरा सूं भरी। पाछौ आय नै कहे—सेठजी सिंदरा नी ओरी निकळी सो सींदरा सूं कांई पासी लेउं ? तिवारे दूजीबार साहूकार ते कूंची सर्व कूंचिया भेली न्हाख नै कहै—फेर उठावौ। जद तिण वले कूंची लीधी। सो उवा की उवा सींदरा नी ओरी नी कूंची आई। ओरी देख नै पाछौ आय कहै—सेठजी उवा सींदरा नी ओरी ज आई, म्हारा भाग मैं सींदरा इज है। जद साहूकार गुमासतां नै पूछ्यौ—जोवौ सिंदरां ना कांई दांम लागा ? जद गुमासतां बही देख नै कह्यौ—४८ हजार रुपैया लागा। ते सींदरा जिहाजां रा लंगड़ नांखवा नां हुंता। जद तिण न ४८ हजार रुपीया दीधा।

हीरजी बोल्यौ—त्यां सींदरा ना इ ४८ हजार रुपीया आया तौ जिहाजां मांहिला माल रा तौ अनेक लाखां रुपीया होसी। ज्यूं जिहाजां रा माल समांन साधुपणौ, अने सींदरा ना दांम जिसा दोष सूं खाली किम हुवै ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—इक्यासी पाटीयां री जिहाज पिण विचै एक पाटीयौ कोई नहीं, वेसण वाला भोळा मांहे माल भर नै जिहाज चलाई

जाण्यौ ४० पाटीया तौ अठी ४० पाटीया उठी विचे एक पाटीयौ नहीं तिण सूं जिहाज किम डूबे ? इम विचार चाल्या। समुद्र रे बीच मै जिहाज डूब गई ज्यूं दोष री थाप करै तिण रौ साधुपणौ नीपजै नहीं। इम कह्या हीरजी कष्ट हुवौ।

जद फेर बोल्यौ—साहूकार एक जागा कराई। हजारां रुपीया लगाया। वर्षा ऋतु मै मेह आयौ कठैक चववा लागौ तौ जीहा जागा कांई पड़ गई।

ज्यूं किंचित दोष स्यूं साधपणौ किम भागै ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—जागा तौ थे कही जिसीज भारी, पिण नींव छाणा री दीधी, वर्षा घणी आई, जद ते जागा थोड़ा मै पड़ गई, ज्यूं साधुपणौ पचख्यौ पिण श्रद्धा रूप नींव इ शुद्ध नहीं अनै दोष री थाप करै, दोष नै दोस न सरधै। तिण मै समक्त साधपणौ एक ही नहीं, इहां पिण हीरजी कष्ट थयौ। इम हीरजी नै कष्ट करनै तिहां सामायक करनै मीठा कंठ सूं दया भगवती री ढाळ कही। त्यांरा श्रावक सुणनै राजी हुवा, पूछ्यौ आ ढाळ किण कीधी ?

जद हेमजी स्वामी कह्यौ—या ढाळ भीखणजी स्वामी कीधी। जद लोक बोल्या—इसी भीखणजी री श्रद्धा है। अठे भीखणजी आया था, १५ दिन रह्या। म्हे तौ कनै गया नहीं। पछै दूजे दिन थानक मै सामायक करवा गया, जद ना कहि दीयौ। अठे सामायक करौ मती, पछै बाजार मै आय सामायक कीधी, नंदण मणीयारा नौ बखांण मांड्यौ, घणा लोकां सुण्यौ, राजी घणा हुवा। जाण्यौ भीखणजी रा श्रावक पिण इसा है, सौ साधां रौ कांई कहिणौ। पछै च्यार जणां नै गुरु कराया। पछै पाछा सरीयारी आया। या घर मै छतां री बात है।

२२. समकित आवणी दोरी

पींपाड़ मै एक जणा नै कह्यौ—"साची सरधा धारौ", साचा गुरु करौ, बैंटे पिण उपदेश दीयौ। अनै हेमजी स्वामी पिण कह्यौ।

जद ऊ बोल्यौ—इतरा वर्ष तौ म्हे काढया, अबे आत्मा न काळौ किसौ लगाऊं।

जद हेमजी स्वामी कह्यौ—धर्म सूं साचा देव गुरां सूं तौ काळौ मिटै है, इण सूं काळौ लागै वहीं, तौ पिण समझ्यौ नहीं। इसा मूरख जीव नै समकत आवणी दोहरी।

२३. आछौ देवै उपदेश

घर मै थकां हेमजी स्वामी रै रतनजी भलगट सूं सींजारौ थौ। ते

रतनजी तौ धर्म मै समझै नहीं, भांग पीयै । अनै हेमजी स्वामी लोकां नै उपदेश देई समझावै । हेमजी स्वामी री जाति तौ आछा बागरेचा रतनजी री जाति भलकट । पिण रतनजी तौ धर्म मै समझै नहीं । हेमजी स्वामी धर्म मै समझै । ओरां ने पिण समझावै । जद सेवग बोल्यौ—

जोड़ी तो जुगती मिली, हेमा नै रतनेश ।
भलकट झखोळै भांगड़ी आछो देवै उपदेश ।।

२४. छेहड़े संथारौ करशां

घर मै थकां हेमजी स्वामी नै एक पोखरणौ ब्रांह्मण ऊंधौ अवळौ बोलै —"थे भीखणजी रा श्रावक हो सो अन्न बिना मरसौ ।"

जद हेमजी स्वामी बोल्या—म्हे भीखणजी रा श्रावक छां सो छेहड़ै संथारा करशां । सो अन्न बिना ई ज मरशां । जद ते कष्ट होय जातौ रह्यौ ।

२५. पहिला पुन्य पछै निर्जरा

खेतसीजी स्वामी नै किण हि पूछ्यौ—शुभ जोग वर्ते जद पहिला पुन बंधै कै निर्जरा हुवै ?

जद खेतसीजी स्वामी दृष्टंत दीयौ । उणनै पूछ्यौ—पहिला पांनड़ा कै धांनड़ा !

जद उ बोल्यौ—पहिला पांनड़ा, पछै धांनडा । ज्यूं शुभ जोग प्रवर्त्ते जद पहिले समे इज पुन्य बंधे, तिण समय अशुभ कर्म चळै तौ खरा, पिण झरै आगळे समय ।

भगवती श० १ सूत्र ३१ मै कर्म चळवा रौ समय अनै निर्जरवा नौ समय जूओ-जूओ कह्यौ, तिण कारण पहिला पुन्य बंधै नै पछै निर्जरा कही ।

२६. शुभ जोग आश्रव कै निर्जरा ?

किण हि पूछ्यौ—शुभ जोगां नै आश्रव कहीजै कै निर्जरा कहीजै ?

जद खेतसीजी स्वामी बोल्या—शुभ जोगां नै आश्रव पिण कहीजे नै निर्जरा पिण कहीजै । जद उण कह्यौ—वस्तु तौ एक शुभ जोग तिणने आश्रव नै निर्जरा अै दो किम कहीजै ?

जद खेतसीजी स्वामी दृष्टंत देई बोल्या—किण हि मांनवी ने बापई कहीजै नै बेटोई कहिजे ते किण न्याय ?

उणरा बाप नी अपेक्षाय तौ बेटौ कहीजै अनै उणरा बेटा नी अपेक्षाय उणनै बाप कहीजै । ज्यूं शुभ जोगां सूं पुन्य पिण बंधे नै अशुभ कर्म पिण झरै । पुन्य बंधे इण लेखे तौ शुभ जोगां नै आश्रव कहीजै, अनै अशुभ कर्म

झड़े, इण लेखै शुभ जोगां नै निर्जरा कहीजै, उत्तराध्येयन अ० ३४गाथा ५७ में तेजू पद्म सुकल लेस्या नै धर्म लेस्या कही, अनै छहूं लेस्या नै कर्म लेस्या पिण कही, तेजू पद्म सुकल लेस्या सूं पुन्यबंधै, तिण लेखै तौ कर्म लेस्या कही, अनै तेजू पद्म सुकल सूं अशुभ कर्म झरै, तिण लेस्या नै धर्म लेस्या कहीजै, धर्म लेस्या कहौ भावे निर्जरा कहौ। कर्म लेस्या कहौ, भावे आश्रव कहौ।

२७. समदृष्टि री मति से मतिज्ञान

खेतसीजी स्वामी बोल्या—भगवती नै रामचिरत साधु गावै, सो हूं तौ बराबर जांणूं। साधु सत्य भाषा बोलै सावद्य बोलवा रा त्याग ते लेखै, नंदी सूत्र मै समदृष्टि री मति ज्ञान ही छै ते लेखै।

२८. दोयां मै एक झूठ

पाली मै भारमलजी स्वामी खेतसीजी स्वामी जोधपुरिया वास मै गोचरी पधार्या। तिहां टीकमजी पिण आया। लोक बोल्या—चरचा करौ।

जद भारमलजी स्वामी टीकमजी नै कह्यौ—नित्य पिंड लेणौ सूत्र मै तौ वरज्यौ है नै थे लेवौ, सो दोष जाणौ हौ कै नहीं?

जद टीकमजी बोल्यौ—म्हे तौ न्हांखीतौ धोवण नित्य लेवां, तिणरौ दोष नहीं।

जद भारमलजी स्वामी बोल्या—थे धोवण रौ नाम क्यूं लेवौ, पांणी पिण नित्य वहिरौ छौ।

जद टीकमजी बोल्यौ—म्हे पाणी न वहिरां।

जद भारमलजी स्वामी बोल्या—थे पाणी वहिरौ छौ। इम वार-वार कह्यौ।

जद लोक बोल्या—ऐ तौ कहै—म्हे नित्य पांणी न ल्यां, थे कहौ छौ ऐ लेवै है, सो दोयां मै एक नै तौ झूठ लागै है।

जद भारमलजी स्वामी बोल्या—ए नित्य ऊन्हौ पांणी एक घर नौ लेवै ते पिण कलाल रौ वहिरै छै। जद टीकमजी कष्ट थयौ। वले भारमलजी स्वामी बोल्या—ए नित्य आहार पिण एक घर नौ लेवै छै। ते किम जे आज वहिर्यौ अनै दूजे दिन बिहार करतां फेर उण घर रौ लेवै इण लेखै आहार पिण नित्य पिंड लेवै छै। जद टीकमजी शुद्ध जाब देवा असमर्थ थयौ। पछै ठिकांणै आय भीखणजी स्वामी नै समाचार कह्या आ पिण चरचा सं १८५५ रै वर्ष कीधी।

२९. दुमनो चाकर दुसमण सरींखौ

सं० १८७७ आमेट मै कोई कोई भाया संकीला हुंता और ग्रहस्थ श्रावक श्राविकां कनै अवर्णवाद बोलै। ए बात भारमलजी स्वामी केलवा मै सुणी नै हेमजी स्वामी नै कह्यौ—"हेमजी ! और घणा गामां रा लोक तौ दर्शन करवा आया अनै आंमेट वाळा आया नहीं। इस बार बार पूछै। जद हेमजी स्वामी बोल्या—आंमेट वालां ने बार-बार क्यूं पूछचौ। जद भारमलजी स्वामी बोल्या—उवे संकीया दोय च्यार जणां आसरै छै, ज्यांनै परहा छोडां ना कही देवां, अठी रा श्रावक थे बाजौ मती। न्यारा कींया पछै लोक उणांरी बात मानै नहीं। जिण टाणे एक दीपा साधु नै टोळा बारे काढ्यौ हूंतौ सो भारमलजी स्वामी बोल्या—दीपा नै छोड्यौ ज्यूं उणां नै ई छोड़ देवां। इसी मोटा पुरुषां री बुद्धि। जिणसूं और रै संका न पड़ै। "दुमनो चाकर दुसमण सरीखो" लोक मै इं यूं कहै, ते कारण छोड़णा धार्या।

३०. भरत क्षेत्र मै साधां रो विरह

भेखधारी तथा भेखधार्‌यां ना श्रावक बोल्या—भीखणजी कहै—भरत क्षेत्र में साधां रो विरह पड़्यो निरन्तर नहीं, इकवीस हजार वर्ष, इम जोड़ मै पिण कह्यौ छै अनै सूत्र मै छेदोपस्थापनीय चारित्र नों विरह जघन्य ६३ हजार वर्ष नो उत्कृष्टौ १८ कोड़ा कोड़ सागर नो कह्यो छै सो इहां भरत मै थोड़ा काळ रौ विरह किम संभवै, ए वारता सुणी नै हेमजी स्वामी उणांनै जाब दे दीयौ। पछे भारमलजी स्वामी नै पूछ्यौ—छेदोपस्थापनीय चरित्र नौ जघन्य ६३ हजार वर्ष सू ओछौ न कह्यौ तौ इहां भरत मै चारित्र नों विरह किम संभवै ?

जद भारमलजी स्वामी बोल्या—पांच भरत, पांच एरवत १० क्षेत्रां मै समकाळे छठो आरो २१ हजार वर्ष नो, पहिलो आरो २१ हजार वर्ष नो, दूजो आरो २१ हजार वर्ष नौ एवं ६३ हजार वर्ष चारित्र न हुवै अनै बीजा आरा ना तीन वर्ष साढ़ा आठ मास पछै तीर्थंकर जनमें, ३० वर्ष घर मै रही दीक्षा लेवै तठा पछै छेदोपस्थापनीय चारित्रिया साधु हुवै। इम ६३००० हजार वर्ष जाझौ विरह कह्यौ छै। अनै इहां भरत मै थोड़ा काळ रौ साधां रौ विरह थयो दीसै तौ और धातकी खंड रा भरत एरवत तथा अर्द्धपुखरार्द्ध ना भरत एरवत मै साध रह्या होसी, इण न्याय छेदोपस्थापनीय नो विरह समकाले न कहीये।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—१० क्षेत्रां री रीत तौ एक है सौ इहां भरत मै विरह थया १० क्षेत्रां मै इ विरह चाहिजे ?

जद भारमलजी स्वामी बोल्या—अठा री द्रौपदी तौ धातकीखंड रा भरत मै ले गया अनै धातकी खंड रा भरत मै द्रौपदीकुण थई नै, अठे कुण आणी ? इण न्याय सारी बातां एक सरीखी रौ करार नहीं ।

३१. त्याग क्यूं भंगावो ?

आमेट में टीकमजी रौ चेलौ जेठमल तिणं सू बात करतां हेमजी स्वामी कह्यौ—कलाल रौ पांणी ल्यावा रा तौ त्याग करो ।

जद जेठमल बोल्यौ—हूं न ल्यावूं ।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—न ल्यावो तौ त्याग करौ ।

जद जेठमल बोल्यो—म्हारे तौ त्याग है । ठिकाणे गयां टीकमजी बोल्या ए—त्याग क्यूं कीधा ?

जद पाछो आय बोल्यौ—हेमजी म्हारे मेवाड़ मै त्याग है । पिण मारवाड़ मै कोई नहीं ।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—शील आदि अनेक बीजा सूंस पिण इण लेखै मेवाड़ मै छै, अनै मारवाड़ मै नहीं । पहिला त्याग करतां आगार राख्यौ नहीं ते त्याग भांगणौ नहीं । पछै टीकमजी मिल्या । जद कह्यौ—हेमजी ! छळ करनै सूंस करावणा नहीं ।

जद हेमजी स्वामी बौल्या—कलाल रां पाणी रा त्याग कीया सो आछौ काम कीधौ । ते त्याग थे क्यूं भंगावौ ।

३२. चरचा इसी करता तौ किसायत दोसता ?

सरबार बारे नानगजी रौ हीरालाल मिल्यौ । तिण पूछ्यौ—नव पदार्थ में अस्ति भाव केता ? नास्ति भाव केता ? अस्ति नास्ति भाव केता ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—इण चरचा रौ हूं जाब देऊं छूं अनै जो कहीसौ थे आ चरचा न आई, तौ सूत्र बतावणौ पड़ैला ।

जद हीरालाल बोल्यौ—थे कहो साधु ने किंवाड़ जड़णौ नहीं इत्यादिक अनेक बोल कहौ, सो सर्व सूत्र मै मंड्या है ?

जद हेमजी स्वामी बोल्या—म्हे तौ किंवाड़ जडणौ (चूलिया नो) निषेधां छां सो सूत्र मै काढ़ बतावां ।

जद हीरालाल बोल्यौ—थे सूत्र में कांई बतावो, गये काले अनंता साधां किंवाड़ जड़िया वर्तमान काले अनंता साध किंवाड़ जड़े है, आगमिया काले अनंता साध किंवाड़ जड़सी ।

जद हेमजी स्वामी बौल्या—गये काले अनंता साधा किंवाड़ जड़िया कहौ छौ सो थां सरीखा अनंता जड़ीया, आगमिये काले पिण थां सरीखा अनंता जड़सी, पिण थे कह्यौ—वर्तमान काले अनंत जड़ै है सो वर्तमान काले

अनंता मनुष्य पिण नहीं, सो अनंता साध वर्तमान काले किवाड़ किम जड़ै इण बात रौ "मिच्छामि दुक्कडं" दो ।

जद उ बोल्यो—"मिच्छामि दुक्कडं" थाने आवै, थे द्यौ ।

जद हेमजी स्वामी बोल्या—मिच्छामि दुक्कडं आवै तौ थांने अनै म्हारौ नांम लेवौ अपूठौ चौर कोटवाल नै दंडै ।

जद हीरालाल अकबक बोल चालतौ रह्यौ । थानक मै आयनै बोल्यो—हूं तेरापंथियां सूं चरचा करिवा बाजार मै जाऊं । जद मांडलगढ वालौ सदाराम जी मूंहतौ बोल्यौ थे चरचा करिवा मत जाऔ । वार-वार कह्यौ, पिण मांनै नहीं । बली सदारामजी बोल्यां—उणां सूं चरचा करवा जावौ तौ पहिला म्हारा पूछ्या रौ तौ जाब देद्यौ—धर्म भगवांन री आज्ञा मांहै कै आज्ञा बारै ?

जद हीरालाल बोल्यौ—आज्ञा माहै ।

जद सदारांमजी कह्यौ—पगे सेंठा रहीजो इम कही रोटी जीमवा घरे गयौ । लारे हीरालाल आयनै बोल्यौ—मूंहताजी धर्म तौ आज्ञा माहै पिण छै नै बारे पिण छै ।

जद सदारामजी बोल्या—तेरापंथ्यां सूं चरचा इसी करता तौ किसाय क दीसता ? इम कही कष्ट कीधौ ।

३३. ऊंडी दृष्टि

भारमलजी स्वामी न्हांनी, न्हांनी डाबरीयां नै बोलावै सीखावै चरचा पूछै, विशेष बात करै, गुरु करावै ।

जद किण हि कह्यौ महाराज ! छोटी डावरीया नै विशेष बतळावौ, सो इण मै कोई गुण ?

जद भारमलजी स्वामी बोल्या—ऐ डावरीयां मौटी हुवां श्राविका हुंती दीसै सासरा पीहर मै घणां नै समझावै । ऐ समज्यां घणी बेटा बेटारी बहुआ बेट्यां, दोहित्यां, घणां समझवारौ ठिकाणौ है तिण कारण यांनै विशेष बतळावां । मोटा पुरुषां री इसी ऊंडी दृष्टि । इसी उपगार ऊपर नीत ।

३४. संका हुवै तौ चरचा पूछल्यौ

पींपाड़ मै वेणीरांमजी स्वामी नै देखनै चौथमलजी बोहरौ बोल्यौ—भीखणजी ! अबे थे पिण बालकां नै मूंडवा लागा ।

स्वामी बोल्या—संका हुवै तौ चरचा पूछल्यौ ।

जद तिण आय पूछ्यौ—साधां मोक्ष किसे गुणठांणै जाय ?

जद वेणीरांमजी स्वामी बोल्या—गुणठांणै मोक्ष न जाय गुणठांणों छूटां मौक्ष जाय । जद सुणनै राजी हुवौ ।

परिशिष्ट
२

श्रावक संस्मरण

श्रावक दृष्टांत

१. थे म्हांने भला लजाया

चन्द्रभांणजी पुर का वासी। तिलोकजी चेलावास रा वासी।

ए दोनूं टोळा बारे नीकळनै पुर आया। मन मै जाण्यौ हुवैला, जांणै पुर कौ खेतर समझाय लेसां।

चन्द्रभांणजी रौ भाई नेणचंद आय बोल्यौ—थे म्हांने भला लजाया। स्वामी भीखणजी नै छोड थे न्यारा थया इहलोक परलोक दोनूं बिगाड़्या। घणां निषेध्या जद विहार कर गया। श्रावक पिण इसा सेंठा।

२. जा रे पैंजार्‌या !

आमेट मै पेमजी कोठारी नीं बैन चंदूबाई नै चन्द्रभाणजी कह्यौ—थनै तौ भीखणजी कृपण कहिता था, पइसौ तौ घणौ ई पायौ पिण दांन रौ गुण नहीं। इम कहिता था।

जद चंदूबाई बोली—जा रे पैंजार्‌या ! म्हारां गुरां सूं तूं मन भंगावै है। मोमै गुण न देख्यौ हुसी तौ कह्यौ हुसी। मोटा पुरुष है। इम कहि निषेध दीयौ। श्राविका पिण इसी सेंठी।

३. मोनें लंगूरियौ कह्यौ

आमेट में अमरा डांगी नै चन्द्रभांणजी कह्यौ तौ ने तौ भीखणजी लंगूरियौ कहिता था। 'यूंही आंहमौ-सांहमौ फिरै, पिण मजौ नहीं,' इम कहिता था।

जद औ सुण नै अधर होय गयौ। मोनें लंगूरियौ कह्यौ। पछै छेहड़ै संकीलौ थयौ। जद भारमलजी स्वामी छोड़णौ विचार्‌यौ। पछै सरधा भृष्ट थयौ। ए थेट सूं ई कच्चौ हुंतौ।

४. इम होज हालत था कै ?

चंद्रभाणजी, तिलोकचंदजी देवगढ़ रा चाल्या सरीयारी आया। गाम मैं धीरे-धीरे हाले। जद लखूबाई, कलूबाई बोली—आज कठा रा चाल्या आया हो ?

जद उवै बोल्या—देवगढ़ रा हाल्या आया।

जद दोनूं बायां बोली—इम हीज हालता था कै ? इण चाल सूं हाल्यां तो दिन दोय तीनक लागै, जद आवीजै। इम कही निषेध दीया।

५. भरभोळिया री माळा समान

विजैचंद पटवौ पाली मैं लोकाचारियो गयौ। एक मोटी लोटी भरनै सिनांन करै। जद बावेचा बोल्या। विजैचंद भाई ! तुम्हे ढूंढ़ीया, सौ पांणी में पैसनै सिनांन पिण न करौ।

जद विजैचंदजी बोल्या—हूं थानै भरभोळिया री माळा समांन जांणूं छूं। होळी रा दिनां में छोहरिया भरभोळिया करै—ओ म्हारै खोपरौ, औ म्हारै नाळेर, नांम दिया, पिण है गोबर नौ गोबर। ज्यूं थे मनुष्य जमारौ पाया पिण दया धर्म री ओळखणा बिना पसु सरीखा हो।

६. दीवौ कीयां अंधारौ मिटै

विजैचंदजी नै किण हि कह्यौ—थे औ मय कांई झाल्यो, म्हे तौ म्हारो ई धर्म चौखो जाणां छां, थे धर्म धार्यो जिणरी म्हानैं तौ निगै पड़ै नहीं चौखो है कै खोटो है ?

जद विजैचंदजी बोल्या—घर मै तौ अंधारौ नैं गेडिया सूं कूटै तौ अंधारो कद जाय। दीवौ कीयां अंधारौ मिटै ज्यूं ग्यान रूपीयौ दीवो घट में करै, जद मिथ्यात रूपीयौ अंधारौ मिटै।

७. चोखौ मारग किण रौ ?

विजैचंदजी ने घणा लोकां सुणतां पाली रा कोर्ट हाकम पूछ्यौ—चोखौ मारग किण रौ ? जती, संवेगी, २२ टोळा, तेरापंथी इतां मै चोखौ मारग किण रो ?

जद विजैचंदजी बौल्या—जिण मै घणां गुण सो ही मारग चोखौ।

८. अन्न पुन्ने म्हांरै नै वस्त्र पुन्ने थांरै

रोयट में भेषधारी बोल्या—अन्न दीयां पुन्य सूत्र मै कह्यौ है। जद भाया बोल्या—सींजारै पुन्य करसां, पछेबड़ी थांरी नै गोहूं म्हांरा, थे कहौ जिण नें पोट बंधाय देवां। अन्न पुन्ने तौ म्हांरे नै वस्त्र पुन्ने थांरै।

जद भेषधारी बोल्या—म्हे साध हां, म्हानै सचित्त रो संघट्टो ई कठै करणौ है।

जद फेर स्वामीजी रा श्रावक बोल्या—अचित्त रौ पुन्य करां, पांच रोटी

तौ म्हांरी अनै दोय रोटी थांरी, इम सींजारै पुन्य करां, थांरो भरोसौ कांई बदळ जावौ तौ ।

९. लाडू देई भाटौ उरहौ लीयौ, उणनै कांई थयौ ?

बीलारा मै जेठा डफरिया नै भेषधार्यां कह्यौ—कोई छोहरौ भाठा सूं कीड़्यां मारतौ थौ, तिणनै लाडू देई भाठौ उरहौ लीयौ उणनै कांई, थयौ ?

जद जेठौजी बोल्या—यूं मत कहौ यूं कहौ। माथा मै टाकर नीं दीधी नै भाठौ उरहौ लियौ वले दूजी वेला मारे नहीं, इण मै कांई थयौ ?

लाडू दीयां तौ वले मारै जांणै फेर लाडू देसी। पिण टाकर नी दीधी, तिण नै कांई थयौ ? जद कष्ट होय गया।

१०. थां बिचै म्हे वधता ठैहर्या

फेर जेठौजी नै भेषधार्यां कह्यौ—दौ रुपीया देई बकरौ छोड़्यौ उणनै कांई थयौ ?

जद जेठौजी बोल्यौ—म्हे तौ पांच रुपीया देई नै पिण छोडाय देवां। थांरा मूंहढ़ा आगै दस बकरा मारै नै एक पछेबड़ी दीधां वौ तौ 'दसूंई बकरा पहरा छोडूं' इम कहै तौ थे देवौ कै नहीं ?

जद कहै—म्हे तौ कोई देवां नहीं, म्हारौ मारग नहीं।

जद जेठौजी बोल्यौ—औ तौ धर्म म्हारैं कनै तौ छै अनै थांरै कनै औ धर्म नहीं, इण लेखै थां विचै म्हे वधता ठैहर्या इण धर्म री थांरे छेटी परी। इम कही कष्ट कीधा।

११. कर्म कितरा !

सं० १८६४ देवगढ़ मै आसकरणजी रौ चेलौ चुतरोजी कनै आयनै कहै-मोनै चरचा पूछौ।

जद चुतरोजी बोल्या—थांनै कांई चरचा पूछां ?

जद ऊ बोल्यौ—कांयक तौ पूछौ।

जद चुतरोजी बोल्या—थांरै कर्म कितरा ?

जद ऊ बोल्यौ—म्हारै कर्म बारै है।

जद चुतरोजी पूछ्यौ—किसा-किसा ?

जद उण दोय तीनेक नाम बताय नै बोल्यो—आगै तौ कोई आवै नहीं। पछै ऊ आसकरणजी कनै आयनै समाचार कह्या—म्हैं भीखणजी रा श्रावक सूं चरचा कीधी।

जद आसकरणजी पूछ्यौ—कांई चरचा कीधी ?

जद उण कह्यौ—मोनै पूछ्यौ—थारे कर्म कितरा ?

जद म्हैं कह्यौ—म्हारै कर्म बारै।

जद आसकरणजी कह्यौ—कर्म बारै कठै है, आठ ही तोरणा मुसकल है।

पाछौ जाय नै कहि आव म्हारै कर्म आठ हीज है।

जद उ पाछौ आयनै बोल्यो म्हारै कर्म आठ है, बारै कह्या जिणरौ 'मिच्छामि दुक्कडं' है।

जद चुतरोजी बोल्या—थारां गुरांरै कर्म कितरा ?

जद बोल्यो आ मौंने तौ खबर नहीं।

१२. कूटणौ कठै है।

सरीयारी नां बौहरौजी अनै खींवसरैजी नै कोटा मै भेषधार्‌यां रा श्रावक थांनक मै ले गया। तिणनै भेषधार्‌यां पूछ्यौ—कठै रहौ ?

जद बौहरौजी बोल्या—सरीयारी रहा छां।

जद भेषधारी बोल्या—सरीयारी मैं तौ ऊं भीखण चोर रहै छै।

अठै आवै तो इसौ कूटां। म्हारा साध ले गयौ।

जद बोहरैजी कह्यौ—साध नै कूटणौ कठै है।

जद बोल्या—श्रावकां कनै कूटावां।

जद बौहरौजी बोल्या—श्रावकां कनै पिण कूटावणां कठै है।

० भीखणजी साध न सरधै ०

जद उणांरा श्रावक बोल्या—ऊंचा चालौ इम कहि ऊंचा ले गया। ऐ देखौ गुलाब ऋष बेलै-बेलै पारणौ करै, आटौ खाए चास मै घोल नै। गुलाब ऋष बोल्यौ—हूं बेलै-बेलै पारणौ करूं, आटौ खाऊं, चास मै घोल नै अनै सियाला मै एक अंचलौ ओढ़ूं तौ पिण मौने भीखणजी साध न सरधै।

जद बौहरौजी बोल्या—म्हारै नीलीयौ बळद है, थे तौ आटौ खाऔ अनै ऊं आटो ई न खाए, चारो ईज चरै, थे तौ अचंलौ ओढो हो अनै ऊ औढै ई कोई नहीं उघाड़ो ईज रहै, इम साध हुवै तौ उण नै ई साध कहीयै।

जद गुलाब ऋष बोल्यौ—देखो-देखो मौनै ढांढ़ौ कहै।

जद बौहरौजी बोल्या—म्हैं तौ ढांढ़ौ कोई कह्यौ नहीं थांरा मूंहढा सूं थे ही कहौ छौ।

० आवा रौ कहिणौ कठै हैं ०

इतलै फतैचन्द भेषधारी बोल्यौ—चरचा करणी है तौ म्हां कानी आव।

जद बोहरौजी बोल्यौ—आवा रौ कहिणौ कठै है। 'मिच्छामी दुक्कडं' दो। उणां कनै गयौ थांनक अधूरौ लीप्यौ देखनै बौल्यौ—पूरौ लीपायौ कोई नहीं।

जद ऊ बोल्यौ—म्हे कद लोपायौ है, गृहस्थ लोप्यौ है। इम सदोष आधाकर्मी भोगवै अनै कपट करै एहवा नै ओलखै ते उत्तम जीव जांणवा।

१३. इसौ प्रश्न तौ कबहु न सुण्यौ

स्वामीजी रा श्रावकां दिल्ली कांनी का भेषधारयां नै चरचा पूछी—नव पदार्थ मै जीव केता नै अजीव केता ?

जद ऊ भेषधारी बोल्यौ—पूज बलाकीदासजी देख्या, पूज हरीदासजी देख्या इत्यादिक अनेक नांम लीया, बड़े बड़े मोटे पुरुष देख्या पिण 'नव पदार्थ मै जीव केता अनै अजीव केता' इसौ अडबंग प्रश्न तौ कबहु न सुण्यौ। कहौ तौ जीव का १४ भेद हूं कहूं, कहौ तौ अजीव का १४ भेद हूं कहूं, कहौ तौ पुन का ९ भेद हूं कहूं, कहौ तौ पाप रा १८ भेद हूं कहूं जाव कहौ तौ मोख रा ४ भेद कहूं, पिण नव पदार्थ में जीव केता नै अजीव केता ? इसौ प्रश्न तौ कबहु न सुण्यौ। इम भणणहार बाजै पिण नव पदार्थ री ओळखणा नहीं।

१४. नव तत्त्व री ओळखणा बिनां समकत किम आवै ?

फेर दिल्ली कांनी का भेषधार्यां नै स्वामीजी कै श्रावकां प्रश्न पूछ्यौ—नवपदार्थ मै जीव केता अनै अजीव केता ?

जद ऊ भेषधारी बोल्यौ—पांच जीव नैं चार अजीव कहूं तौ श्रद्धा भीखणजी री। चार जीव नैं पांच अजीव कहूं तौ श्रद्धा रुघनाथजी री। एक जीव नै आठ अजीव कहूं तौ श्रद्धा बगतरामजी री। एक जीव एक अजीव सात जीव अजीव री प्रज्याय कहूं तौ श्रद्धा अमरसींगजी री। आठ जीव नै एक अजीव कहूं तौ श्रद्धा खींवसीजी री। सात नय चार निपेक्षा लगाय कर देव गुरां ना प्रसाद कर सूत्र नी युक्ति लगाय कर कहूं एक जीव एक अजीव सात जीव अजीव री अवस्था। इम नव तत्व ओळखणा नहीं, मन इच्छा प्रमाणै परूपै त्यांनै समकित किम आवै।

१५. इसा मानवी थोड़ा

लोटोती मै खरतरां ना श्री पूज जिनचंद सूरी आया। उपाश्रा मै घणा लोक बैठा बखाण बाचतां आश्रव रौ कथन आयौ जद बोल्या—आश्रव अजीव।

जद चैनजी श्रीमाल स्वामीजी रौ श्रावक बोल्यौ—श्रीजी महाराज ! आश्रव जीव है।

जद श्रीपूजजी बोल्या—आश्रव अजीव है।

जद चैनजी बोल्यौ—आश्रव जीव है ।

जद श्रीपूजजी बोल्या—थै खोटी धारी है ।

जद चैनजी बोल्यौ—आप ईज खोटी धारी है ।

श्रीपूजजी बोल्या—आ चरचा आंपे पछै करसां । बखाण ऊठयां लोक ठिकाणे गया । श्रीपूजजी चरचावादी सिद्धन्ती जत्यां नै बोलाया । कहै—सूत्र देखौ, आश्रव जीव है कै अजीव निरणय करौ ।

जद चरचावादियां निरणय कर आय कह्यौ—सूत्र रै न्याय तौ आश्रव जीव है । जद श्रीपूजजी चैनजी नै बोलायौ, कहै—आश्रव जीव है अनै म्हैं अजीव कह्यौ सो म्हांरे 'मिच्छामि दुक्कडं' छै । तौने खमावां छां । अबारूं तौ कहां छा, पिण खमावणौ तौ काले परषदा मै होसी । दूजे दिन प्रभात रा बखाण मै परखदारा वृंद मै श्रीपूजजी बोल्या—चैनजी म्हैं काले आश्रव नै अजीव कह्यौ अनै थे जीव कह्यौ सो थें तौ सांचा नै म्हे झूठा, म्हांरै मिच्छामि दुक्कडं है । थांनै खमावां छां । इणरीते मांन मेलै । इसा मानवी थोड़ा ।

१६. जीव रौ अजीव थयौ कांई ?

खरतरां नां श्री पूज रंगविजयजी जिनचंदसूरी कृष्णगढ़ हुंता । तिहां भारमलजी स्वामी १० साधां सूं कृष्णगढ़ पधारीया । नवा सैहर मै ऊतर्या । बगीची मै चरचा ठेहराई । ३५ साध नानगजी रा, उगराजी रा, अमरसींगजी रा इत्यादि चरचा करवा आया । ९ साधां सूं भारमलजी स्वामी पधार्या । सैकड़ां लोक भेळा थया । आश्रवरी चरचा चाली । नानगजी रौ निहालजी तौ बोल्यौ—आश्रव अजीव, अनै भारमलजी बोल्या—आश्रव जीव है, स्वामीजी बोल्या—कर्मा नै ग्रहै ते आश्रव, कर्मा नै ग्रहै ते तौ जीव है, अजीव तौ कर्मा नै ग्रहै नहीं । बली स्वामीजी बोल्या—गृहस्थ तौ आश्रवी अनै साधपणौ लीया पछै साधू ते संवरी । आश्रव अजीव कहौ तो कांई अजीव रौ जीव थयो ? अनै साधु भ्रष्ट होय ग्रहस्थ थयौ तौ कांई साधू संवरी जीव थौ ग्रहस्थ आश्रवी थयौ तौ कांई जीव रौ अजीव थयौ ? इम चरचा करनै कष्ट कीधौ । सुद्ध जाब देवा तौ समर्थ नहीं ।

जद बोल्या—"साध नै अजीव कहै रे ।" "साध ने अजीव कहै रे !"

इम हाकौ कर उठया । स्वामीजी पिण आपरै ठिकाणै पधार्या ।

० अै चरचालायक नहीं ०

पछै स्वामीजी री आज्ञा लेई खेतसीजी स्वामी हेमजी स्वामी रायचंदजी स्वामी गौचरी उठया, जद जिनचंद सूरी ब्राह्मण नै मेलनै उपासरा मै बोलाया । साधां नै आंवता देखनै श्री पूजजी पाट सूं हेठा ऊतर नै आंगणै बैठा । साधां नै बेसाण नै बोल्या—आप इणां सूं चरचा करौ, सो अे चरचा लायक नहीं है ।

एक दृष्टंत सुणौ—एक साहूकार री हवेली दोय साध गौचरी गया। ऊपर पगतिया री नाल चढ़ता अंधारौ देखनै पांछा फिर्या। ऊपर सूं हेलो पाड़े—"ऊंचा पधारौ—"ऊंचा पधारौ"। साध तौ पाछा फिर गया। थोड़ी बेला थी दोय साध फेर आया। ऊंचा जाय आहार पांणी बहिरचौ। ग्रहस्थ कह्यौ—पहिला दोय साध आया, सो तौ पाछा फिर गया, अनै आप ऊंचा पधारचा। जद उवे साध बोल्या—"उवे पाखंडी था, सो पाखंड कर गया—"इम कहि उवे पिण गया। थोड़ी बेला सूं दोय साध फेर आया तिवारे ग्रहस्थ बोल्या—दोय साध पहिला आया सो तौ नाळ सू पाछा फिर गया, पछै दोय साध आय बेहरनै उणां नै पाखंडी कहि गया, अनै अबै आप आया हौ जद उवे साध बोल्या—पहिला आया, सो तौ असल साध अंधारौ देखनै पाछा गया। पछै दोय साध आया ते हीणआचारी, दोय मूर्ख—पोते तो पालै नहीं, अनै पालै जिणसूं द्वेष-निंद्या करै। अनै म्हां सूं तौ पळै कोई नहीं। भेख रे ओटै रोटी मांग खावां। पहिला आया जिके धन्य है। इम कहि ते पिण गया।

श्री पूजजी बोल्या—पहिला ज्यूं तौ थे, दूजा ज्यूं ऐ मठधारी थांनक बांध बैठा ते, अनै तीजा ज्यूं म्हे म्हां सूं तो पळै कोई नहीं सो थे यांसूं चरचा करौ, पिण ऐं चरचा लायक नहीं। ए बात सुण नै—साध तीनूं ठिकाणै आय नै भारमलजी स्वामी नै सर्व समाचार कह्या।

० अठा स्यूं विहार कर जाइज्यो नहीं तौ....

पछै भारमलजी स्वामी जैपुर आय चोमासौ कीधौ अनै हेमराजजी स्वामी माधोपुर कांनीं विहार कीधौ। २२ कोस रै आसरे गया आगे नदी बहिती देखी, जद मन मै विचारचौ—कृष्णगढ़ मै भेषधार्‌यां अन्हाख कदाग्रह कीधौ तौ चोमासौ कृष्णगढ़ हुवै तौ ठीक, इम चिंतव विहार पाछौ करनै कृष्णगढ़ पधारचा। दोय जागां आज्ञा मांग एक हाट में ऊतरचा। पछै भेष-धारचां उणनै सीखाय नै जागां छोड़ाय दीधी। जद दूजी हाट जाची। जद उठै प्रथीकाय आंण न्हाखी। पछै उमेदमल श्रावगी री हाटे आज्ञा मांगी ऊतरचा। जद भेषधारी आय बोल्यौ—थे दगादार तेरापंथी हौ, म्हारां पिंडत-पिंडत तौ विहार कर गया, अनै थे छल करनै आया, कै तौ अठा सूं विहार कर जाइजौ, नहीं तौ पातरां बाजार मै ठोकरां रै मूंहढ़ै बूहा फिरैला।

हेमजी स्वामी सुणनै मून राखी। चोमासौ लागौ। बखाण मै लोक मोकळा आवै, पिण संवछरी नौ पोसी एक हुऔ नहीं। पछै लोक समझ्या। सो दीवाली रा पांच पोसा हुआ। जैपुर मै ए समाचार सुणनै भेषधारी तौ बेराजी हुआ नै भारमलजी स्वामी राजी हुआ। सं० १८६९ रौ चोमासौ कृष्णगढ़ कीधौ तठां सूं क्षेत्र नीं नींव लागी।

१७. सुभ जोग संवर किसै न्याय ?

रीयां मै राजमलजी बौहरौ रतनजी कनै गयौ । चरचा करता रतनजी बोल्यौ—सुभ जोग ते संवर ।

जद राजमलजी कह्यौ—संवर नौ स्वभाव तौ कर्म रोकण रौ है । अनै सुभ जोगां सूं तौ पुन्य बंधै, पिण रुकै नहीं, तिण सूं सुभजोग संवर किसै न्याय ?

जद रतनजी बोल्यौ—सुभ जोग प्रवर्त्ते तिण वेला असुभ जोग रा कर्म लागै ते न्याय, सुभ जोग संवर ।

जद राजमलजी बोहरौ बोल्यौ—इण लेखै असुभ जोग नै ई संवर कहौ, असुभ जोग वर्ते तिण वेला सुभ जोग रा कर्म न लागै ते लेखै ।

जद रतनजी बोल्यौ—सूत्र में तो अजोग संवर ईज कह्यौ है म्हांरै परंपरा थी सुभ जोगां नै संवर कहां छां ।

१८. धर्म हुवौ कै पाप ?

भगवानदासजी नम्बरीयौ नगर सेठ । संवेगियां री श्रद्धा । ते पाली मै रतनजी नै पूछ्यौ—काचा पाणी री लोटी मै माखी पड़ी बारै कांढे तिण ने धर्म हुवौ कै पाप ?

जद रतनजी जाब मै अटक्यौ, धर्म कहै तौ हिंस्या मै धर्म, देहरापंथ्यां री श्रद्धा मै मिलै । पाप कहै तो श्रद्धा उठै, जद क्रोध रै वश अकबक बोलवा लागो थे जांणो हूं नगर सेठ छूं, लोकां ने डरावूं, पिण म्हे न डरां इत्यादिक बोलवा लागो ।

१९. साहमीवच्छल नै क्यूं निषेधौ ?

फेर भगवानदासजी बोल्या—श्रावक नै पोख्या कांई हुवै ?

जद रतनजी बोल्या—बेला रा पारणा वाळा श्रावक नै पोख्यां धर्म ह्वै ।

जद भगवानदासजी बोल्या—साध बेला रा पारणा वाळा नै दीधा तथा पारणा विना ई श्रावक नै पोख्यां धर्म क्यूं न कहौ ? अनै इम सर्व श्रावकां नें पोख्यां धर्म कहो तौ म्हांरा साहमीवच्छल नें क्यूं निषेधौ ? अठै पिण सुद्ध जाब न आयौ ।

२०. ऊ वैद्य बुद्धिहीण

पीपार मै दौलजी लूंणावत सूं रतनजी चरचा करतां क्रोध मै आय बोल्यौ—सीतंगिया नै दूध मिश्री पावै ज्यूं सीतंग घणौ वधै ।

जद दौलजी बोल्यौ—ऊ वैद्य हीयाफूट बुद्धिहीण। उणरौ चंद्र बल खिसगयौ सो सीतंग नौ रोग जाणै नै फेर दूध मिश्री पावै। जद शुद्ध जाब देवा असमर्थ थयौ।

२१. अै किसो लेस्या रा लखण है ?

ऋणहि गांम वालौ जीवौजी। तिण नें किसनदासजी गुमांनजी रौ साध बोल्यौ—साधु में लेस्या ३ भलीज है, माठी लेस्या नहीं। इतलै जोरजी कटारीयौ आयौ। जद किसनदासजी बोल्यौ–औ आयौ जीवला रो भरमायौ। जद जीवोजी बोल्यौ—ऐ किसी लेस्या रा लखण है, थे यूं बोलौ हौ सो।

जद किसनदासजी बंध हो गयौ।

२२. डोरी राख्यां पिण दोष ?

संवत १८७९ रे चोमासा मै पाडिहारी छुरी रात्रि पीपार मै हेमजी स्वामी राखी। भीखणजी स्वामी भारमलजी स्वामी री रीत थी। ग्रहस्थ री थकी पाडिहारी राखता, तिण सूं राखी। जद भेखधारी कदाग्रह घणौ कीयौ। अणहूंतौ दोष बतावा लागा। ऋणहि गांम वाला जीवोजी नै कह्यौ—ग्रहस्थ री थकी पिण छुरी रात्रि राखणी नहीं।

जद जीवोजी बोल्यौ—इण में कांई दोष ?

जद भेषधारी बोल्या—रात्रि माहोमाहि झगड़ौ थाय रीस रै वस छुरी सूं मरै तथा मारे, ए दोष।

जद जीवोजी बोल्यौ–तौ नांगला, डोरयां पिण न राखणी डोरी सूं पिण पासी खाय ऊभा रहै, तौ थांरै लेखै डोरी राख्यां पिण दोष है।

२३. दोय तौ म्हैं कह्या आगै थे कहो

स्वामीजी रा श्रावक नै भेषधारी बोल्या—छै काया रा नाम आवै है ?

जद तिण कह्यौ—आवै है, प्रथीकाय अपकाय इत्यादि नाम कह्या जद भेषधारी बोल्यौ—अे तौ गोत है, नाम कठै है ?

जद उण श्रावक नै २ ई नाम आवता हा सो बोल्यौ—इंदी थावरकाय, बंभी थावरकाय ए-२ नाम कह्या।

जद भेषधारी बोल्यौ—आगै कहौ।

जद ऊ श्रावक बोल्यौ—म्हां कनै सीखण मतै है दोय तौ म्हैं कह्या थांनें आवै तौ आगै कहौ।

२४. सै पूरिया ई पूरिया है

संवत १८५६ रे वर्ष नाथद्वारा मैं भीखणजी स्वामी वाय रा कारण सूं १३ महीनां रै आसरै रह्या। भीलोडा रा ४ जणा आया। पूरौ नाबे रौ १ रतनजी छाजेर २ भैरूंदास चंडाल्यौ ३ एक जणौ फेर अे च्यारूं जणा स्वामीजी सूं घणा दिन चरचा कर नै समझ नै गुरु कीया।

जद हेमजी स्वामी भैरूंदास नै पूछ्यौ—थे थांनक करायौ तिण मैं रहे ते साध कडाई में किसायक ?

जद भैरूंदानजी बोल्यौ—आ सरधा नै औ आचार देखता तौ सै पूरीया ई पूरीया है।

जद हेमजी स्वामी पूछ्यौ—पूरीया कांई ?

जद भैरूंदासजी बोल्यौ—एक गांम रौ ठाकुर तिण रै भक्तां रौ इष्ट। सौ भक्तां नै जीमाय चरणामृत ले पग धोय नै पीये। सो एकदा घणा भक्तां नै जीमाय चरणामृत लैतां पोतारा गांम रौ पूरीयो मेघवाल भक्त थयौ ते पिण त्यां भक्तां भेळौ हुंतौ तिणरौ चरणामृत लेतां मूंहढ़ा साहमौ जोयौ ओलख्यौ।

जद बोल्यौ—पूरीया तूं रे !

जद ऊ बोल्यौ—मौने कांई कहौ ठाकरां ! सै पूरीया ई पूरीया है, कोई माहे सरगड़ौ है, कोई थोरी है, कोई बावरी है, कांई सैंधा रा ईंज लागू हो कांई ?

भैरूंदासजी बोल्यौ—ज्यूं आ सरधा आचार देखता और सै पूरीया सरीषा है।

२५. थुकमथुक्का धक्कमधका पछै छक्कमछक्का

स्वामी भीखणजी संवत १८५७ रै वर्ष भीलोडै पधारया। आचार सरधा री ढाळां राते बखाण मै कहिवा लागा। परषदा घणी आई। केयक नागौरी आदि घणा बखांण उठयां पछै स्वामीजी नै आण दराई काले विहार कियौ तौ तीर्थंकरां नीं आण है।

सील भागै त्यांरा टोला मझे, तिण नै दिख्या दै तांम रे
पिण छोटां रै पगे पाडै नहीं, इसड़ौ करै अज्ञानी काम रे
'तुम्हे जोयजो अंधारौ भेख मैं' आ ढाल थे कही।

सो "किणरौ सील भागौ अनै किणनें बड़ौ राख्यौ" इण बात रौ काळे तार काढणो है। मूंहढा मांहि थी अकबक बोलै, पिण स्वामीजी तौ मूंन राखी।

जद घणराजजी नागोरी बोल्यौ—देवळ री प्रतिमा बैठी ज्यूं बैठा हौ, पाछा बोलौ क्यूं नहीं, तौ पिण स्वामीजी मूंन राखी, जद लातर नै जाता

रह्या। कुसाल बागोर वालौ जद टोळा मै हूं तौ ते बोल्यौ—इण खेत्र मै स्वामीजी रै आवा रौ कांम ईज कांई है ?

जद स्वामीजी बोल्या—औ तौ काचौ ।

स्वामीजी नै घणराज ऊधौ अवळौ बोल्यौ, आ बात सिवदासजी गांधी राणांजी रौ प्रधान फौज मै हुंतौ त्यां सुणनै ओळूभो मेल्यौ । थूं घोटो लेई भीखणजी कनै जाय अजोग बोल्यौ । इसो सूरो है तो फोज साहमो जायनै कजीयो करै नीं । साधां सूं क्यूं कजीयौ करै ।

पछै भैरूंदास चंडाल्यौ बोल्यौ—ऐ आप सूं कजीयौ करै, पिण सर्व थोड़ा दिनां मै आपरा ईज ठैहरता दीसे है । तिण ऊपर एक दृष्टांत सुणौ—दिल्ली में पातसाह राज करै । मूंहढ़ा आगै राव रुघनाथ । अग्रवाल जाति । न्याव, तपास, सर्व काम रो करता । देश मै हुकम प्रसिद्ध है । तिण दिल्ली मै एक गरीब अगरवालौ पोता रा पुत्र ने झुग्गो, टोपी पेयराय सिणगार नै गोद लेई बाजार मै आयो जद किणहि हांसी करी पुत्र नै सिणगारयौ है, सो कांई राव रुघनाथ री बेटी सूं सगपण करवा रौ मतौ है ? जद ओ बोल्यौ—इण बात रो मोसो कांई बाहवे, जाति न्यात सुध हुवै कोई रै धन घणौ ह्वै कोई रे थोड़ो हुवै तौ पिण सगपण रौ अटकाव नहीं, इम कही ते गरीब अगरवालौ राव रुघनाथ री कचेड़ी मैं सैंकड़ां लोक बैठा तिहां आय बोल्यौ—राव रुघनाथ ! तुम्हारी लड़की, हमारा लड़का, सगपण करौ ।"

जद रूघनाथ री कुनिजर देख नै मूंहढ़ा आगला निषेध गाळ्यां बोलनै रैकारा तूंकारा देई बारै काढ़ दीयौ । पाछौ बाजार मै आयौ ।

लोकां पूछ्यौ—सगपण कीयौ ?

जद ऊ बोल्यौ—थुक्कमथुक्का तौ हुआ है ।

बीजे दिन डावरा नै सिणगार गोद लेई, फेर कचेड़ी मै जाय बोल्यौ—राव रुघनाथ ! तुम्हारी लड़की हमारा लड़का सगपण करौ" जद धक्का देई बारै कढ़ाय दीयौ ।

फेर लोकां पूछ्यौ—सगपण कीयौ जद बोल्यौ—धक्कमधक्का तौ हुआ है । हाकौ सुणनै रात्रि मै स्त्री पूछ्यौ—दोय दिन थया कचेड़ी मै बेदो क्यूं हुवै ?

जद राव रुघनाथ कह्यौ—एक दलद्री अगरवालो बेटा नै गोद लेई आय नै कहै—"तुम्हारी लड़की, हमारा लड़का, सगपण करौ ।" इण कारण हाकौ हुवै ।

जद स्त्री पूछ्यौ—डावरौ किसोयक है ?

जद राव रुघनाथ कहै—डावरौ तौ फूटरौ है, पिण घर मै खाली है ।

स्त्रियां कह्यौ—थां जिसो कठा सूं ल्यास्यौ ? थे तौ पातसाह रा काम रा करता, इसौ दूजो नहीं, उणरा घर मै नहीं तौ आपां रा घर मै धन घणौ ई है, सो ऊ धनवंत हुंतौ कांई वेळा लागै ।

इम सुण नै राव रुघनाथ रै पिण हीयै बैठी।

हिवै तीजे दिन ते गरीब अगरवालौ पुत्र नै गोद लेई कचेड़ी मै जाय बोल्यौ—"राव रुघनाथ ! तुम्हारी लड़की, हमारा लड़का, सगपण करो" जद स्त्रियां ऊंची बैठी थी, सो वडारणां नै मैलनै डावरा नै बुलाय लियौ। पुन्यवंत देखनै तिलक कर सगाई कर, गैहणा कपड़ा पैहराय, पालखी बैसांण नै सीख दीधी। घणा लोक साथै, छड़ीदार सिपाई, दास प्रमुख वृन्द सहित बाजार मै होय भारी महिला मै डेरा कराया लाखां रूपीयां सूंप दीया बाजार मै पालखी जाती देखनै लोक बोल्या—थुक्कमथुक्का, धक्कमधक्का वालौ सगपण कर छक्कमछक्का कर आयौ है। इम जाति न्याति सुध हुंतौ तौ सगपण मोटे ठिकांणे हुऔ। भैरूंदास बोल्यौ—ज्यूं आप सुद्ध साधपणौ पाळौ हो सो सर्व आपरै पगां पड़ता दीसै है।

परिशिष्ट

३

फुटकर संस्मरण

दृष्टांत

हेमजी स्वामी मूंहढा सूं एती वारता लिखाई संवत् १९०३ चौमासा में—

१. वचन तौ तीखौ पाल्यौ

सोजत मैं अणंदे पटवै कह्यौ हुंतौ—'इण भीखणीया रौ मूंहढौ न देखूं'। इम बार-बार क्रोध रै बस बोल्यौ। पाप रा उदा थी सात मै दिन आंधौ होय गयौ। लोक बोल्या—वचन तौ अणंदेजी तीखौ पाल्यौ। आंधा होय गया सो भीखणजी रौ मूंहढौ कदे ई देखै नहीं। लोक मै घणी निंद्या पायौ।

२. बचावौ तो थै ई कोई नहीं

पीपार मै मौजीरामजी बौहरा नीं बेटी रै कारण पड़्यौ। जद उरजोजी साध थांनक मै था त्यानै बोलावा आयौ कहै—घरे पधारजै।

जद उरजौजी बोल्या—कांई काम ?

जद मौजीरामजी बोल्या—डाबरी रै असाता घणी। तलफा तौड़ै है, सो कांई जंत्र मंत्र कलवाणी करौ, ज्यूं छोहरी रै साता हुवै।

जद उरजोजी बोल्या—म्हांरै साधां रै करणौ कठै है।

जद मौजीरामजी बोल्या—थे कहौ छौ नी म्हे जीव बचावां छां नै भीखणजी जीव बचावै नहीं। यूं ही कहौ–'जीव बचावां-जीव बचावां, पिण बचावौ तो थै ई कोई नहीं।

३. एक आळ्यौ फेर चाहिजै

जोधपुर मै जैमलजी रै थांनक हुवै जद रायचंदजी बोल्यौ—एक आळ्यौ तौ अठै चाहिजै। सोभाचंद फोफलियौ बोल्यौ—अठै आळ्यौ क्यूं चाहिजै ?

जद रायचन्दजी बोल्या—अठै पोथी पाना पड़्या रहै।

जद सोभाचन्दजी बोल्या—एक आळ्यौ इण जागा फेर चाहीजै।

जद रायचन्दजी बोल्यौ—अठै आळ्यौ क्यूं चाहीजै ?

जद सोभाचन्द बोल्यौ—अठै आपरा महाव्रत पड्या रहसी। गांम-गाँम कठै लीयां फिरौ।

४. तूंतरा-तूंतरा करनै बिखेर दां

भीखणजी स्वामी नीकलीया जद रुघनाथजी जैमलजी नै कह्यौ—आंपे तौ घणा छां अनै अै १३ जणा है। हीमत पकड़ौ तौ तूंतरा-तूंतरा करनै बिखेर दां।

जद जैमलजी बोल्या—"साहिपुरा ना राजा ऊपर राणाजी री फौज आई, कजीयौ करवा लागा। पिण राणाजी री फोज रौ जोर लागौ नहीं, ते कारण एक तौ साहिपुरा नौ कोट भारी, दौली पांणी सूं भरी खाई। माहै तोपां रौ जोर घणौ अनै राणांजी री फौज माहिला झगड़ौ करै ते अमराव पिण साहिपुरा वाळा सूं तोरण मते नहीं। सो छ महीना तांई खपीया लाखां रुपीया उपऱ्या पिण साहिपुरौ हाथ आयौ नहीं। फौज पाछी ठिकांणें गई।" ज्यूं भीखणजी सूं आंपे चरचा करां यांरौ वांसौ करां तौ एक तौ यांरै सूत्रां रौ जोर घणौ, कांम पड्यां सूत्र दिखावै। पोतै आचार में सेठा फेर आंपे माहि रह्या सो आंपां री माहिली वातां जाणै सो यां सू चरचा कीधां आंपां रा तूंतरा-तूंतरा कर नै विखेर देवैला यांरौ तिथ न करा तौ अै सांकडा चालै तौ आंपां रौ ईज जश हुसी। रुघनाथजी रा चेला तीखा चालै है यूं लोक कहसी। इम कही जैमलजी तौ वांसौ न कीयौ। अनै रुघनाथजी वांसौ कीयौ। चरचा ठाम-ठाम करी जद उणांरा श्रावक ईज घणा समझ्या।

५. फकीर वालौ दुपटौ

स्वामीजी नवौ साधपणौ लेवा त्यार थया। जद जोधपुर जैमलजी भेळौ चौमासौ कीधौ। जैमलजी रा साधां रै श्रद्धा बैठी। थिरपालजी फतैचन्दजी आदि रै वले जैमलजी रै पिण श्रद्धा बैठी। अै समाचार रुघनाथजी सुण्या। जद सोजत रा भायां कनै कागद लिखायनै जोधपुर मैल्या। जैमलजी नै कहिवायौ थांरै श्रद्धा भीखणजी री बैठी सुणी है सो थांरा टोळा माहिला चोखा-चोखा साध चोखी-चोखी आर्यां देखसी ते तौ लेसी। बाकी घणां नै लाडै कोडै घर छोड़ाया ते सर्व थांनै रोवसी। नाम तौ भीखणजी रौ हुसी टोळौ भीखणजी रौ बाजसी थांरो नांम पिण विशेष रहै नहीं। फकीर वालौ दुपटौ हुसी। जिम एक फकीर नै दुपटो राजा दीयौ। सो साहूकार नौ बेटौ परणीजै जद फकीर कनै दुपटौ मांग्यौ। जद फकीर बोल्यौ—मोनै जांन सांथै ले जावौ तौ देवूं। जद साहूकार दुपटौ लेई फकीर नै साथे ले लीयौ। हिवै जांन उण गामरै गोरवै ऊतरी। बींद देखवा लोक आया। वींद ने सरावै, गैहणा कपड़ा भारी बींद पिण रूपवंत घणौ, पिण दुपटो तौ घणौ ई भारी। दुपटा नै लोक घणौ सरावै। जद फकीर बोल्यौ-दुपटौ हम गरीब रौ है। जद साहूकार वरज्यो रे! बोल मती सांई! आगै सैहर माहै गया। फेर

लोक वींद री, गैहणा कपड़ा री प्रसंसा करै, पिण कहै, दुपटौ तौ वाह वाह ई है जद फकीर फेर बोल्यौ—दुपटौ तौ हम गरीब रौ है। वले साहूकार वरज्यौ रे सांई ! बोळ मती। इम हिज तोरण रै मूंहढै लोक दुपटा नै सरावै, जद फकीर कहै— दुपटौ तौ हम गरीब रौ है। जद साहूकार जांण्यौ वरज्यौ तौ ही रहै नहीं। जद दुपटौ न्हांख दीयौ, औ थारौ दुपटौ अबै जातौ रहै। "रुघनाथजी जैमलजी नै कहिवायौ। ज्यूं विहाव तौ साहूकार नां बेटा रौ। अनै घणी प्रसंसा दुपटा री ज्यूं साध साधवी तौ थांरा लेसी अनै टोळौ भीखणजी रौ बाजसी ए समाचार सुण नै जैमलजी रा परणांम भाग गया। जद जैमलजी बोल्या—भीखणजी हूं तौ गळा तांई कळ गयौ। पंडतां रै जांणी बरतै है। थे चोखौ पाळौ।

६. बड़ो कर्म है नाम को

जैमलजी जैपुर आया जद फरसरांम कूकरै चौमासा री वीणती कीधी। जद जैमलजी बोल्या—म्हांरौ चौमासौ हुआं वांदवां नैं बाई भाई केई आवै। दुर्बल पिण केई आशा धरनै आवै सो थांसूं सभै नहीं। तिण कारण अठे चौमासौ करण रौ अवसर नहीं। जद फरसराम बोल्यौ—आ हजार रुपीयां री थैली आपरा पाट हेठै आंण मेली है। फेर चाहीजै तौ पिण अटकाव नहीं। पिण चौमासौ अठै करौ। पछै चौमासौ जैपुर जैमलजी कीधौ। सांमीदासजौ जैपुर चौमासौ कीयौ। हिवै पज्जुसण संवच्छरी आयां पोसां री खांचाखांच घणी मंडी। केई तौ जैमलजी कांनी ले जावै नै केई सांमीदासजी कांनी ले जावै। इम करता सौ पोसा तो जैमलजी रै थया नै सो पोसाई सांमीदासजी रै थया। एक भायौ पोसौ करण आयौ आथण रौ। जद खांच नै सामीदासजी कांनी ले गया। प्रभाते गिणीया सौ जैमलजी रे तौ पोसा १०० हुआ। अनै सांमीदासजी रै १०१ थया। जद जैमलजी बोल्या—

धर्म तौ छै जिम छै, बड़ौ कर्म है नांम कौ।
एक भाया नै खांचतां, सिक्को रहि गयौ सांम कौ।

७. जांण्यौ एक मुसलौ वधतौ मार्‌यौ

नगजी जाति रौ गूजर। तिण घर छोड़ नै भेष पहिरचौ। ते दोनूं गुरु चेला विहार करता थका करेड़ै आवै। मारग मैं एक चोर उठ्यौ। सो गुरां रा तौ कपड़ा खोस लीया। नगजी रा लेवा लागौ। जद नगजी बोल्यौ—थां कनै तरवार है म्हारै लोह रौ संघट्टौ करणौ नहीं। सौ शस्त्र अलगा मेल दै। जब तिण शस्त्र दूरा मेल्या। कपड़ा लेवा आघौ आयौ। जद नगजी चोर रा दोनूं बाहुंड़ा पकड़्या। पछै कूटवा लागौ जद तिणरौ गुरु बोल्यौ—रे ! अनर्थ करै। मनुंष मारै है। जद नगजी बोल्यौ—यूं साधां नै खोसै जद विचरसा

किसतरै सूं । म्हें तौ घर में ई घणा ई मुसला मार्‍या था जांण्यौ एक मुसलौ बधतौ मार्‍यौ । एक तेलौ प्राछित रौ उरहौ लेसूं । पिण इणनै तौ छोडूं नहीं । पछै गुरु घणौ कह्यौ मार मती । जद कमडरी दोरी सूं दोनूं हाथ पूठै बांध गांम रै गोरवै आंणनै छोड़ दीयौ ।

८. भीखणजी रौ साध तौ एकलो नहीं फिरै

रूपचंद छोटौ । स्वामीजी रा दर्शण करवा आंवतो मार्ग मै ताराचंदजी स्वामी मिल्या । त्यां पूछ्यौ—थे किणरा साध ? जद रूपचंद बोल्यौ—हूं भीखणजी रौ ज ।

जद ताराचंदजी बोल्या—भीखणजी रौ साध तौ एकलौ नहीं फिरै । जद रूपजी बोल्यौ–हूं टोळा बारै छूं । मो में साधपणौ कोई नहीं, मौनैं वंदणा करौ मती । इम कहिनैं आघौ चाल्यौ । मारग मैं चोर उठ्यौ । तरवार काढ नें कहै—कपड़ा न्हांख दै । जद रूपजी पात्रा दिखाया । जब चोर बोल्यौ—कमडि खोल । जद रूपजी त्रिसूल चढाय मूंछां रौ केश तोड़नै बोल्यौ—इण पींपलरा पेड़ आगै जावा देऊं तौ असल गुरु नों मूंड्यौ ई नहीं । जद चोर न्हास गयौ । पछै रूपजी बड़ी रावळिया जाय सामी भीखणजी रा दर्शण कीया पछ रूपजी इद्रगढ़ गयौ । तेहनौ विस्तार तौ घणौ है ।

हेम दृष्टांत

मुनि हेमजी ने गृहस्थ अवस्था में अनेक व्यक्तियों से चर्चा की। प्रश्नों के उत्तर दिये। उन उत्तरों को उन्होंने स्वयं लिखाया। वे इस प्रकार हैं—

१. क्या इतनी चर्चा ही मुझे नहीं आती?

हेमजी के वेषधारियों से स्वयं चलाकर पहले बोलने का त्याग था। वैसी स्थिति में अमरसिंहजी के स्थानक में जाकर खड़े हो गए।

साधुओं ने पूछा—कहां के हो?

हेमजी स्वामी बोले—सिरियारी का हूं।

इतना कहकर उनसे चर्चा के रूप में प्रश्न पूछा—सामायक जीव या अजीव? तब वह साधु बोला—भीखणजी के श्रावकों से चर्चा करने की मेरे गुरु की आज्ञा नहीं है।

बीच में दूसरी बात करके थोड़ी देर के बाद हेमजी स्वामी ने पूछा—तुम्हारा ओघा (रजोहरण) जीव है या अजीव?

तब वह बोला—इतनी चर्चा ही मुझे नहीं आती क्या? ओघा अजीव है।

तब हेमजी स्वामी बोले—तुम कहते थे न भीखणजी के श्रावकों से चर्चा करने की मेरे गुरु की आज्ञा नहीं है, तो अब यह ओघे की चर्चा क्यों बतलाई? या यों मानूं कि सरल प्रश्न तो बतला दिया और कठिन प्रश्न नहीं आता तब कहते हो—मेरे गुरु की आज्ञा नहीं। इस प्रकार निरुत्तर कर वापस आ गए।

२. नरक में भी अजीव जाएगा?

सिरियारी में टीकमजी से पूछा—जीव मारे, वह धर्म या पाप?

टीकमजी बोले—पाप।

फिर पूछा—झूठ बोले वह धर्म या पाप?

टीकमजी बोले—पाप।

चोरी करे, वह धर्म या पाप?

टीकमजी ने कहा—पाप।

फिर पूछा—मैथुन, परिग्रह सेवन करे यावत् १८ पाप सेवन करे वह धर्म या पाप?

टीकमजी बोले—पाप।

तब फिर हेमजी स्वामी ने पूछा—पाप जीव या अजीव?

टीकमजी—पाप तो अजीव है।

तब हेमजी स्वामी ने कहा—तुम्हारे कथनानुसार अजीव जीव को मारे, अजीव झूठ बोले, अजीव चोरी करे, अजीव स्त्री का सेवन करे, अजीव ही परिग्रह यावत् अठारह पाप का सेवन करे, तो नरक में भी अजीव जाएगा?

तब टीकमजी बोले—भीखणजी ऐसा कहते हैं और हम ऐसा कहते हैं यह कहकर झूठ बोलकर काम निकाला।

३. मेरे से क्या चर्चा करते हो ?

भारीमालजी स्वामी के बाबे का बेटा भाई। उसका नाम था डूंगरसी। वह अमरसिंहजी की सम्प्रदाय में साधु बना। वह सिरियारी आया। उसका आकार, शरीर, भारमालजी स्वामी जैसा लगता था। हेमजी स्वामी उससे चर्चा पूछने लगे, तब वह बोला—मैं तो भारमालजी का भाई हूं, मेरे से चर्चा क्या करते हो ?

तब हेमजी स्वामी बोले—ठीक है तुम्हारे से चर्चा नहीं करूंगा। उत्तम पुरुषों का नाम और शरण लेने पर उससे चर्चा नहीं की।

४. क्या समझकर बतलाया ?

(हेमजी स्वामी) पाली में टीकमचन्दजी के पास चर्चा करने गये। स्थानक में मकोड़े को चलते देखकर उनका सवाई नामक साधु बोला—हेमजी ! मकोड़ा······· मकोड़ा···········

तब टीकमजी बोले—हेमजी ! इसने तुमको मकोड़ा बतलाया, इसको क्या हुआ ?

तब हेमजी स्वामी ने कहा—मुझे पाप से बचाने के लिए बताया या मकोड़े पर मोह आ गया इसलिए बताया ?

टीकमजी बोले—हेमजी को पाप लगेगा, यह समझकर पाप से बचाने के लिए बतलाया।

तब हेमजी स्वामी ने सवाई से पूछा—तुमने क्या समझकर बतलाया ? 'मकोड़ा बेचारा मर जाएगा' यह समझकर बतलाया क्या ?

तब सवाई बोला—मैंने तो बेचारा मकोड़ा मर जाएगा, यह समझकर बतलाया।

तब हेमजी स्वामी ने टीकमजी से कहा—तुम दूसरों के बदले में झूठ क्यों बोलते हो ? यह तो कहता है—मकोड़े के लिए और तुम कहते हो पाप से बचाने के लिए, इस हिसाब से यह झूठ क्यों बोला ? इस प्रकार निरुत्तर कर स्थान पर आए।

५. हेमजी चर्चा करोगे ?

हेमजी स्वामी ने दीक्षित होने के बाद चर्चा की, वह इस प्रकार है—सं० १८५५ में भिक्षु १ भारमल २ खेतसीजी ३ और हेमजी स्वामी ४। इन चार साधुओं ने पाली में चातुर्मास किया। उसके बाद श्रावण मास में केलवे के चपलोत उदैरामजी ने पाली में आकर दीक्षा ली, तब ५ साधु हुए। हेमजी स्वामी और उदैरामजी 'लोढ़ा के वास' में गोचरी गए। मुकन दांती ने कहा—गुरुजी को कहो कि टीकमजी से चर्चा करे। तब हेमजी स्वामी ने कहा—टीकमजी का मन हो तो मेरे से ही चर्चा करो। तब मुकन दांती ने कहा—तुम टीकमजी से चर्चा करोगे ?

मुनि हेमजी—हां करने का विचार है।

टीकमजी बहुत से लोगों के साथ वास के आगे खड़े थे। वहां गोचरी करके मुनि हेमराजजी आये, तब टीकमजी ने पूछा—हेमजी ! चर्चा करोगे ?

तब हेम मुनि ने कहा—तुम्हारा मन हो तो करने का विचार है, यह कहकर चर्चा छेड़ते हुए कहा—नव पदार्थ में सावद्य कितने ? निरवद्य कितने ? न सावद्य, न निरवद्य ऐसे कितने ?

तब टीकमजी बोले—जीव और आश्रव सावद्य निरवद्य दोनों, अजीव पुण्य, पाप, बंध, सावद्य निरवद्य दोनों नहीं, संवर, निर्जरा, मोक्ष निरवद्य। यह टीकमजी की मान्यता नहीं पर उनको तेरह द्वार का थोकड़ा कंठस्थ था इस कारण अपना पल्ला छुड़ाने के लिए यह उत्तर दिया।

तब हेमजी स्वामी ने पूछा—आश्रव जीव या अजीव ?

टीकमजी—आश्रव अजीव।

तब हेमजी स्वामी ने कहा—तुम आश्रव को अजीव कहते हो तो पहले आश्रव को सावद्य निरवद्य दोनों कहा और अजीव को सावद्य निरवद्य एक ही नहीं कहा, उस हिसाब से तो आश्रव अजीव नहीं ठहरा। ऐसा कहने पर निरुत्तर हो गए। सही उत्तर देने में असमर्थ होते हुए भी बोले—मैं कहता हूं वैसे ही सूत्र भगवती में है। तब जती नायकविजयजी ने उपाश्रय में से भगवती लाकर सौंपी। तब टीकमजी ने भगवती के बारहवें शतक के पांचवें उद्देशक के उन पाठों को निकाला—जिनमें क्रोध, आशा, तृष्णा, रूद्र और चंड में वर्णादिक १६ बोल बतलाए हैं। तब हेमजी स्वामी बोले—तुमने पहले कहा 'आश्रव सावद्य निरवद्य दोनों हैं और अजीव' वैसे बताओ। पर वैसा पाठ निकला नहीं।

६. दूसरी चर्चा करो

उसके बाद जती नायकविजय उनको उपाश्रय में ले गया। हेमजी स्वामी पूर्व दिशाभिमुख तथा टीकमजी पश्चिम दिशाभिमुख बैठे।

लोग बोले—इस चर्चा में तो हमें कुछ समझ में नहीं आता। दूसरी चर्चा करो। टीकमजी ने भी कहा—दूसरी चर्चा करो।

तब हेमजी स्वामी ने कहा—पहली चर्चा का ही उत्तर दो। इस प्रकार अनेक बार आमने-सामने कहना पड़ा।

उसके बाद टीकमजी बोले—भगवान् ने गोशालक को बचाया उसमें क्या हुआ ?

हेमजी स्वामी बोले—आगम में कहा है, वही सही है।

तब टीकमजी ने भगवती का पाठ निकाला पर अनुकंपा के लिए गोशालक को बचाया। इस पाठ का अर्थ पढ़कर नहीं सुनाया।

हेमजी स्वामी बोले—इस पाठ के अर्थ को क्यों नहीं पढ़ रहे हैं ?

फिर भी टीकमजी ने अर्थ नहीं पढ़ा।

तब जती नायकविजयजी बोले—इधर लाओ, मैं पढ़ता हूं, यह कहकर पत्र हाथ में लेकर पढ़ने लगे—गोशालक का संरक्षण भगवान् ने सरागपन के कारण—दयार्द्र

---

१. भगवती शतक १२ सू० १०३—१०७।

होकर किया किन्तु सर्वानुभूति और सुनक्षत्र मुनि का संरक्षण वीतराग तथा लब्ध्युपजीवी न होने के कारण नहीं करेंगे यह अर्थ पढ़कर सुनाया। तब हेमजी स्वामी बोले—यहां तो सरागपन के कारण गोशालक को बचाया यह कहा है।

तब जतीजी ने भी कहा—यहां तो सरागपन कहा है।

तब टीकमजी बोले—भगवान् ने तपस्या की वह भी सरागपन में की। तब हेमजी स्वामी बोले- तपस्या सरागपन कहां है ? तपस्या तो क्षयोपशम भाव है। वीतरागपन का नमूना है। तब टीकमजी कुछ जवाब नहीं दे सके और निरुत्तर हो गए।

७. हम क्यों जाएं ?

किसी ने भीखणजी स्वामी से कहा—लोढ़ों के उपाश्रय में हेमजी टीकमजी से चर्चा कर रहे हैं। लोग बहुत इकट्ठे हो गए हैं इसलिए आप पधारें। स्वामीजी ने कहा—हम क्यों जाएं ? जय होगी तो अच्छी ही है। अगर हार जाएगा, तो दूसरी बार चर्चा करता रहेगा।

इतने में दो बालक जेतसी और इंदोजी दौड़ते हुए आकर स्वामीजी से बोले—उपाश्रय की चर्चा में हमारी विजय हुई। टीकमजी निरुत्तर हो गए।

८. भीखणजी उपकार को मानते हैं

कस्तूरमल जालोरी ने प्रश्न पूछा—मूंगों से भरी कोठी में बहुत से जीव पैदा हो गए, अब क्या करना चाहिए ?

तब टीकमजी ने कहा—जीवशाला में एक तरफ रख देने चाहिए। हेमजी स्वामी से पूछा—आप क्या कहते हैं ?

मुनि हेम—हम तो कहते हैं—कोठी के हाथ ही नहीं लगाना, मूंगों का स्पर्श ही नहीं करना, यह कहकर अनुकंपा चौपी की 'द्रव्ये लाय लागी, भावे लाय लागी' इस ढाल की काफी गाथाएं सुनाई। उसमें कहा—"कूआ बारै, लाय बारै काढै, सो औ तौ उपगार कीयौ इण भव रौ"—अर्थात् कुअें में गिरे हुए अथवा लाय में फंसे हुए व्यक्ति को कोई बाहर निकालता है, तो यह इस भव संबंधी (लौकिक) उपकार है। इस पद को सुनकर लोग बोले—भीखणजी भी उपकार को मानते हैं। तब मुनि हेम ने कहा—इस उपकार को तो मानते हैं। तब लोग खूब प्रसन्न हुए। इतने में चतुराशाह आकर बोले—अच्छी चर्चा हुई। परस्पर प्रेम रहा। अब पधारो। तब अपने स्थान पर पधार गए। स्वामीजी को सारे समाचार सुनाए। स्वामीजी सुनकर अत्यंत प्रसन्न हुए। उन्होंने इस चर्चा को पत्र में लिख दिया।

९. तुम्हारी श्रद्धा तुम्हारे पास, हमारी श्रद्धा हमारे पास

पाली के बाहर शौचार्थ गए उस समय हेमजी स्वामी से टीकमजी बोले—तुम्हारे अनुकंपा नहीं है। तुम जीवों को बचाते नहीं हो।

तब हेमजी स्वामी ने कहा—हमारे यहां अनुकंपा बहुत गहरी है। भगवान् ने जैसे कहा है, उसी तरह हम हिंसा छुड़ा देते हैं। तुम लोग कहते हो, हम बलपूर्वक

बचाते हैं, तो सामने यह हरा घास ऊगा है, गाय आकर इसे खाने लगी, तुम देख रहे हो तो इसको छुड़ाओगे या नहीं ? तब उत्तर अटक गया। मुस्कुराकर बोले—'तुम्हारी श्रद्धा तुम्हारे पास, हमारी श्रद्धा हमारे पास' यह कहकर चलते बने।

१०. किसके सम्प्रदाय की ?

जोधपुर में कुछ इतर सम्प्रदाय की साध्वियों को मुनि हेम ने पूछा—तुम किसकी सम्प्रदाय की हो ? तब वे तमक कर बोली—तुम्हारे गुरु का शिर मूंडा, उनके संप्रदाय की।

तब हेमजी स्वामी ने कहा—मेरे गुरु का मस्तक तो सबसे पहले नाई ने मूंडा था तो क्या तुम नाई के टोले की हो ? तब खीसियानी-सी होकर वहां से चली गई।

११. तुम तो जीवित बैठे हो ?

सं० १८७८ के वर्ष नाथद्वारा में रुघनाथजी के साधु बोले—तुम स्थानक बनाने को दोष बतलाते हो, तो भारमलजी स्वर्गस्थ हुए, तब बैंकुठी बनाई। ग्यारह सौ रुपये लगाए, यह तुम्हें कितना पाप लगा ? तब मुनि हेमजी ने कहा—उनको तो दिवंगत होने के बाद बैंकुठी में बिठाया, उस कारण साधुओं को पाप नहीं लगा। उसी तरह तुम्हें भी दिवंगत होने के बाद स्थानक में बिठाए तो तुम्हें भी पाप न लगे पर तुम तो जीवित स्थानक में बैठे हो अतः तुम्हें पाप लगता है। यह सुनकर हड़····हड़····हंसने लगे।

१२. हिंसा में धर्म कहां ?

वीलावास में एक देहरावासी (मूर्तिपूजक) बोला—हिंसा के बिना धर्म होता ही नहीं, अगर होता हो तो बतलाओ ?

तब हेमजी स्वामी बोले—तुम यहां बैठे हो और वैराग्य से यावज्जीवन तक हरियाली खाने का त्याग कर दिया, यह धर्म हुआ कि नहीं ?

तब वह बोला—यह तो धर्म हुआ।

तब हेमजी स्वामी बोले—यहां क्या हिंसा हुई ? तथा तुमने यहां बैठे ही वैराग्य से शीलव्रत स्वीकृत किया तो यह धर्म हुआ, यहां क्या हिंसा हुई ? इस प्रकार हिंसा के बिना तो धर्म होता है पर हिंसा में धर्म होने की बात तो कहीं रही, हिंसा से तो धर्म समाप्त होता है। कहीं पर साधु आये, उन्हें देखकर गृहस्थ बहुत प्रसन्न हुआ। आहार आदि देने के लिए उठा। हर्ष से आते समय एक सचित्त दाने पर पैर लग गया तो साधु उससे नहीं वहरते। इतनी-सी हिंसा से ही धर्म नहीं रहा।

१३. इतना अंतर क्यों ?

पाली में संवेगी सम्प्रदाय के श्रावक बोले—भावी तीर्थंकर को वन्दना करनी चाहिए।

तब हेमजी स्वामी बोले—तुम प्रतिमा बनाने के लिए पाषाण लाए, उस पाषाण की प्रतिमा होने वाली है, उस पाषाण को वन्दना करते हो या नहीं ? इसका उत्तर नहीं दे सके।

फिर उनसे कहा—प्रतिमा बन गई, पर उसकी प्रतिष्ठा नहीं हुई तो उसको वंदना नहीं करते हो, प्रतिष्ठा होने के बाद कौन सा गुण बढ़ा ? (भावी) तीर्थंकर का जीव नरकादिक में या गर्भ में है, तो भी उनको वंदना करते हो और पाषाण लाए उसकी प्रतिमा बना ली पर प्रतिष्ठा नहीं हुई, तो भी वंदना नहीं करते। 'जिन प्रतिमा जिन सारखी', अर्थात् जिन प्रतिमा को जिन जैसी मानते हो तो फिर इतना अन्तर क्यों ?

१४. हमें अकल्पनीय नहीं लेना है

हेमजी स्वामी एक घर में गोचरी गए। तब दूसरी घरवाली ने किंवाड़ खोल दिया। उससे पूछा तो बोली—मैंने नहीं खोला। किंवाड़ की सांकल को हिलती देखकर बोले—सांकल हिल रही है इससे तो ऐसा लगता है कि तुमने अभी किंवाड़ खोला है। तब वह बोली—आप तो पूछताछ बहुत करते हैं, दूसरे ऐसे नहीं करते। तब हेमजी स्वामी बोले—बहन ! हमें अकल्पनीय नहीं लेना है न ?

१५. पुनियां तो बर्तन में काफी है

हेमजी स्वामी गोचरी गए। एक बहन ने किंवाड़ खोल दिया। उससे किंवाड़ खोला ?

तब वह बोली—मैं तो सूत कात रही थी अतः पुनी के लिए खोला है, आपके लिए नहीं।

तब हेमजी स्वामी ने उसके पुनी रखने वाले बर्तन को देखा। उसमें काफी पुनियां देखकर कहने लगे—बहन ! तूने कहा—पुनी लाने के लिए खोला, पर लगता है, इस बर्तन में काफी पुनियां हैं। ऐसा कहने पर वह सहम गई।

१६. क्या त्याग करूं ?

सीहवा गांव में मानजी खेतावत को कहा—रात में खाने का त्याग करो। तब मानजी बोले—रात्रि-भोज का त्याग करूं तो चन्द्रमा नाराज हो जाए। दिन में खाने का त्याग करूं तो सूर्य अप्रसन्न हो जाए। अब क्या त्याग करूं ?

तब हेमजी स्वामी बोले—अमावस की रात में चांद-सूरज दोनों ही नहीं रहते। उसमें खाने के त्याग करो। तब वह बोला—ठीक है, त्याग करवा दो।

१७. यह मनोरथ तो फलित होता नहीं लगता

चेलावास में हीरजी नामक जती को उलटी-सीधी चर्चा करते देखकर हेमजी स्वामी ने कहा—हीरजी ! अगर तुम्हें राजाजी आज्ञा दे दे—'तुम्हारा मन हो वैसे करो' तो तुम क्या करो ? तब हीरजी बोले—ढूंढियों को तो एक ही न रखूंगा, सबको अपने हाथ से मारूंगा। हेमजी स्वामी बोले—मुझे तो छोड़ देना। अपने तो आपस में प्रेम है।

हीरजी बोले—सबसे पहले तो तुम्हें ही मारूंगा।

तब हेमजी स्वामी बोले—यह तो तुम्हारे मन का मनोरथ फलित होता नहीं लगता, फिर यह ख़राब भावना क्यों रखते हो ?

१८. क्या समझते हो ?

जोधपुर में किसी ने पूछा—विजयसिंहजी (नरेश) ने अमारी पडह पशु वध न करने की घोषणा करवाई। उसका उन्हें क्या हुआ ?

तब मुनि हेम बोले—ये मानसिंहजी जलंधरनाथजी की पूजा करते हैं, उसको तुम क्या समझते हो ? (श्रद्धते हो) तब वापस प्रत्युत्तर नहीं दे सके।

१९. अव्रत दायीं तरफ या बायीं तरफ ?

एक इतर सम्प्रदाय के साधु ने सिरियारी में पूछा—भीखणजी ने जोड़ की है—

"साध नैं श्रावक रतनां री माला, एक मोटी दूजी नान्ही रे।
गुण गूंथ्या च्यारूं तीरथ ना, अव्रत रह गई कानी रे ॥ चतुर०

(साधुपन और श्रावकपन रत्नों की माला है, एक बड़ी और दूसरी छोटी। वह कथन चार तीर्थ के गुण ग्रंथन की दृष्टि से हैं। इससे अव्रत एक ओर रह गई।) तो यह अव्रत बायीं ओर रही या दायीं ओर ?

तब मुनि हेमजी स्वामी ने कहा—जीव के असंख्यात प्रदेशों में अव्रत है और असंख्यात प्रदेशों में ही व्रत है। गुण पृथक्-पृथक् है। व्रत से अव्रत अलग है, इस अपेक्षा से अलग कही है।

२०. तीन मिच्छामि दुक्कडं

सं० १८७५ पाली में गोचरी जाते समय हेमजी स्वामी को संवेगी साधु रूपविजय ने उपाश्रय की खिड़की से आवाज दी—हेम ऋषि ! आओ, हेम ऋषि ! आओ, चर्चा करें। मुनि हेम आकर बैठ गए। संवेगी सम्प्रदाय के लोग काफी इकट्ठे हुए।

रूपविजय बोले—मुंह किसलिए बांधा है ?

हेमजी स्वामी—दया के लिए।

रूपविजय—दया किसकी ?

हेमजी स्वामी—दया वायुकाय की।

रूपविजय—वायुकाय के जीवों के शरीर चार स्पर्शी है या आठ स्पर्शी ?

हेमजी स्वामी—आठ स्पर्शी।

रूपविजय—भाषा के पुद्गल चार स्पर्शी है या आठ स्पर्शी ?

हेमजी स्वामी—भाषा के पुद्गल चार स्पर्शी।

रूपविजय—चार स्पर्शी से आठ स्पर्शी की हिंसा कैसे ? पुनी ऊपर पड़ने से पाडी (भैंस की बछड़ी) मरती है ?

हेमजी स्वामी—पूनी पड़ने से पाडी नहीं मरती पर सौ मण की शिला पड़ने से तो पाडी मरती है, वैसे ही भाषा बोलते समय आठ स्पर्शी अचित वायु पैदा होती है, उस आठ स्पर्शी नयी वायु से वायुकाय के जीव मरते हैं। ऐसा कहने पर रूपविजय को उत्तर नहीं आया। तब फिर रूपविजय बोला—ऐसे जीव मरे तब तो तीन स्थानों को बांधो। १. नीचे का स्थान २. मुंह और ३. नाक।

मुनि हेम—ठीक है। छींक आए तब मुख पर हाथ देना बतलाया है।

'छीए, जंभाइए, वायनिसग्गेणं' यह पाठ 'तस्सउत्तरी' (आवश्यक) सूत्र में कहा है या नहीं ?

रूपविजय—कहा तो है। इस चर्चा में भी निरुत्तर हो गया। तब रूपविजय फिर बोले—जीव मारने से नहीं मरता, जलाने से नहीं जलता, काटने से नहीं कटता, बाढ़ने से नहीं बढ़ता। इस प्रकार जब जीव नहीं मरता है, तब हिंसा कैसे लगे ?

तब हेमजी स्वामी बोले—भगवती सूत्र में कहा गया है—आधाकर्मी आहार आदि भोगने से छह काया का घाती कहा जाता है और निर्दोष भोगने से छह काया का दयावान कहा जाता है।

अगर जीव मारने से न मरे, तो आधाकर्मी भोगने से छह काय का घाती क्यों कहा ? यहां भी रूपविजय निरुत्तर हो गए।

फिर हेमजी स्वामी ने कहा—अगर उघाड़े मुख बोलने में वायुकाय की हिंसा नहीं मानते हो तो मुख के आगे वस्त्र क्यों रखते हो ?

रूपविजय—हम तो वचन-शुद्धि के लिए मुखवस्त्रिका रखते हैं।

हेमजी स्वामी बोले—वचन-शुद्धि अधूरी क्यों ? कभी तो मुखवस्त्रिका मुख के आगे रहती है और किसी समय पूरी यतना नहीं रहती, उघाड़े मुख बोलते हो, इसलिए वचन-शुद्धि भी पूरी नहीं।

फिर हेमजी स्वामी बोले—गौतम ने भगवान् महावीर से पूछा—इन्द्र भाषा बोलता है, वह सावद्य या निरवद्य ? भगवान् ने कहा—इन्द्र उघाड़े, मुख बोले वह तो सावद्य और मुख के आगे हाथ या वस्त्र रखकर बोले वह निरवद्य।" भगवती में यह बात कही है या नहीं ?

रूपविजय बोला—कही तो है। यहां भी रूपविजय निरुत्तर हो गया। फिर हेमजी स्वामी ने प्रश्न पूछा—नव पदार्थ में सावद्य कितने, निरवद्य कितने ? सावद्य निरवद्य नहीं, कितने ?

नव पदार्थ में जीव कितने ? अजीव कितने ?

नव पदार्थ किसे कहते हैं ?

छव द्रव्य किसे कहते हैं ?

तब रूपविजय बोला—इसका क्या ? धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय—ये तो पुद्गल हैं।

तब हेमजी स्वामी ने कहा—लो 'मिच्छामि दुक्कडं' धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय पुद्गल कहां है ? पुद्गल तो रूपी है और ये अरूपी है।

फिर रूपविजय बोला—काल जीव-अजीव दोनूं है।

हेमजी स्वामी बोले—दूसरा 'मिच्छामि दुक्कडं' फिर लो। काल जीव अजीव दोनों कहां है ? जीव अजीव दोनों पर काल वर्तता है पर काल तो अजीव है। यह सुन रूपविजय गर्म हो गया। हाथ कांपने लग गए। तब हेमजी स्वामी बोले—तुम्हारे हाथ कांप क्यों रहे हैं ? हाथ तो चार कारणों से कांपते हैं—१. कंपन वायु से, २. क्रोध के कारण, ३. काम/विषय की प्रेरणा से अथवा ४. चर्चा में पराजित होने से यह सुनकर विशेष रोष में आ गया। लोग बहुत इकट्ठे हुए। इतने में इधर के श्रावक भी आये। माईदासजी खैरवा वाला बोला—अब उठो। हेमजी स्वामी जब उठने लगे तब रूपविजय ने पल्ला पकड़ लिया और बोला—चर्चा करें।

तब हेमजी स्वामी बोले—पहले वाले 'मिच्छामि दुक्कडं' लो, उसके बाद फिर चर्चा करें।

तब रूपविजय बोले—बाद में लूंगा।

तब हेमजी स्वामी बोले—तुम समझते हो मैं पण्डित हूं पर चौदह पूर्वधारी भी वचन में स्खलित हो जाते हैं। यह कोई ऐसी बात नहीं इसलिए मिच्छामि दुक्कडं स्वीकार कर लो।

तब बोला—अपन साथ में स्वीकार करेंगे। तब हेमजी स्वामी बोले—जो वचन में स्खलित हो उसको मिच्छामि दुक्कडं आता है नहीं चुके उसको नहीं आता।

तुम स्खलित हुए इसलिए तुम्हें तो 'मिच्छामि दुक्कडं' आएगा पर मैं त्रुटि नहीं करूंगा तो मुझे किस कारण से आएगा ?

इसलिए मिच्छामि दुक्कडं ले लो। फिर भी 'मिच्छामि दुक्कडं' नहीं लेता है। फिर बोले—अब उठो।

फिर उठने लगे तब रूपविजय ने रजोहरण पकड़ लिया। तब हेमजी स्वामी बोले—तुम्हें तो क्षमावान सुना है, तुम ऐसे क्या करते हो ?

रूपविजय बोले—तुम जाओ मत, चर्चा करो।

तब हेमजी स्वामी बोले—पहले वाले 'मिच्छामि दुक्कडं' लो, फिर चर्चा हो।

तब बहुत लज्जित और हैरान हो गया।

लोगों ने कहा—अब उठो।

तब हेमजी स्वामी बोले—तुम कहो तो अब हम जाएं।

तब रूपविजय बोले—तुम्हें असंयति को हम जाने का कैसे कहेंगे ?

तब हेमजी स्वामी बोले—हमको असंयति समझते हो तो, जाने का नहीं कहना तो आओ हेम ऋषि ! आओ हेम ऋषि ! ऐसे आने का कहकर कैसे बुलाया ?

इस हिसाब से तीसरा 'मिच्छामि दुक्कडं' तुम्हारे कथन के अनुसार फिर आएगा। इस प्रकार रूपविजय को निरुत्तर कर वापस स्थान पर आए। जिन मार्ग का बहुत उद्योत हुआ।

२१ क्या चर्चा करने का मन है ?

सं० १८४९ के वर्ष मुनि हेमजी स्वामी (गृहस्थावास में) और भीमजी कांठेड़ दोनों भीलवाड़ा में शीतलदास की सम्प्रदाय के हीरजी के पास जा खड़े हुए।

तब हीरजी ने पूछा—तुम किस गांव के हो ?

तब भीमजी बोले—हम सिरियारी के।

उन्होंने पूछा—तुम्हारे गुरु कौन हैं ?

तब भीमजी बोले—भीखणजी के साधु वहां है, उनके पास भी जाते हैं और वहां जयमलजी की साध्वियां हैं उनके पास भी जाते हैं।

उसके बाद हेमजी स्वामी से पूछा—तुम्हारे गुरु कौन ?

तब हेमजी स्वामी ने अपने लहजे में ऊंचे स्वर में कहा—मेरे गुरु हैं पूज्य श्री

भीखणजी स्वामी। तब हीरजी बोले—ऐसे ऊंचे बोलते हो तो क्या चर्चा करने का मन है ?

हेमजी स्वामी बोले—तुम्हारा मन हो तो भले ही करो न ?

हीरजी ने पूछा—गायें घर में जल रही थीं उस घर का द्वार खोला, उसको क्या हुआ ?

तब हेमजी स्वामी बोले—तुम द्वार खोलो या नहीं ?

हीरजी बोले—हम तो द्वार खोल दें।

हेमजी स्वामी—हम तो कहते हैं—यह भावना ही खराब है—'कब गायें जले और मैं बाहर निकालूं', "साधु आए तो मैं व्याख्यान सुनूं, आहार-पानी बहराऊं, सामायिक पौषध करूं" यह भावना तो अच्छी है, पर गायों के जलने की तो भावना ही खराब है।

तब हीरजी निरुत्तर हो गये। इस चर्चा को छोड़कर दूसरी चर्चा करने लगे। भीखणजी कहते हैं—"थोड़े दोष से साधुपन भंग हो जाता है" यह बात सही नहीं है। उदाहरण के रूप में—

एक साहूकार की परदेश से माल से भरी हुई जहाजें आईं। उसमें ४८ कोठरियां माल से भरी हुई थी। इतने में एक याचक आया। साहूकार की विरदावलियां यशो-गाथा गाई। तब साहूकार प्रसन्न हुआ। उसने सभी अड़तालीस कोठरियों की चाबियां सामने रख दीं और बोला—एक चाबी उठा ले, उस कोठरी में जो माल निकले वह तेरा।

तब उसने एक चाबी उठाई खोलकर देखा तो उस कोठारी में रस्से भरे हैं। वापिस आकर बोला—सेठजी ! उसमें तो रस्से भरे हैं, उससे क्या मैं फांसी लूं ?

तब दूसरी बार साहूकार उस चाबी को सब चाबियों के साथ में डालकर बोला—अब उठाओ। तब उसने फिर चाबी उठाई। पर इस बार भी वही की वही चाबी हाथ आई। कोठरी देखकर वापिस आकर बोला—सेठजी ! उसी कोठरी की चाबी हाथ में आई है। मेरे भाग्य में ये रस्से ही हैं।

तब साहूकार ने मुनीमों से पूछा—जांच करो, इन रस्सों के कितने रुपये लगे हैं ? तब मुनीमों ने खाते देखकर कहा—४८ हजार रुपये लगे हैं। वे रस्से जहाज के थे। तब सेठ ने उसको ४८ हजार रुपये दिये। हीरजी बोले—उन रस्सों के ही ४८ हजार रुपये आये तब जहाज के अन्दर का माल तो कई लाख रुपयों का होगा ? वैसे ही जहाज के माल के सामान साधुपन, रस्सों के पैसों के समान दोष। उन थोड़े-से दोषों से साधुपन समाप्त कैसे हो ?

तब हेमजी स्वामी बोले—८१ तख्तों की जहाज पर उसमें बीच का एक तख्ता नहीं। बैठने वाले भोले लोगों ने उसमें माल भर कर जहाज चलाया। सोचा—४० तख्ते इधर हैं और ४० तख्ते उधर हैं। बीच में एक तख्ता नहीं है, उससे जहाज क्या डूबेगा ? यह चिंतन कर चले। समुद्र के बीच जहाज डूब गई। वैसे ही दोष की स्थापना करे, उनका साधुपन कैसे सधेगा ?

यह बात सुनकर हीरजी निरुत्तर हो गए।

तब फिर बोले—साहूकार ने एक मकान बनाया। हजारों रुपये लगाए। वर्षा-ऋतु में वर्षा आई। कहीं-कहीं चूने लगा तो क्या पूरा मकान गिर गया? वैसे ही थोड़े से दोष से साधुपन कैसे समाप्त होगा?

तब हेमजी स्वामी बोले—मकान तो तुमने कहा वैसा ही विशाल पर उसकी नींव में गोबर के कंडे भरे। वर्षा बहुत आई। तब वह मकान थोड़े में ही गिर गया। वैसे ही साधुपन स्वीकार किया पर श्रद्धा रूपी नींव ही शुद्ध नहीं तथा दोषों की स्थापना करे और दोष को दोष न समझे, उसमें सम्यक्त्व, साधुपन एक ही नहीं। इस प्रसंग में भी हीरजी के पास कुछ कहने को नहीं रहा। तब हेमजी स्वामी ने वहां पर सामायिक करके अपने मीठे कंठों से 'दया भगवती' की ढाल गाई। उनके श्रावक सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। पूछा—यह ढाल किसकी है? हेमजी स्वामी ने कहा—यह ढाल भीखणजी स्वामी ने बनाई है। तब लोग बोले—ऐसी भीखणजी की श्रद्धा है। वे यहां आए थे पन्द्रह दिन रहे। हम तो पास में गए नहीं।

उसके बाद हेमजी स्वामी दूसरे दिन स्थानक में सामायक करने गए तब वहां सामायक करने की मनाही कर दी।

तब आपने बाजार में आकर सामायिक की। नंदन मणिहारे का व्याख्यान प्रारंभ किया। लोगों ने सुना। बहुत प्रसन्न हुए। कहने लगे—भीखणजी के श्रावक भी ऐसे हैं, तो साधुओं का क्या कहना। उसके बाद चार व्यक्तियों को गुरु धारणा करवाई और तब वापस सिरियारी आए। यह हेमजी स्वामी गृहस्थपन में थे तब की घटना है।

२२. सम्यक्त्व आनो मुश्किल

पीपाड़ में एक व्यक्ति को हेमजी स्वामी ने कहा—सच्ची सम्यक्त्व स्वीकार करो, सच्चे गुरु को धारण करो। उसके बेटे ने भी कहा। तब वह बोला—इतने वर्ष तो बीत गये, अब आत्मा के काला क्यों लगाऊं।

तब हेमजी स्वामी बोले—सच्चे देव गुरु और धर्म से तो काला मिटता है, इनसे काला लगता नहीं, फिर भी समझा नहीं। ऐसे मूर्ख जीव को सम्यक्त्व आनी मुश्किल है।

२३. आछो देवे उपदेश

गृहस्थपन में हेमजी स्वामी की रतनजी भलगट के साथ उठ बैठ थी। हेमजी स्वामी की जाति तो आछा बागरेचा, रतनजी की जाति भलगट। पर रतनजी तो धर्म में समझता नहीं, भांग पीता है। हेमजी धर्म में स्वयं समझते थे तथा औरों को भी समझाते थे। तब एक सेवक ने तुक्का जोड़ा—

जोड़ी तो जुगती मिली, हेमो नै रतनेश।
भलकट झकोलै भांगड़ी, आछो देवै उपदेश॥

२४. अंत में संथारा करेंगे

गृहस्थपन के समय हेमजी स्वामी को एक पुष्कर्णा, ब्राह्मण उलटा-सीधा बोलते हुए कहने लगा—"तुम भीखणजी के श्रावक हो सो अन्न बिना मरोगे" तब हेमजी स्वामी ने इस बात को सही रूप में लेते हुए कहा—हम भीखणजी के श्रावक हैं, अतः अंत में संथारा करेंगे। इसलिए ठीक बात है—अन्न बिना ही मरेंगे। यह सुनकर वह निरुत्तर होकर चलता बना।

२५. पहले पुन्य, पीछे निर्जरा

मुनि खेतसीजी से किसी ने पूछा—शुभ योगों की प्रवृत्ति होती है उस समय पहले पुन्य बंधता है या निर्जरा होती है?

तब खेतसीजी स्वामी ने उदाहरण देते हुए पूछा—पहले पान होता या धान?

तब वह बोला—पहले पान होता है उसके बाद धान। खेतसी स्वामी—उसी तरह शुभ योगों की प्रवृत्ति होती है तब पहले समय में ही पुन्य बंधते हैं। उस समय अशुभ कर्म चलित तो होते हैं, परन्तु झड़ते अगले समय में हैं।

भगवती शतक-१ में कर्म के चलित होने का तथा निर्जरण होने का समय अलग-अलग बतलाया है उस कारण से पहले पुन्य बंधता है और पीछे निर्जरा होती है, ऐसा कहा है।

२६. शुभ योग आश्रव या निर्जरा

किसी ने पूछा—शुभ योग आश्रव है या शुभ योग निर्जरा? तब खेतसी स्वामी ने कहा—शुभ योग आश्रव भी है और शुभ योग निर्जरा भी है। तब वह बोला—वस्तु तो एक शुभ योग, उसे आश्रव और निर्जरा दोनों कैसे कहा जाता है।

तब खेतसीजी स्वामी ने दृष्टांत देकर कहा—किसी एक ही व्यक्ति को बाप भी कहते हैं और बेटा भी कहते हैं। वह कैसे?

अपने बाप की अपेक्षा से वह बेटा कहलाता है और अपने बेटे की अपेक्षा से वह बाप कहलाता है। उसी तरह शुभ योग से पुन्य भी बंधते हैं और अशुभ कर्म भी झड़ते हैं। पुन्य बंधते हैं इस अपेक्षा से शुभ योग आश्रव है और अशुभ कर्म झड़ते हैं इस अपेक्षा से शुभ योग निर्जरा है।

उत्तराध्ययन अ० ३४ गा० ५७—में तेजू, पद्म, शुक्ल लेश्या को धर्मलेश्या कहा है और छहों लेश्याओं को कर्म लेश्या भी कहा है। तेजू, पद्म और शुक्ल लेश्या से पुन्य बंधते हैं उस अपेक्षा से कर्म लेश्या और तेजू, पद्म और शुक्ल से अशुभ कर्म झड़ते हैं, इस अपेक्षा से धर्म लेश्या कहा है। धर्म लेश्या कहो भले निर्जरा कहो, कर्म लेश्या कहो भले आश्रव कहो।

२७. सम्यग्-दृष्टि की मति : मतिज्ञान

खेतसीजी स्वामी बोले—भगवती और रामचरित्र को साधु गाते हैं। मैं उसे बराबर मानता हूं, क्योंकि साधु सत्य भाषा बोलते हैं। उनके सावद्य पापकारी भाषा बोलने का त्याग है। नंदी सूत्र में कहा है—सम्यग् दृष्टि की मति, मतिज्ञान ही है, इस अपेक्षा से।

२८. दोनों में एक झूठ

भारमलजी स्वामी और खेतसीजी स्वामी पाली के जोधपुरिया बास में गोचरी पधारे। टीकमजी भी वहां आये। लोगों ने कहा — चर्चा करो।

तब भारमलजी स्वामी ने टीकमजी से कहा—नित्यपिंड लेना आगम में तो वर्जित है पर तुम लेते हो, उसमें दोष समझते हो या नहीं ?

तब टीकमजी बोले—हम तो परिष्ठापन करने जैसा धोवन नित्य लेते हैं, उसमें दोष नहीं।

तब भारमलजी स्वामी ने कहा— धोवन का नाम क्यों लेते हो ? पानी भी तो नित्य लेते हो।

तब टीकमजी बोले—हम पानी नहीं लेते हैं।

तब भारमलजी स्वामी बोले —तुम पानी लेते हो। ऐसे बार-बार कहा।

तब लोग बोले—ये तो कहते हैं— हम नित्य (एक घर से) पानी नहीं लेते। तुम कहते हो— ये लेते हैं, तो दोनों में एक को झूठ लगता है।

तब भारमलजी स्वामी बोले— ये नित्य पिंड गर्म पानी एक घर का लेते हैं, वह भी कलाल के घर का। तब टीकमजी मौन हो गए। फिर भारमलजी बोले—ये आहार भी एक घर का नित्य लेते हैं। वह कैसे ? आज आहार लिया और दूसरे दिन विहार करते समय फिर उस घर का लेते हैं। इस हिसाब से आहार भी नित्य-पिंड लेते हैं। तब टीकमजी सही उत्तर नहीं दे सके। उसके बाद स्थान पर आकर भीखणजी स्वामी को सारे समाचार सुनाए, यह चर्चा भी सं० १८५५ के वर्ष की है।

२९. दुमना सेवक दुश्मन जैसा

सं० १८७७ आमेट में कई भाई शंकाशील थे वे गृहस्थ श्रावक-श्राविकाओं के पास अवर्णवाद बोलते रहते हैं, यह बात भारमलजी स्वामी ने केलवे में सुनी तब हेमजी स्वामी से कहा हेमजी ! और अनेक गांवों के लोग तो दर्शन करने आए पर आमेट वाले नहीं आए। यह बात बार-बार पूछी। तब हेमजी स्वामी ने पूछा—आपने आमेट वालों के लिए बार-बार कैसे पूछा ? तब भारमलजी स्वामी बोले—वहां वे दो चार व्यक्ति शंकालु से हैं उन्हें छोड़ दें तथा मना कर दे और कह दें कि तुम हमारे श्रावक मत कहलाओ। अलग करने के बाद लोग उनकी बात नहीं मानेंगे।

इन्हीं दिनों दीपजी नामक एक साधु को गण से अलग किया था। भारमलजी स्वामी बोले— दीपजी को छोड़ा वैसे उनको भी छोड़ दें, जिससे दूसरों के शंका न पड़े। ऐसी थी महापुरुषों की बुद्धि। 'दुमनो चाकर दुश्मण सरीखो' दुमना सेवक दुश्मन जैसा होता है—ऐसी लोकोक्ति है इस कारण से उन्हें छोड़ने का निश्चय किया।

३०. भरत क्षेत्र में साधुओं का विरह

एक सम्प्रदाय के साधु तथा उनके श्रावक बोले—भारमलजी कहते हैं—भरत

क्षेत्र में साधुओं का विरह इक्कीस हजार वर्ष निरंतर नहीं पड़ा। ऐसा जोड़ में कहा है और आगम में छेदोपस्थापनीय चारित्र का विरह जघन्य ६३ हजार का और उत्कृष्ट १८ क्रोड-क्रोड सागर का कहा है, तब भरत में थोड़े काल का विरह कैसे संभव हो सकता है ?

यह बात सुनकर हेमजी स्वामी ने उनको उत्तर दिया। बाद में भारमलजी स्वामी से पूछा—'छेदोपस्थापनीय चारित्र का विरह जघन्य ६३ हजार वर्ष से कम नहीं, ऐसा कहा है तो यहां भरत क्षेत्र में चारित्र का यह विरह कैसे सम्भव है ?

तब भारमलजी स्वामी बोले—पांच भरत, पांच ऐरावत इन दश क्षेत्रों में एक ही समय में इक्कीस हजार वर्ष का छठा आरा, इक्कीस हजार वर्ष का पहला आरा और इक्कीस हजार वर्ष का ही दूसरा आरा, इस प्रकार ६३ हजार वर्ष छेदोपस्थापनीय चारित्र नहीं होता। दूसरे आरे के ३० वर्ष साढ़े आठ महीने के बाद तीर्थंकरों का जन्म होता है। वे ३० वर्ष घर में रहकर दीक्षा लेते हैं, उसके बाद छेदोपस्थापनीय चारित्र वाले साधु होते हैं इसलिए ६३ हजार वर्ष से कुछ अधिक विरह कहा गया है। यहां भरत में थोड़े काल तक साधुओं का विरह हुआ तो लगता है धातकी खंड के भरत ऐरावत तथा अर्ध पुष्कर के भरत ऐरावत में साधु रहे होंगे। इस न्याय से छेदोपस्थानीय चारित्र का विरह निरंतर नहीं कहा गया है। तब हेमजी स्वामी बोले—१० क्षेत्रों की रीति तो एक है, इस कारण से भरत में विरह हो तो १० क्षेत्रों में भी विरह होना चाहिए। तब भारमलजी स्वामी बोले—यहां की द्रोपदी को धातकी खंड के भरत में ले गया। तो धातकी खंड के भरत में द्रोपदी कौन हुई और यहां कौन लाया ? इस न्याय से सभी बातें एक जैसी ही हों, यह आवश्यक नहीं।

३१. त्याग भंग क्यों करवाते हो ?

आमेट में टीकमजी के शिष्य जेठमल से बात करते हुए हेमजी स्वामी ने कहा—कलाल (शराब बनाने और बेचने वाली जाति) के घर से पानी लाने का तो त्याग करो।

तब जेठमल बोला—मैं तो नहीं लाता।

हेमजी स्वामी—नहीं लाते हो तो त्याग करो।

तब जेठमल बोला—मुझे तो त्याग है। स्थान पर जाते ही टीकमजी ने कहा—यह त्याग क्यों किया ?

तब वापस आकर बोला—हेमजी ! वे त्याग मेरे मेवाड़ में रहूं तो है, पर मारवाड़ में रहूं तो नहीं है।

तब हेमजी स्वामी बोले—तो क्या शील आदि दूसरे अनेक त्याग भी इस हिसाब से मेवाड़ में रहो तो है, मारवाड़ में नहीं। पहले त्याग करते समय आगार रखा नहीं, वे त्याग भंग नहीं करने हैं।

बाद में टीकमजी मिले तब कहा—हेमजी छल करके त्याग नहीं करवाने चाहिए।

तब हेमजी स्वामी बोले—कलाल के पानी का त्याग किया, यह अच्छा काम किया। वे त्याग भंग क्यों करवाते हो ?

३२. ऐसी चर्चा करते तो कैसे लगते ?

सरवार गांव के बाहर नानगजी का (शिष्य) हीरालाल मिला। उसने पूछा—नव पदार्थ में अस्ति भाव कितने ? नास्ति भाव कितने ? अस्ति नास्ति भाव कितने ?

तब हेमजी स्वामी बोले—इस प्रश्न का मैं उत्तर देता हूं। अगर तुम कहोगे कि इसका उत्तर सही नहीं आया तो उसका आगमिक प्रमाण बतलाना पड़ेगा।

तब हीरालाल बोला—'साधु को किवाड़ बन्द करने नहीं।' आदि अनेक बोल तुम कहते हो, क्या वे सब सूत्र में लिखे हैं ?

तब हेमजी स्वामी बोले—हम तो किवाड़ बन्द करना निषिद्ध करते हैं, उसका आगमिक प्रमाण बतलाते हैं।

तब हीरालाल बोला—तुम आगमिक प्रमाण क्या बतलाओगे ? गत काल में अनंत साधुओं ने किवाड़ बन्द किया, वर्तमान काल में अनंत साधु किवाड़ बन्द करते हैं, भविष्य में भी अनंत साधु किवाड़ बंद करेंगे।

तब हेमजी स्वामी बोले—गत काल में अनंत साधुओं ने किवाड़ बन्द किया कहते हो तो तुम्हारे जैसे अनन्त साधुओं ने बन्द किया। भविष्य में भी तुम्हारे जैसे अनंत बन्द करेंगे पर तुमने कहा—वर्तमान काल में अनंत बंद करते हैं, यह कैसे ? वर्तमान काल में अनंत मनुष्य भी नहीं, तो अनंत साधु वर्तमान काल में किवाड़ कैसे बंद करते हैं ? इस बात का 'मिच्छामि दुक्कडं' लो।

तब वह बोला—'मिच्छामि दुक्कडं' तुम्हें आता है, इसलिए तुम लो।

हेमजी स्वामी—'मिच्छामि दुक्कडं' आता तो तुम्हें है और नाम लेते हो मेरा—उल्टा चोर कोटवाल को दण्डित करे। तब हीरालाल उलटा-सीधा बोलकर चला गया। स्थानक में आकर बोला—मैं तेरापंथियों से चर्चा करने के लिए बाजार में जाता हूं। तब मांडलगढ़ वाला सदारामजी मुंहता बोला—तुम चर्चा करने के लिए मत जाओ। बार-बार कहा, पर माना नहीं। तब सदारामजी बोले—उनसे चर्चा करने जा रहे हो तो पहले मेरे प्रश्नों के तो उत्तर दे दो। बताओ—धर्म भगवान् की आज्ञा में है या आज्ञा बाहर ?

तब हीरालाल बोला—आज्ञा में।

तब सदारामजी ने कहा—देखो बात में मजबूत रहना, ऐसा कहकर भोजन करने के लिए घर चले गये।

पीछे हीरालाल आकर बोला—मुंहताजी धर्म तो आज्ञा में भी है और आज्ञा बाहर भी है।

तब सदारामजी ने कहा—तेरापंथियों से ऐसी चर्चा करते तो कैसे लगते ? ऐसा कहकर निरुत्तर कर दिया।

३३. गहरी दृष्टि

भारमलजी स्वामी छोटी-छोटी लड़कियों को बतलाते हैं, सिखलाते है, चर्चा पूछते हैं। विशेष बात कर गुरुधारणा करवाते हैं। तब किसी ने कहा—महाराज! छोटी बालिकाओं को विशेष बतलाते हैं, क्या इसमें कोई विशेष गुण है?

तब भारमलजी स्वामी ने कहा—ये बालिकाएं बड़ी होने पर श्राविकाएं होती लगती है। सुसराल और पीहर में बहुत लोगों को समझाएंगी। इनके समझने पर इनके पति, बेटे, बेटों की बहुएं, बेटियां, नाती, पोती इस प्रकार बहुत व्यक्तियों के समझने की सम्भावना है, इसलिए इनको विशेष बतलाते हैं। महापुरुषों की ऐसी गहरी दृष्टि, ऐसी उपकार करने की नीति।

३४. शंका हो तो प्रश्न पूछ लो

पीपाड़ में वेणीरामजी स्वामी को देखकर चौथमलजी बोहरा बोला—भीखणजी! अब तुम भी बालकों को दीक्षा देने लगे।

स्वामीजी बोले—शंका हो तो चर्चा पूछ लो।

तब उसने आकर पूछा—साधुजी! मोक्ष कौन से गुण-स्थान में जाता है? तब वेणीरामजी स्वामी बोले—गुणस्थान में मोक्ष नहीं जाता है। गुणस्थान की अवस्था समाप्त होने पर मोक्ष जाता है। यह सुनकर प्रसन्न हुए।

श्रावक संस्मरण (दृष्टांत)

१. तुमने हमको खूब लज्जित किया ।

चंद्रभाणजी पुर के वासी । तिलोकचंदजी चेलावास के वासी । दोनों संघ से अलग होकर पुर गांव में आए । मन में सोचा होगा कि पुर क्षेत्र के लोगों को समझा लेंगे ।

चन्द्रभाणजी का भाई नैणचन्द आकर बोला—तुमने हमको खूब लज्जित किया । स्वामी भीखणजी को छोड़कर अलग हुए । इस लोक और परलोक दोनों को बिगाड़ लिया । इस प्रकार बहुत भर्त्सना की, तब विहार कर गये । श्रावक भी इतने दृढ़ थे ।

२. जा रे पैजारा ![1]

आमेट में पेमजी कोठारी की बहिन चंदूबाई से चन्द्रभाणजी ने कहा—तुझे तो भीखणजी कंजूस बतलाते थे । वे कहते थे—धन तो खूब पाया है, पर दान का गुण नहीं है ।

तब चन्दूबाई अपनी मेवाड़ी भाषा में बोली—जा रे पैंजारचा ! तू मेरा गुरु से मन भंग करवाना चाहता है ? मेरे में गुण नहीं देखा होगा तो कहा होगा। वे महापुरुष हैं । ऐसा कहकर उसको डांट दिया । श्राविका भी इतनी दृढ़ ।

३. मुझे लंगूरिया कहा

आमेट में अमरा डांगी को चन्द्रभाणजी ने कहा—"तेरे लिए भीखणजी कहते थे—यह तो लंगूरिया है, ऐसे ही इधर-उधर घूमता है पर मजा नहीं, यह सुनकर वह अधीर हो गया । मुझे लंगूरिया कहा । उसके बाद अन्त में वह शंकाशील हो गया । तब भारमलजी स्वामी ने उसे छोड़ने का विचार किया । उसके बाद श्रद्धाभ्रष्ट हो गया । यह प्रारम्भ से ही कच्चा था ।

४. ऐसे ही चलते थे क्या ?

चन्द्रभाणजी, तिलोकचंदजी देवगढ़ से चलते हुए सिरियारी आए । गांव में धीरे-धीरे चलते देखकर लखूबाई कलूबाई ने पूछा—आज कहां से चलकर आये हो ? तब वे बोले—देवगढ़ से चलकर आए हैं ।

तब दोनों बहनें बोली—ऐसे ही चलते थे क्या ? इस गति से चलने से तो दो तीन दिन लगते । ऐसा कहकर टोक दिया ।

---

१. "मेवाड़ में पेजार जूते को कहते हैं ।

५. भरमोलियों[1] की माला के समान

विजयचन्दजी पटवा पाली में लोकाचार में शामिल होकर आए। एक मोटा लोटा भर कर स्नान कर रहे थे तब बांवेचों ने कहा—विजैचन्द भाई ! तुम लोग ढूंढिया हो। पानी में पेसकर स्नान भी नहीं करते।

तब विजयचंदजी ने कहा—मैं तुम्हें भरमोलियों की माला के समान जानता हूं। होली के दिनों में लड़कियां भरमोलियां बनाती है—यह मेरा खोपरा, यह मेरा नारियल—ये नाम दिये पर है तो गौबर का गौबर।

वैसे ही तुमने मनुष्य जन्म पाया पर दया धर्म की पहचान बिना अज्ञानी जैसे हो।

६. दीपक जलाने से ही अन्धेरा मिटता है

विजयचंदजी को किसी ने कहा— तुमने यह क्या मत पकड़ा है, हम तो हमारे ही धर्म को अच्छा समझते हैं। तुमने धर्म धारण किया इसका हमें तो कुछ पता नहीं लगता कि अच्छा है या बुरा ?

तब विजयचन्दजी ने कहा—घर में तो अन्धेरा और लाठी से पीटे तो अन्धेरा कब मिटता है। दीपक जलाने से ही अन्धेरा मिटता है, वैसे ही ज्ञान रूपी दीपक हृदय में जलाए तब मिथ्यात्व रूप अन्धेरा मिटे।

७. अच्छा मार्ग किसका ?

विजयचन्दजी को बहुत से लोगों के बीच पाली के कोर्ट में हाकम ने पूछा—यति, संवेगी, बाईस टोला, तेरापंथी इतनों में अच्छा मार्ग किसका ?

तब विजयचन्दजी ने कहा—जिस में अधिक गुण हो, वही मार्ग अच्छा है।

८. अन्न पुण्य हमारे और वस्त्र पुण्य तुम्हारे

रोयट में इतर सम्प्रदाय के साधु ने कहा—अन्न देने से पुण्य होता है, यह सूत्र में कहा हैं।

तब भाइयों ने कहा—साझेदारी में पुण्य करेंगे। पछेवड़ी (चद्दर) तुम्हारी और गेहूं हमारे। तुम कहो उसको गठरी में बांध कर दे दे। अन्न पुण्य हमारे और वस्त्र पुण्य तुम्हारे। तब उन्होंने कहा—हम तो साधु हैं। हमें सचित्त का स्पर्श ही कहां करना है।

तब फिर स्वामीजी के श्रावक बोले—अचित्त का पुण्य करें। पांच रोटी तो हमारी और दो रोटी तुम्हारी—इस प्रकार साझेदारी में पुण्य करें तुम्हारा भरोसा क्या बदल जाओ तो।

९. लड्डू देकर पत्थर को वापस लिया, उसको क्या हुआ ?

बिलारा में जेठा डफरिया को इतर सम्प्रदाय के साधुओं ने कहा—कोई बच्चा पत्थर से चींटियों को मार रहा था, उसको लड्डू देकर पत्थर वापस लिया, उसको क्या हुआ ?

---

१. गौबर से बनाई हुई विभिन्न वस्तुओं की आकृतियां।

तब जेठोजी बोले—ऐसे मत कहो, ऐसे कहो, मस्तक में टकोरा मारा और पत्थर को वापस ले लिया फिर दूसरी बार नहीं मारेगा, इसमें क्या हुआ ?

लड्डू देने पर तो फिर मारेगा, सोचेगा फिर लड्डू देंगे। पर टकोरा मारा, उसको क्या हुआ ? तब निरुत्तर हो गए।

१०. तुम्हारे से हम अधिक हुए

फिर जेठोजी को उन्होंने कहा—दो रुपये देकर बकरा छुड़ाया उसको क्या हुआ ? तब जेठोजी बोले—हम तो पांच रुपये देकर भी छोड़ा देंगे। तुम्हारे सामने दस बकरों को मारे और वह एक पछेवड़ी देने पर दसों बकरों को छोड़ दूं, ऐसा कहे तो तुम उसे पछेवड़ी (चद्दर) दोगे या नहीं ?

तब बोले—हम तो नहीं देंगे। (चद्दर देना) हमारा मार्ग नहीं है। तब जेठोजी बोले—यह धर्म हमारे पास तो है और तुम्हारे पास यह धर्म नहीं, इस अपेक्षा से तुम्हारे से हम अधिक हुए। इस धर्म की तुम्हारे कमी पड़ी। ऐसा कहकर निरुत्तर कर दिया।

११. कर्म कितने ?

सं० १८६४ देवगढ़ में आसकरणजी का शिष्य चुतरोजी के पास आकर बोला—मुझे चर्चा पूछो।

तब चुतरोजी ने कहा—तुम्हें क्या चर्चा पूछें ?

तब वह बोला—कुछ तो पूछो।

तब चुतरोजी बोले—तुम्हारे कर्म कितने ?

तब वह बोला—मेरे कर्म बारह हैं।

तब चुतरोजी ने पूछा—कौन-कौन-से हैं ?

तब उसने दो-तीन के तो नाम बताए, फिर बोला—आगे के नामों का पता नहीं, उसने आसकरणजी के पास आकर समाचार कहे—मैंने भीखणजी के श्रावकों से चर्चा की।

तब आसकरणजी ने पूछा—क्या चर्चा की ?

तब वह बोला—मुझे पूछा—तुम्हारे कर्म कितने हैं ?

तब मैंने कहा—मेरे कर्म बारह हैं।

तब आसकरणजी ने कहा—कर्म बारह कहां है ? आठ ही तोड़ने मुश्किल हैं। वापिस जाकर बतला—मेरे कर्म आठ ही हैं। तब वह वापिस जाकर बोला—मेरे कर्म आठ है, बारह कहा उसका 'मिच्छामि दुक्कडं'।

तब चुतरोजी ने कहा—तुम्हारे गुरु के कर्म कितने ?

तब बोला—यह तो मुझे खबर नहीं।

१२. पोटना कहां है ?

सिरियारी वासी बोहराजी और खीवेसराजी को कोटा में अन्य सम्प्रदाय के श्रावक स्थानक में ले गए। उन्हें वेषधारियों ने पूछा—कहां रहते हो ?

तब बोहराजी बोले—सिरियारी में रहते हैं।

तब वेषधारी बोले—सिरियारी में तो वह भीखण चौर रहता है। यहां आए तो ऐसा पीटें, क्योंकि वह हमारे साधुओं को ले गया।

तब बोहराजी ने कहा—साधु को पीटना कहां है।

तब कहां—श्रावकों से पीटाएं।

तब बोहराजी बोले—श्रावकों से भी पीटाना कहां है ?

० भीखणजी साधु नहीं समझते

तब उनके श्रावक बोले—ऊपर चलो, ऐसा कहकर ऊपर ले गए। ये देखो, गुलाब ऋषि, बेले-बेले/दो-दो दिन के उपवास के बाद पारणा करते हैं। उसमें भी छाछ घोलकर आटा खाते हैं।

गुलाब ऋषि बोला—मैं बेले-बेले पारणा करता हूं, छाछ में घोलकर आटा खाता हूं। शीतकाल में एक अंचला/चद्दर औढ़ता हूं, तो भी भीखणजी मुझे साधु नहीं समझते।

तब बोहरोजी बोले—मेरे एक नीला बैल है, तुम तो आटा खाते हो, पर वह तो आटा ही नहीं खाता, सूखा घास ही खाता है। तुम चद्दर ओढ़ते हो, वह तो ओढ़ता ही नहीं है, उघाड़ा रहता है। ऐसे अगर साधु हों, तो उसको भी साधु कहा जाए।

तब गुलाब ऋषि बोला—देखो, देखो मुझे ढ़ोर कहते हैं।

तब बोहराजी बोले—मैंने तो ढोर नहीं कहा—तुम अपने मुख से हीं कह रहे हो।

० आने का कहना कहां है ?

इतने में फतेहचन्द वेषधारी बोला—चर्चा करनी है तो मेरी तरफ आ। तब बोहराजी बोले—आने का कहना कहां है ? 'मिच्छामि दुक्कडं लो'। उनके पास गया। स्थानक को अधूरा लीपा हुआ देखकर बोले—पूरा लीपाया नहीं क्या ? तब वह बोला—मैंने कब लीपाया है ? गृहस्थों ने लीपा है। इस प्रकार सदोष आधाकर्मी का सेवन करते हैं और माया करते हैं। ऐसे व्यक्तियों को पहचानते हैं उन्हें उत्तम जीव समझना चाहिए।

१३. ऐसा प्रश्न तो कभी नहीं सुना।

स्वामीजी के श्रावकों ने दिल्ली की तरफ के वेषधारियों से प्रश्न पूछा—नव पदार्थों में जीव कितने और अजीव कितने ?

तब वह वेषधारी बोला—पूज्य बुलाकीदासजी को देखा, पूज्य हरिदासजी को देखा, इत्यादिक अनेक नाम लिये। बड़े-बड़े मोटे पुरुषों को देखा, पर नव पदार्थ में जीव कितने और अजीव कितने ? ऐसा अडबंग/विचित्र प्रश्न तो कभी नहीं सुना। कहो तो मैं जींव के १४ भेद बतलाऊं, कहो तो अजीव के १४ भेद बतलाऊं, कहो तो पुण्य के ९ भेद बतलाऊं, कहो तो पाप के १८ भेद बतलाऊं यावत् कहो तो मोक्ष के चार भेद बतलाऊं पर नव पदार्थ में जीव कितने ? और अजीव कितने ? ऐसा प्रश्न तो कभी नहीं सुना। इस प्रकार पढ़े-लिखे (पण्डित) कहलाते हैं, पर नव पदार्थ की पहचान नहीं।

१४. नव तत्व की पहचान के बिना सम्यक्त्व कैसे आए ?

दिल्ली की तरफ के वेषधारियों को स्वामीजी के श्रावकों ने फिर प्रश्न पूछा—नव पदार्थ में जीव कितने और अजीव कितने ?

तब वह वेषधारी बोला – पांच जीव और अजीव कहूं तो श्रद्धा भीखणजी की। चार जीव और पांच अजीव कहूं तो श्रद्धा रुघनाथजी की।

एक जीव और आठ अजीव कहूं तो श्रद्धा बगतरामजी की।

एक जीव, एक अजीव, सात जीव अजीव की पर्याय कहूं तो श्रद्धा अमरसिंहजी की।

आठ जीव और एक अजीव कहूं तो श्रद्धा खींवसिंहजी की।

सात नय, चार निक्षेप की अपेक्षा से देवगुरु के प्रसाद से सूत्र की युक्ति लगाकर कहूं तो एक जीव, एक अजीव और सात जीव, अजीव की पर्याय। इस प्रकार नव तत्त्व की पहचान नहीं। मन में जंचे वैसे प्ररूपणा करते हैं, उन्हें सम्यक्त्व कैसे आए।

१५. ऐसे मनुष्य विरले हैं।

लाटोती में खतरगच्छ के श्री पूज्य जिनचंद सूरि आए। उपाश्रय में बहुत लोगों की उपस्थिति में व्याख्यान देते समय आश्रव का प्रसंग आया। तब बोले—आश्रव अजीव है।

तब चैनजी श्रीमाल स्वामीजी का श्रावक बोला—श्रीजी महाराज! आश्रव जीव है। तब श्री पूज्यजी ने कहा—आश्रव अजीव है।

तब चैनजी ने कहा—आश्रव जीव है।

तब पूज्यजी बोले—तेरी धारणा गलत है।

तब चैनजी बोला—आपकी धारणा ही गलत है।

श्री पूज्यजी—यह चर्चा हम बाद में करेंगे। व्याख्यान समाप्त होने पर लोग अपने घर गए। श्री पूज्यजी ने चर्चावादी सिद्धांतों की जानकारी रखने वाले यतियों को बुलाया। कहा—सूत्रों को देखो, आश्रव जीव है या अजीव ? यह निर्णय करो।

तब चर्चावादियों ने निर्णय कर कहा—सूत्र के अनुसार तो आश्रव जीव हैं।

तब श्री पूज्यजी ने चैनजी को बुलाया। बोले—आश्रव जीव है। मैंने अजीव कहा, इसलिए 'मिच्छामि दुक्कडं'। तुम्हारे से खमतखामणा है। अभी तो कह रहा हूं। क्षमापना (खमतखामणा) तो कल परिषद् में होगी।

दूसरे दिन प्रभात के व्याख्यान में भरी परिषद् में श्री पूज्यजी बोले—चैनजी ! मैंने कल आश्रव को अजीव कहा और तूने जीव कहा, तू सच्चा है, मैं झूठा, इसलिए मेरे 'मिच्छामि दुक्कंड' है। तेरे से खमतखामणा है।

इस प्रकार अहं छोड़ने वाले मनुष्य विरले हैं।

१६. जीव का अजीव हो गया

खतरगच्छ के श्री पूज्य रंगविजयजी और जिनचंद सूरी किशनगढ़ में थे।

भारमलजी स्वामी ९ साधुओं के साथ किशनगढ़ पधारे। नये शहर में उतरे। चर्चा के लिए बगीची का स्थान निश्चित हुआ। नानगजी, उगराजी, अमरसिंहजी इत्यादि के ३५ साधु चर्चा के लिए आए। ९ साधुओं से भारमलजी स्वामी पधारे। सैंकड़ों लोग इकट्ठे हो गए। आश्रव की चर्चा चली।

नानगजी के शिष्य निहालजी ने तो कहा—आश्रव अजीव है और भारमलजी स्वामी ने कहा—आश्रव जीव है, कर्मों को ग्रहण करे, वह आश्रव। कर्मों को ग्रहण करे वह तो जीव है, अजीव तो कर्मों को ग्रहण करता नहीं। फिर भारमलजी स्वामी ने कहा—गृहस्थ तो आश्रवी और साधुपन लेने के बाद साधु वह तो संवरी होता है। आश्रव को अजीव कहते हो तो क्या अजीव का जीव हो गया? साधु भ्रष्ट होकर गृहस्थ हो गया तो क्या साधु संवरी जीव था वह गृहस्थ आश्रवी हो गया तो क्या जीव का अजीव हो गया? इस प्रश्न से निरुत्तर हो गए। सही उत्तर नहीं दे सके।

तब 'साधु को अजीव कहते हैं, साधु को अजीव कहते हैं'? इस प्रकार हल्ला मचाते हुए उठ गए। भारमलजी स्वामी भी अपने स्थान पर पधार गए।

० ये चर्चा के योग्य नहीं।

भारमलजी स्वामी की आज्ञा लेकर खेतसीजी स्वामी, हेमजी स्वामी और रायचंदजी स्वामी गोचरी पधारे। तब जिनचंदसूरी ने ब्राह्मण को भेजकर उन्हें उपाश्रय में बुलाया। साधुओं को आते देखकर श्री पूज्य पट्ट से नीचे उतरकर आंगन पर बैठे। साधुओं को बिठाकर बोले—आप इनसे चर्चा करते हैं पर ये चर्चा करने योग्य नहीं हैं। एक दृष्टांत सुनो:—

एक साहूकार की हवेली में दो साधु गोचरी गए। ऊपर पेड़ियों की नाल चढ़ते समय वहां अंधेरा देखकर वे वापस लौट गए। ऊपर से गृहस्थ आवाज देता है—ऊंचे पधारो, ऊंचे पधारो। पर साधु तो वापस चले गए।

थोड़ी देर के बाद दो साधु फिर आए। ऊपर जाकर आहार-पानी लिया। गृहस्थ बोला—पहले दो साधु आए, वे तो वापस चले गए, और आप ऊपर पधारे। तब वे बोले—वे तो पाखण्डी थे। पाखण्ड कर गए ऐसा कह कर वे भी चले गए।

थोड़ी देर बाद दो साधु फिर आए, तब गृहस्थ बोला—दो साधु पहले आये वे तो सीढ़ियों से ही वापस चले गए, उसके बाद दो साधु आये, भिक्षा ली और उनको पाखंडी कहकर चले गए और अब आप आए हो। तब वे साधु बोले—पहले आए, वे तो असली साधु, जो अंधारा देखकर वापस लौट गए। उसके बाद दो साधु आए वे हीन आचारी, दोहरे मूर्ख—स्वयं तो पालते नहीं और जो पालते हैं, उनसे द्वेष निंदा करते हैं और हम से तो पूरा साधुपन पलता नहीं। वेष की ओट में रोटी मांग कर खाते हैं। पहले आए वे धन्य हैं। ऐसा कहकर वे भी चले गए।

श्री पूज्यजी ने उदाहरण समेटते हुए कहा—पहले की तरह तो आप, दूसरे वालों ज्यों ये मठधारी, स्थानक बांधकर बैठे वे और तीसरे वालों ज्यों हम। हम से पूरा साधुपन नहीं पलता है। इसलिए तुम इनसे चर्चा करते हो, पर ये चर्चा करने लायक

नहीं हैं।

यह बात सुनकर तीनों साधुओं ने स्थानक पर आकर भारमलजी स्वामी को सब समाचार सुनाए।

० यहां से विहार कर देना नहीं तो…………

भारमलजी स्वामी ने जयपुर आकर चतुर्मास किया और हेमराजजी स्वामी ने माधोपुर की तरफ विहार किया। २२ कोश तक गए। आगे नदी बहती देखी, तब मन में विचार किया— किशनगढ़ में वेषधारियों ने अन्हाख/बहुत कदाग्रह किया। तो चौमासा किशनगढ़ में हो तो ठीक रहे, ऐसा सोच वापस विहार कर किशनगढ़ पधारे। दो स्थानों पर आज्ञा लेकर एक दुकान में उतरे। । बाद में वेषधारियों ने उस दुकान वालों को सिखलाकर जगह छुड़वा ली। तब दूसरी दुकान में आज्ञा लेकर विराज गए। विरोधियों ने वहां पर पृथ्वीकाय बिखेर दी। तब उम्मेदमल सरावगी की दुकान में आज्ञा लेकर ठहरे। तब वेषधारी आकर बोला —तुम तेरापंथी दगादार हो, हमारे पण्डित-पण्डित तो विहार कर गये और तुम छल करके आए हो। या तो यहां से विहार कर जाओ, नहीं तो पात्र बाजार में ठोकरें खाएंगे।

हेमजी स्वामी ने यह सुनकर भी मौन रखी। चतुर्मास लगा। व्याख्यान में लोग खूब आते पर संवत्सरी पर एक भी पौषध नहीं हुआ। बाद में लोग समझे। दीवाली पर पांच पौषध हुए। जयपुर में ये सामाचार सुनकर वेषधारी तो अप्रसन्न हुए और भारमलजी स्वामी प्रसन्न हुए। सं० १८६९ का चतुर्मास किशनगढ़ किया, उसके बाद क्षेत्र की नींव लगी।

१७. शुभ योग संवर किस न्याय से ?

रीयां में राजमलजी बोहरा रतनजी के पास गए। चर्चा के प्रसंग में रतनजी बोला— शुभ योग, संवर है।

तब राजमलजी ने कहा — संवर का स्वभाव तो कर्म रोकने का है। और शुभ योग से तो पुण्य बंधते हैं, रुकते नहीं इसलिए शुभ योग संवर किस न्या।य से ?

तब रतनजी बोला —शुभ योग प्रवर्तमान हो उस समय अशुभ योग के कर्म नहीं लगते, इस न्याय से शुभ योग संवर।

तब राजमलजी बोहरा बोला — इस हिसाब से तो अशुभ योग को ही संवर कहो, अशुभ योग प्रवर्तमान हो उस समय शुभ योग के कर्म नहीं लगते उस हिसाब से।

तब रतनजी बोला—सूत्र में तो अयोग संवर ही कहा है। हमारी परंपरा से शुभ योगों को संवर कहते हैं।

१८. धर्म हुआ या पाप ?

भगवानदासजी प्रसिद्ध नगरसेठ। संवेगियों की श्रद्धा। उन्होंने पाली में रतनजी से पूछा —कच्चे पानी के लोटे में मक्खी पड़ गई उसे बाहर निकाले उसको धर्म हुआ या पाप ?

तब रतनजी उत्तर देने में अटक गए। धर्म बतलाए तो हिंसा धर्म, देहरापंथियों

की श्रद्धा में मिल जाए। पाप बतलाए तो श्रद्धा समाप्त हो जाए। तब क्रोध में आकर अकबक बोलने लगा – तुम समझते हो मैं नगरसेठ हूं। लोगों को डराता हूं पर मैं नहीं डरता – इस प्रकार बोलने लगा।

१९. सार्धमिक वात्सल्य का निषेध क्यों करते हो ?

भगवानदासजी ने फिर रतनजी से पूछा—श्रावक को पोषण देने से क्या होता है ? रतनजी बोले—बेला (दो दिन की तपस्या) के पारणे वाले श्रावक का पोषण करने से धर्म होता है।

तब भगवानदासजी बोले—बेले के पारणे वाले साधु तथा बिना पारणा वाले साधु को देने से क्या होता है ? रतनजी बोले—धर्म होता है। तब भगवानदासजी बोले—फिर पारणे वाले तथा पारणे बिना ही श्रावक का पोषण करने को धर्म क्यों नहीं कहते हो ? और इस प्रकार सब श्रावकों के पोषण को धर्म कहते हो तो हमारे 'सार्धमिक वात्सल्य' का निषेध क्यों करते हो ?

इस प्रसंग में भी सही उत्तर नहीं आया।

२०. वह वैद्य बुद्धिहीन

पीपाड़ में दौलजी लूणावत से चर्चा करते समय रतनजी क्रोध में आकर बोला—सन्निपात में आए रोगी को दूध मिश्री पिलाए तो सन्निपात अधिक बढ़ता है।

तब दौलजी बोला—वह वैद्य (हीयाफूट) बुद्धिहीन है। उसका चन्द्रबल इधर-उधर हो गया। (बुद्धि बल घट गया) जो सन्निपात का रोग जानता है, फिर भी दूध मिश्री पिलाता है।

२१. ये कौन-सी लेश्या का लक्षण है ?

'ऋणहि' गांव वाले जीवोजी को गुमानजी के शिष्य किशनदासजी ने कहा—साधु में ३ भली लेश्या ही है, माठी (खराब) लेश्या नहीं है।

इतने में जोरजी कटारिया आया। तब किशनदासजी हल्की भाषा में बोला—'औ आयौ जीवला रो भरमायौ' (यह आया जीवोजी का भ्रमित किया हुआ) तब जीवोजी बोला—तुम यों बोलते हो ये कौनसी लेश्या का लक्षण है ? तब किशनदासजी चुप हो गया।

२२. डोरी रखने में भी दोष ?

संवत् १८७९ के पीपाड़ चतुर्मास में हेमजी स्वामी ने पाडिहारिक छुरी रात में रखी। भीखणजी स्वामी, भारमलजी स्वामी के समय में रखने की विधि थी। गृहस्थ को वापस दी जाने वाली पाडिहारिक वस्तु रखते थे, उसी हिसाब से रखी।

तब वेषधारी ने खूब कदाग्रह किया। न होने वाले दोष बताने लगा। ऋणहि ग्राम वाले जीवोजी से कहा—गृहस्थ को वापस दी जाने वाली छुरी रात के समय पास में नहीं रखनी चाहिए।

तब जीवोजी बोले—इसमें क्या दोष है ?

तब वेषधारी बोले—रात्रि में परस्पर झगड़ा होने पर क्रोध के बस छुरी से मर जाए या मार दे, यह दोष है।

तब जीवोजी बोला—तब तो नांगला, पुस्तक बांधने की डोरियां भी नहीं रखनी चाहिए क्योंकि डोरी से भी फांसी खा ले तो तुम्हारे हिसाब से डोरी रखने में भी दोष है।

२३. दो तो मैंने बताए, आगे आप बताओ।

स्वामीजी के श्रावक से वेषधारी ने कहा—छह काय के नाम जानते हो? तब उसने कहा—जानता हूं। पृथ्वीकाय, अपकाय, इत्यादि नाम बताए। तब वेषधारी बोला—ये तो गोत्र हैं, नाम कहां है?

तब उस श्रावक को दो ही नाम आते थे, इंदीथावरकाय, बंभीथावरकाय, ये दो नाम बता दिये। तब वेषधारी बोला—

आगे बताओ?

तब वह श्रावक बोला—मैं तो अभी सीख रहा हूं। दो तो मैंने बता दिए, तुम जानते हो तो आगे के बतलाओ?

२४. सब पूरीया ही पूरीया है।

सं० १८५६ के वर्ष भीखणजी स्वामी वायु के कारण से १३ महिना करीब नाथद्वारा में रहे। भीलवाड़ा के चार भाई आए।

१. पूरो नांवे का, २. रतनजी छाजेड़, ३. भैरूंदास चंडाल्या, एक व्यक्ति और इन चारों ने स्वामीजी से बहुत दिनों तक चर्चा कर अच्छी तरह से समझकर गुरु बनाया।

हेमजी स्वामी ने भैरूंदास से पूछा—तुमने स्थानक बनाया। उसमें रहते हैं वे साधु आचार में कैसे हैं?

भैरूंदास बोला—यह श्रद्धा और यह आचार देखते तो सब पूरीया ही पूरीया है।

हेमजी स्वामी ने पूछा—पूरीया क्या है?

भैरूंदास बोला—एक गाम का ठाकर भक्तों को इष्ट की तरह पूजता था। वह भक्तों को भोजन करवाकर चरणामृत लेकर पैर धोकर पीता था। एक बार बहुत से भक्तों को भोजन करवाकर वह चरणामृत ले रहा था। उसके गांव का भक्त बना—पूरीयो नामक मेघवाल भी उनमें था। उसका चरणामृत लेते समय ठाकर ने उसके मुंह की तरफ देखा। उसे पहचान लिया।

तब बोला—पूरीया तूं रे!

तब वह बोला—मुझे क्या कहते हो, ठाकर साहब? सब पूरीया ही पूरीया है। कोई सरगड़ा है, कोई थोरी है, कोई बावरी है, क्या परिचित को ही पूरीया कह रहे हो?

भैरूंदास बोला—वैसे ही यह श्रद्धा और आचार देखते और सब पूरीया जैसे हैं।

२५. थुक्कमथुक्का, धक्कमधक्का बाद में छक्कमछक्का

स्वामी भीखणजी १८५७ के वर्ष भीलवाड़े पधारे। आचार श्रद्धा की ढालें

रात के व्याख्यान में कहने लगे। परिषद् खूब आई। कुछ नागोरी आदि काफी लोगों ने व्याख्यान समाप्त होने के बाद स्वामीजी को सौगंध दिलाते हुए कहा—कल विहार किया तो २४ तीर्थंकरों की सौगंध है।

सील भांगे त्यांरा टोला मझे, तिण ने दिख्या दे ताम रे।
पिण छोटां रै पगे पाड़ै नहीं, इसड़ो करै अज्ञानी काम रे॥
तुम्हें जोय जो अन्धारो भेष में

यह ढाल तुमने कही—"तो किसका शील भंग हुआ और किसको बड़ा रखा" इस बात का कल तार निकालना/निर्णय करना है। इस प्रकार मुंह से अक-बक बोलने लगे। पर स्वामीजी ने मौन रखी। तब घणराज नागोरी बोला—देवता की प्रतिमा बैठे वैसे बैठे हो, वापस बोलते क्यों नहीं ?

फिर भी स्वामीजी मौन रहे, तब हैरान होकर चले गए।

कुसालजी (बागोर के) उस समय संघ में थे, बोले—इस क्षेत्र में स्वामीजी के आने का मतलब ही क्या है ?

तब स्वामीजी बोले—यह तो कच्चा है।

स्वामीजी को घणराज ने उलटी-सीधी बातें कही ! यह बात राणाजी के प्रधान शिवदासजी गांधी, जो फौज में थे, ने सुनी। तो घणराज को उपालंभ भेजा और कहलाया—तूं घोटा लेकर भीखणजी के पास जाकर उलटा-सीधा बोला, इतना सूरवीर है तो फौज के सामने जाकर लड़ाई कर न। साधुओं से कलह क्यों करता है।

भैरूंदास चंडाल्या बोला—ये आपसे कलह करते हैं, पर थोड़े दिनों में ये सब आपके ही बनेंगे ऐसा लगता है। इस प्रसंग पर एक उदाहरण सुनो—

दिल्ली में बादशाह राज्य करते थे। उनके सामने न्याय, निगरानी और सब कामों का कर्ता, अग्रवाल जाति का राव रुघनाथ, जिसका हुक्म देश में प्रसिद्ध था।

उसी दिल्ली में एक गरीब अग्रवाल अपने पुत्र को अच्छे कपड़ों आदि से सजा कर गोद में लेकर बाजार में आया। तब किसी ने उपहास करते हुए कहा—पुत्र को ऐसा सजाया है, क्या राव रुघनाथ की लड़की से सम्बन्ध करने का विचार है ?

तब वह बोला—इस बात का उपहास/मजाक क्या करते हो, किसी के पास धन अधिक हो, किसी के पास थोड़ा हो फिर भी जाति आदि शुद्ध हो तो सम्बन्ध में आपत्ति जैसी बात नहीं।

ऐसा कहकर वह गरीब अग्रवाल राव रुघनाथ की कचहरी में पहुंच गया। सैकड़ों लोग बैठे थे। वहां आकर बोला—राव रुघनाथ ! "तुम्हारी लड़की से हमारे लड़के का संबंध करो।" तब राव रुघनाथ की कुदृष्टि देखकर उनके सामने काम करने वालों ने गालियां बोलते हुए उसका अपमान कर बाहर निकाल दिया। वह वापस बाजार में आया।

लोगों ने पूछा—संबंध कर दिया ?

तब वह बोला—थुक्कम-थुक्का तो हुआ है।

दूसरे दिन उसी तरह लड़के को सजाकर फिर कचहरी में जाकर बोला—"तुम्हारी लड़की, हमारा लड़का संबंध करो" तब धक्का देकर बाहर निकलवा दिया।

फिर लोगों ने पूछा—संबंध कर दिया तब बोला—धक्कम-धक्का तो हुआ है।

हल्ला सुनकर रात्रि में स्त्री ने पूछा—दो दिन हुए कचहरी में हो हल्ला क्यों होता है ?

तब राव रुघनाथ ने कहा— पुत्र को गोद में लिये एक दरिद्री गरीब अग्रवाल आकर कहता है— "तुम्हारी लड़की से हमारे लड़के का संबंध करो" इसलिए हल्ला होता है।

तब स्त्री ने पूछा —लड़का कैसा है ?

राव रुघनाथ बोला—लड़का तो सुन्दर है, पर घर में कुछ नहीं है।

स्त्री ने कहा तुम्हारे जैसा कहां से लाओगे ? तुम तो बादशाह का काम करने वाले हो, वैसा दूसरा नहीं मिलेगा। उसके घर में धन नहीं तो हमारे घर में तो बहुत है फिर उसके धनवान होने में क्या समय लगता है।

यह सुनकर राव रुघनाथ के दिल में भी यह बात बैठ गई। तीसरे दिन वही गरीब अग्रवाल कचहरी में आकर फिर वैसे ही बोला। स्त्रियों ने ऊपर से देखा तो बडारण/नौकरानी को भेजकर लड़के को बुला लिया।

सुन्दर/स्वरूपवान देखकर तिलक लगा कर संबंध कर लिया और गहना तथा वस्त्र पहना कर पालकी पर बिठाकर सम्मान पूर्वक विदा किया। बहुत से लोगों से घिरे छड़ीदार सिपाही और सेवकों के झुंड के साथ बाजार मार्ग से महलों में डेरा जमा दिया। लाखों रुपये सौंप दिये। बाजार से पालकी जाती देखकर लोग बोले—थुक्कम थुक्का, धक्कम धक्का वाला संबंध कर "छक्कमछक्का" कर आया है।

इस प्रकार जाति, कुल शुद्ध था इसलिए अच्छे घराने से संबंध हुआ। भैरूंदास बोला—वैसे ही आप शुद्ध साधुत्व पालते हो इसलिए सभी आपके चरणों में ही आते लगते हैं।

फुटकर संस्मरण

हेमजी स्वामी ने संवत् १९०३ के चतुर्मास में ये बातें स्वयं लिखाई।

१. वचन तो पक्का निभाया

सोजत में अणंदे पटवे ने कहा था—"इस भीखणीया (हल्का शब्द) का मुंह नहीं देखूं" क्रोध में आकर बार-बार ऐसे बोला। पाप के उदय से वह सात में दिन अंधा हो गया। लोग बोले—अणंदेजी ने वचन तो पक्का निभाया। अंधे हो गए अब भीखणजी का मुख कभी नहीं देखेंगे। लोगों में बहुत निंदा हुई।

२. बचाते तो तुम भी नहीं

पीपाड़ में मौजीरामजी बोहरा की बेटी बीमार पड़ गई। तब स्थानक में उरजो जी नामक साधु थे। मौजीरामजी उन्हें बुलाने के लिए आए। बोले—घर पर पधारो।

उरजोजी बोले—क्या काम है ?

मौजीरामजी—बच्ची बहुत बीमार है। तड़फ रही है। इसलिए कोई यंत्र-मंत्र आदि का प्रयोग करो, जिससे लड़की ठीक हो।

तब उरजोजी बोले—हम साधुओं को ऐसा करना कहां है।

तब मौजीरामजी बोले—तुम कहते हो न हम जीव बचाते हैं और भीखणजी जीव नहीं बचाते। ऐसे ही कहते हो—जीव बचाते हैं, जीव बचाते हैं, पर बचाते तो तुम भी नहीं।

३. एक आला फिर चाहिए

जोधपुर में जयमलजी के स्थानक बन रहा था। तब रायचंदजी बोले—एक आला तो यहां चाहिए। शोभाचंदजी फोफलिया बोले—यहां आला किसलिए चाहिए ?

तब रायचंदजी बोले—यहां पुस्तक पन्ने पड़े रहेंगे।

तब शोभाचंदजी बोले—एक आला इस जगह फिर चाहिए।

तब रायचंदजी बोले—यहां आला क्यों चाहिये।

तब शोभाचन्दजी बोले—यहां आपके महाव्रत पड़े रहेंगे। गांव-गांव कहां लिए फिरोगे ?

४. एक-एक कर छिन्न-भिन्न कर दें

भीखणजी स्वामी अलग हुवै तब रुघनाथजी ने जयमलजी से कहा—हम तो बहुत हैं और ये १३ व्यक्ति हैं। हिम्मत करो तो एक-एक करके छिन्न-भिन्न कर दें।

तब जयमलजी बोले—शाहपुरा के राजा पर राणाजी की फौज ने चढ़ाई की। लड़ाई करने लगे। पर राणाजी की फौज का दाव नहीं लगा। उसका कारण एक तो शाहपुरा का कोट मजबूत, उसके चारों ओर पानी से भरी खाई, अंदर तोपों की बहुलता और राणाजी की फौज में लड़ने वाले अधिकारी भी शाहपुरा वालों से तोड़ने के मत में नहीं। छह महीने तक चेष्टा की लाखों रुपयों का पानी हुआ। पर शाहपुरा हाथ नहीं लगा। फौज वापिस ठिकानों पर गई।

वैसे ही भीखणजी से हम चर्चा करें उनका पीछा करें तो एक तो उनके आगमों का अध्ययन बहुत है। काम पड़ने पर प्रमाण दिखला देते हैं। स्वयं आचार में दृढ़, फिर हमारे में रहे हुए हैं, वे हमारी अंदर की बातें जानते हैं अतः इनसे चर्चा करने से ये हमें ही छिन्न-भिन्न कर देंगे, इसलिए इनकी ओर ध्यान न दें। संयम से चलते हैं तो हमारा ही यश होगा। लोग कहेंगे रुघनाथजी के शिष्य कठोर पथ पर चलते हैं। ऐसा कहकर जयमलजी ने तो पीछा नहीं किया। रुघनाथजी ने किया। स्थान-स्थान पर चर्चा की तब उनके ही श्रावक अधिक समझे।

५. फकीर वाला दुपटा

स्वामीजी नई दीक्षा लेने के लिए तैयार हुए। तब जोधपुर में जयमलजी के साथ चतुर्मास किया। जयमलजी के साधुओं के मन में श्रद्धा जम गई। थिरपालजी, फतेचंदजी आदि तथा जयमलजी के मन में भी श्रद्धा बैठ गई है ये समाचार रुघनाथ जी ने सुने। तब सोजत के श्रावकों से कागद लिखवा कर जोधपुर भेजा और जयमलजी को कहलाया—तुम्हारे भीखणजी की श्रद्धा जमी ऐसा सुना है। वे तुम्हारी संप्रदाय के अच्छे-अच्छे साधुओं तथा अच्छी-अच्छी साध्वियां को तो ले लेंगे। शेष जिनको तुमने बहुत हर्षोल्लास के साथ घर छुड़वाया है वे सब तुम्हें रोएंगे। नाम तो भीखणजी का होगा, संप्रदाय भीखणजी का कहलाएगा, तुम्हारा नाम भी विशेष रहेगा नहीं। फकीर वाला दुपटा होगा—एक फकीर को राजा ने दुपटा दिया। एक साहूकार ने अपने बेटे के विवाह प्रसंग पर फकीर से दुपटा मांगा। फकीर बोला—मुझे बारात में साथ ले जाओ तो दूं।

तब साहूकार ने दुपटा लेकर फकीर को साथ में ले लिया। बारात गांव बाहर ठहरी। वर को देखने के लिए लोग आए। वर की प्रशंसा करते हुए वे कहते हैं—गहने कपड़े सुन्दर हैं, वर रूपवान है पर दुपटा तो बहुत ही कमाल का है। दुपटे की लोग खूब प्रशंसा करते हैं। तब फकीर बोला—दुपटा तो मुझ गरीब का है।

तब साहूकार ने मना किया—रे सांई! बोल मत। आगे शहर में गए। फिर लोग वर की, गहनों, वस्त्रों की प्रशंसा करते हैं पर कहते हैं दुपटा तो वाह-वाह ही है। तब फकीर फिर बोला—दुपटा तो हम गरीब का है। फिर साहूकार ने टोका—रे सांई बोल मत, इसी प्रकार तोरण के पास लोग दुपटे की प्रशंसा करते हैं तो फकीर वही बात दुहराता है। तब साहूकार ने सोचा—यह मना करने से तो नहीं रहेगा, इसलिए दुपटे को फेंक दिया और कहा—यह तेरा दुपटा, अब यहां से रवाना

हो जा।

रुघनाथजी ने जयमलजी से कहलवाया—जैसे विवाह तो साहूकार के बेटे का और प्रशंसा दुपटे की, वैसे ही साधु, साध्वी तो तुम्हारे लेगा। और संप्रदाय भीखणजी का कहलाएगा।

ये समाचार सुनकर जयमलजी के विचार बदल गए। तब जयमलजी ने कहा—भीखणजी! मैं तो गले तक डूब गया हूं। आप जैसे पंडितों से क्या छिपा है। आप अच्छी तरह से संयम पालो।

६. बड़ा कर्म है नाम का

जयमलजी जयपुर आए तब परसराम कूकरे ने चतुर्मास की बिनती की। तब जयमलजी ने कहा—हमारा चतुर्मास होने से दर्शनार्थ अनेक भाई बहन आयेंगे। कुछ दुर्बल व्यक्ति भी आशा लेकर आएंगे। अतः तुम्हारे से यह काम नहीं जमेगा। इसलिए यहां चतुर्मास करने का अवसर नहीं है।

तब परसराम बोला—यह हजार रुपयों की थैली आपके पट्ट के नीचे लाकर रखी है और चाहिए तो भी रुकावट नहीं, पर चतुर्मास यहां करो। उसके बाद जयमलजी ने जयपुर चतुर्मास किया। सांमीदासजी ने भी जयपुर में चतुर्मास किया। पर्युषण/संवत्सरी के समय पौषधों की खूब खींचातान प्रारंभ हुई। कई तो जयमलजी की तरफ ले जाते हैं, कई सांमीदासजी की तरफ ले जाते हैं ऐसा करते-करते सौ पौषध तो जयमलजी के यहां हुए और सौ पौषध ही सांमीदासजी के यहां हुए। शाम के समय एक भाई पौषध करने के लिए आया। तब उसे खींच कर सांमीदासजी की तरफ ले गए। सवेरे गिना तो जयमलजी के यहां तो सौ पौषध हुए और सांमीदासजी के एक सौ एक हुए। तब जयमलजी बोले—

धर्म तौ छं जिम छंः, बडौ कर्म है नाम कौ।
एक माया नें खांचतां, सिक्को रहि गयौ सांम कौ।।

७. समझूंगा, एक खरगोश अधिक मारा

नगजी जाति का गूजर था। वह घर छोड़ कर साधु बना। गुरु शिष्य विहार करते हुए करेड़े गांव आ रहे थे। मार्ग में एक चोर आ धमका। उसने गुरु के कपड़े तो छीन लिए और नगजी के छीनने लगा।

तब नगजी बोला—तेरे पास तलवार है मुझे लोह का स्पर्श करना नहीं है इसलिए शस्त्र को अलग रख दे। तब उसने शस्त्र दूर रख दिया। वस्त्र लेने के लिए आगे बढ़ा। तब नगजी ने चोर के दोनों बांहे पकड़ी और उसे पीटना प्रारंभ किया तब उसके गुरु बोले—अरे! अनर्थ कर रहा है। मनुष्य को मार रहा है।

तब नगजी बोला—ऐसे साधुओं को लूटा जाएगा तो विचरेंगे कैसे? मैंने तो घर में ही बहुत खरगोश मारे थे समझूंगा एक खरगोश और मारा। प्रायश्चित्त रूप में एक तेला ले लूंगा पर इसको तो नहीं छोडूंगा। गुरु ने बहुत कहा मार मत।

तब कमर (कटि) बांधने की डोरी से दोनों हाथ पीछे बांध कर गांव के बाहर लाकर छोड़ दिया।

८. भीखणजी का साधु तो अकेला नहीं फिरता

स्वामीजी के दर्शन करने के लिए आते समय छोटे रूपचंद को रास्ते में ताराचंदजी स्वामी मिले। उन्होंने पूछा—तुम किसके साधु हो ? तब रूपचंद बोला—मैं भीखणजी का हूं।

तब ताराचंदजी बोले—भीखणजी का साधु तो अकेला नहीं घूमता। तब रूपचंद बोला—मैं टोले/संघ से बाहर हूं। मेरे में साधुपन नहीं है। मुझे वंदना मत करो। ऐसा कह कर आगे चला। रास्ते में चोर आ धमका। तलवार निकाल कर बोला—कपड़े रख दे। तब रूपजी ने पात्रों को दिखाया।

तब चोर बोला—कमर खोल।

तब रूपजी भृकुटि चढ़ा, मूंछों का केश तोड़ कर बोला—इस पीपल के पेड़ से आगे जाने दूं तो असली गुरु का मूंडा ही नहीं।

तब चोर भाग गया।

उसके बाद रूपजी ने बड़ी रावलिया में जाकर स्वामी भीखणजी के दर्शन किये और वहां से इन्द्रगढ़ चला गया। उसका विस्तार तो बहुत है।

परिशिष्ट-४

शब्दानुक्रम

(क) व्यक्ति नाम

अंजणा १०४
अखैराम (मुनि) २०,६१
अजबू (साध्वी) १०९,११०
अणंदा पटवा २७७
अमरसिंह (मुनि) ५,१०,३७,४८,११७,
२४३,२४४,२६७,२६८
अमरा डांगी २६३
अमीचन्द (मुनि) ८१
आसकरण (मुनि) २६५,२६६
आसकरण दांती ७२
आसोजी १९,२०
इन्दोजी २४६
ईसरदास (मुनि) ५
उगराजी (मुनि) २६८
उत्तमौ ईरांणी १५
उदयराम (मुनि) ७३,२४५
उदैराम (मुनि) देखें उदयराम
उदैराम चपलोत २४४
उमेदमल श्रावगी २६९
उरजोजी (मुनि) १०,११,२७७
ओटा सोनार ७४
ओटौ स्याल ११,१२
कचरोजी (मुनि) १८,१९
कपूरजी (मुनि) ३०
कलूबाई २६३
कस्तूजी (साध्वी) ८
कस्तूरमल जालोरी २४६
किसनदास २७१
किसनोजी ७९,८०
कुसलो २७,२८
कुसालजी (मुनि) (बागोर निवासी) २७३
केसूराम २१
कोजीराम (मुनि) ५
कोहलोजी (मुनि) ४८
खंतिविजय (मुनि) ३४ से ३७
खींवसी (मुनि) २६७
खेतसी (मुनि) २०,३८,६४,६५,६९,७३,
७७,९७,९८,२४४,२५५,२५६,२६८
खेतसी लूंणावत ८
खेमांसाह ४१
गाजी खां ४६,४७
गुमान (मुनि) ३,४,३७,२७१
गुमान लुणावत ६३
गुला देखें गुलोजी गादिया
गुलाब ऋषि ३२,३३,३४,२६६
गुलोजी गदिया २,३
गूजरमल २१
गेबीराम चारण ९
गोशाला २४६
गौतम १०७,२५१
घणराज नागौरी २७३
चन्दू (साध्वी) १०३
चन्दू बाई २६३
चन्द्रभाण (मुनि) २६,३१,६४,७५,७६,
२६३
चन्द्रभाण चौधरी ५०
चतराशाह देखें चतुरोसाह

चतुरो श्रावक (चतुरोजी) ७५,२६५,२६६
चतुरो साह १५,२४७
चैनजी श्रीमाल २६७,२६८
चोथ बोहरो ३७,२५९
चोथ संकलेचा ६६
छाजू खाभीओ ९२
जगु गांधी ७,८
जयमल (आचार्य) ३,३३,४८,५१,८०,
११७,२५३,२७७,२७८,२७९
जलंधरनाथ २४९
जसू १०७
जिनऋष ८०
जिनचन्द सूरी २६७,२६८
जिनपाल ८०
जीतमल (मुनि) ४८,११८
जीवण (मुनि) २
जीवो मुंहतो ५०,२७१
जूंझारसिंह (ठाकुर) १०२
जेठमल (मुनि) २५८
जेठमल (हाकम) ३८
जेठा डफरिया २६५
जेतसी २४६
जैचन्द १००
जैचन्द वीरांणी ८३
जैमल (आचार्य) देखें जयमल (आचार्य)
जोरजी कटारिया २७१
टीकम (मुनि) १८,१०४,२४३ से २४७,
२५६,२५८
टीकम डोसी ७०,७५
टेकचन्द पोरवाल २६
टोडरमल (मुनि) ७०,११८
डूंगरनाथ ६०
डूंगरसी २४४
ढंढण (मुनि) ४४
ताराचन्द (मुनि) २८०
ताराचन्द संघवी ११
तिलोक, तिलोकचन्द (मुनि) १०,२६,२७,
२८,३१,७५,७६,२६३
थिरपाल (मुनि) १०५,२७८
दामो ५०
दीपचंद मुणोत ९
दुर्गादास ३,४
देवकी २८,१०४
द्रोपदी २५८
दौलजी लूंणावत २७०,२७१
दौलतराम (मुनि) ७७
दौलतसिंह (ठाकुर) ७०
धन्नां (साध्वी) ६७
धीरो पोखरणो ११८
नंदण मणीयारा ८५,२५४
नगजी ८५,८६
नगजी गूजर २७९
नगजी भलकट ५०
नगजी सादूलजी १५
नगजी सामी २२
नांनजी स्वामी ७२
नाथांजी (साध्वी) ७३,७४
नाथू (मुनि) ३,७४
नाथू २४
नाथो देखें नाथू (मुनि)
नानग (मुनि) २५८,२६८
नायकविजै (जती) २४५,२४६
निहाल (मुनि) २६८
नैणचन्द २६३
नैणसिंह ६१
पत्थरनाथ ६०
पन्ना (मुनि) ७४
पाथू २४
पार्श्वनाथ ११८
पूरियो मेघवाल २७२
पेमजी (मुनि) ३,४
पेमजी कोठारी २६३

पेमांसाह ४१
पेमो २४
प्रताप कोठारी ९४
प्रदेशी (राजा) १०
प्रभव स्वामी ४४
फत्तू (साध्वी) ६१,१०३
फत्तैचन्द (मुनि) १०५,२६६,२७८
फत्तैचन्द गोटावत ४८
फरसराम कूकरा २७९
बगतराम (मुनि) २६७
बरजूजी (साध्वी) ७१
बलाकीदास २६७
बूदरजी ४८
बेणीराम (मुनि) २२,६२,६३,६४,६९, २५९
बोहतजी (मुनि) ११७
भगजी (मुनि) ७४
भगवानदास २७०
भगू पुरोहित ८०
भानौ खाभीयो ९२
भारमल देखें भारीमाल (आचार्य)
भारीमाल १७,२३,३१,३६,६७,६९,७१, ७२,७३,७५,७८,७९,१०४,१०५, २४४,२४७,२५६,२५७,२५८,२५९, २६३,२६८,२६९,२७१
भिक्खु भिक्षु आचार्य देखें भीखण (आचार्य)
भीखण (आचार्य) १ से १२, १५ से १८, २०,२१,२२,२४,२६,२७,२९,३०, ३१,३४ से ४४, ४६ से ५१,५७,६४, ६६,७०,७२,७५,७६,७९,८०,८३, ९२,९४,९५,९९,१०२,१०४ से १०७, १०९,११४,११६,११७,११८,२४३, २४४,२४६,२५०,२५३,२५४,२५५, २५७,२५९,२६३,२६५,२६६,२६७, २७१,२७२,२७३,२७७,२७८,२८०
भीम (मुनि) ४८
भीम कांठेड़ २५२,२५३
भैरूंदास चंडाल्यो २७२,२७३,२७४
भोपजी (मुनि) ७३
मजन्यौ (बकरे का नाम) ४३
मयाराम (मुनि) २२
मलजी मूंहतो ११
माईदास खैरवावाला २५२
मानसिंग २४९
माना खेतावत २४९
मालजी ७८
मुकनै दांती २४५
मुल्ला खां ४६,४७
मेघो भाट २०
मेणांजी (साध्वी) ६४
मोहकमसिंह ३१
मोजीराम बोहरा १०७,२७७
मोती बालदियो ३८
मोतीराम चौधरी ३६
मोतीराम बोहरा ९
रंगविजय (आचार्य) २६८
रंगूजी (साध्वी) ७७
रघुनाथ (आचार्य) देखें रुघनाथ (आचार्य)
रतन (मुनि) ३,३७,२७०
रतन (जती) १०
रतन छाजेड़ २७२
रतन भलगट २५४,२५५
राजमल बोहरा २७०
राम ४
रांमजी (मुनि) ७७
रामकृष्ण ४६
रामचन्द कटारिया १७
रामदेव १११
रामलाल ४६
रायचन्द (मुनि) २६८,२७७
रावण ४

रुघनाथ (आचार्य) २,१०,१७,२९,३३, ३४,४४,४५,४८,५१,७५,९२,९५, १०२,१०३,२४७,२६५,२७८,२७९
रुघनाथ (राव) २७३,२७४
रूपचन्द बड़ा (मुनि) ७७
रूपचन्द छोटा (मुनि) ७७,२८०
रूपविजै (मुनि) २५०,२५१,२५२
रूपांजी (साध्वी) ९८
रेणादेवी ८०
रोड़ीदास सेवग ३९
लखजी बीकानेरी २५
लखी बालदियो देखें मोती बालदियो
लखू बाई २६३
वर्धमान ७७
वरजूजी (साध्वी) ७३
विजयचंद पटवा २१,७२,९१,२६४
विजयसिंह (राजा) ३८,४५,२४९
विजैचन्द लूणावत १०३
वीरभांण (मुनि) ६१,७४,८५,८६
वीरां (साध्वी) १०३
वीरां कुंभारी ७४
शिवरामदास (मुनि) ३१,७६
शीतलदास (मुनि) ३३,११७,२५२
शीतला १०३
श्रीकृष्ण ४६
श्रीधर ४६
संतोखचन्द (मुनि) ३१,७६
सदाराम मूंहता ४६
सरूप मूंहता ३६
सर्वानुभूति (मुनि) २४६
सवाई (मुनि) २४४
सवाईराम ओस्तवाल १
सांमजी (मुनि) ७७
सांमीदास (मुनि) ५,२७९
सांमैजी भंडारी ३१
सालभद्र ८७
सिंहजी ६४
सिवदास गांधी २७३
सुनक्षत्र (मुनि) २४६
सूरतोजी ७७
सूर्यभि (सूरीयाभ) ११३
सोभाचन्द फोफलिया २७७
सोभाचन्द सेवग ३९,४०
स्वामीजी देखें भीखण (आचार्य)
हरजीमल सेठ १०
हरिलाल ४६
हरीदास (मुनि) २६७
हस्तूजी ७
हीरजी (मुनि) २५२,२५३
हीरजी (जती) ८६,८७,२४९
हीरां (साध्वी) ६९,७३
हीरालाल (मुनि) २५८,२५९
हेमजी (मुनि) देखें हेमराज (मुनि)
हेमराज (मुनि) ४,५,२२,२८,३१,४२, ४३,४८,५०,६२,६५ से ७०,७२,७३, ८४,९७,९९,१०३,१०४,१०५,११०, १११,११८,२४३ से २५५,२५७, २५८,२५९,२६८,२६९,२७१,२७७

(ख) ग्राम नाम

आऊवा १५,१६
आगरा १०
आगरिया ३१,९४
आबूगढ ९२
आमेट ९८,२५७,२५८,२६३
इन्द्रगढ २८०
उतवण २२
उदैपुर ३,४,१९,६१
ऋणिहि देखें रिणिहि
कंटालिया २,१७,४३,१०४,१०५
कांकड़ोली (कांकरोली) ६६
करेड़े २२,२७९

कुशलपुरा ६८
काफरला १४,३४,६५
कारोलीया ७३
केलवा १४,३१,३२,८५,२४४,२५७
कोटा ७७,२६६
कृष्णगढ ११,२६८,२६९
खारचिया १४,७३
खेरवा (खैरवा) ११,१५,३९,७४,८५
गुरलां १००
गूंदोच १०२
गोगूंदा (गोघुंदा) ३३,३४
घांणेराव ७
चंडावल ६१
चूरू ७६
चेलावास ६९,७३,१००,१०२,२४९,
२६३
जाढण ७७
जालोर १८
जैतारण ११७
जैपुर ३,४,२६९,२७९
जोधपुर ३,४,१०,१७,४५,४८,५१,२४७,
२४९,२७७,२७८
तुंगिया नगरी ३३
दिल्ली १०,२६७,२७३
देवगढ ४४,२६३,२६४,२६५
देसूरी ३,७,७४,७५
द्वारका ४४
धामली ६७
नाडोलाई ३९
नाथजीद्वारा देखें नाथद्वारा
नाथद्वारा ४५,६१,६४,७३,७७,९४,१०९,
११०,११८,२४७,२७२
नींबली ६८,६९,१००
नैणवा २८
पादू ५,२८
पाली १,६,२१,२२,२५,३४,३६ से ३९,
५०,६६,७०,७८,८६,९१,९७,९९,
१०४,२४४,२४७,२४८,२५०,२५६,
२६४,२७०
पींपाड़ (पींपार) २,७,८,११,१५,२२,
३४,३६,३७,६३,७८,८१,१०३,
१०७,२५४,२५९,२७०,२७१,२७७
पुर २०,२३,३२,५०,८३,९२,९८,१००,
२६३
बगड़ी १०४,१०५
बागोर २७३
बीलाड़ा (बीलारा) १६,७९,२५२,२६५,
२७२
बून्दी १,७७
बोर नदी ४३
भीलवाड़ा (भीलोड़ा) ५०,५१,२५२,२७२
मकराणा ६२
मांडलगढ २५९
मांढा (मांहढा) १९,६७
माधोपुर १४,२१,२६९
मोहनगढ ११०
राजनगर २०
रावळियां (बड़ी) २८०
रिणिहि ५०,२७१
रीयां ९,१०,२२,२७०
रोयट ७५,८७,२६४
लोटोती २६७
वीलाड़ा देखें बीलाड़ा
वीलावास २४८
श्रीजीद्वारा देखें नाथद्वारा
सरबार २५८
सरीयारी देखें सिरियारी
साहिपुरा २७८
सिरयारी (सिरियारी) १८,३०,३१,४५,
५६,६४,६७,६८,६९,७०,७२,७४,
२४३,२४४,२५०,२५२,२६३,२६६

सिरोइ (सिरोही) ३,४
सीहवा ५०,२४९
सोजत ९,६७,७३,२७७,२७८

(ग) सम्प्रदाय नाम

कनफड़ा ११७
कालवादी २०
खरतरगच्छ २६७
गच्छवासी ८५
गुसांइ ११३
चोरासीगच्छ ८०
तेरापंथ १,७,२८,३४,२६४
तेरापंथी देखें तेरापंथ
दादूपंथी ९४,९५
देवरापंथी (देहरापंथी) देखें संवेगी
नाथ ११३
पोतियाबन्ध ३०,१०२
बाइसटोला (बावीस टोला) देखें स्थानकवासी
मथेरण ११७
रामसनेही ११७
वैष्णु ११३
संवेगी ४०,२४८,२६४,२७०
स्थानकवासी ७,२८,३४,६०,७९,८०, २६४

(घ) ग्रन्थ नाम

आचारांग ३४,३६
आवसग सूत्र १०२
उत्तराध्ययन २२,७१,१०४,११४,२५६
दशवैकालिक १०४
पन्नवणा ३४
बंकचूलीया ७०
भगवती ३४,६०,१०७,२४५,२४६,२५१, २५४,२५५,२५६
रामचरित (रामचरित्र) २५५,२५६
रायप्रसेणी ११३
सूयगडाङ्ग १०७

परिशिष्ट-५

विशेष शब्दकोश

		पृष्ठ	दृष्टान्त
अजोगाई	अयोग्य व्यवहार	३०	८२
अडवी	उलझन/विवाद	२१	५१
अणगल	अनछना	८१	२०५
आळयदा	अलग	२४६	हेम. ८
आंगुण	अवगुण	६	१२
आखुड़नै	लड़खड़ाकर	५५	१३८
आघा	आगे	१४	३३
आडी जाति	हीन जाति	८१	२०६
आणौ	ससुराल से पत्नी को लाने जाना	१५	३७
आथण	सायंकाल	७२	१८६
आबरु	इज्जत	९१	२३३
आरणीयौ छाणौ	जंगली कंडा	४४	१११
आरौ	मृत्युभोज	७७	१९०
उखरली	उकरड़ी	११४	२९७
उपत-खपत	उपज और खर्च	२	४
उपरसरो	देखभाल/सुरक्षा	४७	११६
ऊंधो/अंवळो	अंटसंट	६	१२
ऊली	इधर	१०४	२७५
एवड़	भेड़ों और बकरियों का समूह	५९	१४८
ऐहल	निरर्थक	९२	२३८
ओगालो	इधर-उधर बिखेरना	१	१
ओळियौ	एक प्रकार का लम्बा कागज	१०	२६
ओसावण	भीगे हुए कैर आदि का पानी	४३	१०७
कजियौ	कलह	१	१
करसणी	किसान	४	७
कष्ट कीधौ	निरुत्तर कर दिया	१	१
कांण	लिहाज	६५	१७०
कायो	खिन्न	२५२	हेम. २०
किरियावर	मृत्युभोज	२३	५९

किसब	धन्धा	५८	१४८
कुणको	अनाज का कण	८३	२१४
कुबद	कुबुद्धि/चालाकी	५६	१४४
खटकर	फाटक	२६	६८
खप	श्रम	११७	३०९
खरवार	कपड़े की गांठें	४२	१०४
खांगी	टेढी	८४	२१७
खांच	आग्रह	११	२८
खिसाणो पड्यो	रुष्ट हो गया	२५२	हेम. २०
खूंचणो	दोष/गल्ती	१	१
खेद	कष्ट/परिश्रम	८३	२१२
खोडौ	धान का कोठा	१०१	२६५
गुदरतो	सलट जाता	२९	७८
गुलांच	उछल-कूद	९	२३
गोरवो	गांव की सीमा	९	२१
घाट	दशा	९९	२५७
चाडी	चुगली	१	१
चामां	हल के द्वारा खींची रेखाएं	८४	२१७
चिबठी	चिऊंटी	४४	१११
चोसरौ	ओढनी	१०३	२७०
छद्मस्थ	केवलज्ञान से पूर्व की अवस्था	२	२
जाबता	सुरक्षा	१	१
जुर	ज्वर	११६	३०३
जोगवाई	मिलने की संभावना	१६	४२
झखर	बकझक	२३	५८
टंटौ	झंझट	१०५	२७८
टब	सफलता	६९	१७७
टाकर	टकोरे	२६५	श्रावक. ९
टूक		७१	१८३
ठागा	ठगाई	८०	२०३
ठोठ	अनपढ	१७	४२
डावड़ा	बच्चा/लड़का	१	१
डील	शरीर	९५	२४७
डेरौ	सम्पत्ति	१५	३९
डोळ	रूप	४	७
ढांढो	ढोर/पशु	१	१

ताकीद	शीघ्रता	१७	४२
तीखण	छुरी	४७	११६
तेजरा	हर तीसरे दिन आने वाला ज्वर	११५	३०२
थाणो	स्थिरवास	८०	२०५
दिशां	शोचार्थ	२	३
देवी रे टाणै		१४	३५
निन्हव	मिथ्या प्ररूपणा करने वाले	२	२
निनांण	निदाई	२	४
नुखतौ	मृत्युभोज	११	२८
नूरांणी	भाव भंगिमा	१२	३०
नैंहराइ	असावधानी	५५	१३७
परखदा	परिषद	२	२
परहा जासां	चले जाएंगे	१	२
पांने	हिस्से में	६	१२
पाखती	पास में	७२	१८७
पाधरौ	सीधा	४	७
पुखता	अवस्था प्राप्त/विश्वासी	८३	२१२
पैंतो	उत्पत्ति का मूल स्रोत	५३	१३१
प्रांछ री प्रांछ	क्रमबद्ध	५३	१३२
फुंजालो	फूलझड़ी से दागो	२६	६१
फींचा	टांगें	४२	१०४
फीटा	अश्लील	९७	२५१
फीटो पड़चो	लज्जित हुआ	१	१
फोरौ	हल्का	६३	१६१
बंडेल	बर्तनों की पंक्ति	४३	१०७
बडेरा	पूर्वज	४८	११७
बाटा बरड़ौ	अस्त-व्यस्त	५३	१३२
बापरी	बेचारी	३	४
बारदानौ	प्रारंभिक सामग्री	९८	२५५
बीहेला	डरेंगे	४	७
बैदो	विवाद	१७	४३
बोलावौ	निमंत्रण के लिए उपहार	४४	१११
मरचां रौ तौबड़ौ	मिर्चों का मुखौटा	१००	२६०
मौर	पीठ/पृष्ठ भाग	७३	१८८
मौमाळ	ननिहाल	९९	२५८
रांधण	रसोई पकाने वाली	४७	११६

रामत	खेल	९७	२५१
राली	गुदड़ी	६४	१६६
रावळीया	रावल (खेल करने वाली एक जाति)	९७	२५१
रींराटा करती	सुबकती हुई	१४	३६
लचकाणी पड़नै	लज्जित होकर	१५	३८
लांक सहित	मुड़ा हुआ	४	७
लातरियो	सकपका गया	२	३
लाहौ	लाभ	१४	३५
लैंहर	आक्रोश	२	२
वतुओ	बात करने वाला	८७	२२६
वाय रै वंग	वायु के वेग की तरफ	६६	१७५
वावरना	काम में लेना	१४	३५
वासती	एक प्रकार का खद्दर का वस्त्र	८	१६
व्यावट	विवाह के अवसर पर तैयार की गई फड़दी	१०	२६
विरवौ	महामारी/अकाल	८१	२०५
विश्वर	निन्दात्मक कविता	३९	९६
विष्टालौ	समझौता	५६	१४०
संकड़ा	संयमित	१७	४२
साइदार	साक्षी	५३	१३१
साऊ	अच्छा/ठीक	२६	६९
साजी	अखण्ड	११५	३०१
सिज्यातर	जिसके मकान में चरित्रात्मा का रात्रि प्रवास हो	२	२
सींजारौ	भागीदारी/साझेदारी	१०६	२८०
सींदरा	रस्सियां	२५३	हेम. २१
सीतंगियो	सन्निपात से पीड़ित	२७०	श्रावक. २०
सूंस	नियम/त्याग	२४८	हेम. १६
हलवाणी	लोह की छड़	९१	२३५

संशोधन पत्रक

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७	३०	हस्तुजो	हस्तुजी
८	२४	मोटो	मोटी
११	२७	वेश्या सरीखी	कसाई सरीखा
११	४	वेश्या नै दियाइं	कसाइ नै दियांई
११	२९	वेश्या सरीखा	कसाई सरीखा
१३	२८	कारां	करां
१४	४	उत्तरता	उतरता
१७	२७	पछ	पछे
१८	१६	लंण	लूंण
२४	८	सरध	सरधै
२७	१३	भेसौ	बेसौ
२८	२७	पछ	पछे
३०	२८	पछ बायां कन	पछे बायां कने
३२	३	वेस	वैसे
३७	११,१२		×
३७	१६	दीधो ?	दीधी ?
४३	९	कंटाळौया	कंटाळिया
४३	१०	तिण सं	तिण सूं
४३	२४	ठामतां	ठाम
४५	१	बुद्धो	बुद्धी
४५	५	बंलद	बळद
४६	२०	राम	नाम
४७	१२	माहजनां	महाजनों
४८	३१	सं	सूं
४९	५	कन	कनै
५२	३	माथ	माथै

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५६	२७	कहै	रहै
५७	११	कोई न	कोई नै
५७	१२	नौ	तौ
५७	२५	१४८	१४७
६०	१	सरध	सरधै
६१	७	बसांण	बैसांण
६१	१४	आगमीय	आगमीये
६९	३३	बोला	बोली
७३	१७	करनै कह्यो	करनै ऊपर सुआण्यां पछै हीरांजी हेमजी स्वामी नै कह्यो—
७६	२३	सिरांम-दासजी	सिवराम-दासजी
७६	२४	'लायौ	लीयौ
८०	२२	वरज	वरजै
८१	१	खाण	खाणै
८१	४	अमी-चन्दजौ	अमी-चन्दजी
८६	७	क्यांन	क्यांनै
९२	३१	कर	करै
९७	११	ढणा	घणा
९७	२०	देखनै	देखै
९९	७	को	की
९९	३०	पूछै	पछै
१००	२१	स्चामीजी	स्वामीजी
१०२	२१	अथे	अर्थ
१०३	१	बळ	बळै
१११	८	न	नै

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११२	६	हुव	हुवै	२५७	५	इस	इम
११४	२२	सद	जद	२५८	१९	किसायत	किसायक
११५	७	हो	ही	२५९	२२	कोई	कांई
११९	११	ठंठी	ठंडी	२६३	२३	हालत	हालता
१४८	७	तुम्हारा	तुम्हारा	२६४	३	तीनक	तीनेक
		जिस		२६४	१३	मय	मत
१४८	२६	कटारे	कटार	२६५	१५	पहरा	परहा
२५०	३	दूजी	दूजी	२६५	२०	बताय	बताया
		दूजी		२७२	८	भैरूंदान	भैरूंदास
२५४	२	समझाव	समझावै	२७३	५	सुणन	सुणनै
२५६	७	से	ते	२७९	१७	सांमी-	सांमी-
२५७	१	सरींखो	सरीखो			दासजौ	दासजी